


महर्षि-पाणिनि-प्रज्ञा-अनुसन्धान
तिथी
पु०सं० 1792
भारती पुस्तकालय

प्रकटयांहि पुराणकथागमं, बहुलतोविदन्तीह मनोरमम् ।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः । सर्वे भद्राणि पश्यन्तु माकश्चिद् दुःखभाग् भवेत् ।

भवतु दुःखनिराकरणं सदा कुशलवर्द्धनमिद्दिशदयारमाजगानिमित्ततया पुरुषैः सर्गः समयशापनस्य विधीयताम् ॥

ओ३म्

पुराण-तत्त्व-प्रकाश

प्रथमभाग

जिसमें
श्रीमद्भागवत, देवीभागवत, पद्म, विष्णु,
शिव, लिङ्ग, अग्नि, कूर्म, वाराह, भ-
विष्य, ब्रह्मवैवर्त, वामनादि पु-
राणोंसे सभ्यतापूर्वक यह
दर्शाया है कि अठा-
रह पुराण

महर्षिव्यासप्रणीत नहीं हैं

जिसको

श्रीमान् पं० वंशीधरजी पाठक आगरा
निवासीकी सहायता से

चिम्मनलाल वैश्य कासगञ्ज
निवासीने

निर्मित कर
'आर्यभास्करयन्त्रालयआगरा' में
बाबूराम शर्माके प्रब-धसे मुद्रित कराया
जिसकी
रजिष्टरी ऐक्ट २५ सन् १८६७ ई० के अनुसार कराई गई है

प्रथम वार
२२००

मूल्य प्रति पुस्तक
१) एक रुपया

विततकीर्त्ति भवेदपि पुस्तकं कुटिलता कुलमानममोसिन ?

ओ३म्





प्रिय पाठक-वृन्द !

मेरे परमपूज्य स्वर्गवासी पिता श्री० लाला टीकारामजी

को सत्य-प्रिय-भाषण करनेकी बड़ी रुचि थी, इस कारण उनका प्रेम भी ऐसे ही महापुरुषोंके साथ रहता था। मैं अपने पिताका एकलौता पुत्र हूं। मेरे पास ऐसा धनका भण्डार नहीं, जिससे पाठशाला, धर्मशाला, अनाथालय इत्यादि बनवाकर संसारमें उनके नाम स्मरणार्थ छोड़ सकूं। हां मैंने बड़े परिश्रमके साथ इस ग्रन्थको तय्यार किया है, जिसमें सत्य-प्रिय-कथन है, जिससे देशके उपकार होनेकी भी सम्भावना है उसीको आज मैं,

अपने माननीय पिताके नामपर समर्पण करता हूं।

हे शक्तिमान् प्रभो !

आप दयाभण्डार हो। आपकी कृपासे यह पुस्तक लोक-प्रिय हो जिससे मेरे पिताका नाम चिरस्थायी रहे। ओं शम्।

आवश्यक सूचना।

इस पुस्तकका उर्दू अनुवाद उर्दू जाननेवालोंके हितार्थ शीघ्र छपकर तय्यार होजायगा अतएव कोई महाशय इस पुस्तक और इसके किसी परिच्छेदको उर्दू अनुवाद करनेका कष्ट न उठावें।

आपका शुभचिन्तक
चिम्मनलाल
तिलहर, यू० पी०
ज़ि० शाहजहांपुर

स्थान आर्य्यमन्दिर
३० अक्टूबर सन् १९०९



※ ओ३म् ※

यो भूतं च भव्यं च सर्वं यश्चाधितिष्ठति ।
स्वर्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥

प्रियभ्रातृगण !

आज मैं आपके समीप, पुराण-तत्त्व-प्रकाश लेकर आताहूं आप पक्षपातको त्याग, अवलोकन कर, सारको ग्रहण कीजिये ; जिसके अर्थ मैंने परिश्रम किया है। इस पुराणतत्त्वप्रकाश के लिखनेसे मेरा प्रयोजन यही है कि सम्पूर्ण संसारके मनुष्यों पर प्रकट होजावे कि अठारह पुराण महर्षिव्यास के बनाये हुए नहीं हैं—हां इनपुराणोंको प्रायः स्वार्थी पुरुषोंने आर्य्य जातिको रसातलमें पहुंचानेके अर्थ उक्त महात्माके नामसे बना, प्रचलित कर दिये, जिससे उनका मनोरथ सिद्ध होगया। अर्थात् भारतवासी नितांत अज्ञ बन गये, वेदका नाम ही शेष रह गया, वास्तवमें धर्मका स्वरूप पलट गया, और नाना मतमतान्तरोंके कारण फूटका बाज़ार गर्म होगया। धन, बल, पराक्रम, योग्यता परपानी पड़गया। सचपूंछोतो भारतके शिरका मुकुट गिर गया तिस पर तुर्रा यह है कि हमारे सनातनी भाई इन पुराणोंको व्यासकृत मानते ही चले जाते हैं।

क्याही अच्छा होकि हमारे पौराणिक भाई अपनी विचारदृष्टि, इन पुराणोंके लेखों पर डालते हुए, उन आक्षेपों पर भी ध्यान दें जो उन पर मुसल्मान तथा ईसाई भाइयोंने किये, जिससे हमारा प्राचीन महत्त्व संसारसे उठ गया और हम सब मुर्दा क़ौममें शुमार हो गये। निकट था कि हम अविद्याके अथाह समुद्रमें डूब कर नष्ट होजाते परन्तु परमात्माके अनुग्रह और प्राचीन पुरुषोंके तपोबलके पुण्य प्रतापसे इस भूमिमें महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वतीजीका जन्म होगया जिन्होंने ब्रह्मचार्य्यका यथावत् पालन कर, पूर्णविद्या

पढ़, योग्य विद्वान् और योगीराजोंसे विचार कर बहुतसे प्रमाणों और युक्तियोंसे संसारी पुरुषों पर प्रकट कर दिया कि यह अठारह पुराण महर्षि व्यासप्रणीत नहीं हैं।

परन्तु शोक तो यह है कि सनातनी भाइयोंके हृदयमें इस बात का पूर्ण निश्चय नहीं हुआ। इसकारण अब मैं योग्य पण्डितोंकी सहायतासे विस्तारपूर्वक इस विषयको वर्णन करता हूं, आप प्रेमपूर्वक प्रत्येक विषयको विचारपूर्ण निश्चय कर डङ्केकी चोट अपने भाइयों और अन्य विदेशी जनों पर प्रकट करदीजिये कि यह अठारह पुराण व्यासोक्त नहीं हैं और न वेदानुकूल हैं इसकारण यह माननेके योग्य भी नहीं हैं, हां सनातनधर्म्मपुस्तक वेद है वही ईश्वरीय ज्ञान है इसलिये ईश्वरके प्रेमियो! आओ! हम सब मिलकर वैदिकधर्मका अन्वेषण करें, जिसको जान सम्पूर्ण प्राणी परमात्माकी आज्ञापालन करते हुए ओं रूपी झण्डेके नीचे बैठ शान्ति प्राप्त कर स्वर्गके सुखोंको भोगें। ओं शम्॥

स्थान
तिलहर यू० पी०
ज़िला शाहजहांपुर
जून सन् १९०७ ई०

देशका शुभचिन्तक
चिम्मनलाल वैश्य
पुत्र-लाला टीकारामजी वैश्य
निवासी
कासगञ्ज ज़िला एटा

धन्यवाद

इस स्थान पर मैं उन पण्डितों और योग्य पुरुषोंका धन्यवाद अदा करताहूं जिन्होंने मुझको प्रत्येक प्रकारकी सहायता देकर इस महान् कार्य्यको पूर्ण कराया। परमेश्वर उन सबको सर्व प्रकारके आनन्द मङ्गल दें जिससे वह भारतसन्तानके सुधारमें लगे रहें।

चिम्मनलाल वैश्य.

॥ ओं ॥

प्रस्तावना

एक सुयोग्य सनातनी पुरोहितजीका सहनशील आर्यसेठ यजमानके यहां

प्रवेश

आर्य्य सेठ श्रीमान् पण्डितजीको आते देख, उपस्थान दे, दोनों हाथ जोड़, नमस्ते कर कहा कि महाराज! आइये, विराजिये।

सुयोग्य पण्डितजीने आयुष्मान् कह, अन्य वार्तालापकेपश्चात् सेठजीसे कहा कि आपने अभी तक दयानन्दी ग्रन्थोंको ही देखा है, इस कारण आपकी बुद्धि विपरीत होगई है जिससे आप परमात्माको साकार नहीं मानते और ब्रह्मा, विष्णु, शिव, सूर्य्य और भगवती आदिको कुछका कुछ कहते हो एवं इन्द्र, चन्द्र, बृहस्पति, शुक्र इत्यादि देवताओंकी निन्दा करते हो और गंगा, यमुना, सरस्वती आदिके स्नान और परमेश्वरके अवतारोंकी भक्ति और नाना तिथियोंके उपवास, मूर्त्तिपूजासे स्वर्गकी प्राप्ति नहीं मानते। मृतकश्राद्ध और तर्पणसे मरे हुए पितरोंकी तृप्ति होना स्वीकार नहीं करते, इसी भांति "श्रीवासुदेवायनमः" "शिवायनमः" इत्यादि मन्त्रों, स्तोत्रोंके जप और तिलकोंके लगानेसे पापोंके नाश होनेका खण्डन करते हो इस लिये अब आप कृपाकर एकबार अठारह पुराणोंको जो वेदानुकूल हैं सुनलीजिये आप हमारे यजमान और सच्चे भक्त हैं। और आपके पुरुषाभी बड़े धर्मात्मा और योग्यपुरुष थे इसलिये हम को आप जैसे सज्जनजनोंके सनातनधर्म त्यागनेका बड़ाखेद होता है।

श्री महाराज आप हमारे बड़े और पूज्य हैं, सदासे आपके बड़े हमारे कुलके पुरोहित होते चले आये हैं इस कारण आपकी आज्ञा

का पालन करना हमारा धर्म है; परन्तु धर्मविषयमें सत्यसनातन वेदोक्त शिक्षा करना और उसी पर चलाना आपका परमकर्तव्य है उसीको सनातनधर्म कहते हैं। वही माननीय है और परलोकमें जहां माता, पिता, बान्धवादि कुछ नहीं कर सकते वहां पूर्णरूपसे धर्मही सहायता करता है क्योंकि जीव स्वयंही जन्म लेता है और मरता है, पाप और पुण्यको भोगता है जैसा श्रीमद्भागवत स्कन्ध १० में लिखा है।

एकः प्रसूयते जन्तुरेक एव प्रलीयते।
एको नुभुंक्ते सुकृतमेक एव च दुष्कृतम्॥

और महाभारतमें भी कहा है कि मरे हुए पुरुषके साथ उसकी स्त्री, पुत्र, मित्र, पिता, माता कोई नहीं जाता किन्तु उसको ऐसे छोड़ देते हैं जिस प्रकार फलरहित वृक्षको पक्षी। उसके कमाये हुए धनका कोई और ही स्वामी होजाता है, उसके शरीरकी हड्डी, रुधिर, मांसको अग्नि भस्म करदेती है, उस जीवके साथ केवल उसका किया हुआ कर्मही जाता है। इस लिये मनुष्यमात्रको उचित है कि यत्न-पूर्वक धर्मको सञ्चय करें; क्योंकि संसारमें केवल मनुष्यकी योनि ही ऐसी है जो ज्ञान, विज्ञान द्वारा सम्यक् प्रकार परमात्माको जान, सुख भोग परमानन्दको प्राप्त करती है, अन्यथा नहीं। जैसा श्रीमद्भागवत स्कन्ध ६ अध्याय १६ में कहा है—

लब्ध्वेह मानुषीं योनिं ज्ञानविज्ञानसम्भवाम्।
आत्मानं यो न बुध्येत न क्वचिच्छुभमाप्नुयात्॥

इसीकारण तो अनेकशः पुरुष और स्त्रियोंने महान् कष्टको सहन करते हुए धर्मको नहीं त्यागा। क्योंकि अमृत, जीवन, राज्य, पुत्र, यश, धन इत्यादि धर्मकी एक कलके समान भी नहीं, इसी कारण पण्डितजी मैं भी धर्मविषयमें लल्लोपत्तो करना ठीक नहीं समझता क्योंकि धर्म ही सार है इसलिये कहा है कि जबतक शरीर स्वस्थ रहे तब तक मनुष्यधर्मका आचरण करता रहे; क्योंकि अस्वस्थ हो



जाने पर कुछ नहीं होता, जैसा कि शिवपुराण अध्याय ३९ में लिखा है।

यावत्स्वास्थ्य शरीरस्त्वं तावद्धर्मं समाचरेत्।
अस्वस्थश्चोदितो ह्यन्यैर्न किंचित्कर्तुमुत्सहेत् ॥

श्रीमान्‌ने कृपा कर मुझको अनेक वार यही उपदेश किया था, कि भाई प्रथम अपने घरको देखना उचित है और विना अपने घरके देखे अन्यकी बात मानना बुद्धिके विपरीत है, पण्डितजी मैंने आपके कथनानुसार बहुधा पुराण मँगवा कर एक सुयोग्य पण्डितजीसे सुने जिससे मुझको यह भी विदित होगया कि आपने भी सम्पूर्ण पुराणों को यथावत् नहीं विचारा वरन् आप यह कदापि न कहते कि तुम देवताओंकी निन्दा करते हो, पुरुषाओंकी सनातन रीतिको छोड़ते हो। पण्डितजी महाराज! श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वतीजी देवताओं की बड़ी प्रतिष्ठा करते थे और हम सब देवताओंके सेवक हैं फिर निन्दा कैसी? देखिये दयालु विद्वान्‌का कर्त्तव्य है कि जो मनुष्य अविद्यामें फँस सुमार्गको छोड़ कुमार्गमें जाते हों उनको सत्यमार्गसे अन्यथा कभी न जानेदे क्योंकि वह गुरु व सुजन, माता, पिता, देवता और पति नहीं जो मृत्युके छुड़ानेका उपाय न बतलावे जैसा श्रीमद्भागवत स्कन्ध ५ में लिखा है।

आप हमारे घरानेके पुरोहित हैं और शास्त्रानुसार आपका कर्त्तव्य यही है कि आप हमारे साथ पूरा हित करें जो धर्म पर चलानेसे होता है और धर्म वेदसे जाना जाता है। सम्पूर्ण पुराण भी एक स्वर होकर कह रहे हैं कि ईश्वरीय ज्ञान वेद ही है, पुराणों का कथन है कि पुराण वेदानुकूल बनाये गये हैं परन्तु शोक यह है कि पुराणोंके बहुधा लेख वेदसे नहीं मिलते। देखिये पुराणोंने ईश्वर को सगुण और निर्गुण माना है। फिर सगुणसे त्रिदेव होना लिखा है अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, और शिव, जिनकी बड़ी २ महिमा वर्णन की हैं परन्तु फिर आगे चल कर उन पर अनेकान् दोष लगाये हैं। इसी भांति जिनको देवता माना है उनके व्यवहारोंका पाठ करनेसे मुझको तो बड़ी लज्जा आती है कि जिनके कहने और सुननेसे

सभ्यताका पता भी नहीं लगता। पण्डितजी महाराज! क्या करें उनही विषयोंको जब मुसलमान और ईसाई भाई हमें सुनाते हैं तो उस समय हमारी दशा शोचनीय होजाती है, हम सब ऋषियोंकी सन्तान होने और वेदोंका ईश्वरीय ज्ञान मानने पर भी उनके सन्मुख बात कहनेके योग्य नहीं रहते। तिस पर तुर्रा यह है कि भारतवर्षके भूषण विद्वान् और योग्य पुरुष उन त्रिदेवादिकी निन्दाओंको स्तुति कहते हैं, सच पूंछिये तो पण्डितजी मेरी श्रद्धा आपके आधुनिक सनातधर्मसे इन पुराणोंके सुनने और विचार करनेसे ही जाती रही। और श्री१०८ स्वामीदयानन्दसरस्वतीजीके कथनका महत्त्व मेरें हृदयमें प्रवेश कर गया। यथार्थमें वह बड़े योगीराज ऊर्ध्व रेता बालब्रह्मचारी थे जिन्होंने ब्रह्मचर्य्य धारण कर, वेदोंको पढ़, बड़े २ विद्वानोंसे यथावत विचार कर, संसारको कुमार्गमें जानेसे ही नहीं रोका, वरन् वेदोंको सनातन ईश्वरकृत होने और प्राचीन पुरुषाओंके महत्त्वको जगत्में चिरायु रहनेके लिये अपने तन, मन, विद्या और पुरुषार्थको समर्पण करदिया, जिसका हम सबको पूर्णरूपसे धन्यवाद देना चाहिये, न कि जैसा वर्त्तमान समयमें प्रायः आपकी नाममात्रकी धर्मसभायें उनके विषयमें मिथ्या कथन कर रही हैं और आपसे योग्य पुरुष भी उनको निन्दक कहतेहैं, अस्तु। शोक तो यही है कि आप पक्षपातको त्यागकर कुछ विचार नहीं करते। क्या अच्छा हो कि आप प्रतिदिन सायङ्कालको यहां पधार कर पुराणों के उन विषयोंको श्रवण करें जिनके अवलोकन करनेहीसे मेरी श्रद्धा और भक्ति आधुनिक सनातनधर्मसे जाती रही फिर आप अच्छे प्रकार विचार सत्यको ग्रहण कर अपने यजमानादिको उसी सनातन धर्म पर चलाइये जिससे प्राणीमात्रका कल्याण हो, आपको भी उसका यथार्थ फल मिले।

पण्डितजी सेठजी मैं आपकी अन्तिम वार्ताके अनुकूल कलसे प्रतिदिन आकर आपके कथनको सुन, विचार करूंगा फिर जो मुझको सत्य प्रतीत होगा उसको मैं स्वीकार कर अपने

यजमानोंको उसीके अनुकूल चलानेका प्रयत्न करूंगा; परन्तु मेरा कहना आपसे यह है कि जो कुछ आप मुझको सुनावें उसको भारत-वासियोंके उपकारार्थ मुद्रित कराकर प्रकाशित करादें इसके उपरान्त जो समय आप इस कार्य्यके लिये नियत करें उसकी सूचना भी नगर निवासियोंको देदेना योग्य है जिससे अन्य पुरुषोंको भी विचार करने का अवसर प्राप्त हो क्योंकि सर्वसाधारण मनुष्योंको धन तथा विद्या और समयके अभावसे बहुधा पुराणोंकी बातें सुनने और पढ़नेका अवसर नहीं मिलता वह भी इनको सुन यथार्थ लाभ उठावें।

मैं आपको धन्यवाद देताहूं क्योंकि आपने मेरे निवेदनको स्वीकार करलिया। धन्य है पण्डितजी यदि मेरे कथनके मुद्रित होनेसे भारत-वासियोंको कुछ लाभ होनेकी आशा है तो मैं आपकी आज्ञानुसार अपने कथनको अवश्यमेव मुद्रित करानेका प्रयत्न करूंगा और यह धार्मिक कथन छः बजे शामसे प्रारम्भ हुआ करेगा जिसकी सूचना पबलिकको भी दे दूंगा अन्तको हमारी आपसे यह भी प्रार्थना है कि हमारे कथनको सुन और विचार कर यदि किसी विषयमें कुछ शङ्का हो तो आप स्वयं तथा अपने सना-तनी मित्रोंसे उसका समाधान लिखाकर छपवादेवें जिससे पबलिक को सत्यासत्यके जाननेमें सुगमता हो। लीजिये इस हेतु मैं भी हस्ता-क्षर करें देता हूं आपभी अपने हस्ताक्षर कर दीजिये।

पण्डितजी—बहुत अच्छा

(दोनोंने हस्ताक्षर कर दिये)

हस्ताक्षर } पं० रामप्रसाद
पूर्णप्रसाद वैश्य

अब हम जाते हैं-आपकी इच्छानुसार आपके सब कथनको सुन यदि हमारे और हमारे भाइयोंको जो २ अनुचित प्रतीत होगा उस का उत्तरभी अवश्य छपवादेंगे जिससे संसारके प्राणियोंको यथावत् लाभ हो ।

आर्य्य सेठ—अच्छा श्री महाराज नमस्ते ।

पण्डितजी—आयुष्मान् कह कर चल दिये ।

आर्य्य सेठ—ने निम्नलिखित सूचना नगरनिवासियोंको दी ।

सूचना ।

सर्वसज्जनों पर प्रकट हो कि १५ जून सन् १९०७ के ६ बजे शाम से प्रतिदिन मैं अपनी कोठी पर श्रीमान् पं० रामप्रसादशर्माजीके सम्मुख पुराणोंके विषयमें कथन करूंगा कृपापूर्वक नियत समय पर पधार कर लाभ उठाइये और मुझको कृतार्थ कीजिये ॥ इति ॥

१५ जून सन् १९०७ } आपका शुभचिन्तक—
पूर्णप्रसाद.





* ओ३म् *

पुराण-तत्त्व-प्रकाश

प्रथम परिच्छेद

नियुक्त समय पर सेठजीके यहां पंडितजीका पधारना और आर्य्य सेठका धर्म्मसम्बन्धी निवेदन करना।

आर्य्यसेठ—श्रीमान् पण्डितजी को आते देखकर पूर्ववत् आईये महाराज ! नमस्ते । विराजमान हूजिये इतनेमें अभिलाषी श्रोतागण भी आगये जो यथायोग्यके पश्चात् सब शांतचित्त होकर बैठ गये तब सेठजीने निम्नलिखित मन्त्रसे परमेश्वरकी प्रार्थनाकी ॥

ओं पावकानः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती । यज्ञंवष्टु धियावसुः ।

हे वाक्पते ! सर्वविद्यालय ! हमको आपकी कृपासे "सरस्वती" सर्वशास्त्रविज्ञानयुक्त वाणी प्राप्त हो "वाजेभिः" तथा उत्कृष्ट, अन्नादिके साथ वर्तमान "वाजिनीवती" सर्वोत्तमक्रियाविज्ञानयुक्त पावका पवित्रस्वरूप और पवित्रकरनेवाली सत्यभाषणमय मङ्गल कारक वाणी आपकी प्रेरणासे प्राप्त होके आपके अनुग्रहसे परमोत्तम बुद्धिके साथ वर्त्तमान "वसु" निधिस्वरूप यह वाणी "यज्ञंवष्टु" सर्वशास्त्रबोध और पूजनीयतम आपके विज्ञानकी कामनायुक्त सदैव हो; जिससे हमारी सब मूर्खता नष्ट हो और हम महापाण्डित्य युक्त हों ॥

इसके उपरान्त सेठजीने श्रीमान् पण्डितजीसे कहा कि समस्त सभ्य हिन्दू भाई अठारह पुराणोंको मानते हैं जैसा कि पुराणोंमें

लिखा है। देखिये श्रीमद्भागवत स्कन्ध १२ अ० ७ श्लोक २३ में लिखा है।

ब्राह्मं पाद्मं वैष्णवं च शैवं लैंगं स गारुडम् ।
नारदीयं भागवतमाग्नेयं स्कन्दसंज्ञितम् ॥
भविष्यं ब्रह्मवैवर्तं मार्कण्डेयं स वामनम् ।
वाराहं मात्स्यं कौर्मं च ब्रह्माण्डाख्यमिति त्रिषट् ॥

(१) ब्रह्म, (२) पद्म, (३) विष्णु, (४) शिव, (५) लिंग, (६) गरुड़, (७) नारद, (८) भागवत, (९) अग्नि, (१०) स्कन्द, (११) भविष्य, (१२) ब्रह्मवैवर्त्त, (१३) मारकण्डेय, (१४) वामन, (१५) वाराह, (१६) मत्स्य, (१७) कूर्म और (१८) ब्रह्माण्ड।

लिङ्गपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ३९ श्लोक ६१, ६२, ६३ में लिखा है।

ब्राह्मं पाद्मं वैष्णवञ्च शैवं भागवतं तथा। भाविष्यं नारदीयञ्च मार्कण्डेयमतः परम्। आग्नेयं ब्रह्मवैवर्त्तं लैङ्गवाराहमेव च। वामनाख्यं ततः कूर्म्म मात्स्यं गारुडमेव च॥ स्कंदं तथा च ब्रह्माण्डं तेषां भेदः प्रकथ्यते॥

(१) ब्रह्म, (२) पद्म, (३) विष्णु, (४) शिव, (५) भागवत, (६) भविष्य, (७) नारद, (८) मार्कण्डेय, (९) अग्नि, (१०) ब्रह्मवैवर्त्त, (११) लिंग, (१२) वाराह, (१३) वामन, (१४) कूर्म, (१५) मत्स्य, (१६) गरुड़, (१७) स्कंद, (१८) ब्रह्माण्ड, मार्कण्डेय पुराण माहात्म्यमें लिखा है—

ब्राह्मं पाद्मं वैष्णवञ्च शैवं भागवतं तथा।
तथान्यंनारदीयञ्च मार्कण्डेयञ्च सप्तमं॥
आग्नेयमष्टमं प्रोक्तं भविष्यं नवमन्तथा।
दशमं ब्रह्मवैवर्त्तंलैङ्ग एकादशं स्मृतं॥
वाराहं द्वादशं प्रोक्तं स्कदं यत्र त्रयोदशं।

चतुर्द्दशं वामनञ्च कौर्म्मं पञ्चदशन्तथा ॥
मात्स्यञ्च गारुडञ्चैव ब्रह्माण्डञ्च ततः परं ॥

(१) ब्रह्म, (२) पद्म, (३) विष्णु, (४) शिव, (५) भागवत, (६) नारद (७) मार्कण्डेय (८) अग्नि, (९) भविष्य, (१०) ब्रह्मवैवर्त्त, लिंग, (१२) वाराह, (१३) स्कन्द, (१४) वामन, (१५) कूर्म, (१६) मत्स्य, (१७) गरुड, (१८) ब्रह्माण्ड ॥

शिवपुराण अध्याय १ में लिखा है ॥

ब्राह्मं पाद्मं वैष्णवञ्च शैवं भागवतं तथा ।
भविष्यं नारदीयं च मार्कण्डेय मतःपरम् ।
आग्नेयं ब्रह्मवैवर्त्त लैङ्गवाराहमेव च ॥
स्कान्दञ्च वामनञ्चैव कौर्म्ममात्स्यञ्च गारुडम् ॥
ब्रह्माण्डञ्चाति पुराणोऽयं पुराणानामनुक्रमः

(१) ब्रह्म, (२) पद्म, विष्णु (४) शिव, (५) भागवत (७) नारदीय, (८) मार्कण्डेय, (९) अग्नि, (१०) ब्रह्मवैवर्त्त (११) लिंग, (१२) वाराह, (१३) स्कंद, (१४) वामन, (१५) कूर्म, (१६) मत्स्य, (१७) गरुड, (१८) ब्रह्माण्ड ।

पद्मपुराण षष्ठी उत्तरखण्ड अध्याय २३६ में लिखा है ॥

ब्राह्मंपाद्मं वैष्णवं च शैवं भागवतं तथा ।
तथैव नारदीयन्तु मार्कण्डेयन्तु सप्तमम्
अग्नेयमष्टमं प्रोक्तं भविष्यं नवमं तथा ।
दशमं ब्रह्मवैवर्तं लिङ्गमेकादशं स्मृतम् ।
द्वादशं च वराहं च वामनं च त्रयोदशम् ।
कौर्मं चतुर्दशं प्रोक्तं मात्स्यं पञ्चदशं स्मृतम् ॥
षोडशं गारुडं प्रोक्तं स्कन्दं सप्तदशंस्मृतम् ।

अष्टादशं तु ब्रह्माण्डं पुराणानि यथाक्रमम् ॥

१ ब्रह्म, २ पद्म, ३ विष्णु, ४ शिव, ५ भागवत, ६ नारदीय, ७ मार्कण्डेय, ८ अग्नि, ९ भविष्य, १० ब्रह्मवैवर्त्त, ११ लिङ्ग, १२ वाराह, १३ वामन, १४, कूर्म, १५ मत्स्य, १६ गरुड़, १७ स्कंद, १८ ब्रह्माण्ड ।

देवीभागवत स्कंद १ अध्याय ३ में लिखा है—

चतुर्दशसहस्रं च मात्स्यमाद्यं प्रकीर्तितम् ।
तथाष्टसहस्रं तु मार्कंडेयं महाद्भुतम् ॥३॥
चतुर्दशसहस्राणि तथा पंचशतानि च ।
भविष्यं परिसंख्यातं मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥
अष्टादशसहस्रं वै पुण्यं भागवतं किल ।
तथाचाऽयुतसंख्याकं पुराणं ब्राह्मसंज्ञकम् ॥
द्वादशैव सहस्राणि ब्रह्मांडं च शताधिकम् ।
तथाष्टादशसाहस्रं ब्रह्मवैवर्तमेव च ॥
अयुतं वामनाख्यं च वायव्यं षट्शतानि च ।
चतुर्विंशति संख्यातः सहस्राणि तु शौनक ॥
त्रयोविंशति साहस्रं वैष्णवं परमाद्भुतम् ।
चतुर्विंशति साहस्रं वाराहं परमाद्भुतम् ॥
षोडशैव सहस्राणि पुराणं चाग्निसंज्ञितम् ।
पंचविंशति साहस्रं नारदं परमं मतम् ॥
पञ्चपञ्चाशत्साहस्रं पद्माख्यं विपुलं मतम् ।
एकादशसहस्राणि लिंगाख्यं चातिविस्तृतम् ॥
एकोनविंशत्साहस्रं गारुडं हरिभाषितम् ।
सप्तदशसहस्रं च पुराणं कूर्मभाषितम् ॥
एकाशीति सहस्राणि स्कंदाख्यं परमाद्भुतम् ।

पुराणाख्या च संख्या च विस्तरेण मयानघाः ॥

१ मत्स्य, २ मार्कण्डेय, ३ भागवत, ४ भविष्य, ५ ब्रह्माण्ड, ६ ब्रह्मवैवर्त, ७ ब्रह्म, ८ वामन, ९ वाराह, १० विष्णु, ११ वायु, १२ अग्नि, १३ नारद, १४ पद्म, १५ लिङ्ग, १६ गरुड़, १७ कूर्म्म, १८ स्कंद।

कूर्मपुराण अध्याय १ श्लोक १३, १४, १५ में लिखा है—

ब्राह्मं पुराणं प्रथमं पाद्मं वैष्णवमेव च ।
शैवं भागवतं चैव भविष्यं नारदीयकम् ॥
मारकण्डेयमथाग्नेयं ब्रह्मवैवर्तमेव च ।
लैङ्गं तथा च वाराहं स्कन्दवामनमेव च ॥
कौर्म्यं मात्स्यं गारुडञ्च वायवीयमनन्तरम् ।
अष्टादशं समुद्दिष्टं ब्रह्माण्डमिति संज्ञितम् ॥

१ ब्रह्म, २ पद्म, ३ विष्णु, ४ शिव ५ भागवत, ६ भविष्य, ७ नारद, ८ मार्कण्डेय, ९ अग्नि, १० ब्रह्मवैवर्त, ११ लिङ्ग, १२ वाराह, १३ स्कन्द, १४ वामन, १५ कूर्म, १६ मत्स्य, १७ गरुड़, १८ वायु।

श्रीमान् पण्डितजी देखिये श्रीमद्भागवत, लिङ्ग, मार्कण्डेय, शिव और पद्म इन पांच पुराणोंमें ब्रह्म, पद्म, विष्णु और शिवकी गणना समान है परन्तु श्रीमद्भागवतमें पांचवां लिङ्ग और लिङ्गमें पांचवां भागवत शिव, पद्म, और कूर्ममें पांचवां भागवतको गिना है इस प्रकार अन्य पुराणोंकी गणनाका भेद है और देवी भागवतमें और ही रीतिसे गणनाकी है इसके सिवाय देवीभागवत कूर्म और अग्नि पुराण में वायुपुराणका नाम आया है इस भेदका कारण क्या है जब कि हमारे सनातनी भाई अठारह पुराणोंका कर्त्ता व्यासजी महाराजको ही मानते हैं इसके अतिरिक्त पण्डितजी अग्नि और वह्निका एकही अर्थ हैपरन्तु अग्नि और वह्नि दो पुराण पृथक् २ उपस्थित हैं, ब्रह्मवैवर्त यद्यपि एकही पुराण प्रसिद्ध है परन्तु वर्त्तमान समयमें उसके भी दो प्रकारके पुस्तक पाये जाते हैं, इस कारण एकका नाम ब्र०वै० और दूसरेका नाम प्राचीन ब्रह्मवैवर्त्त पुराण रक्खा गया है। स्कंद

पुराणका आज कल कोई स्वतन्त्र पुस्तक प्रचलित नहीं है परन्तु कई भाग काशीखण्ड, रेवाखण्ड, तत्कालखण्ड, और भीमखण्ड आदि नामों से स्वतन्त्र पुस्तकें मिलती हैं। इसी भांति भविष्यत् और शिवपुराण भी दो २ प्रकारके मिलते हैं। इस सूरतमें समस्त पुराणोंकी संख्या अधिक होजाती है परन्तु इनमेंसे अठारह पुराणोंके कर्त्ता व्यासजी माने जाते हैं॥

अब पण्डितजी सबसे प्रथम यह जानना आवश्यक है कि व्यासजी महाराजका जन्म कब हुआ ? और वह किस धर्मके मानने वाले थे? इसके अतिरिक्त यह भी जानना चाहिये कि पुराणोंमें जो कुछ लिखा है वह उनके धर्मके अनुकूल है वा प्रतिकूल ? जब हम इन बातोंका विचार करते हैं तो स्पष्ट प्रकटहोता है कि महर्षिव्यास पाराशर महाराज के पुत्र थे जो महाराज युधिष्ठिरके राज्यशासनके समय विद्यमान थे और महाराज युधिष्ठरके राज्यके विषयमें भारतके प्रसिद्ध ज्योतिषी वाराहमिहिर वाराहीसंहितामें लिखते हैं कि विक्रम संवत् आरम्भ होनेसे ५१८ वर्ष पूर्व महाराज युधिष्ठिरका २५२६ संवत् था इस लिये २५२६+५१८+१९६४ अर्थात ५००८ वर्ष महाराजा युधिष्ठिरके राज्य को व्यतीत हुए होगये।

यदि पौराणिकोंका यह वचन "अष्टादशपुराणानां कर्त्ता सत्यवतीसुतः" (अर्थात् सत्यवतीके पुत्र व्यासने पुराणोंको बनाया) सत्य है तो विष्णु और लिङ्गपुराणके निम्नलिखित वाक्यों और मार्कण्डेयमें व्यास और सूतके सम्बन्ध न होनेसे स्पष्ट प्रकट होरहा है कि पुराणभी अपनेको व्यास महाराजका बनाया हुआ सिद्ध नहीं करसकते जैसा कि विष्णुपुराण अंश १ अध्याय १ में लिखा है।

एवं तातेनतेनाहमनुनीतो महात्मना।
उपसंहृतवान्सत्रं सद्यस्तद्वाक्यगौरवात्॥
त्वया तस्मान्महाभाग ददाम्यन्यंमहावरम्।

हे मैत्रेय ! जब मैंने अपने दादा वशिष्ठके कहनेसे राक्षसोंको नाश

करनेवाला यज्ञ बन्द किया तब उन्होंने प्रसन्न होकर मुझको यह वर दिया कि तुम पुराण बनानेवाले होगे।

पुराणसंहिताकर्त्ता भवान्वत्स भविष्यति।
देवतापरमार्थं च यथावद्वेत्स्यते भवान्॥

लिङ्गपुराण अध्याय ६४ में लिखा है कि पुलस्त्य मुनिने पाराशर से कहा कि हे पुत्र! इस बड़े भारी वेदमें भी तैंने वशिष्ठजीके वचन से क्षमाकी और हमारे पुत्र राक्षसोंका संहार नहीं किया इस कारण से हम बहुत प्रसन्नहैं। अब हम तुमको वर देते हैं कि पुराणसंहिता करनेका तुमको सामर्थ्य होगा और देवताओंका परमार्थ तुम ठीक २ जानोगे, कर्मकी प्रवृत्ति तथा निवृत्तिमें तुम्हारी बुद्धि निर्मल और निःसन्देह रहेगी"। यह सुन वशिष्ठजीने भी पाराशरसे कहा कि पुलस्त्यजी जैसा कहते हैं वैसाही होगा। पाराशर मुनिभी इसी भांति वशिष्ठ और पुलस्त्यजीका अनुग्रह पाय विष्णुपुराण रचतेभये। जैसा कि—

त्वया तस्मान्महाभाग ददाम्यन्यं महावरम्।
पुराणसंहिताकर्ता भवान् वत्स भविष्यति॥ ११७॥
देवतापरमार्थञ्च यथावद्वेत्स्यते भवान्।
प्रवृत्तौ वा निवृत्तौ वा कर्मणस्तेऽमलामतिः॥ ११८॥
मत्प्रसादादसन्दिग्धा तव वत्सभविष्यति।
ततश्च प्राह भगवान् वशिष्ठो वदतांवरः॥ ११९॥
पुलस्त्येन यदुक्तं ते सर्वमेतद्भविष्यति।
अथ तस्य पुलस्त्यस्य वशिष्ठस्य च धीमतः॥१२०॥
प्रसादाद्वैष्णवं चक्रे पुराणं वै पराशरः॥

इसपरभी यह मानही लिया जावे कि पुराणोंको व्यासही महाराजने बनाया तो उनको बने ५००८ वर्षसे कुछ अधिक हुए परन्तु ऐसा भी माना नहीं जाता क्योंकि पुराण अपने २ बननेका समय पृथक् २ बतला रहे हैं देखिये पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय १९३में

लिखा है कि नारदजी व्याकुल अवस्थामें सनकादिकोंको मिले तब उन्होंने इस मलीनता होनेका कारण पूछा तो उन्होंने कहा कि मैं पुष्कर, प्रयाग, काशी, गोदावरीके किनारे, हरिक्षेत्र, कुरुक्षेत्र, श्रीरङ्ग सेतुबन्धु तथा और तीर्थोंमें इधर उधर घूमता हुआ आया हूं परन्तु कहीं भी मनके संतोषका करने वाला कल्याण नहीं देखा। सम्पूर्ण आश्रम तीर्थ, नदियां, कुंड और देवताओंके स्थान मुसलमानोंसे भर गये हैं और अनेक स्थानोंको दुष्टोंने गिरा दिया है। जैसा कि-

आश्रमायवनैरुद्धास्तीर्थानिसरितोहृदाः।
देवतायतनान्यत्र दुष्टैरुच्छेदतानि च ॥

प्रिय पण्डितजी! इतिहासोंके देखनेसे विदित होता है कि यह दशा भारतमें महमूद ग़ज़नवीसे लेकर औरंगजेबके समय तक होती रही इससे स्पष्ट प्रकट होता है कि पद्मपुराण संवत् १०१४ और १७२६ के बीचमें बनाया गया और ब्रह्माण्ड पुराणमें लिखा है कि जो घोरकलियुगमें तमाकू पीता है वह नरकको जाता है।

प्राप्ते कलियुगे घोरे सर्वे वर्णाश्रमे नराः।
तमाखं भक्षितं येन सगच्छेन्नरकार्णवे ॥

पद्मपुराणमें लिखा है कि जो तमाकू पीनेवाले ब्राह्मणको दान देता है वह नरकको जाता है और ब्राह्मण गांवका सूकर होता है॥

धूम्रपानरतं विप्रं दानं कुरवान्ति ये नरः।
दातारो नरकं यान्ति ब्राह्मणो ग्रामशूकरः॥

इतिहास इस विषयमें एक स्वर होकर कह रहे हैं कि तम्बाकू अमरीकासे अकबरके समयमें भारतवर्षमें आया इससे भी प्रकट होता है कि यह दोनों पुराण अकबरके पीछे बनाये गये और अकबरका समय विक्रमके १६१३ से १६६२ तक रहा॥

इसके अतिरिक्त स्वामी शंकराचार्य्य रामानुज महाराजसे प्रथम होचुके थे क्योंकि रामानुजजीने शंकरभाष्यका निषेध किया है और यह बात संसारमें प्रसिद्ध है कि शंकर स्वामी सारे संसारको माया

और अपनेको ब्रह्म मानते थे और सम्पूर्ण हिन्दू शंकरस्वामीको महादेवका अवतार कहते थे जिनका होना बौद्ध मतसे प्रथम नहीं हो सक्ता क्योंकि उन्होंने बौद्धमतका खण्डन किया है। पद्मपुराणमें पार्वती जीके प्रश्नके उत्तरमें महादेवजी कहते हैं—

मायावादमसच्छास्त्रं प्रच्छन्नं बौद्ध उच्यते
मयैव कथितं देवि ! कलौ ब्राह्मणरूपिणा ॥७॥

हे देवि ! कलियुगमें मैंने ब्राह्मणका रूप धारणकर मायावाद प्रवर्त्तक किया (जो छिपा हुआ बौद्ध मत है)। इसलिये पद्मपुराण बुद्ध, शंकर, रामानुजके पीछे बना इसके उपरान्त श्रीमद्भागवत स्कंद १ अध्याय ३ में बुद्ध महाराजको अवतार माना है जैसा कि—

ततः कलौ संप्रवृत्ते संमोहाय सुरद्विषाम् ।
बुद्धो नाम्ना जिनसुतः कीटकेषु भविष्यति ॥

इतिहाससे विदित होता है कि बुद्ध विक्रमी संवत् ६१४ से पूर्व उत्पन्न हुए और ८० वर्षकी आयुमें मरगये जिनको २५६७ वर्ष व्यतीत हुए परन्तु व्यास महाराजके जन्मको ५००८ वर्ष हुए। इससे प्रकट होता है कि श्रीमद्भागवत व्यास महाराजकी बनाई हुई नहीं है। इसके अनन्तर इस बातको सब मानते हैं कि शुकदेवजीने राजा परीक्षितको भागवत सुनाई परन्तु इतिहाससे यह प्रकट नहीं होता क्योंकि कौरव और पाण्डवोंके युद्धके पश्चात् महाराज युधिष्ठिर गद्दीपर बैठे जिन्होंने ३६ वर्ष ८ महीने २५ दिन राज्य किया और उनकी मृत्युके पीछे परीक्षितने ६० वर्ष राज्य किया और भागवतमें लिखा है कि परीक्षितके राज्यके पीछे अर्थात् महाभारतके ९६ वर्षके पश्चात् शुकदेवजीने उनको भागवत सुनाया परन्तु महाभारतके शान्ति पर्व अध्याय ३३३ से प्रकट होता है कि जब लड़ाई समाप्त हुई और भीष्मजीके अन्त समय पर युधिष्ठिर उनसे उपदेश सुननेको गये तब उन्होंने शुकदेवजीके विषयमें कहा कि बहुत दिन व्यतीत हुए कि उनका देवलोक होगया—

शुकस्तु मारुतादूर्ध्वं गतिकृत्वांतरिक्षगां ।

दर्शयित्वा प्रभावं स्वं ब्रह्मभूतोऽभवत्तदा ॥ १९

यह कह व्यास शोकातुर हुए। युधिष्ठिरके इस प्रकार पूछने पर प्रकट होता है कि मानों उन्होंने उसको देखा नहीं। उस समय राजा परीक्षित गर्भमें भी न थे फिर भला जब कि शुकदेवजी राजा परीक्षितके जन्मसे प्रथमही मर गये थे तो फिर उनका ९६ वर्ष पीछे भागवत सुनना किस प्रकार होसक्ता है और व्यासजी महाराज इनसे बहुत पहिले हुए तो फिर क्योंकर व्यासजीने भागवतको बनाया इसके उपरान्त ज्ञानेश्वर मिश्रने जो गीताकी टीका बनाई है उसमें उन्होंने १२७२ शकाब्दमें हेमाद्रिका होना सिद्ध किया है और उन्हींके समयमें पण्डित बोपदेवजी हुए जिन्होंने राजा सचिव हिमाद्रको भागवत सुनाई थी इससे प्रत्यक्ष प्रकट होता है कि भागवतको बने बहुत थोड़े दिन हुए।

अग्निपुराण अध्याय १३ श्लोक २ में लिखा है कि मायामोह रूप जिसका ऐसा शुद्धोदनका बेटा होता हुआ जैसा कि—

मायामोहस्वरूपोऽसौ शुद्धोदनसुतोऽभवत् ।

इससे स्पष्ट प्रकट होरहा है कि यह पुराण बुद्धके जन्मके पीछे बनाया गया॥

इसी प्रकार भविष्यत पुराणमें भी बुद्ध, पीपाभक्त, अकबर और गुरुनानककी उत्पत्तिका वर्णन है फिर वह व्यास महाराजका बनाया हुआ क्यों हो सक्ता है देखिये बुद्धके विषयमें लिखा है॥

एतस्मिन्नेव काले तु कलिनासंस्तुतो हरिः
काश्यपादुद्भवो देवो गौतमो नाम विश्रुतः॥ ३६
बौद्धधर्मश्च संस्कृत्य पटले प्राप्तवान् हरिः॥ ३७ ॥

सम्पूर्ण इतिहासवेत्ता एक स्वर हो कह रहे हैं कि रामानुज विक्रमकी १२ शताब्दिमें हुए जिन्होंने वैष्णव मत चला कर शङ्ख, चक्र, गदा और पद्मसे लोगोंको चक्रांकित किया; परन्तु वैष्णव मतका खण्डन लिङ्ग पुराणमें है—

शङ्खचक्रे तापयित्वा यस्य देहः प्रदह्यते ।

स जीवन्नुकुणपस्त्याज्यः सर्वकर्मवहिष्कृतः ॥

अर्थात् जिसके शरीर पर तपाकर शङ्ख, चक्र आदिकी छापें लगाई गई हैं वह जीते जी मुर्दा और सब धर्मोंसे पतितके समान त्यागने योग्य है। इससे स्पष्ट प्रकट होरहा है कि यह लिङ्गपुराण भी व्यासजीका बनाया हुआ नहीं है क्योंकि रामानुजजीको आज तक ७५१ वर्ष हुए और व्यासजीको ५००८ वर्ष हुए इसलिये इस पुराण के कर्त्ता व्यासजी नहीं।

जगन्नाथजीका मन्दिर संवत् १२३१ विक्रमीमें उड़ीसाके राजा अनंग भीमदेवने बनाया था इसको सब इतिहासवेत्ता मानते हैं और मन्दिर पर भी यही संवत् पड़ा है और इसका माहात्म्य स्कंदपुराण में लिखा है इससे प्रकट होता है कि स्कंदपुराण संवत् १२३१ के पीछे बनाया गया।

ब्रह्मवैवर्त्तादिकी भविष्यत् वाणियोंके पढ़नेसे जाना जाता है कि वह मुसलमानोंके भारताक्रमणके पश्चात् बने हैं क्योंकि उनमें यह लिखा है कि कांची और काश्मीर मण्डलका राज्य यवन भोग करेंगे।

गान्धारंसिन्धुसौवीरे कांचींकाश्मीरमण्डलम् ।
भोक्ष्यन्ति निन्द्यकृतयः यवनः कालिदूषितः ॥

अर्थात् यवन लोग; खन्दार, सिन्ध, कांची और काश्मीरमें राज्य करेंगे इससे स्पष्ट जाना जाता है कि जब मुसलमानी राज्य उक्त देशों में होगया था तब ब्रह्मवैवर्त्तपुराण बना था यदि यह भविष्यत्वाणी होती तो यह लिखते कि सम्पूर्ण भारत यवनोंके आधीन होजायगा वो नहीं लिखा देखिये गरुड़पुराण अध्याय ५५ में लिखा है—

पूर्वे किरातास्तस्यास्ते पश्चिमे यवनास्थितः ।

अर्थात् भारतके पूर्वकी ओर किरात और पश्चिम यवन बसते हैं भला पण्डितजी महाराज क्या व्यासजीके समयमें इस भारतखण्डमें मुसलमान रहते थे कदापि नहीं इससे जाना जाता है कि यह पुराण भी थोड़ेही समयका बना हुआ है।

पण्डितजी महाराज पुराणवालोंने पुराणोंमें जो लक्षण लिखे हैं उनमें भी परस्पर मतभेद है और वह लक्षणभी पूरे २ उपरोक्त पुराणों में नहीं मिलते पुराणोंका सामान्य लक्षण यह है।

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च ।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम् ॥

अर्थात् जिसमें सर्गनाम जगत्की उत्पत्ति और प्रतिसर्ग प्रलय सृष्टि के आरम्भसे वंश वा कुलोंका वर्णन मन्वन्तरोंकी व्यवस्था अनेक कुलोंमें उत्पन्न हुए प्रधान पुरुषोंके चरित्रोंका वर्णन हो उनको पुराण कहते हैं—परन्तु श्रीमद्भागवत स्कन्द १२ अ० ७ में दश लक्षण लिखे हैं।

सर्गश्चाविसर्गश्च वृत्तिरक्षान्तराणि च । वंशो वंश्यानुचरितं संस्थाहेतुरपाश्रयः ॥ दशभिर्लक्षणैर्युक्तं पुराणं तद्विदो विदुः । केचित्पञ्चविधं ब्रह्मन्महदल्पव्यवस्थया ।

ऐसाही विष्णुपुराण ३ अध्याय ६ में लिखा है। परन्तु अग्निपुराण और भविष्यमें व्याकरण-कोश—वैद्यक, ज्योतिष, मारण, उच्चाटन, वशीकरण, गृहादि बनाना और सामुद्रिक इत्यादि विषयभी लिखे हैं फिर आप यह क्योंकर कह सकते हैं कि यह पुराण व्यासोक्त हैं और भी देखिये कि पण्डितवर वराहमिहरने अपने समयके प्रचलित मान्य पुस्तकोंकी जो सूची लिखी है उसमें भी तो पुराण ग्रन्थोंके नाम तकभी नहीं लिखे इसके उपरान्त उन्होंने जो मथुरापुरीका वर्णन किया है उसमें लिखा है कि मथुरानगरीमें बौद्धोंके बड़े २ बीस मन्दिर और २००० बौद्ध धर्मोपदेशक थे। इसके अतिरिक्त चीनके प्रसिद्ध यात्री फाहिङ्गने खीष्टाब्दकी ५वीं शताब्दीमें जो भारतकी यात्राकी थी उसने अपनी यात्रा पुस्तकमें लिखी है कि मथुरापुरी बौद्धमन्दिरोंसे परिपूर्ण होरही है। इससे प्रत्यक्ष प्रकट होता है कि जिन पुराणोंमें मथुरापुरीको विष्णुके मन्दिरोंसे परिपूर्ण लिखा है वह सब पुराण खीष्टाब्द की पांचवीं शताब्दीके पश्चात् बनाये गये हैं।

इसके अनन्तर दो भागवत होनेके कारण आपसमें झगड़ा बना रहता है यदि दोनोंको पुराणोंमें गिना जाय तो १८ के स्थान पर १९

पुराण हुए हैं वह सम्भव नहीं। वैष्णवलोग श्रीमद्भागवतको; शाक्त लोग देवीभागवतको महापुराण मानते हैं इस विषयमें अपने २ पक्ष के प्रमाण भी देते हैं जैसा कि पद्मपुराणमें लिखा है।

शैवमादि पुराणं च देवीभागवतं तथा।

और भी लिखते हैं।

भगवत्याः कालिकायास्तु माहात्म्यं यत्र वर्ण्यते।
नानादैत्यवधोपेतं तद्वै भागवतं विदुः॥
कलौ केचिद्दुरात्मानो धूर्त्ता वैष्णवमानिनः।
अन्यद्भागवतं नाम कल्पयिष्यन्ति मानवः॥

अर्थात् भगवती कालिकाका जिसमें माहात्म्य लिखा हो वह भागवत है कलियुगमें बहुतसे धूर्त्त जो अपनेको वैष्णव मानते हैं दूसरी भागवत बनावेंगे।

पण्डितजी महाराज यदि पुराणोंका बनानेवाला एक मनुष्य होता तो भी इस प्रकारके शब्द वह न कहता इससे भी प्रकट होता है कि यह पुराण व्यास महाराजके बनाये हुए नहीं हैं।

देवीभागवत स्कंद तीनमें लिखा है—

वेदशाखाः पुराणानि वेदान्तभारतं तथा।
कृत्वा संमोहसं मूढोऽभवं राजन्मनस्यपि॥

अर्थात् वेदोंकी शाखा और पुराण तथा वेदान्त सूत्र और भारत बनाकर भी मैं व्यास मोह मूढ़होगया तब देवीभागवत बनाई।

देवीयामल तन्त्रमें लिखा है कि—

श्रीमद्भागवतं नाम पुराणं वेदसंमतम्।
पारीक्षितायोपदिष्टं सत्यवत्यङ्गजन्मना॥१॥
यत्र देव्यवताराश्च बहवः प्रतिपादिताः।

श्रीमद्भागवत नामक पुराण वेदसम्मत परीक्षितके पुत्र जनमेजय को व्यासजीने उपदेश किया जिसमें देवीके बहुत अवतार प्रतिपादन किये।

श्रीमान् अब इसका न्याय सनातनी भाइयोंके सिर है हमारे विचारमें दोनों और अन्य सब पुराण व्यास महाराजके बनाये नहीं हैं।

अब आपको यह भी विचारना उचित है कि व्यास महाराज बड़े विद्वान् धर्मात्मा और योगीराज थे जिन्होंने वेदान्तसूत्र और मीमांसाकी व्याख्या और योग पर भाष्य किया है जिसमें बड़े २ गम्भीर विषय भरे पड़े हैं जिनके समझने वाले वर्त्तमान समयमें बहुत ही कम दृष्टि आते हैं जो सब प्रकारसे वेद, बुद्धि और सृष्टिक्रमके अनुकूल हैं। देखिये वह कहते हैं "ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः" अर्थात् विना ज्ञानके मुक्ति नहीं होती और योगदर्शनमें मुक्तिके प्रकरणमें यम, नियमादि सेवनकी आज्ञा की है परन्तु पुराणोंमें जिनको वह व्यासकृत मानते हैं इस लेखके विपरीत मुक्तिके साधन बतलाये हैं फिर भला वह पुराण क्योंकर महर्षिव्यासकृत होसक्ते हैं। इन सब बातोंके अतिरिक्त इन पुराणोंमें अनेक बातें वेद बुद्धि और सृष्टिक्रमके विपरीत भरी पड़ी है फिर मैं नहीं जानता कि व्याससे बुद्धिमान् पुरुषने इन पुराणोंको बनाया जिनपर तुच्छिबुद्धिके मनुष्य शंका करते हैं श्रीमान् पण्डितजी संक्षेपसे आप भी सुनलीजिये देखिये राजा वेनके मरने पर उसकी भुजाओंको मथ निषाद और पृथुका उत्पन्न करना, प्रम्लोचामें गर्भका रहना, फिर मुनिके श्रापसे गर्भका पसीनाकी राह निकल वृक्षों परसे पोंछ उससे मरीषाका जन्म होना, वैवस्वत मुनिकी छींकसे इक्ष्वाकु और हरिणीके गर्भसे ऋष्यशृङ्ग—राजा युवनाश्वकी कोखसे पुत्र राजा सगरकी रानीके साठ हज़ार पुत्रोंका होना, अष्टावक्रका गर्भके भीतर बोलना, राजा प्रियव्रतके रथके पहियेसे सात समुद्रोंका होना, राजा ययातिका अपने पुत्रको बुढ़ापा देकर यौवनका लेना, गौतममुनिका वीर्य्य एक सरकण्डे पर गिर पुत्र और पुत्रीका उत्पन्न होना, राजा वसुके वीर्य्यको बाजका लेजाना मार्गमें यमुनामें गिर मछलीका निगलना फिर उसके पुत्र, पुत्रीका होना, वनतासे अरुण और गरुड़का उत्पन्न होना, राजा भोगाश्वनका एक जलाशयमें स्नान करते ही स्त्री होजाना फिर मुनिकी पुत्रीका वशिष्ठकी स्तुति करने पर उसका पुरुष होजाना, शुक्रके शिष्य कचका राक्षसोंको टुकड़े २

कर कुत्ते सियारोंको खिलाना और अपनी पुत्रीके अधिक अनुरोध करने पर उसको उनके पेटसे जीवित निकालना, देवताओंसे वृक्षोंकी उत्पत्ति, राजा वलाश्वके क्रोध करने पर उसके शरीरसे हाथी, घोड़े और सेना का उत्पन्न होना, बलके शरीर कटने पर धातुओंका उत्पन्न होना, ज्वरकी अद्भुत उत्पत्ति और उसका अनोखा इलाज, पतिव्रतके प्रताप से सूर्य्यका छिप जाना, शुक्र महाराजके फूटे नेत्रकी अपूर्व औषधि, राजा सोमकका पुत्रोंके गर्भ जन्तु नाम पुत्रकी चर्बीसे हवन करना और उसकी गन्धसे रानियोंके गर्भका रहना फिर सन्तानका होना, नारद मुनि और अर्जुन महाराजका स्त्री हो सन्तान उत्पन्न करना फिर पुरुष होजाना, एक वेदसे व्यास महाराजका चार वेद करना, ब्रह्माजी के शरीर छोड़नेसे दिनका होना, समुद्र मथनेपर कामधेनु गाय, कल्प-वृक्ष, मदिरा, अमृत, विष, उच्चैश्रवा नाम अश्व व ऐरावत नाम गज और लक्ष्मीका निकलना इत्यादि बातें भरी पड़ी हैं इसके उपरान्त इन पुराणोंमें पूर्वापर विरोधभी पाया जाता है इससे यहभी प्रकट होता है कि उपरोक्त अठारह पुराण किसी एक विद्वान्के भी बनाये हुए नहीं हैं क्योंकि साधारण मनुष्य भी अपने वचनोंको आप खण्डन करना अच्छा नहीं समझता फिर विद्वान्‌तो कभीभी ऐसा नहीं कर सकते न कि व्याससे विद्वान् और ज्ञानी जिनको सनातनधर्मी पर-मेश्वरका अवतार मानते हैं। देखिये एक स्थान पर पुराणोंमें श्रीकृष्ण महाराजको साक्षात् ईश्वर दूसरे स्थान पर नारायणके बारका अंशा-वतार लिखा है पद्मपुराणमें विष्णुकी महिमा गाते हुए लिखा है कि जो मोहवश होकर विष्णुको त्याग कर अन्य देवताकी पूजा करता है वह पाखण्डी है और विष्णुके सिवाय और देवतों पर चढ़ा हुआ पदार्थ जो ब्राह्मण एकबारभी खाता है वह अवश्य चाण्डाल हो जाता है।

शिवपुराणमें शिवकी महिमा करते हुए कहा है कि त्रिलोकीके स्वामी, नाथ ब्रह्मा और विष्णुके मालिक यही हैं जो कोई इनको छोड़ कर अन्य देवताकी उपासना करता है वह चाण्डालके समान पतित होजाता है। भविष्यपुराणमें सूर्य्यनारायणकी पूजाकी महिमा

गाई है देवीभागवतमें देवीके प्रतापके सन्मुख ब्रह्मा, विष्णु और शिवको तुच्छ ठहराया है वरन् देवीके सन्मुख यह तीनों स्त्री होगये फिर स्तुति करने पर उसीके प्रसादसे स्त्रीत्व उनसे गया फिर अपने स्वरूपमें हुए ।

इसके उपरान्तएकही विषयको पृथक् २ पुराणोंमें पृथक् २ रीति से वर्णन किया है जैसा कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गणेश और गंगादि की उत्पत्ति ॥

इन सब बातोंको छोड़कर पौराणिक जन परमेश्वरको सर्वव्यापक, सर्वसामर्थ्य, सर्वान्तर्यामी, निराकार और अजन्मा कहते हैं फिर उसी परमेश्वरके ब्रह्म, विष्णु, शिव, यह शरीरधारी मान उनमें अनेकान दोषारोपण कर निर्दोषको दोषी बना उसकी पवित्रतामें धब्बा लगाते हैं इसी प्रकार उसके अवतारोंको मान उनकी पूर्ण रूपसे निन्दा लिख डाली है फिर अन्य देवताओंकी और ऋषियोंकी निन्दाका क्याठीक—ब्रह्मा का अपनी पुत्री पर आसक्त होना और प्रसंग करना महादेवके विवाहमें पार्वतीके अंगुष्ठको देखकर वीर्य्यपात करना । एक स्त्रीके होते एक गोपकी स्त्रीसे विवाह करना । श्रीकृष्ण महाराजकी गायोंको चुराना, अपने पुत्र नारद को वृथा श्राप देना कि तुम दासीपुत्र हो । शिवके सम्मुख मिथ्या बोलना, ब्रह्माके सिरको काल भैरवको नखसे काटना पार्वतीके शापसे ढालका वृक्ष होना उसकी ढालसे और नाकसे वाराहका निकलना, जांघसे एक स्त्रीका उत्पन्न होना, केशसे सर्प और गानसे गान्धर्वका उत्पन्न होना सावित्रके शापसे पूजाका संसारसे उठना ॥

विष्णु महाराजका जालन्धरकी पतिव्रता स्त्री वृन्दाका सतीत्व नष्ट करना, राक्षसोंको, स्त्रीका रूप धर उनको मोहित करना, नारद मुनिको स्त्री बना सन्तान उत्पन्न कर फिर पुरुष बना देना, शंखचूड़की स्त्रीके साथ प्रसंग करना, राजा अम्बरीषकी कन्याके अर्थ नारद और पर्वत मुनिको धोका देकर आप ले आना और पूछने पर उनसे मिथ्या बोलना, सिरका कटना और घोड़ेका सिर लगाना भृगु

ऋषिकी स्त्रीका सिर काटना, महादेवजी.................बढ़ाकर ऋषियोंकी स्त्रियोंका मोहित करनापार्वतीके विरहमें सप्तऋषियोंका स्मरण करना, अतिविषयी होना, अतिथि बनकर सुदर्शनकी स्त्रीसे अनुचित व्यवहार कर परीक्षालेना, अपने पुत्र गणेशका शिर लड़ाईमें काटना, फिर हाथीका सिर जोड़ना, विष्णु महाराजके कहनेसे राक्षसोंके परास्त करनेकेलिये उनको धर्मसे च्युत करनेकेलिये तामसपुराणोंका बनाना, बायें अंगूठेके नखसे ब्रह्माजीका पांचवां सिर काटना, फिर कपाली होना, ब्रह्म-हत्या दूर करनेके अर्थ विष्णु महाराजकी स्तुति कर उपाय पूछ जाना, तीर्थोंमें जा अविमुक्त तीर्थ जा हत्यामोचन होना, पुष्कर तीर्थमें यज्ञ के समय नग्न जाना और फिर वहां उनको ब्राह्मणोंका मारना फिर उनको शाप देना कि कलियुगमें तुम वेदसे विमुख होजाओगे।

विष्णुमहाराजके मोहिनीरूपको देखनेकी इच्छा प्रकट करना, फिर उनकी मायासे मोहित हो विष्णुरूपी स्त्रीके पीछे दौड़ना और आलिंगन करनेसे वीर्य्यपात होने और धरती पर गिरनेसे सोनेकी खानिका होना, भयंकर रूपका धारण कर रहना, विषका पीना, राजा इलाका एक मास स्त्री और एक मास पुरुषका होना ॥

ब्रह्मा, विष्णु और महेशका एक होना फिर उनका एक दूसरेसे बड़प्पन दिखलाना, बलदेवजी महाराजका शराब पीना, देवीपर मांस चढ़ना, श्रीकृष्ण महाराजका राधा पर मोहित होकर अवतार लेना, श्रीरामचन्द्रजीका सीताके विरहमें दुःखित होना, समुद्र पर पुल बांधने और रावणके मारनेके लिये व्रत आदिका करना ॥

इसी प्रकार इन्द्र जो देवताओंके राजा थे अपने कार्य्यकी सिद्धिके लिये अपनी पुत्री जयन्तीको शुक्रके पास भेजा, गौतममुनिकी स्त्री अ-हल्याका पातिव्रत भ्रष्ट करना कुवेरकी स्त्रीका सतीत्वका नाश मारना, और अपनी सौतेली माता दितिके उदरमें सूक्ष्मरूपसे घुसके गर्भके उञ्चास टुकड़े करना ॥

एक मुनिके पास जाकर बूढ़े पक्षीका रूप धारण कर मनुष्यमांस भक्षणकी इच्छा प्रकट करना, चन्द्रमाजीका अपने गुरु बृहस्पतिकी स्त्रीकेसाथ समागम कर बुधको उत्पन्न करना, बृहस्पतिजीका अपने

बड़े भाई उतथ्यकी स्त्रीसे प्रसंग करना, शुक्रका रूप धारण कर राक्षसोंसे मिथ्या बोल उनको धर्ममार्गसे हटाना, सूर्य्य महाराजका घोड़ा बन अपनी स्त्री संज्ञासे घोड़ीके रूपमें प्रसंगकर पुत्र उत्पन्न करना, कुन्तीसे बाल्यअवस्थामें रमण कर गर्भ स्थापन करना, श्रीकृष्ण महाराजकी सोलहसहस्त्रएकसौआठ स्त्रियोंका अपने पुत्र सांब पर मोहित हो प्रसंगकी इच्छाका उत्पन्न होना, इत्यादि दोष लगाये हैं परन्तु बुद्ध महाराज पर कोई कलंक नहीं लगाया जिन्होंने संसारमें नास्तिकताको फैला दिया इससे प्रत्यक्ष प्रकट होता है कि इन पुराणों को व्यास महाराजने नहीं बनाया वरन बौद्ध लोगोंने बनाया है ॥

श्रीमान् पण्डितजीमैं पुराणोंकी लीलाओंको कहां तक वर्णन करूं, हां पुराणोंके रहस्यको वही पुरुष अच्छे प्रकारसे जान सकते हैं जो अठारह पुराणों अथवा दश पांच पुराणोंको विचारपूर्वक पढ़ते हैं, उनका ही मन पुराणोंसे उपराम होजाता है और वेदोंका महत्व उनके हृदय जमजाता है। ज़रा औरभी सुनलीजिये कि इस बातको तो समस्त हिन्दू, आर्य्य एकस्वर होकर मान रहे हैं कि सृष्टिकी आदिमें परमात्माने अपना ज्ञान वेद द्वारा दिया फिर सनातनधर्मियोंके कथनानुसार व्यास महाराजने वेदानुकूल १८ पुराण बनाये जो हमारी सम्मतिमें अत्यन्तही निर्मूल हैं परन्तु इस स्थान पर यह मानभी लिया जावे तो भी तो ठिकाना नहीं लगता देखिये ब्रह्मवैवर्त्त पुराण अध्यायके आदिमें लिखा है कि यह पुराण सब पुराणोंमें बड़ा वरन् वेदकी भूलचूक सुधारने वाला है जैसा कि—

भगवानयतत्त्वया पृष्टं ज्ञानं सर्वमभीप्सितम् ।
सारभूतं पुराणेषु ब्रह्मवैवर्त्तमुत्तमम् ।
पुराणोपपुराणानां वेदानां भ्रमभञ्जनम् ॥

यदि आप यह माने कि यह पुराण वेदके भ्रमको सुधारने वाला है तो यह पुराण निर्भ्रान्त रहा और वेद जो ईश्वरीय ज्ञान है भ्रान्त वाला रहा तो फिर परमात्माका पूर्णज्ञानी होना भी नहीं बनता, इधर यह लेख कि पुराण वेदानुकूल बनाये गये हैं तो फिर यदि वेदों

में भ्रम है तो क्या फिर पुराण भ्रमरहित होसकते हैं। हां यह दावा केवल इसी पुराणका है तो फिर १७ पुराणही वेदानुकूल रहे न कि अठारह; परन्तु तुर्रा तो यह है कि इस पुराणको भी तो व्यासोक्त माना है पण्डितजी क्या कहें क्या यह बातें व्यासजीसे ज्ञानी महात्माओं की होसकती हैं? कदापि नहीं, अब आप और भी सुनिये इस पृथ्वी पर चारलाख श्लोक व्यास महाराजके कहे हुए प्रकट रहते हैं उन्हींसे अठारहपुराण बनायेगये हैं देखिये मत्स्यपुराण अध्याय ५३ में लिखा है।

तदर्थोऽत्र चतुर्लक्षं सक्षेपेण विशेषतम् ।
पुराणानि दशाष्टौ च साम्प्रतं तदिहोच्यते ॥
चतुर्लक्षमिदं प्रोक्तं व्यासेनाद्भुतकर्मणा ।

श्रीमद्भगवत स्कंद १२ अध्याय १३ श्लोक ८ में लिखा है—

एवं पुराणसंदोहश्चतुर्लक्षउदाहृतः

पद्मपुराण सृष्टिखण्ड अध्याय १ में लिखा है—

तदेवात्र चतुर्लक्षं संक्षेपेण निवेशितम् ।

इन पुराणमें श्लोकोंकी गणना निम्नलिखित है उसको भी देख लीजिये किसीमें चार लाख नहीं अर्थात् न्यूनाधिक है।

मत्स्य		भागवत	देवीभागवत	अग्नि
१ ब्रह्म	१३०००	१००००	१००००	५००००
२ पद्म	५५०००	५५०००	५००८०	१२०००
३ विष्णु	२३०००	२३०००	२३०००	२३०००
४ वायु	२४०००	२४०००	२४६००	१४०००
५ भागवत	१८०००	१८०००	१८०००	१८०००
६ नारदीय	२५०००	२५०००	२५०००	२५०००
७ मार्कण्डेय	९०००	९०००	९०००	९०००
८ आग्नेय	१६०००	१५०००	१६०००	१२०००
९ भविष्य	१४०००	१४०००	१४५००	१४०००
१० ब्रह्मवैवर्त्त	१८०००	१८०००	१८०००	१८०००
११ लिंग	११०००	११०००	११०००	११०००
१२ स्कन्द	८१०००	८१०००	८१०००	८४०००
१३ वामन	१००००	१००००	१००००	१००००
१४ कूर्म	१८०००	१७०००	१७०००	८०००
१५ मत्स्य	१४०००	१४०००	१४०००	१३०००
१६ गरुड़	१८०००	१९०००	१९०००	८०००
१७ ब्रह्माण्ड	१२२००	१२०००	१२१००	१२०००
१८ वाराह	२४०००	२४०००	२४०००	१४०००
	४०३२००	३९९०००	३९६२००	३५५०००

कहिये पण्डितजी क्या यहीं व्याससे योग्य विद्वानों और अ-वतारियोंका ज्ञान है ? क्या यह त्रिकालदर्शियोंकी पहचान है इसके अतिरिक्त मत्स्यपुराण और अग्निमें वायुपुराण और भागवत और देवीभागवतमें शिवपुराणका नाम गिनाया है इसके अनन्तर ब्रह्मा, विष्णु भागवत, नारदीय, मार्कण्डेय ब्रह्मवैवर्त्त, लिङ्ग, वामन इन पु-राणोंकी संख्या उपरोक्त चारों पुराणोंमें समान मिलती है और अन्य पुराणोंकी संख्या भिन्न २ लिखी है परन्तु लिङ्गपुराण अध्याय ६४ में विष्णुपुराणके विषयमें लिखा है कि उसमें छः अंश और छः हज़ार श्लोक हैं

षट् प्रकारं समस्तार्थ साधकं ज्ञानसञ्चयम् ।
षट्साहस्रमितं सर्व्वं वेदार्थेन च संयुतम् ॥

और मार्कण्डेय पुराणमें लिखा है कि पूर्वकालमें ज्ञानी मार्कण्डेय मुनिने छः हज़ारनौसो श्लोक नियत किये हैं जैसा कि—

श्लोकानां षट्सहस्राणि तथा चाष्टशतानि च ।
श्लोकास्तत्र नवाशीति एकादश समाहिताः ॥

अब आप ही बतलाईये यह क्या तमाशा है । क्या यह भूलें महात्मा व्याससे ज्ञानियोंके काममें होसक्ती है यदि आप ऐसा ही मानलें तो फिर उनके अन्य लेखोंके प्रमाण होनेका क्या प्रमाण है श्रीमान् यह सब बनावटी बातें हैं यथार्थमें यह पुराण किसी प्रकार से व्यास महाराजके बनाये हुए नहीं हैं ॥

पण्डितजी महाराज सम्पूर्ण विद्वान् इस विषयमें एकसम्मति हैं कि अठारह पुराण महाभारतके पीछे बने जैसा कि—

अष्टादशपुराणानि कृत्वा सत्यवतीसुतः ।
भारताख्यानमखिलं चक्रे तदुपबृंहितम् ॥

इसके उपरान्त पुराणोंमें महाभारतकी चर्चा है परन्तु महाभारत में पुराणोंकी कुछ भी व्याख्या नहीं । अब श्रीमान् पण्डितजी यदि मैं एक पुराणकी समीक्षा करूं तो बहुत काल चाहियें इसलिये मैं आव-श्यक २ विषयोंको आपको सुनाता हूं जिससे आप और अन्य सब

पाठकगणों पर भले प्रकार प्रकट होजावेगा कि उपरोक्त अठारह पुराण महर्षि व्यासकृत नहीं हैं और उनके प्रचलित होनेके निम्न-लिखित कारण जान पड़ते हैं ।

(१) महाभारतके बड़े भारी संग्राममें बड़े २ ज्ञानी, विद्वान् और महात्माओंका मारा जाना ।

(२) माण्डलिक राज्य होनेसे धर्मकी ओरसे राज्यभय न रहना, धार्म्मिकावस्थाका नष्ट होना ।

(३) ब्राह्मणोंका लोभादिमें फँस मदोन्मत्त क्षत्री राजाओंकी शुश्रूषा के कारण उनकी इच्छानुसार धार्मिक व्यवस्था देना ।

(४) ब्रह्मचर्य्याश्रमकी उत्तम प्रणालीको उठा गुरुकुलकी शिक्षाको दूर कर बाल्यावस्थामें विवाहका आर्डर जारी करा विषय भोगमें लगा बुद्धिहीन कर देना ।

(५) स्त्रियोंका शूद्र बता, शिक्षासे विमुख रख, चेली बना अपने कार्य्यकी पूर्त्ति करना ।

(६) पाप निवृत्तिके लिये राम, कृष्ण, गङ्गा आदिके नाम काशी, प्रयाग इत्यादि तीर्थोंके दर्शन और नाना प्रकारके व्रत बना उनके बड़े २ माहात्म्य सुना २ कर निर्भयता प्रदान कर सत्यधर्म अर्थात् वेद मार्गसे विमुख कर देना ।

(७) सच्चे साधु-महात्मा-विद्वानोंके " ब्रह्मवाक्य जनार्दन " इस वाक्यके स्थान पर अविद्वानों, मूर्खों और अज्ञानियोंके वाक्यको सर्वो-परि मानना ।

(८) निराकार, अद्वितीय, अजन्मा, परमात्माका जन्म बता कर मिट्टी, पत्थर, काष्ठ, पीतलादिकी देवताओंकी कपोलकल्पित मूर्त्तियां नियत कर, उनके पूजनकी नानाविधि बता मुक्ति करा देना ।

श्रीमान् पण्डितजी इनके प्रचलित होनेके उपरोक्त कारणोंके अतिरिक्त एक मुख्यकारण यह भी हुआ कि इन पुराणोंमें यह अच्छे प्रकारसे भर दिया कि इनके सुनने से बड़े २ महापाप एकही जन्मके नहीं वरन् करोड़ों जन्मोंके नष्ट होजाते हैं इस नुसखेने भारत पर ऐसा प्रभाव डाला कि सारे भारतमें इन्हींका डंका बज गया, वेदोंके नाम

तकको भारतवासी भूल गये, कृपा कर प्रथम आपभी उनमें से कुछ सुन लीजिये फिर देखिये आपका मन कैसा पसीजता है।

पद्मपुराण—अध्याय २४ में लिखा है कि जो पुराणोंको सुनते हैं वह पुत्रहीन पुत्रको, धनकी इच्छा करनेवाला धनको, विद्याकी इच्छा वाला विद्याको और मोक्षकी इच्छा वाला मोक्षको पाते हैं और उनके निश्चय करोड़जन्मोंके इकट्ठे किये हुए पापसमूहोंको नाश कर भगवान्के लोकको जाते हैं।

ये शृण्वन्ति पुराणानि कोटि जन्मार्जितं खलु।
पापजालं तु ते हत्वा गच्छन्ति हरिमन्दिरम् ॥

चतुर्थ पातालखण्ड अध्याय १२ श्लोक ४३ में लिखा है कि वेदाध्ययन, तप, मन्त्र, हवन इतना फल नहीं देते जितना पुराणोंका सुनना फल देता है।

न स्वाध्यायहतपो वापि न मन्त्रा न जुहोतयः।
फलन्ति न तथा तिष्ये पुराणश्रवणं तथा ॥

पञ्चम पातालखण्ड अध्याय १२ श्लोक ३८ में कहा है कि जो क्रम पूर्वक पुराणोंको सुनता है वह ब्रह्महत्याके बन्धनसे छूट जाता है। हे रामचन्द्रजी! मदिरापान करने और सुवर्ण चुराने गुरुकी स्त्रीके सङ्ग भोग करनेके पापसे विमुक्त होजाता है।

एवं पुराणशृणुयात्क्रमयस्तु स ब्रह्महत्याकृतपापबंधात्।
सुरापीतिः स्वर्णहरश्च राम गुर्वंगनागश्च विमुक्तमेति॥

अन्य भी जो पूर्वके किये हुए पुरुषोंके पाप होते हैं वह सब नष्ट होजाते हैं इस जन्मके भी सौवर्ष तकके किये हुए वक्ता श्रोताके पाप नष्ट होजाते हैं॥

पापानि चान्यानि कृतानि पुंभिः।
सर्वाणि नश्यंति पुराकृतानि ॥
इहापियान्यब्दशतार्जितानि।

श्रोतुर्विनश्यंति तथा च वक्तुः ॥

पंचम पातालखण्ड अध्याय १२ में लिखा है कि जो कोई सब पुराणों और ३६ पुराणोंके नामोंको कीर्त्तन करता है अथवा सबोंको सुनता है उसके धनका नाश कभी नहीं होता वरन् प्रतिदिन धनकी वृद्धि होती है ॥

यश्च सर्वपुराणानि षट्त्रिंशत्तु प्रकीर्त्तयेत् ।
शृणोतिवान्तस्यास्ति वित्तच्छेदः कदाचन ॥ ८ ॥

इनके पढ़ने और सुननेसे वेदसे भी अधिक फल मिलता है पुष्कर तीर्थमें दान करनेका फल मिलता है ।

पुष्करे दानपुण्यं श्रवणादस्य जायते ।
सर्ववेदाधिकफलं समाप्त्यां चाधिगच्छति ॥

शिवपुराण—धर्मसंहिता अध्याय ४९ में लिखा है कि अर्थ, काम, मोक्षके निमित्त यज्ञ, दान और तीर्थसेवासे जो फल मिलता है वह फल मनुष्योंको पुराण श्रवण करने से प्राप्त होता है ।

धर्मार्थकामलाभाय मोक्षमार्गाप्तये तथा ।
यज्ञैर्दानैस्तपोभिस्तु यत्फलं तीर्थसेवया ॥

वामन पुराण अध्याय ९ में लिखा है जिसप्रकार गङ्गाजीमें स्नान करनेसे पाप दूर होजाते हैं उसी भांति पुराण सुननेसे भी पाप नाश होते हैं—

यथा पापानि पूयंते गंगावारि विगाहनात् ।
तथापुराण श्रवणाद्दुरितानां विनाशनम् ॥

मार्कण्डेय पुराणके माहात्म्यमें लिखा है कि जो कोई अठारह पुराणोंके नाम तीनों संध्याओंमें जपता है उसको अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है और ब्रह्महत्यादिक जो पाप हैं उन पापोंका ऐसा नाश होजाता है जिसप्रकार हवाके लगनेसे तृण उड़जाता है—

अष्टादशपुराणानां नामधेयानि यः पठेत् ।
त्रिसन्ध्यं जपेत् नित्यमश्वमेधफलं लभेत् ।

ब्रह्महत्यादि पापानि यान्यन्यान्यशुभानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति तूणं वातहतं तथा ॥

इसके उपरान्त शिवपुराण धर्मसंहिता अध्याय २३ श्लोक ६२ में लिखा है कि जिसप्रकार मुझको पुराण प्रिय हैं ऐसे अंगों सहित चारों वेद प्रिय नहीं -

यथैतानि ममेष्टानि पुराणानि सदा मुने ।
न तथा चतुरो वेदान् चांगानि महामते ॥

पद्मपुराण पंचम पातालखण्ड उत्तरार्द्ध अध्याय १ में लिखा है जो सब वेदोंके भीतर प्रविष्ट होता है व सब शास्त्रोंको जानता है परन्तु पुराण नहीं सुनता उसकी अच्छी तरहसे गति नहीं देखते—

अतं गतस्य वेदानां सर्वशास्त्रार्थवेदिनः ।
पुंसोऽश्रुत पुराणस्य नसम्यग्याति दर्शनम् ॥

ईश्वर श्रीमान् ज्यों २ विद्याका अभाव होतागया त्यों २ पुराण माहात्म्योंको सुन २ कर इन्हीं पुराणोंमें लिप्त होते चले गये जिसका प्रभाव यह हुआ कि समस्त भारत पुराणोंको ही वेद समझ उनकी आज्ञापालनमें तन, मन, धनसे लग गये क्योंकि पुराणोंमें लिख दिया कि पुराणोंको ब्रह्माजीने सब शास्त्रोंसे प्रथम कहा है जो धर्म, अर्थ, कामके साधक हैं जैसा कि पद्मपुराण सृष्टिखण्ड अध्याय १ में कहा है—

सर्वज्ञात्सर्वलोकेषु पूजिताद्दीप्ततेजसः ।
पुराणं सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणास्मृतम् ॥
उत्तमं सर्वलोकानां सर्वज्ञानोपपादकम् ।
त्रिवर्गसाधनं पुण्यं शतकोटि प्रविस्तरम् ॥

फिर क्या फिर तो जो कुछ पण्डितोंके जी में आया किया कराया और अब भी कर रहे हैं। श्रीमान् अब समय होगया इसलिये विश्राम देता हूं।

पण्डितजीने कहा कि अच्छा सेठजी अब हम जाते हैं।

आर्यसेठ बहुत अच्छा श्रीमहाराज नमस्ते ।

सुयोग्य पण्डितजी आयुष्मान् कह कर चल दिये तब अन्य महाशयोंने यथायोग्यकी और सब श्रीमान्का आशीर्वाद लेकर अपने २ गृहको प्रस्थान करगये ।

॥ इति प्रथम परिच्छेदः ॥

द्वितीय परिच्छेद:

पूर्ववत् पण्डितजीका आगमन देख, सेठजी ने नमस्ते की।

पण्डितजी–आयुष्मान् कह कर बैठ गये और घरकी बात चीत होने लगी, इतने में अन्य महाशयगण आगये सब यथायोग्य कर बैठ गये।

आर्यसेठ–पण्डितजी आज मेरा प्रथम कहना यह है कि जब परमात्माने अपना ज्ञान सृष्टिकी आदिमें वेद द्वारा देदिया था जिस को सम्पूर्ण पुराण भी स्वीकार करते हैं तो फिर पुराणोंके बनानेकी क्या आवश्यकता हुई? यद्यपि इसका उत्तर श्रीमद्भागवत स्कन्ध १ अध्याय ४ में इस प्रकार दिया है कि "स्त्री और शूद्र और इनसे जो अधम हैं उनको वेदत्रय सुननेका अधिकार नहीं है" इस लिये उन सबके कल्याणके अर्थ व्यासजी महाराजने वेदोंके अर्थ लेकर महाभारत आदि पुराण रचे। यदि हम इसको थोड़ी देरकेलिये प्रमाणकोटिमें मान भी लें तो इसमें दो बातें उत्पन्न होती हैं।

(१) यदि यह वेदोंके अर्थोंको लेकर ही बनाये हैं तो वेदोंके अनुकूल क्यों नहीं? और इनमें आपसमें विरोध क्यों है?

(२) जब यह स्त्री तथा शूद्र, अधम जातिही के लिये बने हैं तो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्योंको इनके श्रवण किये क्या लाभ? देखिये–

स्त्रीशूद्रद्विजबन्धूनां त्रयी न श्रुतिगोचरा।
कर्मश्रेयसि मूढानां श्रेय एवं भवेदिह॥ २५॥
इति भारतमाख्यानं कृपया मुनिना कृतम्।
वेदार्थं च समुद्धृत्य भारते प्रोक्तवान् मुनिः॥ २६॥

देवीभागवत प्रथमस्कन्ध अध्याय ३ के २१ श्लोकमें भी लिखा है।

स्त्रीशूद्रद्विजबन्धूनां न वेदश्रवणं मतम्।

तेषामेव हितार्थाय पुराणानि कृतानि च ॥

परन्तु पण्डितजी यजुर्वेद अध्याय २६ मन्त्र २ में परमेश्वर आज्ञा देता है कि जैसा मैं सब मनुष्योंके लिये इस कल्याण अर्थात् संसार और मुक्तिके देनेहारी चारों वेदोंकी वाणीका उपदेश करताहूं वैसे तुम भी किया करो।

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः ब्रह्मराजन्याभ्याᳬ शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय ॥१॥

पण्डितजी ! अब आप इस बात पर विचार कीजिये कि परमेश्वर सबका पिता है वह सबका पालन पुत्रवत् करता है, उसके बनाये हुये पदार्थ सम्पूर्ण प्राणियोंको एकसां लाभ देते हैं और उनमें सबका भाग बराबर है, जो जितना चाहे बुद्धि, बल अनुसार ग्रहण करे। जैसा वायु, जल, पृथिवी, सूर्य्य, चन्द्र आदिमें सबको एकसां ही अधिकार है, दसों इन्द्रियां भी स्त्री, शूद्र एवं मनुष्यमात्रके एक समान हैं। सबकी उत्पत्ति और मरण एक ही प्रकार है फिर क्या ईश्वरीय ज्ञान प्राणीमात्रके लिये नहीं है ? इसके अतिरिक्त स्त्रियां पुरुषकी अर्द्धाङ्गिनी कहाती हैं। पद्मपुराण सृष्टिखण्ड अध्याय ३ से विदित होता है कि ब्रह्माजीके कहने पर जब उनके पुत्रोंने सृष्टि नहीं रची तब उनको अति क्रोध उत्पन्न हुआ जिससे तीनों लोक जलनेलगे और हाहाकार मचगया तब उनकी भौंहें कुटिल होगईं, मस्तकमें झुकड़न पड़गई उससे रुद्रका अवतार हुआ जिसमें आधे अङ्ग स्त्री और आधे पुरुषके थे तब ब्रह्माके कहनेसे उन्होंने स्त्री और पुरुष रूपको पृथक् २ करदिया।

ब्रह्मणोभून्महान्क्रोधस्त्रैलोक्यदहनक्षमः।
तस्यक्रोधात्समुद्भूतं ज्वालामालावदीपितम् ॥१७१॥
ब्रह्मणस्तुतदा ज्योतिस्त्रैलोक्यमखिलं दहत्।
भृकुटी कुटिलात्तस्य ललाटात्क्रोधदीपितात् ॥१७२॥
समुत्पन्नस्तदा रुद्रो मध्याह्नार्कसमप्रभः।

अर्द्धनारी नरवपुः प्रचण्डोऽतिशरीरवान् ॥१७३॥
विभजात्मानमित्युक्त्वातंब्रह्मांतदर्धः ततः ।
तथोक्तोसौद्विधास्त्रीत्वं पुरुषत्वं तथाकरोत् ॥१७४॥

षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय २४३ में महादेवजीने श्रीरामचन्द्रजीसे कहा है कि तीनों लोकोंमें जो स्त्रीलिंग हैं वह सब जानकीजी हैं और हे प्रभो पुल्लिङ्गमें जो हैं वह सब आप हैं ॥३६॥

स्त्रीलिङ्गेषु त्रिलोकेषु यत्तत्सर्वं हि जानकी ।
पुन्नाम लांछितं यत्तु तत्सर्वं हि भवान्प्रभो ॥

सृष्टिखण्ड अध्याय ३ में लिखा है कि ब्रह्माजीके कहने पर महादेवजीने अपना शरीर पृथक् करलिया स्त्रीका अलग फिर जो पुरुष रूप था उसमें ग्यारह होगये ।

शिवपुराण वायुसंहिता पूर्वार्द्ध अध्याय १४ में लिखा है कि ब्रह्माजीने सृष्टि रचनेकी इच्छाकी तो अपने आधेशरीरसे नारी और आधेसे पुरुष होगये, जो नारीरूप था उससे शतरूपा प्रकट हुई ।

स्वयमर्द्धतोनारी चार्द्धेन पुरुषोऽभवत् ।
याऽर्द्धेन नारी सा तस्माच्छतरूपा व्यजायत् ।

वायुपुराण अध्याय १० श्लोक ८ में भी कहा है ॥

स्वां तनुं स ततो ब्रह्मा तामपोहद्भास्वराम् ।
द्विधा करोत्सतं देहमर्द्धेन पुरुषोऽभवत् ॥
अर्द्धेन नारी सा तस्य शतरूपा व्यजायत् ।

ऐसा ही मार्कण्डेय पुराण अध्याय ५० में लिखा है कि जब ब्रह्माके पुत्रोंने सृष्टि न की तब ब्रह्माजीको कोप उत्पन्न हुआ और वह सूर्य्यके समान महातेजवान् हो आधा अंग स्त्री आधा पुरुषका प्रकट हुआ और कहा कि आत्माका विभाग करो यह सुन ब्रह्माने पृथक् २ कर दिया ॥

तेष्वेवं निरपेक्षेषुलोकसृष्टौमहात्मनः ।
ब्रह्मणोऽभून्महाक्रोधस्तत्रोत्पन्नोर्कसन्निभः ॥ ९ ॥

अर्द्धनारीनरवपुःपुरुषोऽतिशरीरवान्
विभजात्मानमित्युक्त्वासतदान्तर्दधेततः ॥ १० ॥
संचोक्तेवैपृथक्स्त्रीत्वंपुरुषत्वंतथाकरोत् ।

लिङ्गपुराण अध्याय ५ में लिखा है कि सृष्टिके आदिमें ब्रह्माजी ने शिवजीको अर्द्धनारीश्वर देखकर कहा कि आप स्त्री पुरुष विभाग करें तब शिवजीके देहसे सतीजी पृथक् होगई जगत्में जितनी स्त्री जाति हैं वह सब सतीका अंश हैं और संपूर्ण पुरुष जाति तथा ग्यारह रुद्र शिवजीका अंश हैं ॥

अर्द्धनारीश्वरं दृष्ट्वा सर्गादौ कनकाण्डजः ।
विभजस्वेतिचाहादौ जाता तदाऽभवत् ॥
तस्याश्चैवांशजाः सर्वास्त्रियस्त्रिभुवने तथा ।
एकादशविधारुद्रास्तस्य चांशोद्भवास्तथा ।
स्त्रीलिङ्गमखिलं सा वै पुल्लिङ्गं नीललोहिता ॥

और अध्याय ३३ में महादेवने मुनियोंसे कहा है कि जगत्में जितने स्त्रीलिङ्ग हैं सब मेरे देहसे उत्पन्न भई प्रकृतिका स्वरूप हैं यह सब सृष्टि प्रकृति पुरुषरूप नारी नरोंसे व्याप्त है इसलिये किसीकी भी निन्दा न करनी चाहिये ।

स्त्रीलिङ्गमखिलं देवी प्रकृति मम देहजा ।
पुल्लिङ्गं पुरुषो विप्र मनदेहसमुद्भवः ॥
उभाभ्यामेव वै सृष्टिर्मम विप्रा न संशय ।
न निन्देद् यतिनं तस्माद्दिग्वास समनुत्तमम् ॥

पुनः अध्याय ४१ में लिखा है कि जब ब्रह्माके मानसी पुत्रोंसे सृष्टिकी वृद्धि न हुई तब उनके साथ तप करने लगे जब शिवजी प्रसन्न हुए तब ब्रह्माजीका ललाट भेद कर स्त्री, पुरुष रूपसे उत्पन्न भये ।

नव्यवर्द्धन्त लोकेस्मिन्प्रजाः कमलयोनिना ।
वृद्ध्यर्थंभगवान् ब्रह्मा पुत्रैर्वै मानसैः सह ॥ ७ ॥

दुश्चरं विचचारेशं समुद्दिश्य तपः स्वयम् ।
तुष्टस्तु तपसा तस्य भवो ज्ञात्वा स वाञ्छितम् ॥८॥
ललाटमध्यान्निभिद्य ब्रह्मणः पुरुषस्य तु ।
पुत्रस्तेऽहमिति प्रोच्यस्थी पुंरूपोऽभवत् तदा ॥ ९ ॥

शिवपुराण वायुसंहिता उत्तरार्द्ध अध्याय ४ में लिखा है ।

जैसे शिव वैसी देवी जैसी देवी तैसे शिव हैं, चन्द्रमा और चांदनीके समान यों है इनमें अन्तर जानना उचित नहीं, चांदनीके विना चन्द्रमा शोभित नहीं होता और चन्द्रमाके विना चांदनी नहीं, ऐसेही विना शक्तिके शिव शोभित नहीं होते । ९ । १०

यथा शिवस्तथा देवी यथा देवी तथा शिवः ।
नानयोरन्तरे विद्याच्चन्द्रचन्द्रिकयोरिव । ९
चन्द्रोन खलुभात्येष यथा चन्द्रिकया विना ।
न भाति विद्यमानोऽपि तथा शक्त्या विना शिवः ॥

अध्याय ५ में लिखा है कि शिवा और शिवके विना यह चराचर जगत् उत्पन्न नहीं होता स्त्री और पुरुषोंसे उत्पन्न हुआ यह जगत् स्त्री पुरुषात्मक है । स्त्री और पुरुषोंकी विभूति स्त्री, पुरुषोंसे अधिष्ठित है परमात्मा शिव और वह शिवा कहलाती है और क्या कहें सब पुरुष शङ्कर हैं और सब स्त्रियें पार्वती हैं इस कारण सब स्त्री और पुरुष उनकी विभूति हैं ।

शंकरः पुरुषाः सर्वे स्त्रियः सर्वा महेश्वरी ।
सर्वे स्त्री पुरुषास्तस्मात्तयोरेव विभूतयः ॥

वाराहपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय २ में लिखा है कि रुद्र नाम ब्रह्माजी के क्रोध करनेसे जो उत्पन्न हुए वो अर्द्धनारी नर होनेसे अर्द्धनारीश्वर कहलाये उनको ब्रह्माजीने आज्ञा दी कि निज देहका विभाग करो अर्थात् स्त्री और पुरुष जुदे २ होकर रहो ऐसा ही रुद्रने किया ।

योऽसौ रुद्रेति विख्यातः पुत्रःक्रोधसमुद्भवः ।
अर्द्धनारीनरवपुः प्रचण्डोऽतिभयङ्करः ॥४८॥

विभज्यात्मानमित्युक्त्वा ब्रह्मा चान्तर्दधे पुनः ।
तथोक्ता सौ द्विधाऽस्त्रीत्वं पुरुषत्वं चकार सः ॥५०॥

इसके उपरान्त श्रीमद्भागवत स्कंद १ अ० १७ में लिखा है कि विष्णु महाराजने मोहिनी अर्थात् स्त्रीका रूप धारण कर राक्षसोंको मोहित कर अपना कार्य्य सिद्ध किया ।

अपाय यत्सुरानन्यान्मोहिन्या मोहयन् स्त्रिया ।

पुनः स्कंद् ८ अध्याय ८ में भी लिखा है कि विष्णु भगवान्‌ने अद्भुत स्त्रीका स्वरूप धारण किया ।

एतस्मिन्नंतरे विष्णुः सर्वोपायविदीश्वरः ।
योषिद्रूपमनिर्देश्यं दधार परमाद्भुतम् ॥

विष्णुपुराण अं० १ अध्याय ९ श्लोक १०७ में लिखा है ।

मायामोहयित्वा तान् विष्णुः स्त्रीरूपमास्थितः ।
दानवेभ्यस्तदादाय देवेभ्यः प्रददौ प्रभुः ॥

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण प्रकृति खण्ड अध्याय २ में लिखा है कि सृष्टि कर्त्ता श्रीकृष्ण प्रभुके प्रेरणा और अपनी इच्छासे दो प्रकारके रूप अर्थात् बायें भागसे स्त्रीरूप, दक्षिणभागसे पुरुष उत्पन्न हुआ ।

स कृष्णः सर्वसृष्ट्यादौ सिसृक्षुरेक एव च ।
सृष्ट्योन्मुखस्तदंशेन कालेन प्रेरितः प्रभुः ॥
स्वेच्छामयः स्वेच्छाय च द्विधारूपो बभूवह ।
स्त्रीरूपा वामभागांशः दक्षिणांशः पुमान् स्मृतः॥२९॥

अग्निपुराण अध्याय १७ में लिखा है कि ब्रह्माने आधे अंगसे पुरुष और आधेसे नारीको उत्पन्न किया ।

द्विधा कृत्वात्मानो देहमर्द्धेन पुरुषोऽभवत् ।
अर्द्धेन नारी तस्यां स ब्रह्मा वै चासृजत प्रभुः ॥

पण्डितजी ! आप ही बतलाइये कि जब आपके पुराण, स्त्री और पुरुषोंकी उपरोक्त प्रकारसे उत्पत्ति जो वेदके विपरीत है बत-

लाते हैं और स्वयं विष्णुजीने भी मोहिनी अर्थात् स्त्रीका रूप धारण कर राक्षसोंसे अपना कार्य्य किया। फिर बतलाइये स्त्रियोंको वेद श्रवणका अधिकार क्यों नहीं रहा वह शूद्रा क्योंकर होसक्ती हैं क्योंकि वर्ण, गुण, कर्म, स्वभावसे होते हैं। इस कारण स्त्रियों पर ही क्या। जिनके गुण, कर्म, स्वभाव उत्तम होते हैं वह स्त्री और पुरुष उत्तम और जिनके मध्यम कनिष्ट और नीच होते हैं वह मध्यम कनिष्ट नीच श्रेणियोंमें प्रगणित होजाते हैं

इसके उपरान्त शिवपुराण धर्मसंहिता अध्याय ४४ से प्रकट होता है कि सूर्य्य, इन्द्र, और अग्नि स्त्रियोंके चरित्र जाननेकेलियेचले, मार्गमें अरुन्धती मिलीं उनसे प्रश्न किया, तब अरुन्धतीने उत्तरमें कहा कि हे साधुओ! आप निसंदेह जानो कि स्त्रियां देवसम्मति हैं उत्तम, मध्यम और निकृष्ट तीन प्रकारकी होती हैं॥

स्त्रीणां हि चरितं प्रष्टुम तोयामः स्वमालयम्।
इत्युक्त्वातानुवा चेदमुत्तमाधममध्यमाः॥
संतिनो विस्मयः कार्यः स्त्रियो हि देवसंमताः

गीताके अध्याय ११ में श्रीकृष्ण महाराजने सम्पूर्ण सृष्टिके प्राणियोंको दैवी और आसुरी सम्पत्तिमें विभाग किया है दैवी सम्पत्तिमें वह प्राणी गिने जाते हैं जो शुद्ध रह कर प्रसन्नचित्त हो आपत्ति विचार कर दानशील वाह्य इन्द्रियोंको रोकनेके लिये अग्निहोत्रादि यज्ञोंका अनुष्ठान, ब्रह्मयज्ञ अर्थात् संध्योपासनादि करते हैं। फिर भला स्त्रियोंको वेदश्रवणादिका अधिकार क्यों नहीं रहा, जब कि वह शिवपुराणके लेखानुसार दैवी सम्पत्ति हैं॥

इसके उपरान्त विष्णुपुराण अंश ६ अध्याय ३ में देवता लोग जब व्यासजीके समीप गये तो व्यासजीने स्त्रियोंको साधु कहा इस पर उन्होंने पूछा यह साधु क्योंकर हैं तब व्यासने उत्तर दिया कि स्त्रियां मनसा, वाचा, कर्मणासे पतिकी सेवा करनेसे पति लोकको चली जाती हैं। देखिये पण्डितजी पतिसेवामें बहुधा कार्य्य सम्मिलित हैं जिनका उपदेश श्रीमद्भागवत स्कंद ७ अध्याय ११ में नारद मुनिने किया है सुनिये—

स्त्रीणां च पतिदेवानां तच्छुश्रूषाऽनुकूलता॥

तद्बंधुष्वनुवृत्तिश्च नित्यं तद्व्रतधारणम् ॥

स्त्रियोंके पति देवता हैं उनकी सेवा करें, अनुकूल रहे, देवर, जेठकी सेवा करें और उनकी आज्ञा पालन करें।

संमार्जनोपलेपाभ्यां गृहमण्डलवर्तनैः।
स्वयं च मण्डिता नित्यं परिमृष्टपरिच्छदा ॥

अर्थात् घरके सब पदार्थोंको शुद्ध बनाये रहे और आप भी सर्व प्रकारसे स्वच्छ रहे।

कामैरुच्चा वचैः साध्वी प्रश्रयेण दमेन च।
वाक्यैः सत्यैः प्रिये प्रेम्णा काले काले भजते पतिम् ॥

साध्वी स्त्री गृहके छोटे बड़े सब कार्य्योंको करे और इन्द्रियोंको जीते प्रिय-सत्य-वाक्योंसे समय २ पतिकी सेवा करे।

सन्तुष्टाऽलोलुपा दक्षा धर्मज्ञा प्रियसत्यवाक्।
अप्रमत्ता शुचिः स्निग्धा पतित्वं पतितं भजेत् ॥

जो लाभहो उसमें सन्तोष करें भोगोंमें लोलुप न रहे आलस्य न करे धर्मको जानती रहे प्रिय-सत्य बोले मन्दान्ध न हो पवित्र हो कर अयोग्य पतिकी भी सेवा करे।

या पतिं हरिभावेन भजेच्छ्रीरिव तत्परा।
हर्यात्मना हरेर्लोके पत्या श्रीरिव मोदयेत् ॥

कहिये पण्डितजी क्या इस समय नारदमुनिके उपदेश अनुकूल स्त्रियां उपरोक्त धर्मका पालन कर रही हैं कदापि नहीं क्योंकि इन्द्रियोंका विग्रह करना और विषयोंका मिथ्या आनन्द विषवत् त्यागना विना पूर्ण ब्रह्मचर्य्य और पूर्णविद्या और ज्ञानके नहीं हो सकता और सन्तोषरूपी महानसुख जितेन्द्रियोंको ही मिलता है अन्यथा अजितेन्द्रियोंको नहीं—पदार्थोंका संग्रह कर यथावत् रखना और उपयोगमें लाना, भोजन बनाना विना पदार्थ और वैद्यकविद्या के नहीं होसकता और विना इसके आरोग्यता नहीं मिलती जो सब आनन्दोंकी जड़ है इसलिये नियमानुकूल चलना अभीष्ट है जो विना

ब्रह्मचर्य्याश्रम पालन किये दुस्तर है इसके उपरान्त पति आदिसे सत्यप्रिय और यथावत् बोलना क्या बिना विद्या और उत्तम शिक्षा के होसकता है कदापि नहीं स्वच्छताका आनन्द भी उन्हीं स्त्रियोंको मिलता है जो विदुषी होती हैं इन सब बातोंके उपरान्त मदान्ध न होना और अयोग्य पतिकी सेवा करना क्या अनपढ़ स्त्रियां करसक्ती कदापि नहीं कर सक्तीं इस लिये नारदमुनिका उपदेश अर्थात् स्त्री धर्मसे प्रत्यक्ष प्रकट होरहा है कि विद्यावती स्त्रियां ही उपरोक्त धर्म का पालन कर सकती हैं इस हेतु स्त्रियोंकी यथावत् शिक्षा करनी चाहिये और प्रथम ऐसा ही होता था।

इसके उपरान्त सम्पूर्ण पुराण स्त्रियोंके लिये नाना व्रतोंके रहने का उपदेश कर रहे हैं जिनमें अनेकान मन्त्र बोलने पड़ते हैं और उनके जप करनेकी भी आज्ञा है देखिये—

शिवपुराण धर्म संहिता अध्याय ३९ में लिखा है।

(अघोरे श्री ह्रीं हुं फट्)

इस मन्त्रका भक्तिसे जप करनेसे सम्पूर्ण वर्ण, आश्रम, बाल, वृद्ध, स्त्रियां कोई हो आस्तिक श्रद्धावाला प्रतिदिन भक्ति करनेसे शिवके प्रसादसे सिद्ध होजाते हैं।

सर्वाश्रमाणां वर्णानां बालवृद्धास्त्रियामपि।
आस्तिकः श्रद्दधानश्च अहन्यहनि भावतः॥
सिद्ध्यते हि किमाश्चर्यं प्रसादाच्छंकरस्य वै।

शिवपुराण विद्येश्वर संहिता अध्याय १५ में लिखा है कि (नमः शिवाय) स्त्रियां इस मन्त्रको पांचलाख जप कर पुरुषरूपको प्राप्त हो क्रमसे मुक्तिको पाती हैं॥

स्त्रीत्वापनयनार्थं तु पंचलक्षं जपेत्पुनः।
मन्त्रेण पुरुषो भूत्वा क्रमान्मुक्तो भवेद्बुधः॥

इसके उपरांत विवाहमें प्रतिज्ञा ये करनी पड़ती है।

ओं अन्नपाशेन मणिना प्राण सूत्रेण पृश्नना वध्नामि

जिस प्रकार अन्नके साथ प्राण और प्राणके साथ अन्न तथा अन्न

और प्राणका अन्तरिक्षके साथ सम्बन्ध है उसी भांति सत्यताकी गांठ से तुमको बांधती हूं वा बांधता हूं ॥

ओं। यदेतद्धृदयं तव तदस्तु हृदयं मम ।
यदिदथ हृदयं मम तदस्तु हृदयं तव ॥

हे वर ! हे स्वामिन् ! वा हे पत्नी (यदेतत्) जो यह (तव) तेरा (हृदयम्) आत्मा वा अन्तःकरण है (तत्) वह (मम) मेरा (हृदयम्) आत्मान्तःकरणके तुल्य प्रिय (अस्तु) हो और (मम) मेरा (यदिदम्) जो यह (हृदयम्) आत्मा प्राण और मन है (तत्) सो (तव) तेरे (हृदयम्) आत्मादिके तुल्य प्रिय (अस्तु) सदा रहे ॥

इसी भांति और भी प्रतिज्ञायें करते हैं। इसके अतिरिक्त परमेश्वर आज्ञा देते हैं ॥

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा । सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया ॥

हे गृहस्थो तुम्हारा पुत्र माताके साथ प्रीतियुक्त मन वाला अनुकूल आचरणयुक्त और पिताके सम्बन्धमें भी इसी प्रकारका प्रेम वाला होवे जैसे तुम भी पुत्रोंके साथ सदा बर्ता करो जैसे स्त्री पति की प्रसन्नताके लिये माधुर्यगुणयुक्त वाणीको कहे वैसे पति भी शान्त होकर अपनी पत्नीसे सदा मधुरभाषण किया करें ॥

समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि । सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः ॥

लीजिये पण्डितजी अब तो मन्त्र जपनेकी आज्ञा पुराण दे रहे हैं फिर आप ही बतलाइये मन्त्रका शुद्ध २ उच्चारण विना व्याकरण पढ़े कभी होसक्ता है कदापि नहीं इससे जान पड़ता है कि स्त्रियां प्राचीन कालमें व्याकरण पढ़ती थीं। इसके उपरान्त पारमार्थिक कामों को स्त्री, पुरुष मिल कर किया करते थे देखिये पद्मपुराण सृष्टिखण्ड अध्याय १६ में लिखा है।

ब्रह्माजीने पुष्कर क्षेत्रमें यज्ञ किया और उनकी पत्नीके आनेमें देर हुई तब ब्रह्माजीने इन्द्रसे कहा कि हमारेलिये कोई स्त्री लाओ जिससे यज्ञ होजावे। तब एक अहीरकी पुत्री जिसकी शोभा सब स्त्रियोंसे उत्तम थी जिसके रूप आदिका वर्णन वहां विस्तार पूर्वक लिखा है। इन्द्र पकड़कर लेचले तब वह रो २ कर कहती थी कि यदि मुझसे आपका कार्य्य चले तो आप मेरे माता पितासे मांगिये। इन्द्रने लेजाकर ब्रह्माजीके समीप खड़ा कर दिया जिसको ब्रह्माजीने दूसरी लक्ष्मी समझ उससे कहा कि तुमको सब अपना प्रभुत्व देंगे यदि तुम प्रसन्नतापूर्वक हमारें साथ रहना पसन्द करो। इतनेमें अग्नि प्रज्वलित होनेका समय होगया। तब महाराजसे कहा कि इस देवी का नाम जो अभी आई है गायत्री है इतना कह तुरन्त गान्धर्व विवाह कर लिया, फिर अध्वर्य्युने उत्तम वस्त्र पहनाकर यज्ञशालामें बिठला कर, देवताओंके साथ सहस्र वर्ष तक यज्ञ किया।

एवमुक्तस्तदा ब्रह्मा किंचित्कोपसमन्वितः।
पत्नीं चान्यां मदर्थे वै शीघ्रं शक्रइहानय॥१२८॥
यथा प्रवर्तते यज्ञः कालहीनो न जायते।
तथा शीघ्रं विधत्स्वत्वं नारीकांचिदुपानय॥१२९॥
एवमुक्तस्तदा शक्रो गत्वा सर्वं धरातलम्।
स्त्रियो दृष्टाश्च यास्तेन सर्वाः परपरिग्रहाः॥१३१॥
आभीरकन्या रूपाढ्या सुना सा चारुलोचना।
न देवी न च गंधर्वी नासुरी नच पन्नगी॥१३२॥
तत्तच्छरीरसंलग्नं तन्वंग्याददृशे वरम्।
तां दृष्ट्वा चिंतयामास यद्येषा कन्यका भवेत्॥१३५॥
इत्थं सा भाष्यमाणस्तु तदा शक्रो नयच्चताम्।
ब्रह्मणः पुरतः स्थाप्यप्राहास्यार्थें मयाबले॥१६४॥
एवं चिन्तापराधीना यावत्सा गोपकन्यका।

तावद्ब्रह्मा हरिं प्राह यज्ञार्थं सत्वरं वचः ॥१८४॥
देवी चैषा महाभागा गायत्री नामतः प्रभो ।
एवमुक्ते तदा विष्णुर्ब्रह्मणं प्रोक्तवानिदम् ॥१८५॥
तदेनामुद्वहस्वाद्य मयां दत्तां जगत्प्रभो ।
गांधर्वेण विवाहेन विकल्पं माकृथाश्चिरम् ॥१८६॥
तामवाप्य तदा ब्रह्मा जगादाद्ध्वर्यु सत्तम ।
कृता पत्नी मया ह्येषा सदने मे निवेशय ॥१८८॥
मृगश्रृंगधरा बाला क्षौमवस्त्रावगुंठिता ।
पत्नीशालां तदानीता ऋत्विग्भिर्वेदपारगैः ॥१८९॥
तथा युगसहस्त्रं तु सयज्ञः पुष्करेऽभवत् ॥१९१॥

और पद्मपुराण पञ्चम पातालखण्ड अध्याय ६७ में लिखा है कि रामचन्द्रजीने राजसूय यज्ञ किया और सीताके न होने पर सुवर्णकी स्त्री बना ग्रन्थबन्धन किया और जब लक्ष्मणजीके जाने पर सीता स्वयं आगई तो रामका उनके साथ ग्रन्थीबन्धन कराया गया ।

समागतां वीक्ष्य पत्नीं रामचन्द्रस्य कुम्भजः ।
सुवर्णपत्नीं धिक्कृत्यतामधाद्धर्मचारिणीम् ॥१६॥

उन सीताके साथ श्रीरामचन्द्रजी यज्ञके बीचमें ताराके साथ जिस प्रकार शरदृऋतुमें चन्द्रमा शोभित होता है उसी भांति शोभायमान हुए ।

रामस्तदा यज्ञमध्येषु शुभे सीतया सह ।
तारयानुगतो यद्वच्छशीव शरदुत्प्रभः ॥ १७ ॥

और फिर समय जाने पर धर्मचारिणी सीताजीके साथ सब पाप दूर करने वाले यज्ञका आरम्भ करने लगे ।

प्रयोगमकरोत्तत्र काले प्राप्ते मनोरमे ।
वैदेह्या धर्मचारिण्या सर्वपापपनोदनम् ॥ १८ ॥

यथार्थमें धर्म, अर्थ, कामके साधनका प्रबल कारण स्त्री है जो

कोई उसको त्याग देता है उसका विशेष धर्म छूट जाता है जैसा कि मार्कण्डेयपुराण अध्याय ७० में कहा है।

पत्नी धर्म्मार्थकामानां कारणं प्रबलं नृणः। ९

हे राजन्! विना स्त्रीके ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र अपने कर्मके योग्य नहीं रहता।

अपत्नी को नरो भूप न योग्यो निज कर्मणां।
ब्राह्मणः क्षत्रियो वापि वैश्यः शूद्रोऽपि वा नृप॥

मार्कण्डेय पुराण अध्याय २०में, मन्दालसाकी सखीने शत्रुजितके पुत्र ऋतुध्वजसे विवाह होने पर कहा कि स्त्री अर्थ, धर्म और काम में अपने स्वामीकी सहायक है। इसलिये स्वामीको चाहिये कि स्त्रीकी रक्षा और पालन सदा कियाकरे॥

भर्त्तव्या रक्षितव्या च भार्य्या हि पतिना सदा।
धर्म्मार्थकामसंसिद्धो भार्य्या भर्तृसहायिनी॥ ६८॥

जो स्त्री और पुरुष दोनों परस्पर एक दूसरेके वशमें हों तो अर्थ, धर्म, काम तीनों उसको प्राप्त होते हैं।

यदा भार्य्या च भर्त्ता च परस्पर वशानुगौ।
तदा धर्म्मार्थकामानां त्रयाणामपि संगत। ६९

ऐ प्रभू! स्त्रीको छोड़ पुरुष किसी प्रकार अर्थ, धर्म वा कामको प्राप्त नहीं कर सक्ता क्योंकि ये तीनों स्त्री और पुरुषोंके सम्बन्धसे होते हैं॥

कथं भार्य्या मृतेधर्म्म अर्थम्वा पुरुषः प्रभो।
प्राप्नोति काममथवा तस्यांत्रितयमाहितं। ७०

इसी प्रकार पुरुषको छोड़ कर स्त्री भी समर्थ नहीं है कि धर्मादिकको साध सके इसलिये ये तीनों दाम्पत्य हीमें रहते हैं।

तथै भर्त्तारमृते भार्य्या धर्म्मादि साधने।
नसमर्था त्रिवर्गोऽयदाम्पत्ये समपाश्रितः॥

हे राजपुत्र! देवता, पितर, भाई बन्धु और अभ्यागत इत्यादि का पूजन विना स्त्रीके नहीं होसकता।

देवतापि भृत्यानामातिथीनाञ्च पूजनं ।
न पुंभि शक्यते कर्त्तुर्मृते भार्य्या नृपात्मज । ७२

यदि पुरुष धन प्राप्त करके घरमें लावे तो भी विना स्त्रीके वह धन नाश होजाता है इसी प्रकार कुभार्य्याके रहने पर भी नाश होजाता है ।

प्राप्तोऽपि चार्थो मनुजैरानीतोऽपिनिजं गृहं ।
क्षयमेतिविना भार्य्यां कुभार्य्यासंश्रयेऽपि च ॥

पुत्रसे पिता अन्नादिसे अभ्यागत और पूजासे देवता लोग तृप्त रहते हैं इसी प्रकार अच्छी स्त्रीसे पुरुष संतुष्ट रहते हैं ।

पितॄन् पुत्रैस्तथैवान्न साधैनरातिथीन्नारी ।
पूजाभिरमरांस्तद्वत् साध्वी भार्य्या युतोन्नति । ७५

स्त्रियां भी विना स्वामीके धर्म, अर्थ, काम और सन्तानोंको नहीं प्राप्त कर सकतीं इसी कारण यह तीनों वर्ग परस्परकी प्रीतिसे रहते हैं ।

स्त्रियाश्चापि विना भर्त्ता धर्म्मकामार्थ सन्ततिः
नैषतस्मात्त्रिवर्गोऽयं दाम्पत्यमाधिगच्छति । ७६ ।

पद्मपुराण द्वितीय भूमिखण्ड अध्याय ६० श्लोक ६ में लिखा है ।

यज्ञाः सिद्धिं तदा यांति यदा स्याद् गृहिणी गृहे ।
एकाकीससमर्थोन धर्मार्थं साधनाय च ॥ ६ ॥

जब गृहस्थ अपनी गृहिणीके संग यज्ञ करता है तो उसके सब यज्ञ सिद्ध होते हैं अकेले करनेसे नहीं होते ।

पद्मपुराण प्रथम सृष्टि खण्ड अध्याय १९ श्लोक ५१ में लिखा है कि जो गृहस्थ अकेला पुष्कर स्नानको जावेतो उसको चाहिये कि कमलके पत्तेकी स्त्री बना कर उसके संग ग्रन्थिबन्धन करके स्नानादि करें ।

एकाकि नाशते नापि सन्ध्यावन्द्यायथाक्रमम् ।

पौष्करेणयतो येन भृङ्गारेनिहितेन तु ॥ ५१ ॥

इन्हीं लेखोंके कारण वर्त्तमान समयमें पण्डितगण जिस पुरुषकी स्त्री नहीं होती उसके समीप कुशकी स्त्री बनाकर रख यज्ञादि क्रिया कराते हैं-हमारी समझमें सुवर्ण-कमल और कुशकी स्त्री बना कर रखनेसे कुछ लाभ नहीं हां वेदानुकूल जहां तक होसके स्त्री और पुरुष एक साथ रहकर परस्पर प्रीतिसे संसारिक और पारलौकिक कार्य्यों को करें। न कि पुरुष ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और स्त्री शूद्र इनका जोड़ा गृहस्थाश्रममें बना जीवनकी गाड़ीको खिचाकर सुखकी आशा करना अत्यन्तही भूलकी बात है पण्डितजी विद्वानूका विद्वान् और मूर्खसे मूर्खका मेल होता है न कि इस प्रकारका जैसा कि पौराणिक जन बताते हैं अर्थात् पुरुषको वेद पढ़ने सुननेका अधिकार स्त्रीको पढ़ने और सुननेका स्वत्व नहीं फिर भला आनन्द कैसा-इसके उपरान्त तुर्रा यह है कि व्यासजी महाराजने यह सब पुराण वेदोंके अर्थ लेकर अर्थात् वेदानुकूल बनाये जिनके सुनने आदिका अधिकार स्त्री इत्यादिको है परन्तु वेदोंके पढ़नेका नहीं इसके अतिरिक्त पुराणोंमें यह भी लिखा है कि जब ब्रह्मचारी गुरुकुलसे आवे तब अपने समान तुल्य, गुण, कर्म, स्वभाववाली सुलक्षणा युवतीसे विवाह करें। क्या विना विद्याके सुलक्षणा होसक्ती है? कदापि नहीं इसीलिये तो वेदोंमें लिखा है कि कुमारी कन्यायें ब्रह्मचर्य्य धारण कर गृहस्थाश्रम तथा धर्मकी शिक्षाको सीख श्रेष्ठ बनें। य० अ० ३ मं० ५२ में कहा है स्त्रियां पदार्थविद्या पढ़ें और अध्याय २३ मंत्र ४२ में आज्ञा है कि वैद्यकविद्याको पढ़ स्त्रियोंकी औषधी करें और अ० १९ मंत्र १५ में व्याकरण पढ़नेकी आज्ञा है इसी भांति युद्धमें जानेका भी उपदेश है अर्थात् सम्पूर्ण विद्याओंके सीखनेकी आज्ञा है इसी हेतु माता को परम गुरु कहा है क्योंकि जिसकी माता विद्यानिधि होती है वही सन्तान सुयोग्य होसक्ती है अन्यथा नहीं इसीलिये मातृवान् कह कर पितृवान् कहा है प्राचीन कालमें पुरुषोंके समान स्त्रियां अधिकार रखती थीं अर्थात् जिस प्रकार गुणोंसे पुरुष ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, और शूद्र होते थे उसी प्रकार विद्या आदि गुणोंके कारण स्त्रियां

भी ब्राह्मणी, क्षत्राणी, वैश्याणी और शूद्राणी होती थीं जब ही तो भारत स्वर्गधाम बना हुआ था। इतिहासोंके देखने और पुराणोंके पाठ करनेसे विदित होता है कि प्राचीन कालमें अनेक स्त्रियां विद्यावती हुई जिनके संक्षेप वृत्तान्त सुनाता हूं यदि अधिक देखनेकी इच्छा हो तो आप मेरी बनाई हुई नारायणी शिक्षा नामक पुस्तक को देख लीजिये देखिये सुलभाने राजा जनकसे योगीराजको चक्कर में डाल दिया था उनको इस विद्याकी अनेक सूक्ष्म बातें बतलाई थीं यह स्त्री उस समयमें इतनी विद्या पढ़ी थी कि समान वर न मिलने के कारण उसने संन्यासको धारण कर देशका उपकार किया था। विद्योत्तमाकी विद्याका प्रकाश संसारमें फैल ही रहा है उसने अपने मूर्ख पति कालिदासको कविशिरोमणि बना दिया जिसकी कविताके सन्मुख वर्त्तमान समयके कवियोंके छक्के छूट जाते हैं। महात्मा बुद्धकी रानी वसुन्धराने अपने पतिके संन्यास ग्रहण करने पर स्वयं संन्यास लेकर देशका उपकार किया था। अत्रिके साथ अनुसूइया, वशिष्ठके साथ अरुन्धती और महर्षि पतञ्जलिके साथ उनकी स्त्री इस भांति सैकड़ों स्त्रियां ऋषियोंके साथ गई थीं।

इसके अतिरिक्त जब राजा लोग तीसरे आश्रमको जाते थे तब उनके साथमें बहुधा रानियां भी जाती थीं। देखो मार्कण्डेय पुराण में लिखा है।

करन्ध राजाके साथ उनकी वीरा रानी वानप्रस्थमें साथ गई थी और कालान्तरमें जब राजाका परलोक होगया तो रानी भार्गव मुनि के स्थान पर जाकर उनकी सेवामें प्रवृत्त रह कर तपस्यामें लगी रही। राजा ऋतुध्वज स्त्री सहित राजा नरिष्यन्तके साथ इन्द्र सेना और राजा अर्कतके मंदालसा तपस्याके लिये वनको गई थीं।

श्रीमद्भागवत स्कंद ५ में लिखा है कि राजा नाभि अपनी स्त्री मरु देवीको साथ लेकर बदरिकाश्रम पर तपस्या करने गये थे।

महाभारतके पाठ करनेसे द्रौपदीका ज्ञानवती होना अच्छे प्रकार विदित ही होता है क्योंकि उन्होंने सत्यभामाको पतिव्रत धर्मका उपदेश किया था। इसके उपरान्त द्रौपदीके पुत्रोंको अश्वत्थामाजीने

मारडाला और अर्जुन उसको पकड़कर लाये तो द्रौपदीसे कहा कि अब क्या आज्ञा है। तब धर्मात्मनी जितेन्द्रिया, द्रौपदीने कहा कि अब इसको छोड़दो। मारो मत क्योंकि पुत्रोंके मारे जानेसे जिसप्रकार मैं दुःखी होरही हूं उसी भांति इसके मारे जानेसे इसकी माता कृपी दुःखी होगी।

कहिये पण्डितजी इतना धीरज और आत्मप्रिय क्या विना विद्या और ज्ञानके होसकता है कदापि नहीं। इसी भांति कुन्तीजीने अपने पुत्रोंको वीररससे भरा हुआ पत्र लिखा था जिसके पाठसे उनके साहस आदि गुणोंका परिचय भलेप्रकारसे होता है। गान्धारीजीने अपने पतिको नानाभांति समझाकर राजसभा कराईथी कि बुद्धिमान् जन दुर्योधनको समझा देवें कि पाण्डुपुत्रोंके साथ संग्राम न करें परन्तु उसने न माना। शकुन्तलाने राजा दुष्यन्तके त्यागने पर कैसा धीरज धारण किया था। दमयन्ती अपने पतिके वनोवास होने पर उनके साथ गई थी जब राजा उसको वनमें सोता हुआ छोड़कर चला गया तब रानीने जो विलाप किया वह उसकी बुद्धिमत्ताको प्रकट कररहा है। इसी भांति जब राजा हरिश्चन्द्र पर सत्यके पालन करनेसे विपत्ति पड़ी तो उसकी रानीने प्रत्येक रीतिसे उसका साथ दिया यहां तक कि उसका छोटा बच्चा रोता था राजा बाज़ारमें बिक रहे थे रानी कहती थी कि मुझको भी बेंच दीजिये अन्तको पुत्रशोकभी सहा। क्या यह अपार दुःख विना विद्याके कोई सहन कर सकता है कदापि नहीं। पण्डितजी! वाल्मीकिरामायणका आपने अनेकवार पाठ किया होगा देखिये जब रामचन्द्र वन चलनेको तैयार हुए उस समय सीताजीसे कहा कि मैं वनको जाता हूं तुम मेरे पीछे मेरे पिताकी अच्छे प्रकार सेवा कर मेरे दुःखसे दुःखी मातापिताको प्रसन्न करना। सीताजीने वनमें साथ चलनेके लिये प्रार्थनाकी उस समय श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि वनमें सिंह आदि घातक जन्तु रहते हैं पृथिवी पर सोना होता है भोजन वनफल मिलते हैं मार्ग बड़ा ही दुस्तर है जिसमें माया धारी राक्षस रहते हैं तुम कोमल स्वभाव हो तुम्हारा रहना यहां ही भला है इसके उत्तरमें सीताजीने नम्रता पूर्वक कहा कि आपने जो शिक्षा दी है मेरे हितकी है।

परन्तु माता, पिता, भगिनी, भाई, और अन्य परिवार बिना पतिके स्त्रीको कोई नहीं तार सक्ता।

तन, धन, धाम धरणि पुरराजू। पतिविहीन सब शोकसमाजू॥
भोग रोग सम भूषण भारू। यमयातना सरिस संसारू॥
प्राणनाथ तुमबिन जगमाहीं। मो कहँ सुखद कतहुं कछु नाहीं॥

जिसको सुन रामजीका मन पिघल गया और उनको साथ लेगये वनमें रावण संन्यासीका रूपधर उनके पास गया फिर भिक्षा मांगकर निवेदन किया तुम मेरे साथ चलो, भवनोंमें रहो, सुख भोगो कहां तपस्वीके साथ फिरती हो। मैं तीनों लोकमें प्रसिद्ध हूं तब उस पतिव्रताने कहा कि मैं सुमेरु पर्वतके समान, जितेन्द्रिय रामकी पत्नी हूं क्या तुम सूर्य्यचन्द्रको हाथसेपकड़ उठाना चाहते हो। तिसपर भी जब वह लंकाको लेगया और वहां अशोकवाटिकामें नाना भांति के लालच दिखलाकर अनेक प्रकारके भय दिये परन्तु उस सतीने अपने सत्यकर्त्तव्यका त्याग नहीं किया। इसके पश्चात् जब अयोध्यामें आई तब सासुओंकी सेवा करना अपना परमधर्म जाना। और गर्भावस्थाके समय श्रीरामने उनको त्याग दिया उससमय भी उन्होंने परम धीरजको धारण कर कोई अनुचित व्यवहार नहीं किया जो बिना विद्यावतीके अत्यन्त कठिन है

सुमित्रा देवीने अपने धर्मात्मा पुत्र लक्ष्मणजीको श्रीरामचन्द्रजीके साथ जानेके लिये कैसा सारगर्भित उपदेश दिया था कि हे तात! तुम रामचन्द्रजीको दशरथ और सीताजीको मेरे समान वनको सरिस अयोध्या जानते हुये सुखपूर्वक जाओ और उनकी यथार्थ सेवा कर धर्मका पालन करो जो तुम्हारा कर्त्तव्य है। वनमें अत्रिमुनिकी धर्मपत्नी अनुसूयाजीने जो सीताको शिक्षाकी थी उसका सारांश यही था कि स्त्रीका देवता पति ही है वही तीर्थ और पारलगानेवाला सच्चा मल्लाह है॥

देखिये बालिके मारे जाने पर ताराने कैसा विलाप किया था जिसके पढ़नेसे हृदय कम्पायमान होता है॥

फिर श्रीरामचन्द्रजीके उपदेश करने पर जब कुछ शांति हुई तब कहा कि अब बालिकी क्रिया करो फिर अङ्गदका राज्य देख आनंद

भोगी उससमय ताराने हनूमानजीसे कहा कि एक ओर अङ्गदके समान सौ पुत्र हों और एक ओर मरेहुये वीर बालिके अंगोंसे लिपटना ही तोभी पुत्रोंके सुखसे मृतक पतिके अंगोंका लिपटना श्रेष्ठ है।

मन्दोदरीने अपने पति रावणको कैसा सारगर्भित उद्देश किया था कि हे पति आप सीताकी ओर कुदृष्टि न करें क्योंकि शास्त्रमें परस्त्री दर्शन बड़ा पाप बतलाया है आप सीताको देकर रामचन्द्रजीसे सम्मति कर लीजिये इसीमें तुम्हारा कल्याण है॥

इसके उपरान्त स्त्रियां सन्ध्या और हवनभी किया करती थीं देखो जब हनुमानजी सीताके ढूंढनेके लिये गये और अशोकवाटिका में उनके दर्शन न हुए तब वह नदीके तट पर जा यह विचार करने लगे अब सायङ्काल होगया सीता अवश्यमेव यहां सन्ध्यार्थ आवेगी जैसा सुन्दरकाण्ड सर्ग १४ श्लोक ४९ में लिखा है।

सन्ध्याकालमनाः श्यामा ध्रुवमेष्यति जानकी।
नदीं चेमां शुभजलां सन्ध्यार्थे वरवर्णिनी।

और अध्याय १५ से प्रकट है कि सीता उस नदीके तट पर सायंकालको आई और हनूमानने उनको देखा।

अयोध्याकाण्ड सर्ग २० श्लोक १४ से विदित होता है कि श्रीरामचन्द्रजी महाराज जब वन जानेके लिये तय्यार हुए तब माताजीसे विदा होने अर्थ उनके महलोंमें गये तो उस समय कौशल्यादेवी वस्त्र धारण किये प्रसन्नचित्त नित्य व्रतमें लगी हुई मन्त्र पढ़ २ कर अग्निमें आहुति देरही थी।

सा क्षौमवसना हृष्टा नित्यं व्रतपरायणा।
अग्निं जुहोति स्मतदा मन्त्रवत्कृत मङ्गला॥

मार्कण्डेयपुराणके अ० २५, २६, २७ से अच्छे प्रकार प्रकट होता है कि मन्दालसाने अपने पुत्र विक्रान्तको बाल अवस्थासे ब्रह्मज्ञानका उपदेश किया जिससे तरुणावस्था तक मातासे ज्ञान प्राप्त कर गृहस्थाश्रमसे न्यारा होगया।

इत्यन्त या सत न यो जन्म प्रभृति बोधितः।

चकार न मतिं प्राज्ञो गार्हस्थ्यं प्रति निर्ममः ॥

इसी भांति जब दूसरा पुत्र सुबाहु हुआ तब उसने उपदेश देनेका प्रारम्भ किया वहभी बड़ा होने पर गृहस्थाश्रमसे विरक्त होगया फिर तीसरे पुत्र अरिमर्दनभी चले गये जब चौथे पुत्र अर्कलका जन्म हुआ तब वह उसको भी आत्मज्ञानका उपदेश करने लगी तब उसके पुत्रने कहा कि ऐ मेरी प्यारी स्त्री ! तूने तीन पुत्रोंको ब्रह्मज्ञानकी शिक्षा कर विरक्त बना दिया और वह घरसे निकल २ सब चले गये इसको भी तू ऐसाही करना चाहती है फिर भला विना गृहस्थीके देवता, पितरों और भूतोंकी तृप्ति क्योंकर होगी इस कारण इस पुत्रको कर्म मार्ग सिखला यह सुन मन्दालसाने कहा कि ऐ पुत्र ! तू आनन्दयुक्त बढ़ और कर्म करके मेरे स्वामीका चित्त सन्तुष्ट और मित्रोंका उपकार दुष्टोंका नाश कर ।

पुत्र वर्द्धस्वमद्भर्त्तुर्मनो नन्दय कर्म्मभिः ।
मित्राणामुपकाराय दुर्हृदां नाशनाय च ॥ ३४ ॥

ऐ पुत्र तू धन्य है शत्रुरहित होकर एकछत्र पृथिवी पालन कर सुखी हो और धर्मसे तू देवपदवीको प्राप्त हो ।

धन्योऽसिरेयो वसुधामशत्रुरेकश्चिरं पालयितासि पुत्रः ।
तत्पालनादस्तु सुखोपभोगो धर्म्मात्फलं प्राप्स्यसि चामरत्वं ३५

यज्ञोंमें ब्राह्मणोंको भोजन और दान दे भाई बन्धुकी इच्छा पूरी किया कर और दूसरेकी भलाईका सदा मनमें ध्यान रख और परस्त्री गमनसे सदा बच ।

धरामरान्पर्व्वसु तर्पयेथाः समीहितं बन्धुषु पूरयेथाः ।
हितंपरस्मै हृदिचिन्तयेथा मनः परस्त्रीषु निवर्त्तयेथा ॥

यज्ञादिकसे देवतोंको और धनसे ब्राह्मणोंको कामनासे स्त्री को सन्तुष्ट रख और दुष्टोंका युद्धसे तोष रखना ।

यज्ञैरनेकैर्विबुधानजस्रमर्थैर्द्विजानप्रीणयसंश्रिताश्च ।
स्त्रियश्चकामैरतुलैश्चिराययुद्धैश्चारींस्तोषयितासिवीर ॥ ३७ ॥

बाल्यावस्थामें मित्र, भाई, बन्धुओंका मन प्रसन्न कर चित्तको

प्रसन्नकरना और युवावस्थामें अपनी स्त्री को, और बुढ़ापेमें बनवासी होना।

बालामनोनन्दय बान्धवानां गुरोस्तथाज्ञा करणै कुमारः।
स्त्रीणां युवासत्कुलभूषणाय वृद्धोवनेवत्सवनेचराणां॥

राज्य करते समय मित्रोंको प्रसन्न करना साधु सेवाके साथ यज्ञ करना, दुष्टोंका नाश करके अश्वमेध यज्ञ करना, गुरु ब्राह्मणकी भलाईके लिये प्राण भी जायं तो चिन्ता न करना।

राज्यंकुर्वन्सुहृदानन्दयेथाः साधून्रक्षंस्तातयज्ञैर्यजेथाः।
दुष्टान्निघ्नन्वैरिणश्चाजिमध्येगोविप्रार्थेवत्समृत्युंव्रजेथाः॥

इसप्रकार मंदालसा उसको शिक्षा करती रही जब वह कौमार अवस्थाको पहुंचा तब राजाने उसका यज्ञोपवीत संस्कार किया फिर अर्कलने अपनी माताको प्रणाम कर कहा कि ऐ माता यहां परलोकके सुख देनेवाला जो कर्म हो उसका उपदेश मुझको दे मैं वैसाही करूंगा।

मया यदत्र कर्त्तव्यमैहिकामुष्मिकाय वै।
सुखायवदतत्सर्वं प्रश्रयावनतस्य मे॥

यह सुन मंदालसाने जिस उत्तमतासे राज्य धर्म, वर्णाश्रम, गृहस्थाश्रम इत्यादिका उपदेश किया है उसके पाठ करनेसे उसकी बुद्धिमत्ता प्रकट होती है। जब अर्कल युवा होगये और विवाह भी होगया उसके पीछे अर्कलके पिता वृद्धावस्थाको प्राप्त हुये तब पुत्रको गद्दी दे मंदालसा सहित तप करनेके लिये वनको चलनेकी इच्छा की उस समय मंदालसाने फिर अपने पुत्रसे कहा कि जब तुमको भाई बन्धु, शत्रु अथवा धनके नाश होजाने पर दुःख पड़े और वह दुःख सहा न जाय तब तुम इस अंगूठीको जो मैं तुम्हें देती हूं जिसमें श्लोक तुम्हारे धीर्य्य होनेके वास्ते थोड़े अक्षरोंमें लिखा है पढ़कर इस घरको छोड़देना।

मंदालसा च तनयं प्रोहदं पश्चिमं वच :।
कर्मोपभोग संसर्ग प्रहाणाय तस्य वै॥ ५
यदा दुःखमसह्यन्ते प्रियबन्धु वियोगजं।
शत्रुबान्धोद्भवं वापि वित्तनाशात्म सम्भव॥ ६

भवेत्कुर्व्वतो राज्य गृहधर्म्मावलम्बिनः ।
दुःखायतन भूतो हि ममत्वालम्बनं गृही ॥

यह कह वह सोनेकी अंगूठी अलर्कको देकर गृहस्थके योग्य आशीर्वाद दे दोनों जंगलमें तपस्या करनेके लिये चले गये ॥

कहिये पण्डितजी जब स्त्रियोंको पुराण पढ़नेकी आज्ञा नहीं बतलाते तो फिर पुराणोंमें मंदालसाकी विद्या और ज्ञान और शिक्षा का यह प्रभाव क्यों दर्शाया है अब बतलाइये कि कौनसी आज्ञा ठीक है ।

अब अंगूठी पर लिखे श्लोकोंको सुनिये ।

संङ्गः सर्व्वात्मना त्याज्यः सचेत्यक्तुं न शक्यते ।
संसङ्गि सह कर्त्तव्यः सतां सङ्गो हि भेषजं ॥

संसारी पुरुषोंकी संगति छोड़ देना चाहिये और जो न छूट सके तो साधु लोगोंकी संगति करैं क्योंकि साधुओंकी संगति ही संसार की औषधि है ।

कामः सर्व्वात्माना हेयो ह्यातुञ्चेच्छक्यतेन सः ।
मुमुक्षां प्रतितत्कार्य्यं सैव तस्यापि भेषजं ॥

सब प्रकारके कामको छोड़ देना चाहिये यदि न छूटे तो मुक्ति की इच्छासे उसका यत्न करैं यह यत्न कामकी औषधि है ।

इसी पुराणके अध्याय २२ में लिखा है कि जब राजा कुवलयाश्व मारा गया और मंदालसाने उसके मरणकी ख़बर पा अपने प्राणोंको त्यागदिया और राजा शत्रुजित्ने सभामें उस समयके योग्य उपदेश को दिया तब कुवलयाश्वकी माताने अपने स्वामीके मुंहसे बेटेके मारेजाने के समाचार सुन राजासे कहा कि ऐ राजन! पुत्र पाकर इस प्रकारकी बड़ाई न तो मेरी माताने और न सासने पाई जिसप्रकार मुनिकी रक्षाके लिये मैंने पुत्रका समरमें मर जाना सुना ।

न मे मात्रा न मे स्वस्रा प्राप्ता प्रीतिर्नृपेदृशी ।
श्रुत्वा मुनिपरित्राहे हतं पुत्रं यथा मया ॥

सोक्तो उन लोगोंके लिये है जो क्रूर, दरिद्री या रोगसे दुःखी

होकर मरते हैं बल्कि माताको ऐसे पुत्रका जनना व्यर्थ है।

शोचतं बान्धवानां ये निःश्वासितोऽतिदुःखितः।
म्रियन्ते व्याधिना क्लिष्टास्तेषां माता वृथा प्रजा॥

जो लड़का समरमें ब्राह्मण, गौकी रक्षाके लिये निडर होकर तीक्ष्ण हथियारसे मारा जाय। वह मनुष्य जो चाहना करने वाले दोस्तों और शत्रुओंको भी पीठ नहीं दिखाता उसकी माताको पुत्रवती कहना चाहिये और उसीके पिताको पुत्रवान्।

संग्रामे युद्धमानोयऽभीता गोद्विजरक्षणे।
क्षुणाःशास्त्रैर्विपद्यन्ते त एव भुविमार्जवा॥ ४४॥

स्त्रियां जो गर्भके पीड़ाको उठाती हैं वह दुःख उनको तभी सफल होता है जब उनके पुत्र लड़ाईमें विजय पाते हैं या उसीमें अपने प्राण देदेते हैं।

गर्भे क्लेशः स्त्रियो मन्ये साफल्यं भजते तदा।
यदारिविजयी वा स्यात् संग्रामे वाहतः सुत॥

गुरु गोविन्दसिंहजीकी स्त्रीने अपनी सन्तानोंको जितेन्द्रिय बना कैसे २ उच्चभाव प्रवेश किये जिसके कारण उन्होंने धर्मके अर्थ अपने सर्वस्वको बलिदान कर संसारकी काया पलटनेके लिये बिजुलीके समान काम किया।

इसके उपरान्त रूपवती मृगनयनी मीराबाई गानविद्यामें पूरी योग्यता रखती थी इनमेंसे मीराबाईके बनाये भजन वैराग्य उत्पन्न करनेवाले अब तक गाये जाते हैं। क्यों पण्डितजी क्या गानविद्या का आनन्द विना विद्याके आसक्ता था और क्या बिना विद्याके उत्तम कविता कोई करसक्ता है कदापि नहीं देखो कलावती नामकी स्त्री पद्मिनी नामकी विद्याको अच्छे प्रकारसे जानती थी जिसने यह विद्या अपने पतिको भी पढ़ाई थी।

लीलावतीने संस्कृतमें लीलावती नामक पुस्तकको निर्माण किया जिसके प्रश्न बड़े २ गणितज्ञोंके छक्के छुटा देते हैं—लक्ष्मी देवीने मिताक्षरा टीका किया था जो वल्लभभट्टके नामसे प्रसिद्ध है इसके उपरान्त

कूर्मदेवी और दुर्गावती और अहल्याबाई और क़ासिमबाज़ार की महारानी स्वर्णमयी राजप्रबन्धके कारण प्रसिद्ध होरही हैं।

महर्षि याज्ञवल्क्यजीकी मैत्रेयी और कात्यायिनी यह दो स्त्री थीं जब ऋषिने वानप्रस्थ आश्रममें जानेका विचार किया उस समय अपने सम्पूर्ण धनको बांटना चाहा तब मैत्रेयीजीने कहा कि स्वा-मिन्! क्या संसारी पदार्थों से मैं अमर हो सक्ती हूं ऋषिने कहा नहीं तब मैत्रेयी ने कहा कि फिर में आपके इस धनको लेकर क्या करूं इस पर पति पत्नी में शास्त्री विचार प्रारंभ हुआ जिसको सुन याज्ञ-वल्क्यजीने मैत्रेयीकी बड़ी प्रशंसा की थी—

मैत्रेयीके समयमें वचक्नु ऋषिकी गार्गी नामक एकपुत्री थी जिसने राजा जनककी सभामें महर्षि याज्ञवल्क्यजी से शास्त्रार्थ किया था। महर्षि मनुकी पुत्री देवहूती जो अति योग्य थी जिसने कर्दम ऋषि से विवाह कर वनमें तपस्विनी बन ब्रह्मज्ञानमें प्रवीणता प्राप्त की थी जिनको सांख्यशास्त्रका रचनेवाला कपिल नाम पुत्र उत्पन्न हुआ। यह सब माता की प्रवीणता का ही कारण था—कला-वती काशीराज की पुत्री थी जिसने दुर्वासा ऋषिसे विद्या पढ़ी थी वेदवती राजा कुशध्वज की पुत्रीथी जो योगविद्यामें प्रवीण थी जि-सने योगद्वारा प्राणों को त्याग किया था।

यशोवती जो दत्तात्रेय की शिष्या थी जिसने राजा पृथाश्व को कई एक वेदमंत्रों की व्याख्या कर समझाया था।

योगवसिष्ठ के निर्वाण प्रकरणसे ब्रह्मज्ञानी की विद्या का वृतान्त ज्ञात होता है कि जिसने राजा शिखध्वज को ब्रह्मज्ञान का उपदेश दिया था—भानुमती जो राजा भोज के समय हुई थी जिसने इन्द्रजाल अर्थात् हाथके कर्तव्य की विद्या को निकाला। संयुक्ता जो राजा जय-चंद की पुत्री थी जिसने स्वयंवर में राजा के शत्रु पृथ्वीराज की मूर्ति के गाले में जयमाला डाल दी थी जिससे राजा जयचंद अप्रसन्न हो गया और संयुक्ताको बन्दीघरमें भेजदिया। पृथ्वीराज यह समाचार सुन सैना लेकर गया और जयचन्दको परास्तकर रानीको दिल्ली लाकर

विवाह कर लिया। इसका जयचन्दको बड़ाही क्लेश होरहा था इतनेमें मुहम्मदगौरीने दिल्ली पर चढ़ाई की, संयुक्ता सिपाही भेषमें जयचन्दके तम्बूमें गई—कहा कि हे पिता! आप शत्रुसे मिलकर क्यों हमारे देश और वंशका नाश करनेके लिये तैयार हुए हो मेरे अपराधको क्षमा कर आप मुसलमानोंसे मिलकर स्त्रियोंके सतीत्व आदिका नाश न कराइये। जब राजा जयचन्दने उसकी प्रार्थना स्वीकार न की अन्त को पृथ्वीराज मारा गया रानी दिल्लीमें अग्निमें प्रवेशकर मरगई फिर जयचन्द अपनी पुत्रीकी अन्तिम शिक्षाको स्मरण करके पछताता रहा।

इसके अतिरिक्त वर्त्तमान समयमें स्त्रियां नानाप्रकार विद्याओंमें उत्तीर्ण होकर भारतके यशको प्रकाश कररही हैं।

कहिये पण्डितजी! क्या यह कार्य्य बिना पढ़ी स्त्रियां करसकती हैं? यदि कर सकती हैं तो आपही बतलाइये कि किस मूर्ख स्त्रीने लीलावतीकी भांति गणितमें पुस्तक लिखी? बतलाइये कि लक्ष्मीदेवी की भांति किसने मिताक्षराका टीकाकिया और सुनाये? किसने मन्दोदरी, सीता, द्रौपदी, शकुन्तला, दमयन्ती, सुतारा इत्यादिकी भांति योग्य कार्य्य किये।

मन्दालसाकी भांति कौन स्त्री वर्त्तमान समयमें बिना विद्याके अपनी सन्तानोंको ब्रह्मज्ञानी बना देतीहै? भला आपही बतलाइये कि सुमित्रादेवीकी भांति किसने अपने पुत्रको बड़े भाई रामके वन जाने पर उनके साथ जानेके लिये शिक्षा की। भला आज वर्त्तमानमें जबकि वैदिकधर्मकी प्रतिदिन अवनति होती चली जाती है। काशी के राजाकी छोटी कन्याके समान आज कौन पुकार मचातीहै?।

विद्याधरीके समान मण्डन मिश्र और शङ्करके शास्त्रार्थकी मध्यस्थिका इससमय कौन बनती है?। इसके उपरान्त अपने पतिके पराजय होने पर उसने जिस योग्यतासे अपने पतिकी विजय कराई कौन ऐसी चतुर अनपढ़ स्त्री उपस्थित है?। इसके अतिरिक्त गार्गीने याज्ञवल्क्य और सुलभाने जनकसे शास्त्रार्थ किया था क्या यह सब मूढ़ा

थीं ? यदि यह शूद्रा थीं तो आपके पुराणोंके कथनानुसार इनको क्यों शिक्षा दी ? क्या उस समय आपके पुराण मौजूद न थे या कि इनकी आज्ञाओंका कोई पालन न करता था फिर भला इनका आप क्यों परमेश्वरीयज्ञान अर्थात् वेदश्रवणकी अधिकारिणी नहीं बताते जिन के लिये पुराण बनानेकी आवश्यकता हुई। परिडतजी ! सन्तानसुधार की कल स्त्री है गृहप्रबन्धकी जड़ स्त्री है पतिको आनन्द पहुंचाने वाली स्त्री है विपत्तिमें पूर्ण साथ देनेवाली स्त्री है। भला फिर आपही बतलाइये कि वर्त्तमान सन्तानें क्यों नहीं प्राचीन कालकी भांति माता, पिता, आचार्य्यकी आज्ञा पालन करती हैं, वे धर्म पर बलिदान होने वाली सन्तानें कहांगईं पिता, माता आदिके सुखके लिये आप दुःख उठानेवाली सन्तानें कहां हैं कौन पतिकी आज्ञासे पुत्रको वेध धर्मका पालन करनेको उपस्थित है वह शूरवीर कहां हैं जिन्होंने पिताके दुःखके लिये अखण्ड ब्रह्मचर्य्य धारण कर पिताकी मनोकामना पूर्ण की। परिडतजी ! मैं कहां तक आपको सुनाऊं पौराणिक पण्डितोंने अपने प्रयोजन साधनार्थ सर्वोन्नतिकी जड़ स्त्रियोंको शूद्रा कहकर उनको वेदादि विद्यासे विमुख रख ब्रह्मचर्य्यको उठा अष्टवर्षा भवेद्गौरी सुना अल्पावस्थामें विवाह कराकर बल, बुद्धि साहसहीन कर अपनी चेली बना तन, मन, धन स्वामीजीके अर्पण करनेका आर्डर पासकर भारतका चौपट करदिया। परिडतजी ! प्रथम सबको वेदश्रवण का अधिकार था हां फिर जब अपने प्रयोजन सिद्ध करनेके अर्थ शूद्र बनाया तबही पुराणोंको व्यासजीके नामसे बनाना आरम्भ करदिया।

पण्डित जी—सेठ जी ! आपका यह सब कथन मेरें पसन्द है क्योंकि स्त्री, पुरुषका जोड़ाहै यदि पुरुष शिक्षासे योग्य बनताहै स्त्रियां भी योग्य बनतीहैं। यदि वेदका ज्ञान पुरुषोंको शान्ति देने वाला है तो स्त्रियोंको भी उसी भांति लाभदायकहै इसलिये पुत्रियोंको अवश्यही वेदादि पढ़ाना चाहिये ! हमने यह आजही सुना कि पुराण स्त्री, शूद्र और वर्णसङ्करोंके लियेही बनाये गये। अच्छा अब समय होगया समाप्त कीजिये।

आर्यसेठ—बहुत अच्छा-सेठ ।

आर्यसेठ—श्री महाराज नमस्ते ।

अन्य भद्रपुरुषोंने यथायोग्य की सुयोग्य पंडितजी ने आशीर्वाद दिया और सब चल दिये ।

॥ इति द्वितीय परिच्छेदः ॥

तीसरा परिच्छेद ।

आर्यसेठ—श्रीमान् पण्डितजी को आते देख प्रेमपूर्वक नमस्ते कर कहा कि आइये पधारिये इसके पश्चात् अन्य महाशयगणों ने यथायोग्य की ।

पंडितजी—आयुष्मान् कह कर बैठ गये ।

आर्यसेठ—श्रीमान् पुराणोंका यह दावाहै कि पुराण स्त्रियों और शूद्रोंके लिये बनाये गये स्त्रियोंकी शिक्षा आदि के विषयमें तो मैं आपको सुना चुका आज मैं यह निवेदन करूंगा कि शूद्र किसको कहते हैं और उनका कर्त्तव्य क्याहै ।

पंडितजी—बहुत अच्छा-सनातनधर्मी तो वीर्य्यसे अर्थात् जन्म से ही शूद्र मानते हैं और उनको वेद पढ़ाना पाप समझते हैं ।

आर्यसेठ—संसार में सम्पूर्ण मनुष्य एक जाति हैं जिनमें से गुण कर्म और स्वभाव से वर्णव्यवस्था नियत होतीहै देखो यजुर्वेद अध्याय ३१ मंत्र ११ में परमेश्वर आज्ञा देते हैं कि सृष्टि के बीच जो मुख अर्थात् जो गुण कर्म और स्वभाव में सबसे उत्तम हो वह ब्राह्मण और जिसमें बाहू से समान बल अधिक हो वह क्षत्री और जो ऊरू के बल से सब पदार्थों को देशदेशान्तरों में ले जावे वह वैश्य और जो पग अर्थात् नीचे के अंग के समान विद्या आदि गुणों से न्यून हों वा मूर्खादि गुणोंसे युक्त हों उनको शूद्र कहते हैं जैसा कि-

ब्राह्मणोऽस्यमुखमासीद्बाहूराजन्यकृतः ।
ऊरूतदस्ययद्वैश्यःपद्भ्यांशूद्रोअजायत ॥

इस विषयमें महाभारत वनपर्व अध्याय ३१२ श्लोक १०५से १०९ तक देखिये जिसमें यक्ष और युधिष्ठिर का संवाद हैं और युधिष्ठिर जी ने स्पष्ट कह दिया है कि कुल और वेदपाठसे ब्राह्मण नहीं होता किन्तु आचरणों का नाम ब्राह्मण है ॥ जैसा कि-

शृणु यक्षकुलं जात न स्वाध्यायो न च श्रुतम् ।
कारणं हि द्विजत्वे च वृत्तमेव न संशयः ॥ १०६ ॥
वृत्तं यत्नेन संरक्ष्यं ब्राह्मणेन विशेषतः ।
अक्षीणावृत्तो न क्षीणोवृत्ततस्तु हतोहतः ॥१०७॥
पठकःपाठकाश्चैव ये चान्येशास्त्रचिन्तकाः ।
सर्वेव्यसनिनोमूर्खायःक्रियावान्सपंडिताः ॥ १०८ ॥
चतुर्वेदोऽपिदुर्वृत्तिःसशूद्रादतिरिच्यते ।
योऽग्निहोत्रपरोदान्तःसब्राह्मणइतिस्मृतः ॥१०९ ॥

इसी पर्वके अध्याय १०८ सर्प और युधिष्ठिर का संवाद है उस से भी स्पष्ट प्रकट है कि जिसमें सत्य-दान-क्षमा-शील-लज्जा और घृणा हो उसको ही ब्राह्मण कहते हैं ।

सत्यदानं क्षमाशीलमानृशंस्य तपो घृणा ।
दृश्यन्ते यत्र नागेन्द्र सब्राह्मण इति स्मृतः ॥

श्रीमद्भागवत स्कन्द अध्याय ५ में लिखाहै कि ब्राह्मण वेदके पूर्ण ज्ञाता होने के पश्चात् उनमें सत्वगुण शम-दम-सत्य-अनुग्रह-तप सहनशीलता अनुभवजन्यज्ञान यह आठ लक्षण भी रहते हैं ।

धृतातनूरुशतीमेपुराणीयेनेह सत्वं परमं पवित्रम् ।
शमोदमःसत्यमनुग्रहश्चतपस्तितिक्षाऽनुभवश्च यत्र ॥

शान्तिपर्व अध्याय ६३ में लिखा है कि ब्राह्मणोंको उचित है कि राजाकी सेवकाई, कृषिसे प्राप्त, मध वाणिज्यसे जीविका (निर्वाह) कुटिलता, व्यभिचार, व्याज लेना इन सब कार्यों को परित्याग करे। अधम ब्राह्मण दुश्चरित्री, निज धर्मको त्यागने वाला, वृषलीपति, धूर्त्त, नाचनेवाला, ग्रामप्रेष्य कुकर्मोंमें रत रहनेवाला शूद्रके समान है।

राजप्रेष्यं कृषिधनं जीवनञ्च वणिज्यया ।
कौटिल्यं कौलटेयञ्च कुसीदञ्च विवर्ज्जयेत् ॥
शूद्रो राजन भवति ब्रह्मबन्धुर्दुश्चारित्रो यश्च धर्मादपेतः ।
वृषलीपतिः पिशुनोनर्त्तनश्च ग्रामप्रेष्यो यश्च भवेद्विकर्मा ॥४॥

इस लिये जो धार्मिक, सुशील, दयालु, सहनशील, ममतारहित, सरल, कोमलतायुक्त, अनृशंस, क्षमावान् पुरुष यज्ञादिकोंका अनुष्ठान करके सोमपान करते हैं वे ही ब्राह्मण हैं, इसके अतिरिक्त पाप कर्म करनेवाले ब्राह्मण नहीं गिने जाते।

यः सदादान्तः सोमपश्चार्य्यशीलः सानुक्रोशः सर्वसहो निराशीः ।
ऋजुर्मृदुरनृशंसः क्षमावान् स वै विप्रो नेतरः पापकर्मा ॥ ८ ॥

भविष्यपुराण ब्रह्मपर्व अध्याय २ में लिखा है जो ब्राह्मण यज्ञ करते हैं और उनमें अनुसूया, दया, क्षान्ति, अनायास, मङ्गल, शौच और स्पृहा यह आठ गुण भी हैं और संस्कारोंसे युक्त हैं वे ही ब्रह्मत्वको प्राप्त होकर ब्रह्मलोकको जाते हैं।

अनुसूयादयाक्षान्तिरनायासंचमङ्गलम् ।
अकार्पण्यंतथाशौचमस्पृहाचकुरुद्वह ॥ १५६ ॥
यएतेऽष्टगुणास्तातकीर्त्यंतवैमनीषिभिः ।
एतेषांलक्षणंवरिशृणुसर्वमशेषतः ॥ १५७ ॥

वपुर्यस्यतुइत्येतैः संस्कारैः संस्कृतंद्विज. ।
ब्रह्मत्वमिहसंप्राप्यब्रह्मलोकंचगच्छति ॥ १६६ ॥

शिवपुराण—विद्येश्वरी संहिता अ० १२ में लिखाहै कि सदाचार युक्त विद्वान् ब्राह्मण वेदाचार युक्त होनेसे आगे कहे हुये एक २ गुणों से भी द्विज कहलाताहै । अल्पाचार थोड़ा वेद पढ़ा हुआ, राज सेवक, ब्राह्मण, क्षत्रिय, ब्राह्मण है, और कुछ आचार वाला, खेती, वाणिज्य करने वाला वैश्य ब्राह्मण कहाता है और स्वयं हल जोते वह शूद्र ब्राह्मण है, निन्दा करने वाला पराया द्रोह करने वाला चांडाल ब्राह्मण है । १ । २ । ३ । ४ ॥

अल्पाचारोल्पवेदश्च क्षत्रियो राजसेवकः ।
किंचिदाचारवान्वैश्यः कृषिवाणिज्यकृत्तथा ॥
शूद्रब्राह्मणइत्युक्तः स्वयमेवहिकर्षकः ।
असूयालुः परद्रोही चांडालद्विजउच्यते ॥

धर्म्म संहिता—अध्याय २ में सनत्कुमारने व्यासजीके पूछने पर कहा है कि विद्या और जन्मसे ही ब्राह्मण श्रेष्ठ नहीं होता किन्तु सदाचार ब्राह्मणमें रहता है इस कारण वह सबसे श्रेष्ठ है ।

विद्यया जन्मना वापि न श्रेयान्ब्राह्मणो भवेत् ।
आचारो ब्राह्मणस्येह तस्माच्छ्रेष्ठतरः सदा ॥

और अ० ४१ में व्यासजीने पूछा कि ब्राह्मणत्व दुष्प्राय है वा स्वभावसे ही ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य होते हैं ।

ब्राह्मणत्वं हि दुष्प्रायं निसर्गाद्ब्राह्मणे भवेत् ।
क्षत्रियो वापि वैश्यो वानि सर्गादेव जायते ॥

नीचेस्थानसे उत्कर्ष जाति किस प्रकार प्राप्त होती है सो आप कहिये सनत्कुमारने कहा है कि व्यासजी ! मनुष्य अपने आपसे ही स्थानभ्रष्ट होता है ।

किमुत्सृतिमधःस्थानादाप्नुवंतिह्यतोवद ।

॥ सनत्कुमार उवाच ॥

दुष्कृतेन तु कालेय स्थानाद्भ्रश्यंतिमानवाः ॥

इस कारण श्रेष्ठ स्थान में प्राप्त होकर उस स्थान से अपने को र-
क्षित करे जो ब्राह्मणत्व छोड़ कर क्षत्रिययोनि में उत्पन्न करता है।

श्रेष्ठंस्थानंसमासाद्यतस्माद्रक्षेतपंडितः ।

यस्तुविप्रत्वमुत्सृज्यक्षत्रयोन्यांप्रसूयते ॥

वह मूढ़ अधर्मसेवनसे उसीमें वर्तमान होजाता है ब्राह्मत्वसे भ्र
होकर क्षत्रियत्व को प्राप्त होता है ।

ब्रह्मण्यात्सपरिभ्रष्टः क्षत्रियत्वंनिषेवते ।

अधर्मसेवमान्मूढस्तथैवपरिवर्तते ॥

फिर वह सहस्र जातिके अन्तर (बीच) में अन्धकार ही में प्रवि
होताहै इस कारण परमस्थान को प्राप्त होकर प्रमादसे उसे नष्ट न करे।

जात्यंतरसहस्रेण तमसाविशतेयतः ।

तस्मात्प्राप्यपरंस्थान प्रमाद्यन्नतुनाशयेत् ॥

सनत्कुमार संहिता अ० ५३ में लिखा है कि जो जाति से ब्राह्मण
हो, सर्वशास्त्रका पंडित हो और तप, शौच, से युक्त हो इन तीनों
से युक्त होने से ही यथार्थ ब्राह्मण है ।

जात्याचयोभवेद्विप्रः सर्वागमविशारदः ।

तपःशौचसमायुक्तस्त्रयवोनाम्नासउच्यते ॥ १५ ॥

अग्निहोत्रतपोयोगः शौचमार्ज्जवमेवच।

सत्यंवेदप्रसंगश्चद्विजकर्मपरंस्मृतम् ॥

अग्निहोत्र, तप, योग, शौच, आर्जव, सत्य, वेदपाठ करना य
ब्राह्मणके कर्म हैं ।

नानृतं ब्राह्मणो ब्रूते न हन्ति प्राणिनं द्विजः ।
न सेवां कुरुते विप्रो न द्विजः पापकृद्भवेत् ॥

ब्राह्मण झूठ नहीं बोलते और न हिंसा करते हैं और वह पापकारी भी नहीं होते ।

भविष्यपुराण पूर्वार्द्ध अ० ३६ में राजा शतानीक ने सुमंत मुनि से पूछा कि महाराज जाति उत्तम है या कर्म ? तब मुनि ने कहा कि यही प्रश्न मुनियोंने ब्रह्माजीसे पूछा था तब उन्होंने कहा था कि यदि जीव ही ब्राह्मण है तो वह संसारमें ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र चांडाल शूकर आदि योनियोंमें घूमता है फिर क्योंकर ब्राह्मण हो जिस प्रकार गौमें अश्व पृथक् जाना जाता है इस भांति मनुष्यों में ब्राह्मण नहीं जाना जाता जिस प्रकार नीलगाय का गला, कम्बल करके होता है ऐसा भी कोई चिह्न नहीं जो और मनुष्यों से ब्राह्मण को जान ले इस लिये जातिभी ब्राह्मण नहीं गौ, बकरी, भेड़, ऊंट, गधे, खच्चर, घोड़े हाथी आदि की नौकरी, बनिया लुहार आदि कारीगर नट आदि का काम करें मांस, लहसुन, प्याज, आदि खाये, मद्य पीने, मांस, लवण, आदि रस दूध बेचने आदि कारणों से वेद वेदांग का पठन पाठन भी करनेहारा, उत्तम कुलमें उत्पन्न ब्राह्मणत्व से हीन होते हैं । इस लिये ब्राह्मणत्व एक शरीर में स्थिर नहीं होसक्ता मनुजी ने भी यह कहा है कि मांस, लवण, लाक्षा, दूध आदि पदार्थ बेचने से ब्राह्मण शूद्र हो जाता है और गौ, खेती, नौकरी नट वैश्य आदि का कर्म करे वह ब्राह्मण शूद्र के तुल्य होता है इस प्रकार ब्राह्मण से शूद्र और शूद्र से ब्राह्मण बन जाता है ।

और अ० ३७ में लिखा है कि वेद पढ़ने से भी ब्राह्मण नहीं होते क्योंकि रावण आदि राक्षसोंने भी तो वेद पढ़े थे और भी शूद्र, चांडाल, धीवर आदि कोई २ छलसे वेद पढ़ लेते हैं परन्तु ब्राह्मण नहीं होसकते कई शूद्र दूसरे देश जाय ब्राह्मण बन वेद पढ़लेतेहैं और उत्तम ब्राह्मण की कन्या से विवाह कर लेते हैं अथवा बिना वेद पढ़े भी पञ्चगौड़ पंचद्राविड़ आदिकों में किसी प्रकार के ब्राह्मण बन

सत्कुल में विवाह कर लेते हैं इस कारण वेद पढ़ने से भी ब्राह्मणकी पहिचान नहीं होसकती।

शास्त्रकार यह कहते हैं कि आचारहीनको वेद पवित्र नहीं कर सकते। सर्वाङ्गसहित भली भांति वेद क्यों न पढ़े हो, क्योंकि वेद पढ़ना तो ब्राह्मण का एक शिल्प है आचरण ही मुख्य है, कई शूद्र संध्योपासनादि करते हैं, दंड मृग चर्म, मेखला, यज्ञोपवीत आदि धारण कर लेते हैं उनको कोई निषेध नहीं कर सक्ता। अभिचार आदि कर्म्म शूद्र भी कर सकते हैं, तप सत्य आदि के प्रभाव से देवता का अनुग्रह और मंत्रसिद्धि शूद्रों को भी होती है आप अनुग्रह का सामर्थ्य भी तप करने से शूद्रों में होजाता है यह सब बातें ब्राह्मण और शूद्रों में तुल्य हो सक्ती हैं, संस्कार भी तो ब्राह्मणत्व के हेतु नहीं क्योंकि व्यासादिकों के गर्भाधान, सीमन्त आदि किसी ने नहीं किये शरीर भी सब मनुष्यों के तुल्य ही है इसके उपरांत म्लेच्छ आदि श-रीर से पुष्ट और बलवान् होते हैं देह आत्मा वचन, सुख, ऐश्वर्य्य, रोग, आशा, वीर्य्य, आकृति, इन्द्रियां, व्यापार, आयु, दुर्बलता, पु-ष्टता, चंचलता, स्थिरता, बुद्धि, वैराग्य, धर्म, पराक्रम, रूप, औषधि गर्भ देहकी मलीनता, उज्वलता आदि अस्थि, रोम, मांस त्वचा त्रि-वर्ग में रुचि इत्यादि पदार्थ ब्राह्मण और शूद्र में तुल्य ही होते हैं इन बातों से शूद्र और ब्राह्मण का भेद देवता भी नहीं कर सकते और ब्राह्मण चन्द्र किरणों के समान श्वेत वर्ण नहीं है क्षत्रिय टेसू वर्ण के स-मान रक्तवर्ण नहीं वैश्य हरिताल से पीले नहीं और शूद्र कोयले से काले नहीं होते कि सबको पृथक् २ पहिचान लेते' चलना, फिरना, बैठना, उठना, सोना, सुख, दुःख सबको समान है फिर मनुष्य चार प्रकार के क्योंकर हुए एक पिता के एक ही जाति के होते हैं इसी प्रकार इस जगत् का पिता एक परमेश्वर है। फिर उसकी सन्तानमें क्योंकर जाति भेद हो सक्ता है जैसे एक वृक्ष के फल रूप, स्वादु आदि करके तुल्य होते हैं इसी विधि परमेश्वर रूपी वृक्ष से उत्पन्न हुए मनुष्य रूपी फल सब समान हैं। कौशिक, काश्यप, गौतम, कौण्डिन्य, माण्डव्य, वसिष्ठ आत्रेय, कौत्स आंगिरा, गर्ग, मौद्गल्य, कात्यायन, भार्गव, भारद्वाज आदि गोत्र भी

ब्राह्मणत्व का हेतु नहीं क्योंकि यह गोत्र और वर्णोंमें भी होते। श-रीर के अंगों को ब्राह्मण कहो तो अंग कट जाने से ब्राह्मणत्व जाता रहेगा।

यदि सम्पूर्ण शरीर को ब्राह्मण कहो तो मरने के अनन्तर उस शरीर का जो दाह करेगा वह ब्रह्महत्या का भागी होगा, और जो कहो कि ब्राह्मण की कन्या के साथ जो विवाह करै वह ब्राह्मण होता है और वही ब्राह्मण जब क्षत्री की कन्या से विवाह करेगा तब क्षत्री हो जायगा क्योंकि ब्राह्मणों को चारों वर्णों की कन्या से विवाह करना लिखा है इस लिये जाति देह कर्म वेदाध्ययन आदि कोई भी ब्राह्मणत्व के हेतु नहीं हो सक्ते।

अध्याय ३८ में कहा है कि रूप, ऐश्वर्य्य, विद्या और जाति का अभिमान वृथा है क्योंकि यह जीव वनस्पति, शंख, चींटी भ्रमर, हाथी आदि अनेक योनियों में जाय नट की भांति नानाप्रकार की देह धारता है फिर जाति का अभिमान कहां रहा? इस लिये बुद्धिमान् मनुष्य कभी जाति का गर्व न करे क्योंकि जाति स्थिर नहीं रहती। जो कहै कि संस्कारों से ब्राह्मण होता है तो गर्भाधान आदि जिनके संस्कार होते हैं उनकी कुछ आयु नहीं बढ़ जाती और संस्कार हीन अल्पायु नहीं होते सुख दुःख दोनों को होता है इसके उपरांत उत्तम संस्कार जिनके हुए हों वे दुराचरण करके पतित होजाते हैं और नरक में पड़ते हैं और संस्कारहीन उत्तम चाल चलन से भले कहाते हैं और स्वर्ग पाते हैं। संस्कारयुक्त पुरुषभी द्यूत, वैश्यासंग आदि कुकर्मोंमें आसक्त हो जाते हैं और संस्कारहीन जप, तप, दान, आदि सुकर्म करते हैं। ऋषि व्यासादि संस्कारहीन भी होकर उत्तम आचरण क-रने से सब ब्राह्मणों में श्रेष्ठ ठहरे इससे संस्कार भी ब्राह्मणत्व का निमित्त नहीं।

जो कहो कि जन्मसे ब्राह्मण होतेहैं तो देखो कि व्यासजी कैवर्ती से और पराशर चांडाली के गर्भ से उत्पन्न हुए इसी प्रकार औरभी—

जातो व्यासस्तु कैवर्त्याः श्वपाक्याश्च पराशरः।
शुक्याःशुकः कणादाख्यस्तथोलूक्याः सुतोऽभवत्॥२२॥

श्वपाकीगर्भसंभूतः पिता व्यासस्य पार्थिव ।
तपसा ब्राह्मणो जातः संस्कारस्तेनकारणम् ॥ २३ ॥

हज़ारों अधम योनियोंसे जन्मे और उत्तम ब्राह्मण गिने गये। सब संस्कारहीन और जन्म भी उत्तम नहीं परन्तु प्रबल तप करके सब ब्राह्मण हुये । संस्कार भी होय और विद्या, तप आदिभी होंतो उत्तमोत्तम ब्राह्मण होजाता है । सब संस्कारोंसे संस्कृत हो करभी महापातक करनेसे ब्राह्मणपना खो बैठताहै इसलिये ब्राह्मणत्व नियत नहीं सांकेतिक है अर्थात् ब्राह्मणत्व एक संकेत है ।

लब्धसंस्कारदेहाश्च महापातकिनो नराः ।
यस्मान्निवर्त्तते ब्रह्म तस्मात्सांकेतिकं विदुः ॥३२॥

इसके उपरान्त अध्याय ३८ में लिखाहै कि शुक्र व विष्टासे उत्पन्न हुई कीटके तुल्य यह देह अति मलीन क्योंकर शुद्ध होतीहै मन में तो दुष्टता भरी रहीहै और बाहरसे सब संस्कार होतेहैं कोई २ वैदिक संस्कारोंसे तो युक्तहै परन्तु आचरणोंमें शूद्रोंसे भी अधिक मलीन होजाते हैं क्रूरकर्म करनेहारा, ब्रह्मघ्नी, गुरुदारागामी, नास्तिक, मायाजाल कलि आदिमें आसक्त इत्यादि दोषोंसे युक्त निषिद्ध आचरण करने हारा, धूर्त, शठ, पापी, सर्वभक्षी, सर्वविक्रमी ऐसे जो ब्राह्मण हों तो उनके चाहे सब संस्कार क्यों न हों वे सब वेद वेदाङ्ग पढ़े हों परन्तु कभी उनको निष्कृति नहीं होती । जो इष्ट अनिष्ट ब्राह्मणको होतेहैं वे शूद्रको भी होतेहैं इसलिये वेदपाठ अग्निहोत्र आदि कोई कर्म भी ब्राह्मणके हेतु नहीं, वैधव्य वियोग मरणादि सबको होतीहै, वात, पित्त कफ, लोभ, धनकी तृष्णा सबको होतीहै दयाहीन, हिंसक, परमदांभिक, कपटी, लोभी, पिशुन, अति दुष्ट ऐसे पुरुष वेद पढ़ संसारको ठगते हैं वेद विक्रय कर अपना पोषण करते हैं अनेकप्रकारके छल छिद्र कर प्रजाकी हिंसा करते हैं केवल अपना सांसारिक सुख साधते हैं ऐसे ब्राह्मण, शूद्रसे भी अधम होतेहैं इसलिये जाति वृथाहै, सकामा शूद्राके ब्राह्मण संग करके गर्भ स्थापन कर देता है और ब्राह्मणी

को शूद्रसे गर्भ होजाता है फिर जाति भेद कहो ठहरा जाति भेद तो गौ, घोड़ा, हाथी आदि पशुओंमें है जो अपनी जातिकी स्त्री विना दूसरी जातिकी स्त्री से संग नहीं करते न दूसरी जातिमें गर्भ रख सकते हैं पशु जातिकी स्त्री से मनुष्य संग करे तो सुख नहीं होता और न गर्भ रहताहै इसी प्रकार मनुष्यस्त्री पशुसे मैथुन करे तो न गर्भ धारै औरन उसके आनन्द होय परन्तु मनुष्यजातिमें किसी वर्णके साथ संग करै तबही आनन्द मिले और गर्भ धारै इससे जाति भेद नहीं बन सका। जो मनुष्यों में जाति कल्पना है केवल व्यवहार के लिये संकेत है वास्तव में सत्य नहीं। जो और चालीसवें अध्याय में लिखा है कि जो ग्राह्य अग्राह्य के तत्व को जान अन्याय और कुमार्ग को त्याग करै जितेन्द्रिय स्थिर रहै, सबके हित में तत्पर हों, भली भांति वेदवेदांग शास्त्र जानता हो, समाधि में स्थित हो, क्रोध-हीन हो, मत्सर, मद, शोक आदि करके वर्जितहो, वेदके पठन पाठन में आसक्तहो, विशेष करके किसी का संग न करै एकान्त और पवित्र स्थान में रहे, सुख, दुःख में समान हो, धर्मनिष्ठ हो, पापसे डरै, नि-र्भय, निरहंकार, दानशूर ब्रह्मवेत्ता, शान्तस्वभाव, और तपस्वी हों वे ब्राह्मण कहाते हैं। इसी प्रकार के ब्राह्मण जगत्के हित के लिये लिये उत्पन्न किये गये हैं। ब्रह्म के भक्त होनेसे ब्राह्मण, क्षत्रके रक्षा करनेहारे क्षत्रिय, वार्त्ताका सेवनसे वैश्य और श्रुति से द्रुति होने से शूद्र कहाये। क्षमा, दम, शम, दान, सत्य, शौच, धृति, दया, मृदुता संतोष, तप, निरहंकार, अक्रोधता, अनुसूयता, अशठता, अस्तेय, अ-मात्सर्य्य, धर्म ज्ञान, ब्रह्मचर्य्य, ध्यान, आस्तिक्य, वैराग, पापभीरु, अद्वेष, गुरुशुश्रूषा इत्यादि गुण जिनमें देखा उनको सृष्टि के समय ब्राह्मण ठहराया। जो बलवान् और दूसरों की रक्षा करने में समर्थ देखे वे मनुष्य क्षत्री कहलाये। जो वृत्ति और धनके उपार्जन करने में तत्पर हुए उनकी वैश्य संज्ञा हुई। और जो निस्तेज, अल्प बल, शोचते और दबते हुए इन तीनों की सेवा में तत्पर हुए वे शूद्र कह-लाये। इसी भांति अपने २ स्वभावके अनुसार वर्ण कल्पित हुए और शम, तप, दम, शौच, क्षान्ति, सौवापन, ज्ञान, विज्ञान आस्तिक्य ये

ब्राह्मणों के स्वाभाविक कर्म हैं। शौर्य्य तेज, धृति, दाक्ष्य बुद्धिमें जपलायन अर्थात् पीछे न फिरना, दान और ईश्वरभाव ये क्षत्रियों का स्वाभाविक कर्म हैं जिसके ज्ञानरूपी शिखा और तपोरूपी सूत्र अर्थात् यज्ञोपवीत हो उसको स्वायम्भुव मनुने ब्राह्मण कहा है चाहे जिस वर्ण में उत्पन्न हुआ हो और पाप कर्म्मों से निवृति होकर उत्तम आचरण रक्खे वह ब्राह्मण के समान ही है शील करके युक्त ब्राह्मण से अधिक होता है आचार से रहित ब्राह्मण शूद्रसेभी निकृष्ट माना जाता है और जो अपने घर में मद्य न बनावे और बाजार आदिमें बेचे भी नहीं वही शूद्र उत्तम होता है। प्रथम तो जीवमात्र एक जाति है फिर मनुष्यादि जाति पृथक् २ हैं उनमें स्त्री पुरुष आदि भेद हैं उनमें भी बालक तरुण वृद्ध ये जाति हैं इसके बिना और जातिकी कल्पना संकेत मात्र है जिस प्रकार देव और पुरुष मिलकर कार्य्य सिद्ध होते हैं इसी प्रकार उत्तम जाति और सत्कर्मका योग होनेसे पूर्णसिद्धि होती है।

किंदेहस्योतपेनासौ निसर्गमलिनः स्थितिः ।
शुक्रशोणितसंभूतः शमलोद्भव कीटवत् ॥

भविष्यपुराण ब्राह्मपर्व अ० ४३ श्लोक २ ॥

निषेकादिश्मशानां तैर्विविधैर्विधि विस्तरैः ।
देहिनोऽतिशयं कश्चिदुपगच्छन्ति मानवाः ॥ ३ ॥

वैदिकाखिलसंस्कार सारभूता द्विजातयः ।
सर्वकार्य्यकरान् सर्वान् वृषलानतिशेरते ॥ ४ ॥

चण्डकर्माविकर्मस्थो ब्रह्महागुरुतल्पगः ।
स्तेनो गोघ्नः सुरापानः परस्त्रीरमणप्रियः ॥

शमस्तपो दमः शौचं क्षांतिरार्जवमेव च ।
ज्ञानंविज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्मस्वभावजम् ॥

शौर्यंतेजोधृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रंकर्मस्वभावजम् ॥
निर्वृत्तः पापकर्मभ्यो ब्राह्मणःसविधीयते ।
शूद्रोऽपिशीलसम्पन्नो ब्राह्मणादधिको भवेत् ॥
ब्राह्मणो विगताचारः शूद्राद्धीनतरोभवेत् ।
न सुरां संघयेद्यस्तु आपणेषु गृहेषु च ॥

भवि० ब्राह्म० अ० ४६ ॥

इस लिये प्रथम सबको शिक्षा होनी चाहिये फिर वर्णव्यवस्था नियत करना अभीष्ट है देखो प्राचीनकाल में भी इसी के अनुसार बहुधा शूद्र पढ़े लिखे तपस्वी, ज्ञानी होते थे । रामायण से विदित होता है कि जब महात्मा रामचन्द्रजी वनोवास को गये और शबरी के स्थान पर पहुंचे जो सकल धर्मों के अनुष्ठान करनेवाली तपस्विनी थी जैसा कि—

शबरींधर्मचारिणीमश्रमणं धर्म्मनिपुणमाभिगच्छेति राघवः ॥

अब आपको यह भी ज्ञात होना चाहिये कि शबरी किस जाति की थी देखिये अमरकोष—

भेदाः किरात,शबरपुलिन्दाम्लेच्छजातयः ॥

अर्थात् किरात और शबर, पुलिन्द और म्लेच्छ जाति यह सब चांडाल के भेद हैं इससे प्रकट है कि शबरी एक अधम शूद्रा थी ।

जब श्रीराम आदि शबरी के स्थान पर पहुंचे तो उसने उठकर दोनों के चरण पकड़ कर प्रणाम किया फिर विधिपूर्वक पैर धोने और आचमन के लिये जल दिया जैसा कि वाल्मीकि रामायण आरण्यकांड सर्ग ७३ में लिखा है ॥

तौदृष्ट्वातुतदासिद्धासमुत्थायकृतांजलिः
पादौजग्राहरामस्य लक्ष्मणस्य च धीमतः ॥६॥

पाद्यमाचमनीयं च सर्वं प्रादाद्यथाविधि ।

इससे यह भी प्रकट होता है कि श्रीरामजीने शबरी के हाथ से जल लेकर आचमन किया। राजा दशरथको शब्दभेदी तीर मारने का बड़ा अभ्यास था एक दिन रात्रिको घूमते हुए राजाने सरयूकी ओर जाना कि हाथी पानी पीरहा है तुरंत तीर मारा जो एक मनुष्य के लगा अब यह विचारना चाहिये कि वह कौनथा और उसकेमाता पिता कौनथे रामायणसे विदित होता है कि उसकी माता शूद्रा थी और पिता वैश्यथे शास्त्रमें ऐसे को करण नाम शूद्र कहा है। मरते समय दशरथजी से उसने कहाकि राजन् आपको ब्रह्महत्याका भय न हो क्योंकि मैं ब्राह्मण नहीं हूं।

शूद्रायामस्मि वैश्येन जातो नर वर्णाधम ।

इसके उपरान्त वह तपस्वी का भेष धारण किये हुए शास्त्रका अध्ययन करता था।

जटाभारधरस्यैव वल्कलाजिनवाससः ।

इसके पश्चात् उसके अंध पिता विलाप कर कह रहेथे कि मधुर स्वरसे शास्त्रों और पुराणोंको पढ़ता हुआ अबमें किसका शब्द सुनूंगा।

कस्य वा पररात्रेहं श्रोष्यामि हृदयं गमम् ।
अधियानस्य मधुरं शास्त्रं वान्यद्विशेषतः ॥

कौन मनुष्य मुझको स्नान, सन्ध्या, होम करावेगा जैसाकि—

कोमां सन्ध्यामुपास्यैव स्नात्वा हुत हुताशनं ।

मार्कंण्डेय पुराण अध्याय १३५ से विदित होताहै कि वपुष्मान्के पिता इन्द्रसेना के साथ वानप्रस्थमें गयेथे राजा वपुष्मान्ने पुरानी शत्रुता के कारण वनमें जाकर मारडाला तब रानी इन्द्रसेनाने उसके मारे जानेके समाचार एक शूद्र तापसके द्वारा भेजेथे जैसाकि लिखाहै।

प्रेषयामास पुत्रस्य समीपं शूद्रतापसं ।

जब वह तपस्वी शूद्र राजाके समीप आया और सब वृत्तान्त कहा तब राजा ने अपने पुरोहित और स्त्रियोंको बुलाकर उनसे कहा

कि वयुष्मान् ने मेरे पिता को मार डाला है वह स्वर्गवासी होगये यह बात एक शूद्र तपस्वी आकर कह गया है देखो—

यदत्र कृत्यंतदव्रतं ताते प्राप्ते सुरालयं श्रुतं भवद्भिर्यत्प्रोक्तं तेन शूद्रतपस्विना ।

देखो छान्दोग्योपनिषद् के प्रपाठक ४ खं० २ में हारेत्वाशूद्र० इत्यादि वाक्य देखो। जानश्रुति शूद्रको रायक्क महर्षिने विद्या पढ़ाई तथा छान्दोग्य प्र० ४ खं० ४ में जाबालअज्ञात कुलको गौतम ऋषिने विद्या पढ़ाई थी इसी भांति ऋग्वेद मंडल १० अनुवाक ३ सूक्त ३० से ३४ तक देखिये।

इन चार सूक्तोंका ऋषि कवष, ऐलूष हुआ है इन सूक्तों को कवष, ऐलूषने बहुत से ऋषियों को पढ़ाया और ऋग्वेद मंत्र १ अनुवाक १७ सूक्त ११६ से १२६ तकका फैलानेवाला कक्षीवान् हुआहै जो वंग देशके राजाकी दासीका पुत्र था फिर कैसे आश्चर्य्य की बात है कि आज वह वेद सुननेके अधिकारी नहीं रहे। पंडितजी महाराज! आप ही विचार करें देखिये शतपथ कां० १ प्र० १ अ० १ ब्रा० ४ कं १२ में स्पष्ट आज्ञा है कि चारों वर्ण वेदमंत्रों से यज्ञकी हविको शुद्ध करें देखिये महाभारत शांतिपर्व अध्याय ३२८ में कि वेदव्यासजी शुक्राचार्य्य इत्यादि अपने शिष्योंको उपदेश करतेहैं कि हे शिष्यो! तुम ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रको क्रमशः वेदका उपदेश करो क्योंकि वेद अध्ययन करना मनुष्य का मुख्यकार्य्य है।

वेदस्याध्ययनं हीदं तच्चकार्यं महत्स्मृतम् ।

शुक्रनीति में लिखा है कि विद्या पढ़नेके लिये चारों वर्णों के मनुष्यों को ब्रह्मचारी होना चाहिये।

विद्यार्थं ब्रह्मचारीस्यात् सर्वेषां पालने गृही ।

प्रियपंडितजी अबतो आपको भले प्रकार पुराणोंसे ही विदित होगया कि वर्ण गुण कर्म और स्वभावहीसे होते हैं इसलिये अब

आपको पुराणोंके उन लेखोंका आदर नकरना चाहिये जो जन्मसे वर्ण माननेकी आज्ञा देते हैं क्योंकि यह आज्ञा उनकी वेदके विपरीतहै इसके अतिरिक्त पुराणोंके सुनानेवाले सूतजी महाराज हुएहैं जिन्होंने अनेकान ऋषियों को पुराण सुनाये और वह ऋषि वह उनको उच्चासन पर बिठा सर्वप्रकार से उनकी पूजा अर्थात् सत्कार करते थे और सूतोंकी गणना वर्ण सङ्करों में की है देखो पद्मपुराण सृष्टिखंड प्रथम अध्याय श्लोक में लिखा है।

अधरोत्तर धारेण जज्ञे तद्वर्णसंकरम्।

उसी स्थान पर यह भी लिखा है कि सूत वह कहाते हैं जो क्षत्रिय ब्राह्मण से उत्पन्न करें। कहनेका तात्पर्य यहहै कि सूतजीका जन्म विलोम में हुआ था जिन्होंने वृद्धोंकी सेवा और महात्माओं के सत्संगसे कुलके जन्मकी मानसी पीडाको नाश कर उत्तम बनगये जैसाकि सूतजीने स्वयं श्रीमद्भागवत स्कन्द १ अध्याय १८ में कहा है

अहो वयं जन्मभृतोद्यहास्मद्वृद्धानुवृत्त्याऽपिविलोमजाताः। दौष्कुल्यमाधिं विधुनोति शीघ्रं महत्तमानामभिधानयोगः॥

अर्थ सूतजीने कहाकि बड़े आनन्द की बात है कि विलोममें हमारो जन्म है तो भी वृद्धोंकी सेवासे हमारो सफल जन्म भयो और महात्मनको सत्संग कुलके जन्मकी जो मानसी पीड़ाहै तोको शीघ्र नाश करे है।

श्रीमान् अब आपको इससे अधिक और क्या प्रमाणदूं जब पुराणोंके सुनानेवाले सूतजी महाराज जिनका जन्म बिलोसमें हुआ था महात्माओंके सत्संग और वृद्धोंकी सेवा से उसकी ग्लानि दूर होगई अर्थात् उत्तम गुण, कर्म और स्वभावके कारण वह मानसी पीड़ा जाती रही अर्थात् उत्तम वर्ण में होगये इसी भांति स्कंद ९ अध्याय २ में लिखाहै कि दृष्टिका पुत्र नाभाग कर्म करके वैश्य होगया जैसाकि—

नाभागोदिष्टपुत्रोऽन्यः कर्मणा वैश्यतां गतः

अब आप बुद्धिसे विचारिये, कि दश इन्द्रियां प्रत्येक स्त्री पुरुष को दी हैं तो क्या स्त्री और शूद्र उनसे देखनेका कार्य्य लें मानलें यदि कोई किसीकी आंखोंको फोड़ डाले तो वह दण्डभागी होता है। उसी भांति परमात्माने बुद्धि, विद्या ग्रहण करके सत, असत्के विचार करने के लिये दी है यह विद्या मनुष्यके हृदयके नेत्र हैं तो फिर जो मनुष्य चर्मचक्षु फोड़नेसे दण्डभागी होते हैं। तो क्या हृदयरूपी आंखें फोड़ने वाले पुरुषोंको दण्ड न होना चाहिये, पंडितजी मुख्य अभिप्राय स्वार्थी जनोंका मूर्ख बनाने ही से चलता है इसलिये इन्होंने—

'स्त्रीशूद्रौ नाधीयातामिति श्रुते'

यह बनावटी श्रुति सुना स्त्री और शूद्रोंको निरक्षर रखनेका आर्डर पास कर दिया परन्तु पंडितजी अथर्ववेद कां० ५ अ० ५ व० ११ में परमेश्वर आज्ञा देताहै कि हे मनुष्यो! सत्य स्वरूप महा गम्भीर और सत्यवेदविद्याके प्रकट करनेमें जात वेद हूं मैं किसी दास व आर्य्यका पक्षपात नहीं करता किन्तु जो मेरी न्यायाचरणरूप सत्य प्रताज्ञाका पालन करेगा उसीको मैं उद्धार करूंगा।

इस हेतु पंडितजी परमात्माका भय कर पक्षपातको त्याग सम्पूर्ण स्त्री और पुरुषोंको आत्मवत् समझ शिक्षा करा फिर यथायोग्य गुण कर्म और स्वभावको मिला कर वर्ण नियत कीजिये जिससे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यकी सन्तानें अपनेसे नीच वर्णमें जानेके भयसे विद्यादि गुणोंके प्राप्त करनेमें लगी रहें और शूद्र नीच वर्ण उत्तम बननेके ख्याल से उत्तम गुणोंकी प्राप्ति करने का यत्न करते रहें यदि आप जन्मसे ही शूद्रोंकी सन्तानको शूद्र मानते हैं तो फिर ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य की सन्तानोंमें पुत्रको ब्राह्मण, क्षत्री वैश्य और उन्हींकी पुत्रियोंको शूद्र किस हिसाबसे बतलाते हैं यदि वह शूद्रही हैं तो फिर उनका विवाह ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य किस हिसाबसे धड़ाधड़ करते चले जाते हैं और यह भी विचार नहीं करते कि ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य इनके

वीर्य्यसे शूद्राणीमें जो सन्तान उत्पन्न होती है वह क्योंकर वर्णसङ्कर नहीं मानी जाती इसके उपरान्त पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय १४१ में लिखहै कि जहां धर्मावती और साभ्रवतीका संगम हुआ है वहांके स्नान करनेसे विदुर महाराजकी शूद्रता जाती रही जैसाकि-

तत्र वै कृतवान्स्नानं विदुरो धर्मरूपवान् ।
त्यक्तं तत्र हि शूद्रत्वं धर्मावत्यां न संशयः ॥४३॥

कहिये पंडितजी वर्त्तमान् समयमें सनातनधर्म सभा इस उपरोक्त नुस्खे के अनुसार शूद्रोंकी शूद्रता जानने के लिये क्यों नहीं आज्ञा जारी करदेती ।

सच तो यहहै कि जब तक भारतवर्षमें गुण कर्म और स्वभावसे वर्ण नियत होनेकी प्रणाली प्रचलित रही भारतके सौभाग्यकी उन्नति होती रही और जबसे स्वार्थी पुरुषोंने नाना लीला रच विद्याके प्रचार को रोका तबही से जन्मसे वर्ण नियत कर देशका चौपट कर दिया। क्या विदुर महाराजकी शूद्रता स्नानसे जाती रही थी नहीं २ वरन उनके गुण कर्म और स्वभावसे जिनके विषयमें महाभारतमें बड़ी प्रशंसा लिखीहै इन्हीं महात्माकी बनाई हुई विदुरनीति इस समय भी संसारका उपकार कर रहीहै, इसलिये पंडितजी अब सनातनी भाइयों को योग्य है कि पक्षपातको त्याग प्रेमपूर्वक वेदानुकूल वर्णव्यवस्थाके स्थापित करने का यत्न करें वरन् वह दिन निकट आने वालाहै कि भारतवासी स्वयं विद्या आदि गुणोंसे वर्ण नियत करने की प्रणालीको प्रचलित करदें ।

फिर आपके हाथसे यह कार्य्यभी जाता रहेगा अब तो आप जान गये होंगे कि पुराणोंको व्यासजीने शूद्रोंके लिये तथा स्त्रियोंके लिये नहीं बनाया ।

श्रीमान् पंडितजी पुराणों के बननेका दूसरा कारण पुराणोंसे यह विदितहै होता है कि सत्युगमें धर्म के चार चरण, त्रेतामें तीन द्वापरमें दो कलियुग में एक चरण रहजाता है जैसाकि वाराहपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ३२ में लिखा है

इत्युक्तः सम्प्रवस्थोऽसौचतुष्पादस्यात्कृतेयुगे। त्रेतायां त्रिपदश्चासौ द्विपादो द्वापरेऽभवत्॥ कलावेकेन पादेन प्रजा-पालयते प्रभुः

ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृतिखंड अध्याय ७ में भी लिखा है।

धर्मस्त्रिपाश्च त्रेतायां द्विपश्चद्वापरे स्मृतः।
कलौ प्रवृत्ते चैकपात्सर्वलुप्तस्ततः परम्॥

पद्मपुराण क्रियायोगसार अध्याय १६ में भी लिखाहै कि कलियुगमें धर्म का एक पद रह जाताहै।

एकपादो भवेद्धर्मः सर्वे पापरताजनाः॥ १६॥

लिंगपुराण अध्याय ३९ में लिखाहै कि सत्युग में धर्मके चार चरण त्रेता में तीन द्वापर में दो और कलिमें सत्तामात्र रहताहै

आद्यकृतयुगेधर्मश्चतुष्पादः सनातनः।
त्रेतायुगे त्रिपादस्तु द्विपादो द्वापरे स्थितः॥
त्रिपादहीनास्तिष्येतु सत्तामात्रेऽधिष्ठताः।

कूर्मपुराण अध्याय २९ में लिखा है।

आद्येकृतयुगे धर्मश्चतुष्पादः प्रकीर्तितः।
त्रेतायुगेत्रिपादः स्याद्द्विपादो द्वापरे स्थितः॥
त्रिपादहीनस्तिष्येतु सत्तामात्रेण तिष्ठति।

श्रीमद्भागवत—स्कन्द १२ अध्याय ३ में लिखा है कि सत्युग में चार त्रेतामें तीन द्वापरमें दो और कलियुगमें धर्मका एक चरण रह जाता है अन्तको वह भी नष्ट होजाता है!

कलौ तु धर्महेतूनां तुर्यांशोऽधर्महेतुभिः।
एधमानैः क्षीयमाणो ह्यंतेसोपि विनंक्ष्यति॥

इसी प्रकार अन्य पुराणोंमें भी लिखाहै इसके उपरान्त कलियुग में मनुष्य नानापापोंसे युक्त और न्यूनावस्था वाले होतेहैं जैसाकि-

कूर्मपुराण—अध्याय २९ में लिखा है कि घोर कलियुगमें मनुष्य पाप करने वाले महापापी और वर्णाश्रमसे रहित होजायंगे।

अस्मिन् कलियुगे घोरे लोकाः पापानुवर्त्तिनः ।
भविष्यन्ति महापापा वर्णाश्रमविवर्जिताः ॥

पद्मपुराण षष्ठ उत्तर खंड अध्याय ७१ में लिखा है कि इस घोरकलियुग में मनुष्य थोड़ी उमरके होकर अधर्ममें नित्यही रत रहते हैं फिर उनकी नाममें भी निष्ठा नहीं होती । ५६ ।

अस्मिन्कलियुगे घोरेऽल्पायुश्चैव मानवाः ।
विधर्मेषु रता नित्यं नामनिष्ठा न वै पुनः ॥

ब्राह्मण पाखंडी अधर्ममें सदारत सन्ध्यासे हीन व्रतोंसे भ्रष्ट दुष्ट और मलीनरूपसे रहते हैं ।

पाखंडिनस्तथा विप्राः धर्मेषु विरताः सदा सन्ध्याहीन-
व्रतभ्रष्टा दुष्टा मलिनरूपिणः ॥

जैसे ब्राह्मण वैसे क्षत्री, वैश्य, शूद्र और अन्य भी भगवान्के भक्त नहीं होते । ५८ ।

यथा विप्रास्तथा क्षत्रा वैश्याश्चैवपुनःपुनः ।
एवंशूद्रास्तथान्ये च नवै भागवतानराः ॥

क्रियायोगसार अध्याय २६ में कहाहै कि कलियुगमें धर्म का एक चरण रहगया, सब मनुष्य पापमें रत होगये ब्राह्मण क्षत्री वैश्य और शूद्र पापमें परायण अत्यन्त कामी क्रूर वेदकी निन्दा करनेवाले जुआ चोरी आदि पाप युक्त होंगे–

एकपादो भवेद्धर्मः सर्वेपापरता जनाः ।
ब्राह्मणः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रः पापपरायणः ॥

अत्यन्तकामिनः क्रूरा भविष्यन्ति कलौयुगे ।
वेदनिंदाकराश्चैव द्यूतचौर्यकरास्तथा ॥

श्रीमद्भागवत—स्कन्द १ अ० १ श्लोक १० में कहाहै कि कलियुग में मनुष्य अल्पायु मन्द, मन्दमति, मन्दभाग्य, रोगादि पीड़ित होंगे ।

प्रायेणाल्पायुषः साधो कलावस्मिन्युगेजनाः ।
मन्दाः सुमंदमतयो मंदभाग्या ह्युपद्रुताः ॥

और स्कन्द १२ अध्याय ३ में लिखा है कि कलियुगमें लोभी दुराचारी, निर्दयी, सूखी लड़ाई लड़ने वाले, दुर्भागी, बड़ी तृष्णायुक्त शूद्र और दास मुख्य इस युगमें प्रजा होगी ।

तस्मिन् लुब्धा दुराचारा निर्दयाः शुष्कवैरिणः ।
दुर्भगा भूरितर्षाश्च शूद्रादासोत्तराः प्रजा ।

मत्स्यपुराण—अध्याय १४२ में लिखा है कि कलियुगमें सब प्रजा मिथ्यावादी और लोभी हो जातीहै और बुरे इष्ट, बुरापढ़ना दुराचार और दुरागम इत्यादि ब्राह्मणोंके कर्मोंसे प्रजाको बड़ा भय उत्पन्न होताहै हिंसा, अभिमान, ईर्षा, क्रोध, निन्दा, क्षमा न करना अधर्म लोभ और मोह यह सब बातें बढ़ जाती हैं और विषय भोग अधिक होजाते हैं ।

अनृतव्रतलुब्धाश्च पुष्पे चैव प्रजाः स्थिताः ।
दुरिष्टैर्दुरधीतैश्च दुराचारैर्दुरागमैः ॥
विप्राणां कर्म्मदोषैस्तैः प्रजानां जायते भयम् ।
हिंसामानस्तथेर्ष्या च क्रोधोऽसूयाऽक्षमाऽधृतिः ॥
पुष्पे भवन्तिजन्तूनां लोभोमोहश्च सर्वशः ।
संक्षोभो जायतेऽत्यर्थं कलिमासाद्य वै युगम् ॥

अध्याय १४३ में लिखा है कलियुग में सब लोग हिंसा, चोरी, मिथ्या और छल आदि दोषों में लिप्त होगो हैं और तपस्वी लोगों में माया पाखंड और दम्भ यहसब स्वभाव से उत्पन्न होजाते हैं।

हिंसास्तेयानृते माया दम्भश्चैव तपस्विनाम्।
एते स्वभावाः पुष्यस्य साधयन्ति चता : प्रजा॥

ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खंड अध्याय ७ में लिखा है कि कलियुगमें सबही मनुष्य शठ, क्रूर, दाम्भिक, अहंकारी चोर, हिंसक और स्त्रीलोलुप इत्यादि होजायंगे। १८।

शठःक्रूरा दम्भिकाश्च महाहङ्कारसंयुता।
चौराश्च हिंसकाः सर्वे भविष्यन्ति ततः परम्॥

सब आश्रमों के मनुष्य म्लेच्छ होंगे। ५५।

आश्रमाणां जनानां च सर्वेम्लेच्छाःकलौयुगे॥

शिवपुराण विघेश्वरी सहिता अध्याय २ में लिखाहै कि कलियुगमें दुराचारी पुरुष होंगे जिनके मन पराई बुराईमें रत- पराई द्रव्य की इच्छा रखनेवाले, पराई स्त्रियोंमें मन लगानेवाले, पराई हिंसा में लवलीन, नास्तिक बुद्धिवाले, माता पितासे द्वेष रखनेवाले इत्यादि होंगे—जिन सब पापियों तारनेके लिये व्यासजी महाराज ने पुराण नाम सुधारसको बनाया जिसको बिना प्यासके पीनेसे देवता हो जाते हैं। परन्तु पंडितजी पुराणोंके यह लेखभी ठीक नहीं जान पड़ते क्योंकि वेदमें ऐसी कोई आज्ञा नहींहै कि सत्युगमें धर्मके चार चरण त्रेतामें तीन द्वापरमें दो और कलिमें एक चरण रह जायगा फिर हम इस बातको क्योंकर ठीक मानें। इसके उपरान्त पुराणोंका यह लेख कि जब २ संसारमें अधिक पाप होता है तब २ परमेश्वर अवतार लेकर दुष्टोंका नाश करता है यदि हम इस असत्य बातको भी मानलें तो भी तो यह बात ठीक नहीं होती देखिये सत्युग जो १७२८००० वर्ष का और कलि४३२००० का अर्थात् सत्युग की आयुसे कलियुगकी आयु चौथाई होती है और सत्युग में मच्छ कच्छ

वाराह, और नरसिंह, यह चार अवतार हुए अर्थात् मच्छ का अवतार हयग्रीवके मारनेके लिये जो वेदों को चुराले गया था कच्छ, पृथ्वी के स्थिर करनेके लिये जब दैत्य उसको डगमगाते थे वाराह, अवतार हिरण्याक्षके मारडालनेकेलिये हुआ क्योंकि वह पृथ्वीको बटोर के समुद्रमें लेगया था नरसिंह, का अवतार हिरण्यकशिपु के मार डालनेकेलिये हुआ।

और कलिमें, एक अवतार होने की पुराण सूचना देते हैं तो फिर श्रीमान् पंडितजी कलियुग क्योंकर पापी ठहरा जिसके लिये पुराण बनाये गये देखिये।

पूर्व विद्वानोंने सृष्टिकीआयुको १४ मन्वन्तरोंमें बांटा है और एक-मन्वन्तरमें ७१ चतुर्युगी होती हैं। और प्रत्येक की संख्या निम्न लिखितहै–

सतयुग — १७२८०००
त्रेता — — १२९६०००
द्वापर —— ८६४०००
कलियुग — ४३२०००

४३२००००

इससे प्रकट है कि हर चतुर्युगी की आयु ४३२०००० वर्षकी होती है यदि इसको ७१ से गुणा करदिया जावे तो एक मन्वन्तर होजाता है जिसके ३०६७२०००० वर्ष हुये इस प्रकार से १४ मन्वन्तर व्यतीत हों तो संसारकी आयु पूर्ण होजाती है।

इसीको ब्राह्मदिन कहते हैं जितने समय अन्धकार रहता है। वह ब्राह्मरात्रि कहलाती है।

अर्थात् कालकी संख्या ब्राह्मदिन और ब्राह्मरात्रि है और छोटे, पल, विपल और निमिष। अब यहां यह विचार करना भी उचित है कि काल क्या वस्तु है देखिये वैशेषिक दर्शन अ० २ में लिखा है।

अपरस्मिन्नपरं युगपत् चिरं क्षिप्रमिति काललिङ्गानि ॥६॥

पहिले, पीछे, एक साथ और शीघ्र यह कालके चिन्ह हैं अब यह

बात कि सत्युगादिमें धर्म ही होता रहा और कलियुगमें अधर्म ही होगा। नहीं इतिहासोंके देखनेसे यह भी विदित होता है कि सब युगोंमें पापी और पुण्यात्मा देव और असुर होते चले आये हैं यदि कालका ही कर्त्तव्य है तो फिर कोई पापी सत्युगमें नहीं होना चाहिये सो ऐसा प्रतीत नहीं होता, वरन् प्रत्येक समयमें कर्त्तव्यका फल होता है। ईश्वरीय नियम सदा एकसे रहते हैं देखिये सृष्टिके आरम्भसे पृथ्वी ईश्वरीय कीली पर सूर्य्यकी परिक्रमा देती है। सूर्य्य पूर्वसे निकलता, और चन्द्रमा रात्रिमें दिखलाई देता है। मनुष्य के दश इन्द्रियां होती हैं पृथ्वीमें बीज उगते हैं, आंखें देखती हैं, कान सुनते हैं, इसी भांति ईश्वरीय नियम सदा एकसे ही बने रहते हैं इस कारण कलि धर्ममें बाधा नहीं डालता वरन् मनुष्य अपने कर्त्तव्यसेप्रत्येक समय अर्थात् सत्युग, त्रेता, द्वापर, कलियुगमें धर्म का साधन कर धर्मात्मा और अधर्मका काम कर अधर्मी बन सकता है और बनते रहे और आगेभी बनेंगे न कि युग। देखिये हमारे इस कथनकी पुष्टिमें श्रीमद्भागवत स्कन्द १२ अध्याय ३ में लिखा है कि जब मन, बुद्धि, इन्द्रियां, सतोगुणमें स्थित होयँ तब सत्युग जानो उस समयमें सतोगुण करके ज्ञान और तपमें रुचि होती है।

प्रभवन्ति यदा सत्त्वे मनो बुद्धीन्द्रियाणि च।
तदा कृतयुगं विद्याज्ज्ञाने तपसि यद्रुचिः॥

और जब सकाममें श्रद्धा होय तब रजोगुण युक्त त्रेतायुग जानिये।

यदा कर्मसु काम्येषु भक्तिर्भवति देहिनाम्।
तदा त्रेता रजोवृत्तिरिति जानी हि बुद्धिमान्॥

और जब लोभ, तृष्णा, गर्व, दंभ, मत्सरता, सकाम कर्मन विषै प्रीति होय तब रजोगुण, तमोगुण मुख्य ऐसो द्वापर जानिये।

यदा लोभस्त्वसंतोषो मानोदंभोऽथमत्सरः।
कर्मणां चापि गाम्यानां द्वापरं तद्रजस्तमः।

श्री० भा० द्वा० अ० ३ श्लो० २९

जब कपट, झूंठ-आलस, निंदा, हिंसा, दुःख, शोक, मोह, भय, दीनता यह होयं तब तमोगुण मुख्य कलियुग जानिये।

मदा मायानृतं तन्द्रानिद्राहिंसाविषादनम् ॥
शोकमोहोभयं दैन्यं स कलिस्तामसः स्मृतः।

इसके उपरांत श्रीमद्भागवत स्कंद १ अध्याय १७ में जब राजा परीक्षित भ्रमण करने गये तो उनको सरस्वतीके तट एक स्थान पर धर्म और पृथ्वी वार्तालाप करते हुए मिले वह कह रहे थे कि तप करना-पवित्र रहना-सत्य बोलना-दया करना यह धर्म के चार चरण हैं और विस्मय-स्त्रीप्रसंग और मद यह अधर्मके तीन अंश हैं इनमें धर्मके तीन पाद टूट गये एक रह गया है जैसा कि-

तपःशौचंदयासत्यमितिपादाःप्रकीर्तिताः।
अधर्मांशास्त्रयोभग्नःस्मयसंगमदैस्तव ॥ २४ ॥

यह सुन राजाने कलिके मारनेके लिये खड्ग हाथमें उठाया उस समय वह भयभीत हो राजाके पैरों पर गिर पड़ा। राजाने शरणागत आया हुआ जान मारा नहीं और कहा कि हे अधर्म के मित्र तू मेरे राज्य से निकलजा वरन तेरे रहने से लोभ-चोरी अनारीपन क्लेश और दंभ इन सबकी बढ़ती होगी तब कलिने प्रार्थना की कि जहां आपकी आज्ञा हो वहां जाकर मैं रहूं उस समय राजाने कहा कि जुआ-मदिरा-वेश्या और जहां कसाई जीवों को मारते हैं तुम इन चार जगहोंमें रहो। जैसाकि--

अभ्यर्थितस्तदा तस्मै स्थानानि कलये ददौ।
द्यूतं पानं स्त्रियस्सूना यत्राधर्मश्चतुर्विधः॥ ३८॥

इसपर कलिने कहा कि मेरा कुटुम्ब बहुत है इतने स्थानमें मेरी गुजर न होगी तब राजाने कहा कि सुवर्ण-झूंठ-मद-काम और वैर इन पांचमें और जाओ--

पुनश्चयाचमानाय जातरूपमदात् प्रभुः
ततोऽनृतं मदं कामं रजो वैरं च पंचमम् ॥ ३९ ॥

राजाकी आज्ञा पाकर कलि उपरोक्त स्थानोंमें रहने लगा।

अमूनि पंचस्थानानि ह्यधर्म प्रभवः कलिः ॥
औत्तरेयेण दत्तानि-न्यवसत् तन्निदेशकृत् ॥

पंडितजी अब मैं आपसे पूछताहूं क्या सत्युग, त्रेता और द्वा-पर युगोंमें उपरोक्त स्थानोंमें अधर्म नहीं रहता था अर्थात् जो लोग इन व्यसनोंमें फँसते थे क्या अधर्मी नहीं कहलाते थे फिर कलिने क्या किया—यदि पुराणोंके लेखानुसार किया था तो फिर यह लेख भी उसी स्थान पर क्यों लिखागया कि जो मनुष्य इस संसारमें अपनी उन्नति चाहे वह इन पांचोंका सेवन न करे विशेष कर गुरु और राजा जैसा कि श्रीमद्भागवत स्कन्ध १ अ० १७

अथैतानि न सेवेत बुभूषुः पुरुषः क्वचित् ॥
विशेषतो धर्मशीलो राजा लोकपतिर्गुरु ॥ ४१ ॥

श्रीमान् यदि हमारे गुरुजन कलिको पापी न बनाते और श्रीम-द्भागवतके उपरोक्त लेखपर ध्यान देकर लोभ—चोरी—अनारीपन क्रोध दंभ-झूंठ-मद-काममें न फंसते तो क्योंकर भारतके सिरका मुकुट गिर जाता इसके उपरान्त क्या कलि कोई जीवधारी था जिसने राजासे वार्तालाप किया? शोक है जड़ पदार्थमें भी पौराणिक पुरुष बात चीत करनेकी शक्ति बतलाते हैं। इसके अतिरिक्त श्रीमद्भागवत स्कंद १ अध्याय १८ श्लोक ८ में स्पष्ट लिखा है। कि धीरतासे धर्म करने वाले शूरपुरुषोंका कलियुग कुछ भी नहीं करसका हां मदांध पुरुषोंमें कलि शीघ्र घुसजाता है। जिसप्रकार बालकोंमें भेड़िया जैसा कि—

किं नु बालेषु शूरेण कलिना धीरभीरुणा।
अप्रमत्त प्रमत्तेषु यो वृकोनुषुवर्तते ॥

और पद्मपुराण स्वर्गखंड तृतीय अध्याय ६७में कहा कि कलियुगमें विशेषकरके पुराण श्रवणको छोड़कर अन्यधर्ममें आलस्यसे शिथिल पुरुषोंको नहीं।

अबतो श्रीमान्‌को पूरा निश्चय होगया कि मदांध और आलस्य से शिथिल पुरुषोंको कलि हानि पहुंचाता है। तो क्या सत्युग त्रेता और द्वापरमें मदांध और शिथिल पुरुष धर्म कार्य्य करसक्ते थे कदापि नहीं सत्यतो यही है। ऐसे २ लेखोंने मनुष्योंको और भी निकम्मा बना देशका चौपट कर दिया।

श्रीमान् पंडितजी! युग कुछ नहीं करता वरन् सत्युग त्रेता द्वापर और कलियुगमें जो जैसा करता है वैसा फल पाता है इस पर तुर्रा यह है कि जिस प्रकार पुराणोंके कर्त्ताओंने कलिको पापी बनाया उससे विशेष उसकी प्रशंसा भी करदी देखिये पद्मपुराण सप्तम क्रिया योगसार खंड के अध्याय २६ में लिखा है कि गुणवानों में श्रेष्ठ तथापि कलियुग में बड़ा गुण यह है कि सतयुगमें बारह वर्षों में जो पुण्यका साधन होता है त्रेता में ६ वर्ष द्वापर में एक महीने में वह कलियुग में एकही दिन रात्रि में होता है।

तथाप्यस्तिमहानस्य गुणो गुणवतांवर।
सत्येद्वादशभिर्वर्षै भवेत्पुण्यस्य साधनम्॥
तदर्द्धेन च त्रेतायां मासेन द्वापरेभवेत्।
अहोरात्रेणैव विप्रभवेत्तच्च कलौयुगे॥

जिससे कलियुगमें मनुष्यों की मृत्युलोक में उत्तम गति होती है और युगमें बारह वर्षों में भगवान् को पूजन कर जो फल होता है वह फल कलियुगमें मनुष्य हरिजीका एक भी नाम कहता है उस को सत्य २ निस्सन्देह कलियुगकुछ बाधा नहीं करता जैसा कि—

तस्मात्कलियुगेनृणां मर्त्येनैवोत्तमागतिः।
द्वादशाब्दैर्युगेऽन्यास्मिन्हरिमभ्यर्च्य यत्फलम्॥
तत्फलं लभते मर्त्यो हरिमुच्चार्य वै कलौ।
हरेर्नामैकमप्यत्र कलौ वदति यो नरः॥
कलिर्न वाधते तत्र सत्यं सत्यं न संशयः।

विष्णुपुराण अंश ६ अध्याय २ श्लोक १५-१६में व्यास महाराज ने कलियुगको साधु कहा है और लिखा है कि जो जप तप ब्रह्मचर्यादि करने से सत्युग में १० वर्षमें फल मिलता है वह त्रेता में १ वर्ष द्वापरमें एक मास वही फल कलियुग में रात्रि दिन में मिलता है इसी कारण सब युगोंसे कलियुगको हमने साधु कहा है।

यत्कृते दशभिः वर्षैस्त्रेतायां हायनेन तत्।
द्वापरे तत्र मासेन अहोरात्रेण तत्कलौ ॥
तपसो ब्रह्मचर्यस्य जपादेश्चफलंद्विजः।
प्राप्नोतिपुरुषस्तेन कलि साध्विति भाषितम् ॥

और श्लोक ३४-३६ में लिखा है कि सत्युगादि में द्विजातियोंको जप तपस्या आदिमें बड़ा क्लेश होता था अब कलियुग में भगवत्कीर्त्तन से सब काम सिद्ध होते हैं।।

अल्पेनैवप्रयत्नेन धर्मःसिद्ध्यति वै कलौ।
नरैरात्मगुणांभोभिः क्षालिताखिल किल्विषै ॥
ततस्तृतीयमप्ये तन्ममधन्यतमंमतम्।
धर्मसंसाधनेक्लेशो द्विजातीनां कृतादिषु ॥

लिङ्गपुराण अध्याय ४० में लिखा है कि त्रेता में जो सिद्धि एक वर्ष में होती है वही द्वापरमें एक महीनेमें कलियुगमें एक दिन रातमें होती है॥

त्रेतायां वार्षिको धर्मो द्वापरे मासिकः स्मृतः।
यथाक्लेशं चरन्प्राज्ञस्तदहा प्राप्नुते कलौ ॥

पद्मपुराण में श्रीमद्भागवत माहात्म्यके अध्याय २में लिखा है नारदजी मुक्ति से कहते हैं कि कलियुग के समान और कोई युग नहीं है जैसा कि—

कलिना सदृशः कोपि युगो नास्ति वरानने !।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय १९२ में लिखा राजा परीक्षितने सारसे सार फल देनेवाले कलियुगको कलियुगी मनुष्योंके कल्याणके लिये स्थापित किया और श्रीमद्भागवत स्कन्द १० उत्तरार्द्ध में लिखा कि जो मनुष्य श्रेष्ठ गुणज्ञ सारग्राही हैं वह चारों युगों में कलियुगकी स्तुति करते हैं क्योंकि और युगोंमें ध्यान ज्ञान पूजा करके जो फल होता है सो सब स्वार्थ कलियुगमें भगवान्के भजन कीर्त्तनमात्रसे होता है।

कलिं सभाजयन्त्यार्या गुणज्ञाः सारभागिनः।
यत्र संकीर्त्तनेनैव सर्वः स्वार्थोऽभिलभ्यते॥

स्कन्द १२ अध्याय ३ में भी लिखा है कि कलि दोषोंकी खानि है परन्तु तौ भी उसमें एक बड़ा गुण यह है कि श्रीकृष्णको कीर्त्तन करते ही सम्पूर्ण बन्धनसे छूट श्रीकृष्णको जायके प्राप्त होता है जैसा कि:—

कलेर्दोषनिधे राजन्नास्ति ह्येको महान् गुणः।
कीर्त्तनादेव कृष्णस्य युक्तसंगः परं व्रजेत्॥

इसके उपरान्त जो फल तप, योग, समाधिसे नहीं होता वह फल कलियुगमें केशवके कहनेसे होता है जैसा कि श्रीमद्भागवतके माहात्म्य अध्याय १ में लिखा है।

यत्फलं नास्ति तपसा न योगेन समाधिना।
तत्फलं लभते सम्यक्कलौ केशवकीर्त्तिनात्॥

पद्मपुराण पञ्चम पातालखण्ड अध्याय ८० में महादेवजीने कहा कि हरिका नाम ३ ही केवल व हरेराम हरेकृष्ण कृष्ण २ यह मङ्गलरूप मन्त्र है जो लोग इसको नित्य पढ़ते हैं उनको कलियुग बाधा नहीं करता। ३

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्॥ २
हरेराम हरेकृष्ण कृष्ण कृष्णेति मङ्गलम्।
एवं वदन्ति ये नित्यं नहि ताबान्धते कलिः॥



चाहे अपवित्रहो वा पवित्र सब कालोंमें व सब प्रकारसे जैसे बने तैसे नामके स्मरण करनेसे क्षणमात्रमें प्राणी संसारसे छूट जाता है।

अशुचिर्वाशुचिर्वापि सर्वकालेषु सर्वदा ।
नामसंस्मरणादेव संसारान्मुच्यते क्षणात् ॥

नाना प्रकारके अपराधोंसे युक्तभी प्राणी हो तो उसको चाहिये कि रामकृष्णादि नामोंका स्मरण करता रहे क्योंकि कलियुगमें अङ्गों सहित यज्ञ, व्रत, दान नहीं होसकते ।

नानापराधयुक्तस्य नामापि च हरत्यधम् ।
यज्ञव्रततपोदानं सांगं नैव कलौयुगे ॥

इसलिये कलियुगमें तरनेके दो उपाय मुख्य हैं एक गंगास्नान दूसरा हरिका नाम लेना क्योंकि हज़ारों हत्यायों सहस्रों उग्रपाप व कोटि गुरुस्त्रियोंके संग सम्भोग चोरी करना ऐसेही औरभी बड़े और छोटे पाप श्रीहरिके प्रिय गोविन्द इस नामसे दूर हो जाते हैं। १२

गंगास्नानं हरेर्नामनिरपायमिदंद्वयम् ।
हत्यायुतंपाप सहस्रमुग्रं गुर्वंगना कोटि निषेवणं च॥
स्तेयान्यथान्यानिहरेः प्रियेण गोविंदनाम्ना न च संति भद्रे।

श्रीमद्भागवत स्कंद ६ अध्याय २ में लिखा है। मित्रद्रोही, ब्रह्महत्यारा गुरुस्त्रीगामी-स्त्री राजा और गौओंका मारने वाला तथा जो अन्य भांतिके जो पाप हैं। उन सबका प्रायश्चित्त विष्णुका नामोच्चार है। जैसा—

स्त्येनः सुरापी मित्रध्रुनः ब्रह्महा गुरुतल्पगः ।
स्त्रीराजपितृ गोहंता ये च पातकिनो परे ॥
सर्वेषामप्यघवतामिदमेव सुनिष्कृतम् ।
नामव्याहरणं विष्णोर्यं स्तद्विषयामतिः ॥

अब कहिये पंडितजी प्रथमतो कलिको पापी बताया और नाना दोष गिनाये फिर उसकी प्रशंसा इतनी की कि सत्युगकी प्रजा कलि-

युगमें उत्पन्न होनेकी इच्छा करती है क्योंकि कलियुगके सर्व जीव नारायणपरायण होते हैं जैसा कि श्रीमद्भागवत स्कंद १० उत्तरार्द्ध श्लोक ३८ में लिखा है।

कृतादिषु प्रजा राजन् कलौ विच्छंति संभवम्।
कलौ खलु भविष्यन्ति नारायणपरायणाः ॥ ३८ ॥

इतना नहीं वरन द्रव्य, देश, और शरीरसे जो दोष कलियुगमें होते हैं वह सब पुरुषोत्तम भगवान् पुरुषके चित्तमें स्थित होकर हर लेते हैं जैसा कि श्रीमद्भागवत स्कंद १२ अध्याय ३ में लिखा है।

पुंसां कलिकृतान्दोषान्द्रव्यदेशात्मसंभवान्।
सर्वान्हरति चित्तस्थो भगवान्पुरुषोत्तम ॥

इसके अतिरिक्त एक सहज उपाय कलियुगके प्रभाव दूर होनेका औरभी लिखा है जो बहुतही सुगम है जिसको प्रत्येक वर्ण धनाढ्य और दीनसे दीन स्त्री, पुरुष इत्यादि सब कर सक्ते हैं फिर क्यों नहीं प्रत्येक नगर और गांवके रहने वालोंको यह नुसखा बतला दिया जाता जिससे सम्पूर्ण संसारके स्त्री और पुरुष कलियुगके प्रभावसे बच जाते देखिये पद्मपुराण षष्ठखंड अध्याय ११८ में लिखा है कि जो मनुष्य भगवान् की चढ़ी हुई तुलसीको मुंह शिर और देहमें धारण करता है उसको कलियुग स्पर्श नहीं करता ॥

लीजिये पंडितजी इस नुसखेने तो कलिके सब बखेड़ों को दूर कर दिया—सनातनधर्मसभाके सभासदोंको चाहिये कि इस नुसखे का प्रचार भारतमें अच्छे प्रकारसे करें ताकि भारतमें पापरूपी कलि निकल जावे-पंडितजी सम्पूर्ण संसारके लिये ईश्वरीय नियम समान परन्तु भारतवासियोंकी "पुराणलीला सबसे निराली है खैर कुछ हो हमको तो अब यही शोक है कि हमारे सनातनी भाइयों पर ऐसेर नुसखे मौजूद हैं फिर नहीं जानते कि सनातनी भाइयों और मंदिर के पुजारीओं जहां ठाकुरजी महाराज और उन पर चढ़ी हुई तुलसी जीको पुजारी लोग रात दिन धारण किये रहते हैं फिर उनपर

कलि क्यों अपना प्रभाव कर जाता है—श्रीमान् आपही इन उपरोक्त सब बातों का विचार करें अब आप पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंडके अध्याय १९८ को भी सुन लीजिये देखिये वहां लिखाहै कि जब व्यास जी महाराज १७ पुराणोंको बना महाभारतको रच प्रसन्न मन न हुए तब नारदजी महाराज उनके हृदय की बात को जान उनके समीप पहुंचे। जिनका उन्होंने उत्तम प्रकारसे, पूजन किया। तब नारदजीने कहा कि आप मनमें क्लेशित क्यों रहते हैं इस कारण वर्णन कीजिये यह सुन व्यासजीने कहा कि क्या कारण है हमारा चित्त मोहयुक्त होरहा है, तिसको मैं नहीं जानता आप विज्ञानमें कुशल हैं हमसे कहिये जैसा कि—

पुराणसप्तकं सार्द्धं शुश्रूवुर्हृष्टमानसः।
दशसप्तपुराणानि कृत्वा सत्यवतीसुतः ॥ ९४ ॥
नाप्तवान्मनसस्तेषांभारतेनापि भामिनि ।
ज्ञात्वास्य हृदयं खिन्नं नारदो देवदर्शनः ॥ ९५ ॥
समाजगामभगवान्व्यासस्याश्रममुत्तमम् ।
तं दृष्ट्वा वासवी सूनुः सत्कृत्यासन पूर्वकम् ॥ ९६॥
नारदं पूजयामास विधिदृष्टेन कर्मणा ।
अथ तं नारदः प्राह किं भवान्क्लिष्टमानसः ॥ ९७॥
ध्यायते तत्समाचक्ष्व सर्वसन्देहकारणम् ।
इति पृष्टः स मुनिना पराशरसुतोऽब्रवीत् ॥ ९८ ॥
ब्रह्मन्किं कारणं चेतो मोहंजानेन तत्वहम् ।
भवान्विज्ञानकुशलो ज्ञात्वा तत्प्रब्रवीतु मे ॥ ९९ ॥
एवं विज्ञापितस्तेन नारदोध्यात्मकोविदः ।
उवाचपरमन्तरवं यदुक्तं विधिनात्मने ॥ १०० ॥

यह सुन अध्यात्मविद्यामें निपुण नारदजीसे जो परमतत्व सुन से ब्रह्माजीने कहा था कहने लगे कि हे पापरहित आपने इस लोकमें अवतार लेकर वेदोंके विभाग किये इतिहाससहित पुराण रचे, जहां वर्णाश्रम निवासियोंका सब त्रयीधर्म कहा है कलियुगमें मनुष्यों की अल्पायु देखके जिनको सबके सुख लेनेका अधिकार है स्त्री, शूद्र, ब्राह्मण, बन्धु और साधुओंका सज्जन धर्म आदिक आपने उनमें वर्णन किये हैं परन्तु प्रधानतासे भगवान्की महिमा वर्णन नहीं की। हे मुनिजी सब धर्मक्रियासे शून्य दोषनिधि कलियुगमें पाप करनेवालों को विना कृष्णजीकी कथारूप अमृतके गति नहीं है यही इस घोरकलियुगमें गुण है कृष्णजीके कीर्तनहीसे कर्मबन्धनसे छूट जाते हैं यज्ञ, दान, तपस्या, कर्म ज्ञान और ध्यान सतयुगादिमें सिद्धि देनेवाले होते हैं कलियुगमें नामकीर्तन ही सिद्धि देनेवाला है इस लिये कलियुगके मनुष्योंके उद्धारके लिये आप श्रीमद्भागवत नामक पुराणको वर्णन कीजिये जिसमें प्रवृत्त होनेसे आपका मन निश्चय प्रसन्न होजावे और लोक कृतकृत्यताको प्राप्त हो।

न गतिः पापकर्तॄणां विना कृष्णकथामृतम्।
एषएवगुणोह्यस्मिन्घोरे कलियुगे नराः ॥ १०६ ॥
यत्कृष्णकीर्तने नैव मुच्यन्ते कर्मबन्धनात्।
यज्ञोदानंतपःकर्मज्ञानंध्यानं कृतादिषु ॥ १०७ ॥
सिद्धिदं च तथा ब्रह्मन्नामकीर्त्तनकं कलौ।
अतोवैकलिजातानामुद्धारार्थं नृणां भवान् ॥ १०८ ॥
श्रीमद्भागवतंनाम पुराणं वर्णयत्वलम्।
येनप्रवर्तितेनांग भवतोमानसंध्रुवम् ॥ १०९ ॥

महादेवजी बोले कि हे पार्वती इस प्रकार नारदमुनि अमित तेजस्वी व्यासजीको आज्ञा देकर भगवान्के गुण गाते हुये इच्छा पु-

चले गये और उनके जानेके पीछे सब अर्थोंके जाननने वाले व्यासजी इस श्रेष्ठ भागवत संहिताको रचते हुये।

नारदे तु गते पश्चाद्व्यासः सर्वार्थदर्शिनः
चकार संहितामेतां श्रीमद्भागवतीं पराम् ॥ ११२ ॥

जिसको सूतसे कहा फिर उन्होंने शुकदेवजीसे और शुकदेवने राजा परीक्षितको सुनाई इसीसे यह श्रीमद्भागवत सर्वोत्तम पुराणोंके ऊपर वर्त्तमान पुराण है॥

शौनकादि ऋषिभ्यस्तु तेन प्रोक्ता यथार्थतः
वरीवर्त्ति पुराणानामुपरीयं नगात्मजे ॥

जो मनुष्य भक्तिसे इस माहात्म्यको सुनता वा पढ़ता है वा अनुमोदन करता है वह परमगतिको प्राप्त होता है।

यः श्रृणोति नरो भक्त्या माहात्म्यं पठतेपि च ।
अनुमोदनेन वासोपि लभते परमां गतिम् ॥ १२०

ब्राह्मण पढ़कर वेदोंको, और क्षत्रिय जीतको, वैश्य धनको और शूद्र सुनकर ही गतिको प्राप्त होते हैं।

द्विजोधीत्याप्नुयाद्वेदान् क्षत्रियस्तु लभेज्जयम् ।
धनं वैश्यस्तथाशूद्रः श्रुत्वैव लभते गतिम् १२१ ॥

अब पंडितजी इसस्थान पर विचार कीजिये कि प्रथम तो पौराणिक लोग व्यासजीको परमेश्वरका अवतार मानते हैं।

द्वितीय ईश्वरीय विद्या वेदको सम्यक्प्रकारसे जानकर फिर सब पुराणोंको बनाया फिर भी उनकी शांति न हुई यह कैसे शोककी बात है। यदि आप विचारदृष्टिसे देखें तो स्पष्टरूपसे वेदोंकी निन्दा की है। क्योंकि वेदोंके विचारने और उसके अनुकूल आचरण करनेसे व्यासजीसे अवतारियोंकी शांति नहीं हुई तो अस्मदादि दोषोंसे भरे हुये जीवोंका कहना ही क्या है। सत्यपूछो तो वह फिर ईश्वरी ज्ञान ही नहीं रहा परंतु स्मृतिकार और इन्हीं पुराणोंमें यह लेख भी अनेक

स्थलों पर मिलते हैं। कि वेदोंकी निन्दा करने वाला नास्तिक कहाता है।

अब आप ही बतलाइये कि इन व्यासको हम क्या कहैं फिर पुराणोंमें यहभी लिखा है। कि वेद सनातनपुस्तक हैं। वही सनातनधर्म है। उसके लेखानुसार धर्मकार्य्य इत्यादि करना परमकर्त्तव्य है। इसके अतिरिक्त जो कोई कार्य्य करता है वह पापका भागीहोता है! सुनिये—

लिंगपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय १ में लिखा है। कि श्रुतिस्मृतिके धर्म करनेसे धर्मात्मा कहाता है। जैसाकि—

श्रौतस्मार्त्तस्य धर्मस्य ज्ञानाद्धर्म्मज्ञ उच्यते।

श्रुति स्मृति करके कहा हुआ वर्णाश्रम धर्म और शिष्टाचारसे विरुद्ध न हो वही धर्म साधु अर्थात् उत्तम है।

श्रुतिस्मृतिभ्यां विहितो धर्म्मो वर्णाश्रमात्मकः।
शिष्टाचाराविरुद्धश्च सधर्म्मः साधुरुच्यते॥

अध्याय ७८ श्लोक २१, २२ में लिखा है कि जो मनुष्य वेदविरुद्ध व्रत आचार इत्यादि करते हैं वह श्रुतिस्मृतिसे विमुख हैं उन पाखण्डियोंका उत्तम वर्ण स्पर्श और उनसे सम्भाषण भी न करें।

वेदबाह्यव्रताचाराः श्रौतस्मार्त्तबहिष्कृताः।
पाषण्डिन इति ख्याता न सम्भाष्याद्विजातिभिः॥
नस्प्रष्टव्या न दृष्टव्या दृष्ट्वा भानुं समीक्षते।

श्रीमद्भागवत स्कन्द ६ अ० १ श्लो० ४० में लिखा है कि धर्म वही है जो वेदमें लिखा है उसके अतिरिक्त अधर्म है और वेद नारायणका रूप है

वेदप्रणिहितो धर्मो ह्य धर्मस्तद्विपर्ययः।
वेद नारायणः साक्षात् स्वयंभूरिति शुश्रुम॥

स्कन्द ११ अ० ३ श्लो० ४६ में लिखा है कि वेदोक्त कर्म करने से मोक्ष होती है।

वेदोक्तमेवकुर्वाणोनिसंगोऽर्पितमीश्वरे।
नैष्कर्म्यांलभतेसिद्धिंरोचनार्थाफलश्रुतिः॥

स्कन्द ५ अ० २६ श्लो० १५ में लिखा है कि जो वेदमार्गको छोड़ कर चलते हैं वह कालसूत्र नाम नर्कमें जाते हैं।

यस्त्विहवैनिजवेदपथादनापद्यप गतः। पाखण्डंचोपग-
तस्तमसिपत्रवनं प्रवेश्यकशयाप्रहरन्ति॥

विष्णुपुराण अंश २ अध्याय ६ श्लोक १३ में लिखा है कि जो वेदविरुद्ध कार्य्य करते हैं उनको सवन नाम नर्क होता है।

वेददूषयितायश्चवेदविक्रयकश्चयः।
अगम्यगामीयश्चस्यात्तेयान्तिसवनंद्विजः॥

और अंश ३ अ० १७ श्लो० ५,६ में लिखा है जो वेदोक्त धर्मको छोड़ अन्य मार्गमें जाता है वही महापापी नंगा कहाता है। इस लिये कि ब्राह्मण क्षत्री, वैश्यके वस्तु वेद ही हैं॥

ऋग्यजुःसामसंज्ञे यं त्रयीं वर्णावृतीर्द्विज।
एतामुज्झतियो मोहात्सनग्नः पातकी स्मृतः॥ ५॥
त्रयीसमस्तवर्णानां द्विजसंवरणंयतः।
नग्नोभवत्युज्झितायाम तस्तस्यामसंशयम्॥ ६॥

अ० १८ श्लोक में मैत्रीजी ने कहा है जो वेदानुसार नहीं चलते वेही नग्न कहाते हैं॥

ततोमैत्रेय उन्मार्गवर्तिनोयेऽभवञ्जनाः।
नग्नास्तेतैर्यतस्त्यक्तं त्रयी संवरणं वृथा॥

देवीभागवत स्कन्द १ अ० १८ श्लोक ४७ में राजा जनकने का

कि चारों वर्ण धर्मके नाश होजाने पर नष्ट हो जाते हैं इस लिये सब को वेद अनुसार कार्य्य करनेसे सुखकी प्राप्ति होती है।

धर्मनाशोविनष्टः स्याद्वर्णाचारोऽतिवर्तितः।
अतोवेदप्रदिष्टेन मार्गेण गच्छतां शुभम्॥

मत्स्यपुराण अ० ५२ में लिखा है कि श्रुतिस्मृतियोंके, कहे हुये धर्मोंको यत्नपूर्वक करना चाहिये।

कर्मयोगं विना ज्ञानं कस्यचिन्नेह दृश्यते।
श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममुपतिष्ठेत्प्रयत्नतः॥ १३॥

और अध्याय २१४ में लिखा है कि राजा वेदत्रयी पढ़े हुये ब्राह्मणोंको रखकर उनकी सेवा करें असत्शास्त्रके जाननेवालोंका संग कभी न करे क्योंकि मूढ़ लोग सब विद्वानोंके कंटक हैं।

ब्राह्मणान्पर्युपासीत त्रयीशास्त्रं सुनिश्चितान्।
नासच्छास्त्रवतो मूढास्ते हि लोकस्य कण्टकाः॥

मार्कण्डेयपुराण अ० १० में लिखा है कि जो वेदोंकी निंदा करता है उसको मृत्यु के समय मोह प्राप्त होता है।

ते मोह मृत्यवः सर्वे तथा वेदविनिन्दकाः॥ ५८॥

भविष्यत् पुराण ब्राह्म पर्व अध्याय ७ श्लोक ५७ में लिखा है कि वेदनिन्दकको सत्यपुरुष अपने समीप न रहने देवे।

योवमन्येततेचाभे हेतुशास्त्राश्रयो द्विजः।
स साधुभिर्वहिष्कार्यो नास्तिको वेदनिन्दकः॥

पद्मपुराण द्वितीय भूमिखंड अध्याय ६७ श्लोक ४में लिखा है कि जो कोई वेदोंकी निन्दा करते हैं वा वेदविहितआचारकी निन्दा करते हैं ज्ञानीपंडितोंने इसको महापापोंमें बताया है।

वेदनिन्दा प्रकुर्वन्ति ब्रह्माचारस्य कुत्सनम्।
महापातकमेवापि ज्ञातव्य ज्ञानपंडितैः॥

अध्याय २३५ में लिखा है कि जो ब्राह्मण वेदस्मृति कहे हुए आचार को नहीं करता वह सब लोकोंमें निन्दित पाखंडी जानने योग्य है ॥ ६ ॥

श्रुतिस्मृत्युदिताचारं यस्तु नाचरति द्विज ।
सपाखंडीति विज्ञेय सर्वलोकेषु गर्हितः ॥

षष्ठ उत्तर खंड अध्याय २५३ में लिखा है । नित्य अच्छेप्रकार वेद और स्मृतिके कहे हुए कर्म करने चाहियें बुद्धिमान् मनुष्य वेद और स्मृतिके कहे हुए कर्मको न छोड़े-३५-।

श्रुतिस्मृत्युदितं सम्यङ् नित्यमत्र समाचरेत् ।
श्रुतिस्मृत्युक्तकर्माणि नातिक्रामेत् बुद्धिमान् ॥

जो वैष्णव वेद और स्मृतिके कहे हुए आचारको नहीं सेवता वह पाखंडयुक्त मनुष्य रौरव नरकमें बसता है ।

श्रुतिस्मृत्युक्तमाचारं योन सेवेत वैष्णव ।
स च पाखंडमापन्नो रौरवे नरके वसेत् ॥

शिवपुराण कैलासंहिता अध्याय ८ में लिखा है कि अपने आश्रममें रत सब तीनों वर्णोंको श्रुति, स्मृतिका धर्महो का अनुष्ठान करना चाहिये दूसरा नहीं । २१ ।

त्रैवर्णिकानां सर्वेषां स्वस्वाश्रमरतात्मनाम् ।
श्रुतिस्मृत्युदितो धर्मोऽनुष्ठेयो नापरः क्वचित् ।

वायुसंहिता पूर्वार्द्ध अध्याय २८ में लिखा है कि धर्ममें वेद ही हमको प्रमाण है ।

प्रमाणं श्रुतिरेव नः ।

वायुसंहिता उत्तरार्द्ध अध्याय १२ में लिखा है कि जिसको वेद शास्त्रमें जो कर्म विधान कर दिया है उसको वही कर्म करना चाहिये दूसरा नहीं ।

यस्य यद्विहितं कर्म वेदशास्त्रै च वैदिकैः ।
तस्य तेन समाचारः सदाचारो न चेतरः ॥

सनत्कुमारसंहिता अध्याय ४ में कहाहै कि जो श्रुतिस्मृतिके धर्म को नष्ट करताहै वह भयङ्कर रूपवाले प्राणियोंसे युक्त घोररूप परमदारुण घोरनरकमें नीचे मुखकर हज़ारवर्ष तक डाला जाता है ।

मञ्जापस्य भूतानि हिंस्यमानो हि मानवः ।
भैरवाणि च रूपाणि घोरं परमदारुणम् ॥
अधोमुखेन पतति वर्षाणां च सहस्रशः ।

इसपरभी स्त्री और शूद्रोंके अर्थ अथवा कलियुगी पापियोंके उद्धारके अर्थ व्यास महाराजने १७ पुराण बनाये परन्तु शोक इसबातका है । कि इतनेपर भी स्वयं व्यास महाराजको आनन्द नहींआया तो फिर नारदमुनिकी आज्ञानुसार भगवत्कीर्तन अर्थात् श्रीकृष्ण महाराजके चरित्रोंका कथनकिया तब शांति हुई । पंडितजी आप यहांपर ध्यान दें, कि पौराणिक लोग कृष्ण महाराजको विष्णुका अवतार मानते हैं और विष्णु परमात्माका नाम है, तो क्या वेदोंमें उसनिराकार सर्वव्यापक के महत्त्वका वर्णन नहीं है और यदि है तो फिर उसके विचारसे व्यासजीकी शांति क्यों नहीं हुई । इसके उपरान्त सत्युगमें यज्ञ, दान, तप, कर्म और ज्ञानसे सिद्धि होतीथी और इनसे कलियुगमें नहीं रही तो फिर मैं पूछताहूं कि इन पुराणोंमें यज्ञ, दान, तप, कर्म और ध्यान, ज्ञानके क्यों गुण गाये गये ? इसके अतिरिक्त वेदोंका ज्ञान सृष्टिके आदिमें दियागया जो प्रलय तक रहताहै फिर संसारके प्रकटहोतेही प्रकट होजाता है अर्थात् सत्युग, त्रेता, द्वापर, और कलियुग केलिये होता है क्या पंडितजी वेदमें कोई ऐसी ऋचा मौजूद है कि वेद का ज्ञान कलियुगके लिये नहीं यदि नहीं तो कलियुगी मनुष्योंके लिये पुराण क्यों बनानेकी ज़रूरत हुई । देखिये ईश्वर सर्वज्ञानवाला है तो फिर वेद अधूरे ज्ञानका पुस्तक क्योंकर होसका है क्या वेदमें भगवत्कीर्त्तन अर्थात् परमेश्वरके गुणोंका वर्णन नहीं है इसके अ-

तिरिक्त व्यासजीने कलियुगी पुरुषोंके पार होनेके लिये १७ पुराण ब-नाये उनसे व्यासजी अवतारियों और ज्ञानियों और पुराणके कर्त्ताकी ही आत्माको आनंद नहीं हुआ तो हम संसारी लोगोंकी आत्मा को क्योंकर होसक्ताहै? भला यह तो आप जानतेही हैं कि १७ पुराणोंमेंसे प्रत्येक पुराण कलिके पापियोंकी शांतिकेलिये बनायागया जैसा कि शिवपुराणके माहात्म्यमें लिखा है।

जो मनुष्य पापी, दुराचारी, खल, कामादिमें निरत हैं वे भी इससे शुद्ध हो जायंगे यह परमभक्ति मुक्तिका देनेवाला ज्ञान यज्ञसे सबपापोंका शोधक और शिवका सन्तोष करने वाला, तृष्णासे व्याकुल, सत्यसे हीन, पितामाताके विदूषक, दाम्भिक तथा हिंसक इससे शुद्ध होजाते हैं।

जो अपने वर्ण, आश्रमके धर्मसे रहित मत्सरी हैं वे कलिमें भी इस ज्ञानयज्ञसे तरजायं तो जो छलछंदी क्रूर निर्दयी हैं वे भी कलिमें इस ज्ञानयज्ञसे तरजायंगे तो ब्राह्मणोंके धनसे पुष्ट हुए व्यभिचारी हैं वेभी कलिमें इस ज्ञानयज्ञसे तर जायंगे जो सदा पापी, शठ, दुराशावाले हैं वे कलियुगमें भी इस ज्ञानयज्ञसे तरजायंगे मलीन दुर्बुद्धि देवताओंके द्रव्य खानेवाले इस ज्ञानयज्ञसे तरजायंगे—

इस पुराणका पुण्य महापातक नाश करने वाला है भक्ति मुक्ति और शिवसन्तोषका हेतु है।

सूत उवाच।

ये मानवाः पापकृतो दुराचाररताः खलाः।
कामादि निरता नित्यं तेऽपि शुध्यन्त्यनेन वै॥

ज्ञानयज्ञः परोयं वै भक्तिमुक्तिप्रदस्सदा।
शोधनस्सर्वपापानां शिवसन्तोषकारकः॥

तृष्णाकुलास्सत्यहीनाः पितृमातृविदूषकाः।
दाम्भिकाहिंसका ये च तेऽपि शुध्यन्त्यनेन वै॥

स्ववर्णाश्रम धर्मेभ्यो वर्जितामत्सरान्विताः ।
ज्ञानयज्ञेन तेऽनेन सम्पुनन्ति कलावपि ॥
छलच्छद्मकरा ये च क्रूरास्सुनिर्दयाः ।
ज्ञानयज्ञेन तेऽनेन सम्पुनन्ति कलावपि ॥
मलिना दुर्धियः शान्ता देवतां द्रव्यभोजिनः ।
ज्ञानयज्ञेनतेऽनेन सम्पुनन्तिकलावपि ॥
पुराणस्यास्यपुण्यं सन्महापातकनाशनम् ।
भक्तिमुक्तिप्रदं चैव शिवसन्तोषहेतुकम् ॥

इसीप्रकार अन्य पुराणोंमें भी लिखा है । तो फिर यह लेख भी क्या माननीय नहीं यदि है तो क्यों व्यास महाराजको शांति नहीं हुई— जबकि इसमें यह लेखभी उपस्थित है कि विशेषकर कलियुग में शिवपुराणके सिवाय दूसरा धर्म मनुष्योंको मुक्तिसाधन करने वाला नहीं है । जैसाकि—

विशेषतः कलौ शैव पुराणश्रवणादृते ।
परोधर्मो न पुंसां हि मुक्तिसाधनकृन्मुने ॥

इसके उपरांत आप यह भी विचारिये कि जबतक व्यासजीका अवतार नहीं हुआ तब तक जो ऋषि मुनि महात्मा, योगीराज इत्यादि सज्जन पुरुष जो वेदानुकूल कार्य्य करते रहे उनकी आत्माको शांतिहुई वा नहीं यदि हुई तो यह कहना कि वेदोंके ज्ञानसे व्यासजी की शांति नहीं हुई मिथ्या है—

इसलिये भागवतपुराणका व्यासजीका बनाना किसी प्रकार सिद्ध नहीं होता हां जिसप्रकार मुसल्मान साहिबान मानते हैं कि अख़ीर पैग़म्बर जनाब मुहम्मदसाहबके उत्पन्न होनेसे पहलेकी धर्मपुस्तकें इंजील और तोरेतादि सब मंसूख़ होगईं और कुरान-शरीफ़ ही आनेको खुदाकी किताब क़ाबिल माननेके रह गई जो हज़रत मुहम्मदसाहबपर उतरी यदि पंडितजी हमारे सनातनी

भाई ऐसाही मानते हैं तो फिर सनातनधर्मियोंको श्रीमद्भागवतके लेखानुसार शिव, देवी, गणपति, सूर्य्य रामादिको छोड़कर श्रीकृष्ण व विष्णु भगवानूके ही सबको गुण गाना चाहियें क्योंकि उन्हींके गुणकीर्तनसे उनके चित्तकी शांति हुई ! फिर अन्य पुराणोंकी क्या आवश्यकता रही परन्तु यहांतो जब सनातनी भाई परस्पर मिलते हैं तो वह अपने २ पुराण और उपासककी प्रशंसा करते हैं जिसके कारण नाना मत भारतमें फैलगये अब इस माहात्म्यको भी संक्षेपसे सुन लीजिये- देखिये प्रत्येक पुराण अपनी ही तानता है—

देवी भागवत

देवीभागवत स्कंद १२ अध्याय १४ में लिखा है कि इसके समान पुण्य पवित्र पापनाशक अन्य कोई नहीं इसके पद२ में मनुष्य अश्व-मेघका फल पाता है।

नानेन सदृशं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम्।
पदे पदेऽश्वमेधस्य फलमाप्नोति मानवः ॥

मत्स्य।

मत्स्यपुराण अध्याय २८९ में सूतजीने कहा है कि हे ऋषियो! यह धर्म- अर्थ और कामका सिद्ध करने वाला महापुण्य पवित्र मत्स्य पुराण मैंने तुम्हारे आगे कह दिया यह पुराण सब शास्त्रोंका मुकुट रूप है।

पुण्यं पवित्रमेतद्वः कथित मत्स्यभाषितम्।
पुराणं सर्वशास्त्राणां यदेतन्मूर्ध्नि संस्थितम् ॥२६॥

और अध्याय २९० में लिखा है कि यह मत्स्यपुराण महापवित्र, आयु, कीर्त्ति और कल्याणका बढ़ाने वाला महापातकोंका हर्त्ता हो-कर महा शुभ है।

एतत्पवित्रमायुष्यमेतत्कीर्तिविवर्धनम्।
एतत्पवित्रं कल्याण महापापहरं शुभम् ॥

इस पुराणमेंसे जो एक पदका भी पाठ करता है वह सब पापोंसे छूटकर विष्णुलोकमें प्राप्त हो कामदेवके समान दिव्य शरीर होकर अनेक सुखोंको भोगता है ॥ ३० ॥

अस्मात् पुराणादपि पादमेकं पठेत्तु यः सोऽपि विमुक्त पापः ।

नारायणाख्यं पदमेति नूनमनङ्गवद्दिव्य सुखानि भुंक्ते ॥३१॥

वामन ।

अध्याय ९५ में लिखा है कि सूर्य्य और चन्द्रमाके ग्रहणमें रत्नके दानका जो फल है अग्निहोत्री, श्रेष्ठ है और बुभुक्षित ऐसे विप्रको अन्न के दानका जो फल है और जो इसफलको देवते कहते हैं वह इस पुराणके पाठसे होता है पुराणोंमें चौदहवां वामन पुराण प्रधान है इसके सुननेसे पाप नाशको प्राप्त हो जाते हैं ।

रत्नस्य दानस्य च यत्फलं भवेत्सूर्यस्य चन्द्रे ग्रहणे च राहोः ॥ ३३ ॥

अन्नस्य दानेन फलं यथोक्तं बुभुक्षिते प्राप्तवरे च साग्निके ।

दुर्भिक्षसंपीडित पुत्रभार्यो ज्ञातौ सदा पोषण तत्परेच ॥ ३४ ॥

यत्ते फलं तत्प्रवदंति देवाः सतत्फलं लभते चास्य पाठात् ॥ ३५ ॥

चतुर्दशं वामनमाहुरग्र्यं श्रुतेश्च यस्याद्य चयाश्चिनाशम्

वाराह

वाराहपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय १४६में लिखा है जो उत्तमोंसे रहित अभक्ष भोजन करते हैं वह महाअधम हैं उन भाग्यहीनोंके लिये यह सुमार्ग हमने बड़े परिश्रम और यत्नसे प्रकाश किया है हे धरणि ! जो अनेकभांतिके पुण्य देने हारे पदार्थ हैं उनके सेवनसे

बहुत कालमें चित्त शुद्ध होता है इस वाराहपुराणके श्रवणमात्रसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो हमारा समीपवर्ती होता है।

सर्वधर्मकराः केचित्सर्वांशाः सर्वविक्रयाः ।
तमां पश्यन्ति वै भूमे एकचित्तव्यवस्थिताः ॥
एवमेतन्महाशास्त्रं देवि संसारमोक्षणम् ।
ममभक्तव्यवस्थायै प्रयुक्तं परमं प्रियम् ॥

ब्रह्मवैवर्त्त

ब्रह्मवैवर्त्तपुराणके आदिमें लिखा है यह पुराण सारे पुराणोंमें बड़ा वरन वेदकी भूल चूकको भी सुधारने वाला है।

भगवान् यतत्वया पृष्टं ज्ञानं सर्वमभीप्सितम् ।
सारभूतं पुराणेषु ब्रह्मवैवर्त्तमुत्तमम् ॥
पुराणोपपुराणानां वेदानां भ्रमभंजनम् ॥

भागवत ।

और श्रीमद्भागवत स्कंद १ अध्याय ३ श्लोक ४४ में लिखा है। कि भागवत पुराण ही एक ऐसा पुराण है। जो नष्टदृष्टिवालोंके लिये सूर्य्यके समान है। जैसाकि—

कलौ नष्टदृशामेष पुराणार्कोऽधुनोदितः ।
तत्र कीर्तयतो विप्रा विप्रर्षेर्भूरितेजसः ॥

स्कंद १२ अध्याय १३ में लिखा है। जिस प्रकार नदीमें गंगा, देवतानमें अच्युत, वैष्णवनमें शंभु, तैसे पुराणनमें यह भागवत है।

निम्नगानां यथा गंगा देवानामच्युतो यथा ।
वैष्णवानां यथा शंभुपुराणानामिदं तथा ॥

जैसे सबक्षेत्रनमें काशी श्रेष्ठ है उसी भांति सब पुराणनमें यह श्रीमद्भागवत श्रेष्ठ है।

क्षेत्राणां चैव सर्वेषां यथा काशी ह्यनुत्तमा ।
तथा पुराणव्रातानां श्रीमद्भागवतं द्विजाः ॥

लिङ्ग

लिङ्गपुराण अध्याय ५५ में लिखा है । कि इस लिङ्गपुराणको जो पुरुष आदिसे अन्त तक पढ़े श्रवण करे अथवा ब्राह्मणोंको सुनाये वह परमगतिको पाता है– तप– यज्ञ– दान– अध्ययन कर्म विद्या आदिसे जो फल प्राप्त होता है, वही इस पुराणके सुनानेसे होता है और मोक्षकी प्राप्ति होती है और उसके वंशमें कोई विद्याहीन, प्रमादी नहीं होता ।

लैङ्गमाद्यन्तमखिलं यः पठेच्छृणुयादपि ।
द्विजेभ्यः श्रावयेद्वापि स याति परमां गतिम् ॥
तपसा चैव यज्ञेन दानेनाध्ययनेन च ।
या गतिस्तस्य विपुला शास्त्रविद्या च वैदिकी ॥
कर्मणा चाविमिश्रेण केवलं विद्ययापि वा ।
निवृत्तिश्चास्य विप्रस्य भवेद्भक्तिश्च शाश्वती ॥
मायिनारायणे देवे श्रद्धा चास्तु महात्मनः ।
वंशस्य चाक्षयाविद्या चाप्रमादश्च सर्वतः ॥

गरुड़ ।

गरुड़पुराण अध्याय १७में लिखा है कि सब प्रकारके यत्नोंसे गरुड़पुराण सुनने योग्य है जो धर्म्म, अर्थ, काम, मोक्षका देनेवाला है और दुःखनाशक है ।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन श्रोतव्य गारुडं किल ।
धर्मार्थकाममोक्षणां दायकं दुःखनाशनम् ॥

यह सुननेवालोंको पवित्रकरनेवाला, सब पापोंका नाशकरनेवाला, सकलकामनाओंका देनेवाला है इसलिये सबको सुनाना चाहिये ।

पुराणं गारुडं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ।
शृण्वतां कामनापूरं श्रोतव्यं सर्वदैव हि ॥

ब्राह्मणको विद्या, क्षत्रीको पृथिवी, वैश्यको धन और शूद्र पातकसे शुद्ध होजाता है ।

ब्राह्मणो लभते विद्यां क्षत्रियः पृथिवीं लभेत् ।
वैश्यो धनिकतामेति शूद्रः शुद्ध्यति पातकात् ॥

मार्कण्डेय ।

मार्कण्डेयपुराण माहात्म्यमें लिखा है कि जो कोई इस पुराणको अच्छे ब्राह्मणोंसे पढ़वाकर सुन, उसकी पूजा करता है वह मनुष्य सब पापोंसे छूटकर अपने कुलको पवित्र करता है और आप भी पवित्र हो सनातन विष्णुलोकको जाता है ।

पठ्यमानेत्ववज्ञाते साधुभिः शास्त्रमुत्तमे ।
श्रुत्वा तत्पूजयेद्यस्तु पुराणं सप्तमं पुनः ॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः पुनात्येव निजकुलम् ।
पूतोयाति न सन्देहो विष्णुलोकं सनातनम् ॥

जिल्द २ अध्याय ४५ में लिखा है कि यह वही पुराण है जो कि कलियुगके पापोंको नाश करता है सो मैं इस समय आपसे कहता हूं ।

दक्षेण चापि कथितामि दमासीत्तदामम ।
तत्तुभ्यं कथयाम्यद्य कलिकल्मषनाशनम् ॥ २५ ॥

शिवपुराण ।

शिवपुराणमाहात्म्यमें लिखा है कि हे मुने ! इस शिवपुराणसे अधिक कलियुगी मनुष्योंके मनका शुद्ध करनेवाला दूसरा पुराण नहीं ।

एतस्माद् परं किञ्चित्पुराणाच्छैवतो मुने ।
न विद्यते मनः शुद्ध्यै कलिजानां विशेषतः ॥

विशेषकर कलियुगमें शिवपुराणके सिवाय दूसरा धर्म मनुष्योंको मुक्तिसाधन करनेवाला नहीं।

विशेषतः कलौ शैव पुराणश्रवणादृते।
परोधर्मो न पुंसां हि मुक्तिसाधनकृन्मुने ॥ २५ ॥

सनत्कुमार संहिता अध्याय १ श्लोक ६४में लिखा है कि श्रुति, स्मृति, पुराण, इतिहास अनेक शास्त्रादि इस शिवपुराणकी अल्पकला को भी प्राप्त नहीं होता।

श्रुतिस्मृतिपुराणेतिहासागम शतानि च।
एतच्छिवपुराणस्य नार्हन्त्यल्पां कलामपि ॥

विष्णु।

विष्णुपुराण अ० ६ श्लोक ५७में लिखा है कि जो कोई कलि पापनाशन यह पुराण सुनेगा वह सब पापोंसे छूट जायगा।

इत्येतत्परमं गुह्यं कलिकल्मषनाशनम्।
यः शृणोति नरः पापैः ससर्वै र्द्विजमुच्यते ॥

तथा—इसमें कुछ सन्देह नहीं जिस विष्णुपुराणमें चराचरके गुरु ब्रह्मज्ञानमय सकल संसारके आदि, मध्य, अन्तमें रहनेवाले श्रीभगवान् विष्णु कहे गये हैं तिस परमपवित्र पुराणके सुनने व भक्ति सहित पुरुषके पढ़नेसे जो फल मिलता है वह समस्त भुवनमें नहीं क्योंकि इसके सुननेसे एकान्तसिद्धरूप हरि ही फल मिलते हैं जिस अच्युतमें बुद्धि लगानेसे नरकको नहीं जाता व जिसके चिन्तवनमात्रसे स्वर्ग भी मिलता है व जिसमें मन लगानेसे ब्रह्मलोकको भी जाता है।

यत्रादौ भगवांश्चराचरगुरुर्मध्येतथांतेचस।
ब्रह्मज्ञान मयोच्यतोखिलजगन्मध्यान्तसर्गप्रभुः ॥
तच्छृण्वन्पुरुषः पवित्र परमं भक्त्या पठंश्चापि यत्।
प्राप्नोत्यस्ति न तत्समस्तभुवनेष्वेकांतसिद्धिर्हरिः ॥

यस्मिन्नयस्त मतिर्नयाति नरकं स्वर्गोपि यच्चिंतने ।
विघ्नो यत्र निवेशितात्ममनसो ब्राह्मोपिलोकोल्पकः ॥

अग्निपुराण ।

अग्निपुराण अध्याय २७१ में लिखा है कि अग्निपुराणका कर्त्ता, श्रोता जनार्दन भगवान् है इससे अग्निपुराण सर्ववेद, सर्वविद्या, सर्वज्ञानमय और श्रेष्ठ है ।

आग्नेयाख्य पुराणस्य कर्त्ता श्रोता जनार्दनः ।
तस्मात्पुराणमाग्नेयं सर्ववेदमयं महत् ॥ १७ ॥
सर्वविद्यामयं पुण्यं सर्वज्ञानमयं वरम् ।

अग्निपुराण अध्याय ३८२ में लिखा है कि अग्निपुराणशास्त्रके समान कोई शास्त्र नहीं जो इसके एक श्लोकको भी पढ़ता है वह सौ कुलका उद्धारकर ब्रह्मलोकको जाता है । अग्निने इस अग्निपुराणको वेदसम्मत कहा (बनाया) है इससे श्रेष्ठतर कोई ग्रन्थ नहीं है न शास्त्र न इससे श्रेष्ठ कोई श्रुति है न इससे परे ज्ञान और न इससे परे कोई स्मृति है ।

आग्नेयस्य पुराणस्य शास्त्रस्यास्य समं न हि ।
स ब्रह्मलोकमाप्नोति कुलानां शतमुद्धरेत् ॥
एकं श्लोकं पठेद्यस्तु पापपङ्काद्विमुच्यते ।
अग्निना प्रोक्तमाग्नेयं पुराणं वेदसम्मतम् ॥
नास्मात्परतरो ग्रन्थो नास्मात्परतरा गतिः ।
नास्मात्परतरं शास्त्रं नास्मात्परतरा श्रुतिः ॥
नास्मात्परतरं ज्ञानं नास्मात्परतरास्मृतिः ।

श्रीमान्को अच्छे प्रकारसे प्रकट होगया कि यह पुराण बड़े २ पापियोंके तारनेकेलिये बनाये गये हैं जैसा कि उनमें लेख है और अज्ञान पाप उनके श्रवणमात्रसे ही जाते रहते हैं इसके अतिरिक्त शि-

वपुराण वायुसंहिता उत्तरार्द्ध अध्याय १२ मेंतो शिवजी महाराज स्वयं प्रतिज्ञा कर कहते हैं कि पृथ्वीतलपर कैसाही पतित क्यों नहो वह मेरी पंचाक्षरा विद्यासे मुक्त होजाता है ।

मम पञ्चाक्षरीविद्या संसारभयतारिणी। मयैव मसकृद्देवि प्रातिज्ञातं धरातले ।

पतितोऽपि विमुच्येत मद्भक्तो विधया विद्ययाऽनया ॥

परन्तु शोक इस बातका भी है कि पुराणोंमें बहुधा ऐसे वचन भी मिलते हैं कि अमुक२ कथा व प्रसंग अमुक २ पुरुषोंको न सुनानी चाहिये, कुछ आप भी सुन लीजिये ।

शिव ।

शिवपुराण विद्येश्वर संहिता अध्याय २में कहा है कि यह मत्सर-हीन विद्वानोंके जानने योग्य वस्तु है और सत्पुरुषोंके कृत्यसे युक्त त्रिवर्गका देनेवाला है ।

अमत्सरांतर्बुधवेद्य वस्तु सत्वत्कृममत्रैव त्रिवर्गयुक्तम्॥

ज्ञानसंहिता अध्याय ७८में लिखा है यह कथाप्रसंग-नास्तिक, अभक्त-श्रद्धाहीनको कदाचित् सुनाना योग्य नहीं ।

नास्तिकाय न वक्तव्यं श्रद्धाहीना यवा तथा ।

अभक्ताय न वाच्यं हि नचाऽशुश्रूषवे बुधाः ॥

कैलाससंहिता अध्याय १२में लिखा है कि कथा नास्तिक—श्रद्धाहीन, अभक्त और शुश्रूषारहितको न सुनानी चाहिये ।

नास्तिकाय न वक्तव्यं श्रद्धाहीनाय वै सदा ।

अभक्ताय न वाच्यं हि न चाशुश्रुषवे तथा ॥

वायुसंहिता पूर्वार्द्ध अध्याय २में लिखा है कि वह पतित मूढ़ और कुत्सित—दुर्जनोंकी दृष्टिमें नहीं आता ।

अदृश्यः पतितैर्मूढैर्दुर्ज्जनैरपि कुत्सितैः ॥

अध्याय ४ में लिखा है। यह श्रेष्ठज्ञान अशान्त पुरुषको देना नहीं चाहिये, अपुत्र, असुवृत्त सदाचारणहीन, अशिष्यको यह ज्ञान न देना चाहिये।

न प्रशान्ताय दातव्यमेतज्ज्ञानमनुत्तमम्।
नापुत्रायासुवृत्ताय नाशिष्याय च सर्वथा॥

वायुसंहिता उत्तरार्द्ध अध्याय ५में लिखा है। कि जो शिष्य न हो—शठहो, अभक्त हो उनके निमित्त ऐसे अर्थोंका उच्चारण न करे यह वेदका अनुशासन है।

नाशिष्येभ्यः शठेभ्यो वा नाभक्तेभ्यः कदाचन।
व्याहरेदीदृशानर्थानिति वेदानुशासनम्॥८३॥

अध्याय २४में लिखाहै। कि नास्तिक शठ कृतघ्न तामस पाखंडी पापी यह सब मुझसे दूर रहैं।

नास्तिकाश्च शठाश्चैव कृतघ्नाश्चैव तामसाः।
पाषण्डश्चातिपापश्च वर्त्ततां दूरतो ममः॥

भविष्यपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय २०८ श्रीकृष्णमहाराजका वचन है, कि दांभिक, शठ, नास्तिक, दुराचार आदिकोंको यह प्रकाश न करना चाहिये किन्तु साधु जितेंद्रिय, सदाचार, देव, ब्राह्मण, भक्तपुरुष होयं वे पठन, श्रवणके अधिकारी हैं।

नैतत्प्रकाशनीयं हि दांभिकाय शठाय वा।
नास्तिकायान्य मनसे कुतर्कोपहतायच ८॥
साधुवृत्ताय दाताय सत्यार्जवरताय च।
एतदाख्याय मानं हि शुभमुत्पादयेद्गतिम् ९॥

मार्कण्डेय पुराण माहात्म्यमें लिखा है कि इस पुराणको नास्तिकों और वृद्ध अपमानी, गुरु ब्राह्मणके निन्दक और व्रतत्यागी को न देना चाहिये॥

नास्तिकाय न दातव्यं वृद्धादि प्रभु विष्णवो ।
गुरुद्विजातिनिन्दाय तथा भग्नव्रताय च ॥

मातापिता, वेदशास्त्रकी निन्दा और जातित्यागको न देना चाहिये ॥ १७ ॥

मातापित्रोर्निन्दकाय वेदशास्त्रादि निंदिने ।
भिन्नमर्यादिने चैव तथा वैज्ञातिकोपिने ॥

कंठगत प्राण होने तक भी न देना चाहिये, लोभ व मोह व डर से भी विशेषकरके न दे ।

एतेषां नैव दातव्यं प्राणैः कंठगतैरपि ।
लोभाद्वा यादि वा मोहाद्भयाद्वापि विशेषतः ॥

जो कोई इन लोगोंके आगे पढे वा पढ़ावे वह नरकमें जाता है।

पठेद्वा पाठयेद्वापि सगच्छेन्नरकं ध्रुव ।

वामन पुराण अध्याय ९५ श्लोक ८८में वामनजीने नारदजीसे कहा है कि इस परमरहस्यको तुम हरिभक्तिवर्जित और ब्राह्मणकी निन्दामें युक्त ऐसे पापी पुरुषोंसे न कहना ।

इदं रहस्यं परमं तवोक्तं न वाच्यमेवं हरिभक्ति वर्जिते।
द्विजस्यं निंदारतिहीनतारतेसहेतु वाक्याद्दृतयापसत्त्वे ॥८८॥

वाराहपुराण अध्याय १३९में लिखा है कि मूर्ख, चुगलखोर, श्रद्धा न रखनेवाले, कुटिल और शास्त्रदूषित पुरुषको न सुनावे।

न पठेन्मूर्खमध्य तु पिशुनानां पुरो न च ।
अश्रद्दधाने क्रूर वा न पठेद्दवले तथा ॥
मा पठेच्छास्त्रदूषाय अध्याय वा कदाचन ॥ १०८ ॥

अध्याय १४५ में लिखा है कि इस कथाके अधिकारी वह हैं जो

शठता पिशुन, गुरुद्रोह, पंचमहापातक आदि दुष्टकर्मोंसे रहित हैं और हमारे भक्तहो लोभ, मोह, अनाचार आदिसे वर्जित हों।

महालाभस्तु लाभानां नास्त्यस्माद् परं महत् ।११०।
पिशुनाय न दातव्यं न शठाय गुरुद्रुहे ।
ये च पापाः कृतघ्नाश्च द्विजदेवापराधिनः ॥ ११८ ॥
कुशिष्याय न दातव्यं न दद्याच्छास्त्र दूषके ।
नीचाय न च दातव्यं येन जानन्ति सेवितुम् ॥

कूर्मपुराण अध्याय १में लिखा हैं कि नास्तिकके लिये इस पुण्यकारी कथाको न कहे किन्तु श्रद्धा रखनेवाले शान्त और धार्मिक द्विजातिके लिये कहे ।

न नास्तिके कथा पुण्यामिमां ब्रूयात्कदाचन ।
श्रद्दधानाय शान्ताय धार्मिकाय द्विजातये ॥

पद्म ।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय ८५ में महादेवजीने कहा है कि श्रद्धारहित, पापात्मा, नास्तिक सन्देहयुक्त और हेतुनिष्ठ यह पांच पूजाके फलके भागी नहीं हैं ।

अश्रद्दधानः पापात्मा नास्तिकोऽच्छिन्न संशयः ।
हेतुनिष्ठश्च पञ्चैते न पूजाफलभागिनः ॥ १९ ॥

पद्मपुराण पञ्चम पातालखण्ड अध्याय ३५ में लिखा है कि हम सब पापोंका नाशक एक परमगुप्त वस्तु कहते हैं हे महाभाग उसे सुनो वह सर्वोपरि संसारसागरको तारनेवाला है परन्तु नास्तिकसे न कहना और न श्रद्धाहीन पुरुषसे कहना निन्दक व शठसे भी न कहना न भक्तिके वैरीको देना । रामभक्त शान्तिस्वभाव तथा काम, क्रोधसे रहित पुरुषोंके सब दुःख नाश करनेवाला यह पदार्थ कहना। ४३ । ४४ । ४५ ।

परंगुह्यं प्रवक्ष्यामि सर्वपापप्रणाशनम् ॥
तच्छृणुष्व महाभागा संसारांभोधि तारकम् ॥
नास्तिकाय न वक्तव्यं न चाऽश्रद्धालवे पुनः ।
निन्दकाय शठायापि न देयं भक्तिवैरिणे ॥ ४४ ॥
रामभक्ताय शान्ताय कामक्रोधवियोगिने ।
वक्तव्यं सर्वदुःखस्य नाशकारकमुत्तमम् ॥ ४५ ॥

पण्डितजी इनसब बातोंको विचारते हुए यह भी आपजानलें कि यह सब पुराण वेदानुकूल बनाये गये हैं जैसा किः —

श्रीमद्भागवत स्कंद १ अध्याय ३ श्लोक ४२ में लिखा है ।

सर्वं वेदेतिहासानां सारं सारं समुद्धृतं ।
सतु संश्रावयामास महाराजं परीक्षितम् ॥

स्कंद २ अध्याय ७में लिखा है

प्राह भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसंमतम् ।

वेदके समान भागवत नाम पुराण सुनाते हुए ।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तर अध्याय २२५ में लिखा है ।

एतत्ते सर्वमाख्यातं पुराणंवेदसंमतम् ।
ब्रह्मणा कथितं राजन् मनुस्वायम्भुवांतरे ॥

वसिष्ठजीने कहा कि हमने तुमसे ब्रह्माजीके कहेहुए वेदसम्मत सब पुराण कहे ॥ ११८ ॥

वायुपुराण अध्याय १ श्लोक ९में लिखा है कि धर्म और न्यायकी युक्तियों से सुभूषित और वेदके समान पुराण हैं ।

पुराणं संप्रवक्ष्यामि ब्रह्मोक्तं वेदसम्मतम् ।
धर्मार्थन्यायसंयुक्तै रागमैः सुविभूषितम् ॥

अध्याय ३ श्लोक ११ में कहा है कि वेदसम्मत वायुपुराणको कहता हूं ।

पुराणं सम्प्रवक्ष्यामि मारुतं वेदसम्मतम् ॥

शिवपुराण वायुसंहिता अध्याय १में कहा है कि यह शिवपुराण वेदसम्मत है। जैसाकि—

यदिदं शैवमाख्यातं पुराणंवेदसम्मतम्।

विधेश्वरी संहिता अध्याय २ में भी कहा है।

अग्निपुराण अध्याय १ श्लोक १०में लिखा है। कि अग्निपुराण वेदके तुल्य है।

अग्निनोक्तं पुराणं यदाग्नेयं ब्रह्मसम्मतम्।
भक्तिमुक्तिप्रदं दिव्यं पठतां शृण्वतां नृणाम् ॥

विष्णुपुराण अंश ६ अध्याय ८में पाराशर मुनिने कहाकि यह वेदसम्मत पुराण तुमसे कहा।

तत्तेयन्मया ख्यातं पुराणं वेदसम्मतं।

परन्तु पंडितजी यहभी ठीक नहीं इन दोनोंमें ज़मीन आसमान का अन्तर है देखिये।

वेद और पुराणोंके अन्तरका संक्षेप व्यौरा

(१) वेद सनातन ईश्वरीय वाक्य है परन्तु पुराण सृष्टि उत्पन्न होनेके पश्चात् मनुष्यकृत हैं।

(२) वेद, बुद्धि सृष्टिक्रम और सत्यज्ञानके अनुकूल है पुराणोंमें सहस्त्रों वाक्य बुद्धि, सृष्टि क्रम और सत्यज्ञानके प्रतिकूल हैं।

(३) वेदोंमें एक ईश्वरकी उपासना करनेकी आज्ञा है। परन्तु पुराणोंमें नाना देव और वृक्षादिके पूजन, की आज्ञा है।

(४) वेदोंके अनुकूल ज्ञान द्वारा मुक्ति होती है, परन्तु पुराणोंमें, कृष्ण, राम तुलसी शालिग्राम गंगा आदिके केवल नामोच्चारणहीसे मुक्ति होजाती है।

(५) वेदोंमें मरनेके पीछे मनुष्यका किया हुआ सत्कर्म सहायक होता है परन्तु पुराणोंके लेखानुसार पुत्रादिके किये गया

आदिकमें श्राद्धादिक कर्म और कट्टहा इत्यादिका जिसकी इस समय पुराणोंके अनुसार बड़ी चर्चा है देना भी सहायक होता है।

(६) वेदोंमें स्त्री पुरुषोंको वेदादि विद्याओंके पढ़नेकी आज्ञा है परन्तु पुराणोंमें स्त्रीको शूद्र बता वेद पढ़नेकी आज्ञा नहीं।

(७) वेदानुकूल, ब्रह्मचर्य्य, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थ और संन्यास यह चारआश्रम लिखे हैं और पुराणोंमें भी इनके गुण गाये हैं तो भी अष्टवर्षा भवेद्गौरी० के अनुसार विवाह कर ब्रह्मचर्य्याश्रमका खोज मारा जाता है जिसके कारण अन्य आश्रमोंका सत्यानाश हो-गया।

(८) वेदोंमें ब्रह्मचर्य्य आश्रमके पश्चात् तुल्य; गुण, कर्म, स्वभावको मिलाकर विवाह करनेकी आज्ञा है यहां पुराणोंको त्याग, कुंभ, मीन इत्यादिको मिलाकर विवाह करते हैं।

(९) वेदोंमें प्रतिदिन पंचयज्ञ करनेकी आज्ञाहै परन्तु पुराणोंमें इसके अतिरिक्त नाना प्रकारके कपोलकल्पित, मंत्रोंके जप और अनेकान प्रकारकी पूजाके बड़े २ माहात्म्य और विधान लिखे हैं।

(१०) वेदोंमें ब्राह्मण, क्षत्री और वैश्यको एकही ब्रह्मगायत्रीके उपदेश करनेकी आज्ञा है यहां पौराणिक पण्डितोंने तीन और २४ गायत्री बनालीं इसीभांति दोकाल सन्ध्याके स्थानपर तीन काल नियत करलिये।

(११) वेदोंमें गुण, कर्म, स्वभावसे वर्ण नियत करनेकी आज्ञा है जिसको पुराण भी कहते हैं परन्तु यहां जन्मसे ही पुराणोंकी आज्ञा बतलाते हैं और मानते हैं।

(१२) वेदोंमें मधु और मांसका निषेध है परन्तु पुराणोंके लेखानुसार यज्ञ करके घोड़े और गायको खानाभी लिखा है। और बकरे शराब तो प्रतिदिन देवीका नाम लेकर खाते चलेजाते हैं और बड़ेर देवताओंके भोगलगाने की आज्ञा है।

(१३) चोरी, जारी, हिंसाकरना, आदिवेदमें बुरे कर्म्म बतलाये हैं परन्तु पुराणोंके बड़े २ देवता इन कार्योंको बेधड़क करते थे।

(१४) वेदोंमें स्त्रियोंके लिये सर्वोपरि पतिसेवा करना लिखा है परन्तु पुराणोंमें इसकी महिमा गातेहुये उपवास और वृक्षादिकी पूजा और गंगा आदि स्नानसे उनकी भी मुक्ति बतलाई है ।

(१५) वेदोंमें उत्तम सत्संगादि करनेको तीर्थ मानाहै परन्तु पुराणोंमें गंगादि स्थानविशेषको तीर्थ बतलाया है और उनके बड़े२ माहात्म्योंसे पुराण भरे पड़े हैं ।

(१६) वेदोंमें सत्यादि नियमोंके पालनका नाम तप कहा है पुराणोंमें धूनी लगा बीचमें बैठनेको तप कहाहै ।

(१७) वेदोंमें नियम पालनको व्रत बतलाया है वहां पुराणोंमें भूखे रहनेको व्रत कहा है ।

(१८) वेदोंमें स्त्रियोंको एकान्तमें पुरुषसे सम्भाषण करनेकी आज्ञा नहीं परन्तु पुराणोंके अनुसार उनको चेली बना आनन्दसे गुरुमन्त्र देते हैं ।

(१९) वेदानुकूल कर्म्मोंका फल प्रत्येकको मिलता है परन्तु पुराणोंके कथनानुसार पुत्रादिके कर्म्मोंसे बड़े २ पापी तरना लिखा है।

(२०) वेदानुकूल मनुष्यकी आयु अधिकसे अधिक ४००वर्ष,परन्तु पुराणोंमें ११ अरब तककी आयु लिखी है ।

(२१) वेदोंमें परमेश्वर,सच्चिदानन्दस्वरूप, अजन्मा, सर्व सामर्थ्य, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान्, सर्वज्ञ, निराकार, अजर, अमर, अभय, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त न्यायकारी, दयालु, अनन्त, सब जीवोंका न्यायसे फलदाता आदि लक्षणवाला माना है परन्तु पुराणोंमें ईश्वर साकार, निराकार, विकार वाला माना है जो स्वभक्तोंकी रक्षाके अर्थ कच्छ, मच्छ और वाराह आदि अवतार लेता है ।

(२२) वेदोंमें ईश्वरको सर्वशक्तिमान् माना है जो अपनी सामर्थ्यसे सबकार्य्य स्वयंकर लेता है, परन्तु पुराणोंमें इसपर धब्बा लगाया है क्योंकि उसको भक्तोंकी रक्षाके लिये पृथ्वीपर अवतार अर्थात जन्मलेना पड़ता है जैसा प्रह्लादकी रक्षाकेलिये नरसिंह, राजा बलिको छलनेके लिये वामन, पृथ्वीको लानेके लिये वाराह, समुद्र मथनके लिये कच्छप आदि अवतार धारण करने पड़े।

(२३) वेदोंमें पुरुषको एकस्त्री और स्त्रीको एकपतिके साथ विवाह करनेकी आज्ञा है परन्तु पुराणोंकी शिक्षासे एकपुरुष जितनी चाहे उतनी स्त्रियां करले देखो श्रीकृष्ण महाराजके १६१०८ स्त्रियां लिखी हैं।

इसके उपरान्त जब हम पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय२३५ वा २३६ का पाठ करते हैं तो और ही कुछ प्रकाश होता है। देखिये वहां यह लेख है कि नमुचि आदि महादैत्य महाबली, महावीर्य्यवान् महावीर और महौजस जो विष्णुजीमें रतशुद्ध सब पापोंसे वर्जित और त्रयीधर्मसे युक्त थे उन्होंने इन्द्रादिकोंको भग्न करदिया तब भयसे पीडित देवता विष्णुजीके समीप गये और उनसे प्रार्थनाकी तब केशवजीने महादेवजीसे कहाकि दैत्योंके जीतने और मोहित करनेकेलिये पाखण्डाचरण धर्मको करिये और तामसपुराणोंको कहिये। २४

पाषण्डाचरणं धर्मं कुरुष्वसुरसत्तम।
तामसानि पुराणानि कथयस्वचतान्प्रति॥

तब मैंने विष्णुजी के कहनेके अनुसार तामसपुराण पाखण्ड शैव शास्त्रोंको भी किया॥ ५३॥

तामसानि पुराणानि यथोक्तं विष्णुना शुभे।
पाषण्डशैवशास्त्राणि यथोक्तं कृतवानहम्॥

अब अध्याय २३६में लिखा है कि मत्स्य-कूर्म-लिङ्ग शिव-स्कन्द और आग्नेय पुराण यह छै तामस हैं॥ १८॥

मात्स्यं कौर्मं तथा लैङ्गं शैवं स्कांदं तथैव च।
आग्नेयं च षडेतानि तामसानि निबोध मे॥

विष्णु-नारदीय-भागवत-गरुड-पद्म-वाराह ये शुभ सात्विक पुराण जानने चाहियें। ब्रह्माण्ड ब्रह्मवैवर्त्त-मार्कण्डेय-भविष्य वामन-ब्राह्म ये राजस जानिये तिनमेंसे सात्विक मोक्षके देने वाले, राजस सदैव शुभ और तामस नरककी प्राप्तके हेतु हैं।

वैष्णवं नारदीयं च तथा भागवतं शुभम् ।
गारुडं च तथा पद्मं वाराहं शुभदर्शने ॥
सात्विकानि पुराणानि विज्ञेयानि शुभानि वै ।
ब्रह्मांडं ब्रह्मवैवर्त्तं मार्कंडेयं तथैव च ॥
भविष्यं वामनं ब्रह्मं राजसानि निबोधमे ।
सात्विका मोक्षदाः प्रोक्ता राजसाः सर्वदा शुभाः ॥२१॥
तथैवतामसाद विनिरयप्राप्ति हेतवः ॥ २२ ॥

श्रीमान् पण्डितजी यदि यह बात सत्य है तो फिर सनातनी भाइयोंको अठारह पुराण मोक्ष देनेवाले नहीं मानना चाहिये जब कि पद्मपुराण अध्याय २३६ में स्पष्टरूपसे कहा है कि मत्स्य, कूर्म, शिव, स्कन्द और अग्नि यह पुराण दैत्योंके नाशके लिये बनाये गये और श्लोक २२ पुकार २ कर कह रहा है कि तामसपुराणोंके माननेवाले नरकको जाते हैं इस लिये सनातनी भाइयोंको पुराणके लेखानुसार अठारहके स्थान पर विष्णु, नारदीय, भागवत, गरुड़, पद्म, वाराह, ब्रह्माण्ड, ब्रह्मवैवर्त्त, मार्कण्डेय, भविष्य, वामन और ब्रह्म यह बारह स्वर्गके देनेवाले रहे इसलिये सनातनी भाइयोंको महादेवजीकी आज्ञानुसार तामसपुराण जो नरकको लेजानेवाले हैं त्याग देना चाहिये परन्तु इन बारह में से केवल भागवत से ही व्यासजी महाराजकी आत्माको शान्ति हुई इसलिये अब कलियुगमें भागवत नामक पुराण तारने वाला रहा परन्तु पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय १९३ में नारद महाराज कहते हैं कि कुकर्मके आचरणसे सार सब ओरसे इस समयमें निकल गया है पदार्थ भूमिमें इस प्रकार स्थित हैं जैसे बीजहीन भूमी होती है ब्राह्मणोंने भागवतकी वार्ता घर २ और जन २ में धनके लोभ से करदी इससे कथाका सार जाता रहा ।

विप्रैर्भागवती वार्त्ता गेहे गेहे जने जने ।
कारिता कणलोभेन कथासारस्ततो गतः ॥

भला परिडतजी जब नारदमुनि स्वयं भक्तिसे कह रहे हैं कि कलियुगमें तुझे घर २ जन २ में स्थापित करूंगा जैसा कि:-

तस्मिंस्त्वां स्थापयिष्यामि गेहे गेहे जने ॥ १३ ॥

तो फिर ब्राह्मणोंका क्या दोष यदि उसी समय सार जाता रहा तो अबतो बिलकुलही सार नहीं रहा तो फिर श्रीमद्भागवतका सुनना सुनाना भी व्यर्थ हुआ परिडतजी पुराणलीलाका पार पाना अत्यन्त ही कठिन है हां जिस प्रकार सोना कसौटी पर लगानेसे अपने मूल्य को बता देता है इसी भांति इन पुराणोंको समझलीजिये केवल विलम्ब इतना है कि जब तक आप बुद्धिरूपी कसौटीपर नहीं रखते उसी समय तक यह व्यास महाराजके बनाये हुए हैं फिर जहां बुद्धिसे विचारा वहां तुरन्त प्रत्यक्ष होजाता है कि यह व्यासप्रणीत नहीं हैं और न यह धर्मपुस्तक है परमात्माका बतानेवाला केवल वेदही है वही सनातनधर्मपुस्तक है उसीके अनुकूल आचार व्यवहार करनेसे प्राणियोंकी मुक्ति हुई आगेभी होगी-हां विद्याके अभाव होनेसे स्वार्थियोंके हथखरडोंने भारतका चौपट कर दिया सचतो यह है कि महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वतीने ब्रह्मचर्य्यके तपोबलसे ईश्वरीय नियमोंको यथावत् जान संसारी भय और मिथ्या प्रतिष्ठा पर लात मार पुराणोंके झूंठे लेखोंकी चिन्ता न कर जैसा कि पद्मपुराण चतुर्थ ब्रह्मखरड अध्याय १ में लिखा है कि जो मनुष्य पुराणोंकी कथा सुन कर निन्दा करते हैं और हँसते हैं उनके हाथोंमें बहुत क्लेश देनेवाले नरक सदैव स्थित रहते हैं। स्पष्ट कह दिया कि यह अठारह पुराण व्यास प्रणीत नहीं हैं, नहीं हैं, नहीं हैं-अब मैं इस विषयको समाप्त करता हूं अब समय होगया ।

परिडत—अच्छा अब हम जाते हैं।

आर्यसेठ—श्री महाराज ! नमस्ते ।

पण्डितजी—ने आयुष्मान् कहा और अन्य सबने यथायोग्य की और चल दिये ।

॥ इति तृतीय परिच्छेदः ॥

चतुर्थः परिच्छेदः ।

नियत समय पर पंडितजीका आगमन आर्य्य सेठ, उठकर स्वागतकर श्रीमान् आइये महाराज नमस्ते ।

पंडितजी, आयुष्मान् कहकर बैठ गये और अन्य सब सज्जन महाशयभी आगये ।

आर्य्य सेठ, पंडितजी महाराज बहुधा पुराणोंमें लिखा हैकि तीनों देवा एकही सेवा अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु और महेशमें से किसी एककी सेवा करनेसे तीनोंकी प्रसन्न होजाते हैं देखिये वाराहपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ७२ श्लोक १३, १४, १५ में लिखा है ।

कर्मवेद युजां विप्र ब्रह्माविष्णुमहेश्वरः ।
वयं त्रयोऽपि मन्त्राद्या नात्र कार्याविचारणा ॥
अहं विष्णुस्तथा वेदा ब्रह्मकर्माणि चाप्युत ।
एतत्रयन्त्वेकमेव न पृथग्भावयेत्सुधीः ॥
योऽन्यथा भावयेदेतत्पक्षपातेन सुव्रत ।
सयाति नरकं घोरं तेनव पापपूरुषः ॥

अर्थात् वेदोक्त कर्म करनेसे हम तीनों तृप्त होते हैं इसलिये बुद्धिमान् हम तीनोंको एकही समझे जो पक्षपात से हम तीनों में भेद बुद्धि रखते हैं वे अवश्य नरकगामी होते हैं ।

वाराहपुराण, उत्तरार्द्ध अध्याय १३५ में लिखा है कि जो कल्याण करने हारे कैलास वासी शंकरजीकी सेवा करते हैं वे हमारे

भी सेवक हैं और जो हमारी सेवा करते हैं वे शंकरके सेवक हैं हम और शंकरमें कुछ भेद नहीं।

अहं यत्राशिवस्तत्र शिवो यत्र वसुन्धरे।
तत्राहमपितिष्ठामि आवयोर्नान्तर क्वचित् १४५·१०२

लिंगपुराण अ० ३ में लिखा है कि

आदिकर्त्ता च भूतानां संहर्त्ता परिपालकः।
तस्मान्महेश्वरो देवो ब्राह्मणोऽधिपतिः शिवः॥ ३७
सदाशिवोभवोविष्णु ब्रह्मासर्व्वात्मकोयतः।
एतदण्डे तथा लोका इमेकर्त्ता पितामहः॥ ३८॥

वह परमेश्वर तीन रूप धारणकर सृष्टिस्थिति, संहार सदाकिया करताहै उससे ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र तीनों एकही परमेश्वर हैं।

पद्मपुराण द्वितीय भूमिखण्ड अध्याय ७१में लिखा है।

शिवस्य हृदयं विष्णुर्विष्णोश्चहृदयंशिवः।
एक मूर्त्तिस्त्रयो देवा ब्रह्म विष्णु महेश्वराः॥
त्रयोणमन्तरं नास्ति गुणभेदः प्रकीर्तिताः॥ २१-२२

शिव विष्णुके रूपमें वा विष्णु शिवके रूपमें शिवके हृदयमें और विष्णुके हृदयमें शिव अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु महेश तीनों एकहीहैं और कुछ अन्तर नहीं है और ऐसाही षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय ८१ में कहा है कि जैसे विष्णुजी हैं वैसेही महादेवजी इनमें कुछ अन्तर नहीं

पञ्चम पाताल खण्ड अ० ९७ में लिखा है कि शिव, ब्रह्मा, विष्णु इनतीनोंको त्रयी कहते हैं इनमें दीपकसे दीपक संयोग कासा संबंध है।

भवो ब्रह्मा च विष्णुश्च त्रयमेव त्रयीमता।
दीपोग्निर्वर्तिस्नेहस्तु यथा विप्र तथा हरिः॥ २८

भविष्यपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय २०५ श्लोक ११ में लिखा है जो ब्रह्मा सो विष्णु जो विष्णु सो शिव जो शिव सो सूर्य्य जो सूर्य्य

सो अग्नि जो अग्नि सो कार्तिकेय जो कार्तिकेय सो गणपति इनमें कुछ भेद नहीं है।

यो ब्रह्मा सहरिः प्रोक्तो यो हरिः समहेश्वरः।
महेश्वरः स्मृतः सूर्यः सूर्यः पावक उच्यते॥
पावकः कार्तिकेयो सौ कार्तिकेयो विनायकः।
गौरी लक्ष्मीश्च सावित्री शक्तिभेदाः प्रकीर्तिताः॥

शिव पुराण ज्ञान संहिता अध्याय ४ में लिखा है मेरे हृदय में विष्णु और विष्णुके हृदय में, जो कोई अन्तर नहीं जानता वही हमारा भक्त है।

ममैव हृदये विष्णुर्विष्णोश्च हृदयेह्यहम्।
उभयोरंतरं या वै न जानाति मतो मम॥

अध्याय ५ में कहा है कि हममें और तुममें विचारदृष्टिसे अणुमात्रका भी भेद नहीं है। यथार्थमें तो तुम अनेक रूपसे प्राप्त होने वाले हो।

आवयोरंतरं नैव ह्यणुमात्रविचारतः।
वस्तुत्वे चाप्यनेकत्व चरतोऽपि तथैव च॥

देवीभागवत स्कन्द ३ अ० ६ में श्लोक ५५में लिखा जोकोई मनुष्य विष्णु और शिव और ब्रह्मामें भेद करेगा वह नरकको जावेगा क्योंकि जो हरि सोई शिव और जो शिव सोई हरि इसी प्रकार ब्रह्मा भी।

यो हरिः सशिवः साक्षाद्यः शिवः सस्वयं हरिः।
एतयोर्भेदमातिष्ठन्नरकाय भवेन्नरः॥

परन्तु पंडितजी जब हम ध्यानसे पुराणोंको देखते हैं तो उपरोक्त कथनके विरुद्ध बहुतायतसे ऐसे लेख मिलते हैं जिनसे तीनों पृथक् २ जान पड़ते हैं कोई ब्रह्मा कोई विष्णु कोई शिव और कोई २

इनके अतिरिक्त देवी इत्यादिके गुण गाता है जैसाकि विष्णुपुराण में विष्णु महाराजको परम तथा मान शिवादिको तुच्छ ठहराया है शिवपुराण और लिंगपुराणमें शिवको परमेश्वर ठहराकर विष्णु ब्रह्माको सेवक और देवी भागवतमें देवी महारानीको बहुमान कर अन्यको तुच्छ ठहराया है इसी भांति भागवतमें श्रीकृष्ण और भविष्यपुराणमें सूर्यभगवान् के गुणोंका महत्व दिखलाया है फिर उनकी उपासनामें भी न्यूनाधिक फलादिका वर्णन किया अर्थात् वह बात जो प्रथम लिख आये हैं कि एककी पूजा करनेसे तीनों प्रसन्न हो जाते हैं ठीक नहीं रहती कृपाकरके कुछ इस विषय को भी सुन लीजिये ।

शिवजीका बड़प्पन ।

महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय १५ में कहा है कि महादेव के समान देवता नहीं है न महादेवके समान गति है, दान विषयमें महादेवके समान कोई नहीं है और न कोई पुरुष संग्राममें ही महादेवके समान है।

नास्ति सर्वसमो देवो नास्ति सर्व समागतिः ।
नास्ति सर्वसमो दाने नास्ति सर्वसमो रणे ॥

श्रीमद्भागवत स्कंद, ८ अध्याय ७ श्लोक ३१ में कहा है ।

नतोगिरित्राखिललोकपालं विरंच वैकुंठ सुरेन्द्रगम्यं ।
ज्योतिः परं यत्र रजस्तमश्च सत्वंनयद्ब्रह्म निरस्त भेदमिति॥

तुम्हारीजो परमज्योति है सो सब लोकपाल ब्रह्मा, विष्णु,इन्द्र इनको भी गम्य नहीं है ।

और महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय १६ में कहा है कि ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, विश्वदेव और महर्षिलोग तुम्हें यथार्थरूपसे नहीं जानते फिर मैं तुम्हें किस प्रकारसे जानूं ।

ब्रह्मा शतक्रतुर्विष्णुर्विश्वेदेवा महर्षयः ।
न विदुस्तवामितितस्तुष्टः प्रोवचतं शिवः ॥

कूर्मपुराण, अध्याय ९ में महादेवने विष्णुजीसे कहाकि आप सब कार्य्यके कर्त्ता हैं मैं आदिदैव हूं तुम सोम हो मैं सूर्य्य हूं आप रात्रि, मैं दिन तुम प्रकृति मैं अव्यक्तपुरुष आप ज्ञान मैं ज्ञाता हूं आप माया, मैं ईश्वर हूं आप विद्यात्मिकाशक्ति मैं शक्तिमान् ईश्वर हूं।

तथेत्युक्त महादेवः पुनर्विष्णुमभाषत ।
भवान्सर्वस्य कार्यस्य कर्ताहमधिदैवतम् ॥
भवान्सोमस्त्वहं सूर्यो भवन्रात्रिरहं दिनम् ।
भवान्प्रकृतिरव्यक्तमहं पुरुष एव च ॥
भवान् ज्ञानमहं ज्ञाता भवान्मायाहमीश्वरः ।
भवान् विद्यात्मिकाशक्ति शक्तिमानहमीश्वरः ॥

देवीभागवत, पंचमस्कंद प्रथम अध्याय में लिखा है ब्रह्मासे विष्णु और विष्णुसे महादेव बड़े हैं और लिङ्गपुराण अध्याय १७ में लिखा है प्रलयकालके समय ब्रह्मा और विष्णुमें घोरसंग्राम हुआ वहां एकलिङ्ग उत्पन्न हुआ उसके अन्तके पानेके अर्थ विष्णु शूकरका और ब्रह्मा हंसका रूप धारण कर नीचे और ऊपर गये परन्तु अन्त किसीको नहीं मिला और दोनों शम्भुकी मायासे भयभीत होगये।

शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय २५में विष्णुजीने स्पष्ट कहा है कि शङ्करकी पूजा करनी चाहिये जैसा कि:—

यदि सेव्यं सदा देवाः शङ्करः सर्वदुःखहा ।
ममापि कथितं तेन ब्रह्मणोपि विशेषतः ॥

सम्पूर्ण देवता और ऋषि ब्रह्मा और विष्णु सिद्धिके लिये शङ्कर की पूजा करते हैं।

ते पूजयन्ति सर्वे वै देवा ऋषिगणास्तथा ।
ब्रह्मा चैव तथा विष्णुरन्ये देवाश्च ये पुनः ॥
पूजयन्ति तदा देवं नित्यं सिद्धिमीहमा ।

कूर्मपुराण अध्याय ३४ में लिखा है कि श्रीकृष्ण महाराजने एक वर्ष तक पाशुपतव्रतसे शिवकी आराधना की तब शिवने प्रसन्न होकर उनको वर दिया कि जो गोविन्दको मेरी भक्तिसे विधिपूर्वक पूजेंगे वह ज्ञानको प्राप्त करेंगे ।

अत्र पूर्वं हृषीकेशो विश्वात्मा देवकीसुतः ।
उवास वत्सरं कृष्णः सदा पाशुपतैर्वृतः ॥
ददौ कृष्णस्य भगवान्वरदो वरमुत्तमम् ।
येऽर्चयिष्यन्ति गोविन्दं मद्भक्त्या विधिपूर्वकम् ।
तेषां तदैश्वरं ज्ञानमुत्पत्स्यति जगन्मय ॥

पद्मपुराण पञ्चम पातालखण्ड उत्तरार्द्ध अध्याय ६ में लिखा है शिवकी पूजासे शिवलोक मिलता है ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्रादि उन के द्वारके द्वारपालक हैं ।

इष्टान्भोगानवाप्याथ शिवलोके महीयते ।
ब्रह्मविष्णुमहेन्द्राद्यास्तत्पुर द्वारपालकाः ॥

लक्ष्मी, सरस्वती दोनों देवियां देहली झाड़ती हैं व अन्य देव दानवोंकी भी स्त्रियां सब दासी कर्ममें नियमित हैं ।

लक्ष्मीसरस्वतीदेव्यौ देहल्याद्यर्चनोक्षितेः ।
नियुक्ते देवदेवस्य देवाश्च सुरयोषितः ॥

पद्मपुराण पातालखण्ड अध्याय ६ में लिखा है कि शिव यह मङ्गल नाम जिसकी वाणीपर टिकता है शीघ्रही उसके महापापोंकी कोटियां भस्म होजाती हैं ।

शिवेति मङ्गलनाम यस्य वाचि प्रवर्त्तते ।
भस्मी भवन्ति तस्याशु महापातककोटयः ॥

शिवपुराण विघेश्वरी संहिता अध्याय २३ में लिखा है कि वे धन्य हैं और कृतार्थ हैं उनका देह धारण करना सफल है उन्होंने अपना कुल उद्धार कर दिया है जो शिवकी उपासना करते हैं।

ते धन्याश्च कृतार्थश्च सफलं देहधारणम् ।
उद्धृतं च कुलं तेषां ये शिवं समुपासते ॥

ज्ञानसंहिता अध्याय २० श्लोक २४ में विष्णु महाराजने कहा है कि ब्रह्मा ब्रह्मत्वको और मैं विष्णु विष्णुत्वको प्राप्त हुआ हूं बिना शिवके पूजे इस जगत्में कौन पुरुष सिद्धिको प्राप्त हुआ है।

ब्रह्मा ब्रह्मत्वमापन्नो ह्यहं विष्णुत्वमेव च ।
तम पूज्य जगत्यस्मिन् कः पुमान् सिद्धिमागतः ॥

अध्याय ८ में लिखा है कि विष्णुमहाराजने एक करोड़ छासठ सहस्रवर्ष तक महादेवजीका आराधनाकर उनको प्रसन्न किया जिन्होंने उनको अनेकान वर दिये।

महाभारत शान्तिपर्वमें भीष्मजीने कहा है।

यं विष्णुरिन्द्रः सूर्यश्च ब्रह्मालोक पितामहः ।
स्तुवन्ति विविधैः स्तोत्रैर्देवदेवं महेश्वरं ॥
तमर्चयन्ति ये शश्वद्दुर्गाण्यति तरन्ति ते ।

जिनकी ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, सूर्य्य स्तुति करते हैं उन शिवका जो पूजन करता है उसके सब कष्ट दूर होजाते हैं ऐसाही अनुशासन पर्व अध्याय १४ में ब्रह्मा, विष्णु और समस्त देवता उसके लिङ्गकी पूजा किया करते हैं उससे बढ़कर दूसरा कौन है इसकारण वही सब का इष्टदेव है।

लिङ्गपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय ११ श्लोक ३५ व ३६ में लिखा है कि जिस राजाके राज्यमें शिवको छोड़ मनुष्य अन्य देवताका पूजन करते हैं वह राजा अपने राज्य सहित रौरवनरकको जाता है।

शिवलिङ्गं समुत्सृज्य यजन्ते चान्यदेवता।
सनृपः सहदेशेन रौरवंनरकं व्रजेत् ॥

शिवको छोड़ अन्य देवताओंमें भक्ति करना ऐसा है जैसा स्त्री अपने पतिको त्यागकर जारपुरुषमें आसक्त होती।

शिवभक्तो न यो राजा भक्तोऽन्येषु सुरेषु यः।
स्वपतिं युवतिस्त्यक्त्वा यथा जारेषु राजते ॥

और अध्याय १०७में लिखा है कि हे पुत्र! स्वर्ग, पाताल, पृथ्वी आदि सब स्थानोंमें रत्नोंके प्रवाह बहते हैं परन्तु भाग्यहीन पुरुषों को नहीं मिलसके राज्य, स्वर्ग, मोक्ष क्षीर आदि उत्तम भोजन और भांति २के पदार्थ शिव के अनुग्रहके विना नहीं मिलते इसलिये अन्य देवोंके आराधन करने वाले अनेक दुःख भोगते हैं केवल शिव आराधनसे ही सब दुःख दूर होजाते हैं।

तटिनी रत्नपूर्णास्ते स्वर्गपातालगोचराः।
भाग्यहीना न पश्यन्ति भक्तिहीनाश्च ये शिवे ॥ १२
राज्यं स्वर्गश्च मोक्षश्च भोजनं क्षीरसम्भवम्।
न लभन्ते प्रियाण्येषां नो तुष्यति सदा भवः ॥
भव प्रसादजं सर्व्वं नान्यदेवप्रसादजम्।
अन्यदेवेषु निरता दुःखार्त्ता विभ्रमन्ति च ॥

महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय १७ में कहा है कि संसारमें मुक्त करने वाले महादेवके अतिरिक्त अन्य देवता मनुष्योंके तपोबल को नष्ट किया करते हैं।

एव मन्ये विकुर्वन्ति देवाः संसारमोचनम् ।
मनुष्याणामृते देव नान्या शक्तिस्तपोबलम् ॥

और हे कृष्ण देवोंके देव महादेवके विषयमें असूया करते हैं वे पूर्वपुरुषों तथा पुत्रोंसहित नरकमें डूबते हैं ।

यश्चाभ्यं सूयते देवं कारणात्मानमीश्वरम् ।
सकृष्ण नरकं याति सहपूर्वैः सहात्मजैः ॥

पुराणपरीक्षामें शिव पुराणसे लिखा है ।

तथान्यदेवता भक्ति ब्राह्मणस्य विगर्हिता ।
विदूरमति विप्राणश्चाण्डालत्वं प्रयच्छति ।
तस्य सर्वाणि नश्यन्ति पितरं नरकं नयेत् ॥

जो शिवको छोड़कर दूसरे देवकी भक्तिसे ब्राह्मण चाण्डाल हो जाता है और उसका पिता नरकमें जाता है ।

शिवपुराण विधेश्वरी संहिता अध्याय २०में लिखा है कि जिसके माथेपर विभूति नहीं अंगमें रुद्राक्ष नहीं मुखमें शिवमयी वाणी नहीं उसको अधमके समान त्याग देना चाहिये ।

विभूतिर्यस्य नो भाले नांगे रुद्राक्षधारणम् ।
नास्येशिवमयी वाणी तं त्यजेदधमं यथा ॥

अध्याय २२ में लिखा है कि भस्म रहित मस्तक शिवालय रहित ग्राम, ईश्वरके अर्चन रहित जन्म शिव आश्रयहीन विद्याको धिक्कार है ।

धिग्भस्मरहितं भालं धिग्ग्राममशिवालयम् ।
धिगनीशार्चनं जन्म धिग्विद्यामशिवाश्रयाम् ॥

जो तीनों जगत्के आधार भूत हर अर्थात् शिवकी निन्दा करते हैं और जो त्रिपुण्ड्र धारण करने वालेकी निन्दा करते हैं उनके दर्शनमें

है वे निश्चय वर्णसंकरशूकर असुर, खर, श्वान, गीदड़की के समानवे पापरूप उत्पन्न हुए हैं केवल नरकही के जानेको जन्म लेआये हैं।

ये निंदंति महेश्वरं त्रिजगतामाधारभूतं हरं ये निन्दंति त्रिपुंड्रधारणकरं दोषस्तु तद्दर्शने।

तेवै संकरसूकरासुरखरश्च क्रोष्टुकीटोपमा जाता एव भवंति पाप परमास्ते नारकाः केवलम् ॥ ४६ ॥

धर्मसंहिता अध्याय १८ श्लोक ६ में लिखा है कि शिवकी निन्दा करने वालेको ब्रह्महत्या सुरापान और गुरुस्त्रीगमनके समान पाप लगता है।

सुमहत्पातकान्याहुः शिवनिंदा समानि च।
ब्रह्मघ्नश्च सुरापश्चस्तेयी च गुरुतल्पगः॥

पद्मपुराण— पातालखंड उत्तरार्द्ध अध्याय ६ में लिखा है कि विना शिवकी पूजा किये जो अधम मनुष्य भोजन करता है उसका भोजन अन्नरूप पापोंका भोजन कहाता है ॥ ७८ ॥

अपूजयित्वा चेशानं योहि भुंक्ते नराधमः।
पापामन्नरूपाणां तस्य भोजनमुच्यते॥

सत्मतनिरूपण और पुराण आदर्श और—श्रीमान् पंडित सूर्य्यप्रसादजीने अपनी किताबमें पद्मपुराणसे लिखा है। कि विष्णुके भक्तपर शिवजी क्रोध करते हैं और शिवजीके क्रोध से मनुष्य नरकको पाते हैं इसलिये विष्णुका कभी नाम न लेना चाहिये।

विष्णुदर्शनमात्रेण शिवद्रोहः प्रजायते।
शिवद्रोहान्न सन्देहो नरकं याति दारुणम्॥
तस्माद्वैविष्णुनामानि न वक्तव्यं कदाचन।

इन सब बातोंके अतिरिक्त शंकरकी पूजामें कुछ नियम नहीं उलटी सीधी जैसीहो सबही प्रकारकी पूजा शंकरकी शीघ्र फल देने वाली है जैसाकि पद्मपुराण पंचम पातालखंड अध्याय ५ में कहा है।

याद‍ृशं ताद‍ृशं वापि नियमेनार्चनं विभोः।
शंकरस्याशु फलं दयाद‍ृशस्यापि देहिनः॥

विष्णुजीकी बड़ाई।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंड अध्याय ७१ में महादेवजीने कहा है विष्णु जीके बराबर श्रेष्ठ धाम श्रेष्ठ तपस्या श्रेष्ठ धर्म नहीं है और वैष्णवके समान मंत्र नहीं।

नास्ति विष्णोः परं धाम नास्ति विष्णोः परं तपः।
नास्ति विष्णोः परो धर्मो नास्ति मंत्रो ह्यवैष्णव॥

विष्णुजीके तुल्य श्रेष्ठ सत्य श्रेष्ठ यज्ञ, श्रेष्ठ ध्यान और श्रेष्ठ गति नहीं है।

नास्ति विष्णोः परं सत्यं नास्ति विष्णोः परोमखः।
नास्ति विष्णोः परं ध्यानं नास्ति विष्णोः परागतिः॥

विष्णुही सर्वतीर्थमय सर्वशास्त्रमय और सर्वयज्ञमय हैं।

सर्वतीर्थमयो विष्णुः सर्वशास्त्रमयः प्रभुः।

विष्णु महाराजकी बराबरी कौन देवता कर सकता है जिनके अंशांशके अवतारके विना सब लीन होजाते हैं।

कस्तेन तुल्यतामेति देवदेवेन विष्णुना।
यस्यांशांशावतारेण विना सर्वं विलीयते॥

महाभारत वन पर्व अध्याय ८५ में ब्रह्माजीने कहा है कि गङ्गाके समान कोई तीर्थ, विष्णुके समान कोई देवता और ब्राह्मणों के समान कोई पूज्य नहीं।

अध्याय २५५में भृगुजीने ऋषियोंकी सभामें कहा कि ब्रह्मा और शिव जो देवोंमें श्रेष्ठ हैं उनमें रजोगुण और तमोगुण अधिक है मैंने हे श्रेष्ठ ऋषियो उनको शाप देदिया है कि ब्राह्मणोंसे पूजा पानेके योग्य नहीं हैं परन्तु विष्णु शुद्ध और सत्वगुणी और मङ्गलका समुद्र है वह नारायण परब्रह्मरूप है इस कारण हरि (विष्णु) ही ब्राह्मणों का देवता है।

रजस्तमो गुणाविक्तौ विधीशानौ सुरोत्तमौ।
शप्तौ मया न पूज्यौ तौ विप्राणं ऋषिसत्तमा॥
शुद्धसत्वमयो विष्णुः कल्याणगुणसागरः।
नारायणः परब्रह्म विप्राणां देवतं हरिः॥

विष्णुपुराण अ० ३ अध्याय ८ में लिखा है कि विष्णुकी आराधना करनेसे प्राणी पृथ्वी स्वर्गादिके सुख व मोक्ष व सब कुछ पाता है कहां तक गिनावें जो २ व जितना २ फल विष्णुके आराधनसे होता व जितना वह चाहता है सब फल पाता है।

पद्मपुराण पातालखंड पूर्वार्द्ध अध्याय ९७ श्लोक २७, २८ में लिखा है यह सब पुराण शास्त्र जगत्के व्यामोहके लिये हैं वेसब कल्प पर्य्यन्त शारीरक विषयोंको नाना प्रकारसे बकते हैं परन्तु उन सबोंका सिद्धांत एक विष्णु सब शास्त्रोंमें गाये गये हैं इससे यही सब व्यापारयुक्त शास्त्रोंमें विष्णुकी प्रधानता है।

स्युर्मोहाय चराचरस्य जगतस्तेते पुराणागमाः।
तां तामेव हि देवतां परमिकां जल्पं तु कल्पे विधौ॥
सिद्धान्ते पुनरेक एव भगवान्विष्णुः समस्तागम।
व्यापारेषु विवेकिनां व्यतिकरं नीतेषु निश्चीयते॥

पद्मपुराण पातालखण्ड अध्याय ८१ में हरिके आराधनको छोड़कर पापसमूहनिवारण करने वाला प्रायश्चित्त प्राणियोंके लिये कोई नहीं है।

हरेराराधनं हित्वा दुरितौघ निवारणम् ।
नान्यत्पश्यामि जंतूनां प्रायश्चित्तं परं मुने ॥

वामनपुराण—अध्याय ९४ श्लोक ३७ में लिखा है कि जो भक्ति से विष्णुके चरण कमलोंको नहीं पूजते वह जीते हुए मरेके समान हैं।

ये नराः वासुदेवस्य सततं पूजने रताः ।
मृता अपि न शोच्यास्ते सत्यं सत्यं मयोदितम् ॥

ब्रह्मवैवर्त्त—पुराणके ब्रह्मखण्ड अध्याय ११में सूर्य्यने कहा है कि गंगाके समान कोई तीर्थ नहीं कृष्णसे परे कोई देवता और शंकरसे परे कोई वैष्णव नहीं।

नास्ति गङ्गासमं तीर्थं न च कृष्णात्परः सुरः ।
न शंकराद्वैष्णवश्च न सहिष्णु धरापरा ॥ १६ ॥

शिव स्वयं कहते हैं कि विष्णुजी की भक्तिसे मैं वैष्णव हुआहूं।

संसारे तुच्छसारेस्मिन्कुतो वै वैष्णवा जनाः ।
अहं हि वैष्णवो जातो विष्णोर्भक्तिप्रसादतः ॥
काश्यां निवसतां ह्यत्र रामरामेति संजयन् ।
तेन पुण्यादियोगेन शिवो वै नात्र संशयः ॥

अध्याय ६ में महादेवजीने श्रीकृष्णजीसे यह वर मांगा कि आप में मेरी भक्ति हो और नौ प्रकारकी जो भक्ति तथा छः प्रकारकी मुक्ति और १८ प्रकारकी सिद्धि योग, तप और वृद्धिको दीजिये।

त्वत्सेवने पूजने च वन्दने नामकीर्त्तने ।
सदोल्लसितमेषां च विरतौ विरतिं लभेत् ॥

अमरत्वं च सर्वाश्च सिद्धयोष्टादश स्मृताः ।
योगास्तपांसि सर्वाणि ददानि च व्रतानि च ॥

इस पर श्रीकृष्ण महाराजने कहा कि सतकोटि कल्प तक मेरी सेवा करो तो तुम तपस्वियों, श्रेष्ठयोगियों, सिद्धों, ज्ञानियों, वैष्णवों, देवताओंके ईश्वर-अमरत्व तुम और अमर-वेदोंके ज्ञाता और मेरे समान पराक्रमी यशस्वी होगे।

मत्सेवां कुरु सर्वेश शर्व सर्वविदांवर ।
कल्पकोटि शतं यावत्पूर्णशश्वदहर्निशम् ॥
वरस्तपस्विनां त्वञ्च सिद्धानां योगिनां तथा ।
ज्ञानिनां वैष्णवाणां च सुराणाञ्च सुरेश्वर ॥
अमरत्वं लभ भव भवमृत्युञ्जयो महान् ।
सर्वसिद्धिञ्च वेदांश्च सर्वज्ञत्वञ्च मद्वरात् ॥

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय २५५ में कहा है कि हे पुरुषोत्तमजी जो आपके बिना अन्य देवताओंको पूजते हैं वे पाखण्डभावको प्राप्त होकर सब संसारमें निन्दित होते हैं।

येर्चयन्ति सुरानन्यां स्त्वां विना पुरुषोत्तम ।
ते पाखण्डत्वमापन्नाः सर्वलोकविगर्हिताः ॥

रजोगुणसे युक्त ब्रह्मा और तमोगुणसे महादेव आदिक देवता पूजने योग्य नहीं हैं शुद्ध सत्वगुणयुक्त आपही ब्राह्मणोंके सेवने योग्य हैं।

अनर्च्या ब्रह्मरुद्राद्या रजस्तमो विमिश्रिताः ।
त्वं शुद्ध सत्वगुणवान्पूजनीयोग्रजन्मनाम् ॥

आपके चरणका जल पितृ, देवता और सब ब्राह्मणोंके सेवने योग्य, सुचित्त देनेवाला और पाप नाश करने वाला है।

त्वत्पाद सलिलं सेव्यं पितॄणां च दिवौकसाम् ।
सर्वेषां भूसुराणां च मुक्तिदं कल्पपाप ॥

आपके भोजनकी जूंठन बची हुई पितृ, देवता और ब्राह्मणोंके सेवन योग्य है और किसीको योग्य नहीं है ।

त्वद्भुतोच्छिष्ट शेषं वै पितॄणां च दिवौकसाम् ।
भूसुराणां च सेव्यं स्यान्नान्येषां तु कदाचन ॥

अन्य देवताओंका अन्न, फूल, जल सब निर्माल्य छूने योग्य नहीं होता है, मदिराके समान होता है ।

इतरेषां तु देवानामन्नं पुष्पं जलं तथा ।
अस्पृश्यन्तु भवेत्सर्वं निर्माल्यं सुरया समम् ॥

जो ज्ञानसे दुर्बल ब्राह्मण एक वारभी महादेव आदिकोंके निर्माल्यको भोजन कराता है वह निश्चय चाण्डाल होता है और करोड़हज़ार कल्प नरककी अग्निसे पचता है । श्रेष्ठ ब्राह्मणों महादेव आदिक देवताओंका निर्माल्य राक्षस, यक्ष और पिशाचोंका अन्न ये सब मदिरा मांसके समान है तिससे ब्राह्मणोंको भोजन न करने चाहियें ।

सकृदेव हियोश्नानि ब्राह्मणो ज्ञानदुर्बलः ।
निर्माल्यं शङ्करादीनां स चाण्डालो भवेद्ध्रुवम् ॥
कल्पकोटिसहस्राणि पच्यते नरकाग्निना ।
निर्माल्यं भोद्विजश्रेष्ठा रुद्रादीनां दिवौकसाम् ॥
रक्षोयक्षपिशाचानां मद्यमांससमं स्मृतम् ।
तद्ब्राह्मणैर्न भोक्तव्यं देवानां भुंजितं हविः ॥

मोहके कारण जो विष्णुके उपरान्त अन्य किसी देवको पूजता है वह पाखण्डी होता है कृष्णके स्मरणसे पापियोंकी भी मुक्ति होती है

तस्मात्त्वमेव विप्राणां पूज्योनान्योस्ति कश्चन ॥
मोहाद्यः पूजयेदन्यान्स पाखंडी भविष्यति ॥

सब देवताओंमें पवित्र पुरुषोत्तम रामचन्द्रजी हैं तिनके छूने और देखनेसे महादेव आदिक निर्म्मल होगये और सबके माता पिता जनार्दनजी हैं।

राघवः सर्वदेवानां पावनः पुरुषोत्तमः ।
स्पृष्टा दृष्टाश्च तेनैव विमलाः शंकरादयः ॥
सर्वेषामपि देवानां पितामाताजनार्दनः ।

श्रीमद्भागवतस्कंद ४ अध्याय २ में लिखा है

भवव्रतधरा ये च ये च तान् समनुव्रताः ।
पाखण्डिनस्तेभवन्तु सच्छास्त्रपरिपंथिनः ।
मुमुक्षवो घोररूपान् हित्वा भूतपतीनथ ।
नारायणकलाः शान्ताः भजन्ति ह्यनसूयवः ॥

जो शिवकी सेवाकरें और जो उनके मतपर चले वे पाखण्डी और सत्यशास्त्रके शत्रु हैं जो मुक्तिके अभिलाषी हैं वे भयानक रूप वाले भूतपतिको छोड़ शान्त और निर्दोष नारायणकी कलाको भजते हैं।

पुराणपरीक्षामें पद्मपुराणसे लिखा है।

सौरस्य गाणपत्यस्य शैवादेर्भूरिमानिनः ।
शाक्तस्यवैष्णवी वारि हस्ते ह्यन्नम्परित्यजेत् ॥
सङ्गं विवर्जयेच्चैव शाक्तादीनान्तु वैष्णवः ।
न कार्य्या प्रार्थना तेभ्यः तेषां द्रव्यममेध्यवत् ॥

सूर्य्य, गणेश, शिव और देवीके भक्तोंका छुआ अन्न और जल

वैष्णव ग्रहण न करे और जब उनके सङ्गमें रहे न उनसे कुछ मांगे क्योंकि उनका धन मेध्यवत् है ।

सब धर्मोंसे त्यागे हुए केवल विष्णुजीका नाममात्र ही कहने वाले जिस गतिको सुखसे प्राप्त होते हैं उसको सब धर्म्म करने वाले नहीं प्राप्त होते हैं ॥ ९९ ॥

सर्वधर्मोज्झिता विष्णोर्नाममात्रैकजाल्पिनः ।
सुखेन यां गतिं यान्ति न तां सर्वेपि धार्मिकाः ॥

ब्रह्माजीका महत्व ।

इनके विषयमें बहुधा पुराणोंमें यह लिखाहै कि पुत्रीके साथ अनुचित व्यवहार करने श्रीकृष्ण महाराजकी गायें चुराने आदिके कारण इनकी पृथक् पूजा बन्द होगई तो भी भविष्यपुराण पूर्व अध्याय १६में लिखा है कि सदा पूजा करनी चाहिये यही जगत्को उत्पन्न करते हैं संहार करने वाले भी यही हैं रुद्र इनके मनसे उत्पन्न हुए हैं, विष्णु वक्षस्थलसे और वेद इसके चारों मुखोंसे निकले हैं सब देवता, दैत्य, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, नागादि इनकी पूजा करते हैं सम्पूर्ण जगत ब्रह्ममय और ब्रह्मामें स्थित है इस लिये ब्रह्माजी सबके पूज्य हैं जो ब्रह्माजीको नहीं पूजता वह राज्य, स्वर्ग और मोक्ष कभी नहीं पाता इनके सेवनसे तीनों पदार्थ मिलते हैं ।

इसकारण प्रसन्नचित्त होकर सदा पूजा करनी चाहिये उनका विना पूजन किये भोजन करनेसे प्राण त्याग देना अथवा नरकमें गिरना अच्छा है जो भक्तिसे सदा ब्रह्माजीका पूजन करे वह मनुष्यरूपमें साक्षात ब्रह्माही है ब्रह्माजीके पूजनसे अधिक कोई पुण्य नहीं यह समझ सदा ब्रह्माजीका अर्चन करता रहे । ऐसे पुरुषके दर्शन और स्पर्शसे २१ कुलोंका उद्धार होजाता है । इनकी पूजा करनेवाला मनुष्य बहुत काल ब्रह्मलोकमें निवास कर मर्त्यलोकमें जन्म लेवे तब चक्रवर्ती

राजा अथवा वेदवेदांगका पारगामी तपोंसे और न यज्ञोंसे कुछ प्रयोजन है केवल ब्रह्माजीकी पूजासे सब पदार्थ मिल सक्ते हैं ॥

कायेन मनसा वाचा जंगमस्थावराणि च ।
पिताय: सर्वदेवानां भूतानां च पितामहः ॥

तस्मादेष सदा पूज्यो यतो लोकगुरुः परः ।
सृजत्येष जगत्कृत्स्नं याति संहरते तथा ॥

रुद्रोऽस्य मनसो जातो विष्णुर्जातोऽस्यवक्षसः ।
मुखेभ्यश्चतुरो वेदा वेदांगानि च कृत्स्नशः ॥

देवाप्सरा स गंधर्वाः स यक्षोरगराक्षसाः ।
पूजयंति सदा वीरिंचिंसुरनायकम् ॥

सर्वंब्रह्ममयं लोकं सर्वंब्रह्माणि संस्थितम् ।
तस्मात्समर्चयेद्ब्रह्मन्यइच्छेच्छ्रेय आत्मनः ॥

यो न पूजयते भक्त्यासुर ज्येष्ठं सुरेश्वरम् ।
न सनाकस्य राज्यस्य न च मोक्षस्य भाजनम् ।

यस्तु पूजयते विरिंचि भुवनेश्वरम् ।
सनाक राज्यमोक्षेषु क्षिप्रं भवति भाजनम् ॥

तस्मात्सौम्यमना भूत्वा यावज्जीवं प्रतिज्ञया ।
अर्चयित्वा सदा देवामापन्नोपि नरानृप ॥

वरं देहपरित्यागो वरं नरकं संभव ।
नत्वे वा पृज्य भुंजति देवं वै पद्मसंभव ॥

सदा पूजयते यस्तु वीर भक्तया पितामह ।
मनुष्यचर्मणा नद्धः सवेधा नात्र संशय ॥

नहि वेधार्चनात्किंचित्पुण्यमभ्यधिकं भवेत् ।
इति विज्ञाय यत्नेन पूजनीयः सदाविधिः ॥
यो ब्रह्माणं द्वेष्टिमोहात्सर्वदेव नमस्कृतम् ।
नमो नरकगामीस्यात्तस्य संभाषणादपि ॥
ब्रह्मणार्चां प्रतिष्ठाप्य सर्वयत्नैर्विधानतः
यत्पुण्यं फलमाप्नोति तदेकाग्रमनाः शृणु ॥
सर्वयज्ञतपोदान तीर्थवेदेषु यत्फलम् ।
तत्फलम् कोटिगुणितं लभेद्बुधः प्रतिष्ठया ॥

देवजीके गुण ।

देवीभागवत—स्कंद ५ अध्याय १में लिखा है आकार ब्रह्मा का, उकार हरिका, मकार रुद्रका, अर्द्धमात्रा भगवतीका स्वरूप है एसीसे एक दूसरेकी अपेक्षा उत्तरोत्तर उत्तम है अर्थात् ब्रह्मासे विष्णु, विष्णुसे शिव, शिवसे देवी उत्तम है, इसीसे सर्वशास्त्रमें देवी सबसे उत्तम गिनी जाती है ।

अकारो भगवान्ब्रह्माप्युकारः स्याद्धरिः स्वयम् ।
मकारो भगवान्रुद्रोप्यर्द्धं मात्रा महेश्वरी ॥ उत्तरोत्तर भावनाऽप्युत्तमत्वं स्मृत वुधैः ॥

इसके अतिरिक्त जब पांडव लोग विराट्नगरमें प्रवेश करने लगे तब युधिष्ठिर महाराजने जो देवीकी स्तुतिकी उसके पाठसे विदित होता है कि वही जगत्को स्वामिनी और सबकी रचनेवाली है।

ब्रह्मवैवर्तपुराण—प्रकृति खण्ड अध्याय ३४ में कहा है कि दुर्गा और विष्णुकी मायामें सब शक्तियां लीन होजाती हैं ।

दुर्गायां विष्णुमायाय विलीन सर्वशक्तयः ।

देवीभागवत स्कंद १ के ४ अध्यायमें लिखा है कि विष्णुजीने कहा कि यद्यपि सब जानते हैं ब्रह्मा सृष्टिकर्त्ता और हम पालनकर्त्ता हैं और शिव संहारकर्त्ता हैं तो भी वेदपारगामीलोग कहते हैं कि यह तीनों शक्तिके आश्रय हैं सच है कि राजसी शक्ति उस भगवती की तुममें सात्विकी हममें और तामसी रुद्रमें जिसके विना हम, तुम और शंकर अपना २ कार्य्य कर नहीं सके।

यद्यपि त्वां शिवं मां च स्थितिसृष्ट्यंत कारणम्।
ते जानन्ति जनाः सर्वे स देवासुर मानुषाः ॥४५॥

स्रष्टा त्वं पालकश्चाहं हरः संहारकारकः।
कृताः शक्त्येति संतर्कः क्रियते वेदपारगैः॥

जगत्संजनने शक्तिस्त्वयि तिष्ठति राजसी।
सात्विकी मयिरुद्रे च तामसी परिकीर्त्तिता॥

तया विरहितस्त्वं न तत्कर्मकरणे प्रभुः।
नाहं पालयितुं शक्तः संहर्तुं नापि शङ्करः॥ ४८॥

पद्मपुराण पञ्चम पातालखण्ड अध्याय २२में लिखा है कि तुम्हारा जन्म कभी नहीं होता और न है जगत्पते न कभी तुम्हारा अंत ही होता है न है विभो वृद्धि क्षय व बन्धन तुममें है।

तव जन्म तु नास्त्येव नां तस्तव जगत्पते।
वृद्धिक्षयपरीणामास्त्वयि सत्ये वनो विभो॥

मार्कण्डेयपुराण जिल्द २ अध्याय ८१ में लिखा है कि:—

साविद्या परमा मुक्तेर्हेतुर्भूता सनातनी।
संसारबन्धहेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी॥

वह भगवती परमविद्याका स्वरूप और मुक्तिका कारण और सनातनी है वही भगवती संसारके बन्धनका कारण और सम्पूर्ण ईश्वरोंकी ईश्वरी है।

देवीभागवत स्कन्द ४ अध्याय १८में विष्णु महाराजने कहा है कि न मैं स्वतन्त्र हूं न ब्रह्मा और न शिव इसी प्रकार इन्द्र, अग्नि, यम, त्वष्टा, सूर्य्य और वरुण भी स्वतन्त्र नहीं यह सब स्थावर, जङ्गम जगत् योगमायाके वश है।

नाहं स्वतन्त्र एवात्र न ब्रह्मा न शिवस्तथा ।
नेन्द्रोऽग्निर्नयमस्त्वष्टा न सूर्यो वरुणस्तथा ॥
योगमायावशे सर्वमिदं स्थावरजङ्गमम् ।

देवीभागवत स्कन्द १२ अध्याय ८में लिखा है कि विष्णुकी उपासना नित्य नहीं न वेदने कहीं विधान किया है न विष्णुकी दीक्षा नित्य है और शिवकी उपासना भी इसीप्रकार नित्य नहीं है गायत्री की उपासना नित्य है और सब वेदोंने इसकी आज्ञा दी है इस गायत्री को छोड़कर जो विप्र विष्णु अथवा शिवकी उपासनामें प्रीति करते हैं वह सर्वथा नरकको जाते हैं।

न विष्णूपासना नित्या वेदोक्ता तु कर्हिचित् ।
न विष्णुदीक्षा नित्यास्ति शिवस्यापि तथैव च ॥
गायत्र्युपासना नित्या सर्ववेदैः समीरिता ।
यया विनात्वधः पातो ब्राह्मणस्यास्ति सर्वथा ॥

और स्कन्द १२ अध्याय ९में लिखा है कि गौतमजीने ब्राह्मणों को शाप दिया और कहा था कलियुगमें तुम कुम्भीपाक नरकसे छूटकर जन्म लोगे और वेदविमुख होगे इस कारण हे राजन्! कृष्णजी के परमधाम जाने और कलियुगके आरम्भ होनेपर कुम्भीपाकनरक से छूटकर वह लोग जो पहिले गौतमके शापसे दग्ध थे संसारमें ब्राह्मण उत्पन्न हुए। जो कभी सन्ध्या नहीं करते थे गायत्रीकी भक्ति नहीं, वेदसे हीन और पाखण्ड मतके अनुयायी अग्निहोत्रादि जो सत्कर्म हैं उनको नहीं जानते। कोई २ अपने शरीरोंको गरम मुद्राओंसे अङ्कित कराते हैं, कोई कपाली, कोई वाममार्गी, कोई बौद्ध, कोई जैन होते हैं, पण्डित होकरभी सारे दुराचारोंको फैलाते हैं, पराई स्त्रियों

पर भी चलाते हैं और दुराचारमें लगे हुए हैं ऐसे सब लोग अपने कर्मोंसे कुम्भीपाकमें जायँगे इसलिये पूरे जीसे देवीकी सेवा करनी योग्य है, न विष्णुकी उपासना नित्य है न शिवजीकी, शक्तिकी उपासना नित्य है जिसके विना मनुष्यकी अधोगति होती है।

तप्तमुद्राङ्किता केचित् कामाचाररता परे।
कापालिकाः कौलिकाश्च बौद्धा जैनास्तथा परे।
पण्डिता अपि ते सर्वे दुराचारप्रवर्त्तकाः॥
लम्पटा परदारेषु दुराचरणपरायणाः।
कुम्भीपाकं पुनः सर्वे यास्यन्ति निजकर्म्मभिः॥
तस्मात् सर्वात्मना राजन् सं सेव्या परमेश्वरी।
न विष्णूपासना नित्या न शिवोपासना तथा॥
नित्या चोपासना शक्तेर्या विना तु पत।

इसके उपरान्त ब्रह्मादि सर्व्वदेव उस सनातनी भगवतीका ध्यान करते हैं इससे सबको उचित है सब उसको ध्यावे अर्थात् पूजा करें।

अब श्रीमान् पण्डितजी ब्रह्मा और विष्णु शिवकी उत्पत्तिके विषयमें संक्षेपसे सुनलीजिये।

देखिये शिवपुराण वायुसंहिता—उत्तरार्द्ध अध्याय ५ श्लोक २४ में लिखा है।

गुणेभ्यः क्षोभ्यमाणेभ्यो गुणेशाख्यास्त्रिमूर्त्तयः॥

सत, रज, तम जिनसे यह सब जगत् व्याप्त है गुणोंके क्षुभित होनेसे गुणेशकी तीन मूर्त्ति हैं।

मत्स्यपुराण—अध्याय २ श्लोक १६ में लिखा है।

गुणेभ्य क्षोभमाणेभ्यस्त्रयो देवा विजज्ञिरे।
एक मूर्तिस्त्रयो भागा ब्रह्माविष्णुमहेश्वराः॥

अर्थात् सत, रज, और तम इनतीनों गुणोंके हिलनेसे ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर तीनों देव उत्पन्न हुए परन्तु वास्तवमें इनकी एक ही मूर्त्ति है।

शिवपुराण सनत्कुमार संहिता अध्याय २ के श्लोक ३५ में लिखा है कि ब्रह्मा और विष्णु यह दोनों शंकर से उत्पन्नहो कल्प २ में मोहित हो जगत्की रचना करते हैं।

ब्रह्माविष्णुश्च द्वा वेतावुद्भूतौ शंकराच्युतौ।
कल्पे कल्पे तु तत्सर्वं सृजतो मोहयञ्जगत् ॥

और अध्याय ८के श्लोक ५७में लिखा है कि शिवजीने प्रथम सृष्टि करनेकी इच्छासे प्रथम प्रकृतिको उत्पन्नकर फिर उससे विष्णुसंहिता ब्रह्माजी उत्पन्न हुए।

सृष्टिन्तु प्रथमं कुर्वन्प्रकृतिनाम नामतः।
तस्माद्ब्रह्मा प्रकृत्यास्तु उत्पन्नः सह विष्णुना ॥

ज्ञानसंहिता अध्याय ४ में लिखा है जिस कारणमें सम्पूर्ण प्राणियोंमें तुल्यरूप हूं इसी कारण हे पिता यह तुममें इस रुद्रका सन्मान करो इस प्रकृतिसेही लक्ष्मी जगत्के पालन और शोभाके निमित्त अंशसे प्रकट होगी उसीके अंशसे ब्राह्मणी और उसी अंशसे काली होगी और कार्य्यके निमित्त यह अनेक रूपताको प्राप्त होगी हे विष्णु तुम लक्ष्मीके का आश्रयकर जगत् पालन है ब्रह्मन् तुम सरस्वतीदेवीआश्रय सृष्टिउत्पन्नकरनेका कार्य्य करो मैं काली शक्तिके आश्रित हो जगत्का संहार करूंगा ॥

समोहं सर्वभूतेषु पालयैनं पितामह।
एतस्याः प्रकृतेर्लक्ष्मीर्ह्येतदंशा भविष्यति ॥
ब्रह्माणी च तदंशा च महाकाली तदंशिका।
भविष्यति परानूनं कार्यार्थेऽनेकतां गता ॥

त्वं च लक्ष्मीमुपाश्रित्य कार्यं कर्तुमिहार्हसि ।
ब्रह्मंस्त्वं च स्वरां देवीं कर्तुं कार्यमनंतकम् ॥
अहं कालीं समाश्रित्य करिष्ये कार्यमुत्तमम् ।

ज्ञानसंहिता अध्याय १७ में लिखा है मैं ब्रह्म और हर सम्पूर्ण पुरातन देवता सूर्य्य चन्द्रमा और सम्पूर्ण शुभदायक ग्रह पर्वत नदी वृक्ष कुवेर ब्रह्मासे लेकर तृणपर्यन्त जो कुछ दीखता यह सब शंकरसे उत्पन्न हुआ है ।

अहं ब्रह्माहरश्चैव देवाः सर्वे पुरातनाः ।
सूर्यश्च चंद्रमाश्चैव ग्रहाः सर्वे शुभावहाः ॥
तत्सर्वं शिवतो जातं नाऽत्र कार्या विचारण ।

लिङ्गपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ६में लिखा है जो सब जीवोंके स्वामी हैं तमोगुणकरके कालरुद्रको, रजोगुणसे ब्रह्माको, सत्वगुण करके विष्णुको उत्पन्नकरते हैं और निर्गुण रहनेसे साक्षात् महेश्वर हैं

तमसा कालरुद्राख्यं रजसा कनकाण्डजम् ।
सत्वेन सर्व्वगं विष्णो निर्गुणत्वे महेश्वरम् ॥

और अध्याय ७२ में लिखा है कि शिव ब्रह्माण्डसे निकले उसने रुधिरके अपने बायें अङ्गसे लक्ष्मी और विष्णु और दक्षिण अङ्गसे सरस्वतीयुक्त ब्रह्माको उत्पन्न किया ॥

तस्य वामाङ्गजो विष्णुः सर्वदेव नमस्कृतः ।
लक्ष्म्या देव्याह्यभूद्देव इच्छया परमेष्ठिनः॥ ६४ ।
दक्षिणङ्ग भवो ब्रह्मा सारस्वत्या जगद्गुरुः ।
तस्मिनण्डे इमे लोका अन्तर्विश्वमिदं जगत् ॥६५॥

महाभारत अनुशासनपर्व अध्याय १४७ में शिवजी महाराज ने कहा है श्रीवत्सचिह्नधारी हृषीकेश सब देवताओंके पूज्य हैं, ब्रह्मा उनके उदर, और मैं, उनके शिरसे प्रकट हुआ हूं, उनके केशोंसे

अग्नि और रोमावलीसे समस्त सुरासुर उत्पन्न हुए । ऋषिगण समस्त शाश्वत लोकोंकी उनके देहसे उत्पति हुई है ।

श्रीवत्साङ्को हृषीकेशः सर्वदैवतपूजितः ।
ब्रह्मा तस्योदरभवस्तथा चाहं शिरोभवः ॥

और अध्याय १४में लिखा है कि महादेवही सर्वतत्व विधानज्ञ प्रधानपरमपुरुष हैं जिसके दक्षिण अंगसे लोकविधाता पितामह और वाम अंगसे लोकरक्षाके निमित्त विष्णुको उत्पन्न किया है।

योऽसृजद्दक्षिणादङ्गाद् ब्रह्माणं लोकसम्भवम् ।
वामपार्श्वात्तथा विष्णुं लोकरक्षार्थमीश्वरः ॥

पद्मपुराण पंचमपातालखण्ड उत्तरार्द्ध अध्याय ५में लिखा है कि गुणोंसे पृथक् अक्षर नाशरहित जो सदाशिव हैं उनकी सृष्टि करने की इच्छा हुई तब उन्होंने तीनों गुणोंको पृथक्कर सबोंमें समान शक्ति बांट अपने दक्षिण अंगसे ब्रह्मा नाम पुत्रको उत्पन्न किया व वाम अंगसे हरिनामको व पीठसे महेशनाम पुत्रको इस प्रकारसे उन्होंने तीन पुत्रोंको उत्पन्न किया आप कौन हैं तब सदाशिवने कहा कि तुम पुत्रहो मैं पिताहूं ।

य एकः शाश्वतो देवो ब्रह्मवद्यः सदाशिवः ।
त्रिलोचनो गुणाधारो गुणातीतोक्षरोव्ययः ॥
सिसृक्षास्य जाताथ वीक्ष्यात्मस्थं गुणत्रयम् ॥
वेदत्रयमिदं ज्ञेयं गुणत्रयमिदं हि यत् ॥
पृथक्कृत्वात्मनस्तात तत्र स्थानं विभज्य च ।
दक्षिणांगे सृजत्पुत्रं ब्रह्मणं वामतो हरिम् ॥
पृष्टदेशो महेशानं त्रीन्पुत्रान् सृजद्विभुः ।
जातमात्रास्त्रयो देवा ब्रह्माविष्णुमहेश्वराः ॥

ब्रह्माण्डपुराण में लिखा है ।

ब्रह्माविष्णवग्निशुक्रार्क जलभूमिपुरोगमाः ॥
सुरासुराःसंप्रसूतास्ततः सर्वे महेश्वरि ॥

अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, अग्नि, शुक्र, सूर्य्य, जल, भूमि आदि सब उन्हीं शिवसे उत्पन्न हुए हैं ।

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण के ३ अध्यायमें लिखा है कि,

आविर्बभूवतत्पश्चात् स्वयं नारायणाः प्रभुः ।
श्यामो युवा पीतवासा वनमाली चतुर्भुजः ॥
श्रीकृष्णपुरतः स्थित्वा तुष्टावंतपुटांजलिः ।

जब श्रीकृष्णसे त्रिगुण महत्तत्व, अहंकार पञ्चतन्मात्रा रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द उत्पन्न होचुके तो उसके पीछे आप नारायण जो प्रभु हैं प्रकट हुये वह कैसे हैं श्यामवर्ण जवान और पीले कपड़े वाले, वनमाली और चार भुजों वाले ऐसे विष्णुने हाथ जोड़ कर श्रीकृष्णके आगे खड़े होकर १० से १३ श्लोक तक स्तुति की और ११ श्लोकमें लिखा है कि विष्णुजीके पीछे श्रीकृष्णजीकी बाईं पांसूसे शुद्धस्फटिक जैसे प्रकाश वाला नंगे बदन पञ्चमुख (महादेव) प्रकट हुए ।

आविर्बभूव तत्पश्चादात्मनो वामपार्श्वतः ।
शुद्धस्फुटिकसंकाशः पञ्चवक्त्रो दिगम्बरः ॥

फिर महादेवने पुलकाङ्ग हो और आंखोंमें पानी भर गद्गदवाणी से श्रीकृष्णके आगे खड़े होकर स्तुतिकी इसके पश्चात् श्रीकृष्णके नाभि कमलसे महातपस्वी वृद्धकमण्डलुधारी (ब्रह्मा) प्रकट हुआ ।

पुलकाङ्कित सर्वाङ्गः साश्रुनेत्रः सगद्गदः ।
श्रीकृष्णपुरतः स्थित्वा तुष्टावतं पुटाञ्जलिः ॥
आविर्बभूव तत्पश्चात् कृष्णस्य नाभिपङ्कजात् ।
महातपस्वी वृद्धश्च कमण्डलुधरोवरः ॥

क्रियायोगसार अध्याय २ में लिखा है कि श्रेष्ठ पुरुष महाविष्णु जी आत्मासे दहिने आत्माको प्राप्त होकर इस संसारकी सृष्टिके लिये ब्रह्मारूप रचते हुए ॥ २ ॥

सृष्ट्यर्थमस्य जगतः ससर्ज ब्रह्मसंज्ञकम् ।
दक्षिणाङ्गत आत्मानमात्मा श्रेष्ठपूरुषः ॥

उसके पीछे पृथ्वीके स्वामी महाविष्णुजी संसारके पालनके लिये बायें अंशसे अपना अंश केशव विष्णुजीको रचते हुए ।

ततस्तु पालनार्थाय जगतो जगतीपतिः ।
विष्णुं ससर्ज वामांशान्निजांशं केशवं मुने ॥

तदनन्तर संसारके संहारके लिये लक्ष्मीके स्थान प्रभुजी मध्य अङ्ग से नाशरहित महादेवजीको रचते भये ।

अथ संहरणार्थाय जगतो रुद्रमव्ययम् ।
मुने ससर्ज मध्यांगात्कृत पद्मालयः प्रभुः ॥

भविष्यपुराण अध्याय ६२में लिखा है कि सूर्य्यनारायणके दोनों हाथोंसे ब्रह्मा, विष्णु और उनके ललाटसे रुद्रकी उत्पत्ति हुई ।

कराभ्यां यस्य देवेशौक विष्णूलोकपूजितौ ।
उत्पन्नौ द्विजशार्दूलल्लटात्त्रिपुरांतकः ॥

पद्मपुराण सप्तम क्रिया योगसार अध्याय १५ में लिखा है कि ब्रह्मा, महादेव और इन्द्रादिक सब देवता विष्णुजीके अंशसे हैं ।

ब्रह्मशंकर रुद्राद्य विष्णावंशाः सकलाः सुराः ।

पद्मपुराण पञ्चम पातालखण्ड पूर्वार्द्ध अध्याय ६९ में शङ्कर ने पारवतीजीके प्रश्न करनेपर कहा है कि श्रीकृष्णजीके अंशसे कोटि २ ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर उत्पन्न होते हैं ।

तत्कला कोटि कोट्यंशा ब्रह्माविष्णुमहेश्वरा ॥

ब्रह्मवैवर्त्तपुराणके श्रीकृष्ण जन्मखण्डके अध्याय ४, ५, ६, ७ में लिखा कि श्रीकृष्ण महाराजसे ब्रह्मा, विष्णु और महेश उत्पन्न हुए।

और मत्स्यपुराण अध्याय ४ श्लोक २७में लिखा है कि त्रिशूलधारी महादेवको ब्रह्माजीने उत्पन्न किया जैसा कि:—

ततोऽसृजद्वाम देव त्रिशूलवरधारणम्।

अ० ४ श्लोक २७

महाभारत—वनपर्व अध्याय २०३ में लिखा है कि सोते हुए विष्णुकी नाभिसे सूर्य्यके समान प्रकाशवाला कमल उत्पन्न हुआ उससे ब्रह्मा उत्पन्न हुए।

महाभारत शान्तिपर्व—अध्याय २७ में भगवान्‌की नाभिसे सूर्य्यके समान एक दिव्य पद्म उत्पन्न हुआ हे तात! सब लोकोंके पितामह भगवान् ब्रह्मा सब दिशाओंको प्रकाशित करते हुए उसी कमलसे उत्पन्न हुए॥

देवीभागत स्कंद १ अध्याय २ में लिखा है ब्रह्मा सृष्टि करते हैं और वह ब्रह्मा विष्णुके नाभिकमलसे उत्पन्न होते हैं॥

इन सबके अतिरिक्त ब्रह्माको गौरवर्ण और चार मुंह वाला विष्णु श्यामजी वर्ण और चतुर्भुज शिवजी गौरवर्ण त्रिनेत्र फिर बतलाइये तीनों देवा एकही सेवा कैसी—

पण्डितजी—बस लालाजी समाप्त कीजिये।

सेठ—ओ३म् शम्।

ततस्तस्मिन्महाबाहो प्रादुर्भूते महात्मनि।
भास्करप्रतिमं दिव्यं नाभ्यां पद्ममजायते॥

पण्डितजी और अन्य महाशय सब चलदिये।

सेठजी—हाथ जोड़ नमस्ते की अन्य महाशयोंको यथायोग्य

पण्डितजी—आयुष्मान् कहा।

अन्य सभ्य पुरुषों ने—लालाजी को यथायोग्य कहा।

इति चतुर्थः परिच्छेदः।

पञ्चम परिच्छेदः।

श्रीमान् पण्डितजी अन्य सभ्यों सहित आपधारे।

आर्य्यसेठ—किसी आवश्यक कार्य्यके लिये बाहर गए थे आते ही श्रीमान् और अन्य सज्जनोंको नमस्ते की—

पंडितजी ने—आयुष्मान् और अन्य महाशयोंने यथायोग्यकी

आर्य्यसेठ—मैं बीच मिनटकी आज्ञा चाहता हूं।

पंडितजी—बहुत अच्छा।

आर्य्यसेठ—अपने कार्य्यसे निवृत्त होकर आये और निवेदन किया आज मैं आपको ऐसी कथायें सुनाता हूं जिससे शिव, विष्णु, आदिका बड़प्पन एक दूसरेसे स्पष्ट प्रकट होता है कृपा कर सुनिये।

महादेवजी की अपेक्षा विष्णु महाराजका बड़प्पन

(महादेवका विष्णुकी तपस्या करना और वर मांगना)

पद्मपुराण—षष्ठ उत्तर खण्ड अ० २ में महादेवजी नारदजीसे कहते हैं कि एक समय मैंने बदरिकाश्रम पर बड़ी तपस्या की तब भक्तोंपर दया करने वाले नारायण हमसे कहने लगे कि हम तुमसे बड़े प्रसन्न हैं वर मांगो जो २ इच्छा हो सो हम देंगे तुम कैलासके स्वामी साक्षात रुद्रहो तब महादेवजी ने कहा कि यदि आप हमसे प्रसन्न हैं और वर देनेकी इच्छा है तो दो वर दीजिये प्रथम आपकी भक्ति सदा हो और मुक्तिराजमें होऊं सम्पूर्ण लोग यह कहें कि यह सदैव भक्त है और तुम्हारे प्रसाद से हे देवोंके स्वामी मैं उन मनुष्यों को जो मुझको भजेंगे तिनको निस्सन्देह मुक्ति देनेवाला होऊं और विष्णुका भक्त संसारमें प्रसिद्ध होऊं जिसको हम वर देवें उसकी मुक्ति

होजावे मैं जटा धारण किये भस्म अंगोंमें लगाये हुये आपके समीप रहूं और आपके चरणोंके प्रसादसे संसारमें प्रसिद्ध होऊं ।

यत्र विश्वेश्वरो देवस्तिष्ठत्येव न संशयः ।
एकस्मिन्नवसरे ब्रह्मन् सुतपस्तप्तवानहम् ॥ ११ ॥

तदा नारायणो देवो भक्तानां हि कृपाकरः ।
अव्ययः पुरुषः साक्षादीश्वरो गरुड़ध्वजः ॥
सुप्रसन्नो ब्रवीन्मां वै वरं वरय सुव्रत ॥ १२ ॥

श्रीनारायणउवाच ।

यद्यदीप्ससि देवत्वं तं तं कामं ददाम्यहम् ।
त्वं कैलासविभुः साक्षाद्रुद्रो वै विश्वपालकः ॥१३॥

रुद्रउवाच ।

अलं गृह्णामि भोदेव सुप्रसन्नो जनार्दन ।
द्वौ वरौ मम दीयेतां यदि दातुं त्वमिच्छसि ॥१४॥

तव भक्तिः सदैवास्तु भक्तराजो भवाम्यहम् ।
सर्वेलोका ध्रुवं त्वेव मयं भक्तः सदेव हि ॥ १५ ॥

तव प्रसादाद्देवेश मुक्तिदाता भवाम्यहम् ।
ये लोकामां भजिष्यन्ति तेषां दाता न संशयः ॥१६॥

विष्णुभक्त इतिख्यातो लोके चैव भवाम्यहम् ।
यस्याहं वरदाता तु तस्य मुक्तिर्भवेत्प्रभो ॥ १७ ॥

जटिलो भस्मलिप्ताङ्गो ह्ययं वै तव संनिधौ ।
तव चरणप्रसादेन लोके ख्यातो भवाम्यहम् ॥१८॥

महादेवजीका कपाली होकर विष्णुमहाराजके पासजा यत्न पूछना वैसाहीकर पवित्र होना ।

वामनपुराण अध्याय ३में पुलिस्त्यने नारदसे कहा कि हे नारद! पीछे दारुणरूप कपाल जब महादेवके करतलमें स्थित रहा तब हे ब्रह्मन् ! चिन्तासे व्याकुलरूप इन्द्रियों वाला महादेव सन्तापको प्राप्त हुआ और पीछे रौद्ररूपवाली और नीलोजनके समूहके समान कान्ति वाली, लालरङ्गके बालोंवाली, भयानक, ऐसी ब्रह्महत्या महादेवके समीप गई । उसको देख महादेवजी पूछने लगे कि हे रौद्र ! तू कौन है ? और किस प्रयोजनसे आई हो ? तब उसने कहा कि मैं ब्रह्महत्या आई हूं । हे त्रिलोचन ! मेरेको ग्रहण कीजिये ।

ऐसा कहकर ब्रह्महत्या त्रिशूलको हाथमें लेनेवाले रुद्र और सम्यक् प्रकारसे दग्ध हुए शरीरवाले महादेवजीके शरीरमें प्रवेश करती भई।

इत्येव मुक्त्वा वचनं ब्रह्महत्या विवेशतम् ।
त्रिशूलपाणिनं रुद्रं सं प्रतापिता विग्रहम् ॥ ५ ॥

पीछे ब्रह्महत्यासे युक्त हुआ महादेव बदरिकाश्रममें गया और वहां नारायणको नहीं देखा तब चिन्ताशोकसंयुक्त महादेव यमुना में स्नान करनेको गये तब यमुनाका जल सूख गया। फिर वह सरस्वती नदीमें स्नान करनेको गये वह भी अन्तर्द्धान हुई । फिर महादेव पुष्कर और मागधारण्य और सैंधवारण्य इन तीर्थोंमें जाके इच्छापूर्वक स्नान करते भये फिर नैमिषारण्य और धर्मारण्यमें स्नान किये परन्तु रौद्ररूपवाली हत्या नहीं छुटी । फिर अनेक नदी और तीर्थ और पवित्र आश्रमों और देवस्थानोंमें स्नान और दर्शनोंको भी योगसे युक्त हुआ महादेव करता भया परन्तु ब्रह्महत्याके पापसे नहीं छूटा फिर कुरु जङ्गलमें हाथमें चक्र धारण करनेवाले गरुड़पर सवार विष्णुको देखा फिर महादेवने कहा कि हे देवताओंके नाथ ! नमस्कार हो इसी प्रकार बहुतसी स्तुति की और कहा कि आप मुझे

पापरूपी बन्धन से हे केशव ! मुक्त करो और जो ब्रह्महत्यासे उपजा हुआ पाप मेरे शरीरमें स्थित हुआ है, तिसका नाश करो मैं दग्ध हुआ हूं। मैं नष्ट हुआ हूं। मैं विना विचार कर्म करनेवाला हूं। हे नाथ ! मेरेको आप पवित्र करें आपको नमस्कार है तब भगवान्‌ने कहा कि हे महेश्वर ! मधुर शब्दोंवाली, ब्रह्महत्याको नाश करने वाली, शुभको देनेवाली, पुण्यको बढ़ानेवाली ऐसी मेरी वाणीको सुनो जहां योगशायी नामसे प्रख्यात प्रयागमें नित्य वसता है तिसके दहिने पैरसे निकली हुई पापोंको हरनेवाली वरन और असीके नामसे विख्यात दोनों नदियोंके बीचमें जो देश है वह योगशायीका क्षेत्र है त्रिलोकीमें श्रेष्ठ और सब पापोंका नाश करनेवाला तीर्थ है जिसकी अनेकान् प्रकारसे प्रशंसाकी है वहां सब पापोंका नाश करनेवाला लोल नामसे विख्यात ऐसा सूर्य्य वसता है और जो दशाश्वमेध तीर्थ कहाता है जहां मेरे अंशवाले केशव भगवान् वसते हैं हे सुर श्रेष्ठ ! तहां गमन करके पापोंसे रहित हूजियेगा।

इस प्रकार भगवान्‌के वचन सुन महादेवजी शिरसे नमस्कारकर पापोंके दूरकरनेके लिये वेगसे काशीपुरीको गमन करते भये। वहां पहुंच दशाश्वमेधतीर्थ सहित लोल नामक सूर्य्यके दर्शनकर, तीर्थोंमें स्नानकर, पापोंसे रहितहो महादेव केशव भगवान्‌को देखने के लिये समीप गये और केशवभगवान्‌को देख नमस्कार कर महादेव यह वचन कहते हुये कि हे देव आपके प्रसादसे ब्रह्महत्याका नाश हुआ।

केशवं शंकरो दृष्ट्वा प्रणिपत्येदमब्रवीत्।
त्वत्प्रसादाद्धृषीकेश ब्रह्महत्याक्षयंगता ॥

परन्तु हेदेव ! यह कपाल अर्थात खोपरी मेरे हाथसे नहीं छुटी सो मैं इसके कारणको नहीं जानता आप मेरे लिये कहनेको योग्य हैं। तब केशवने कहा इसका सम्पूर्ण कारण कहता हूं मेरे आगे यह दिव्य और कमलों करके युक्त और पवित्र देव गन्धर्वोंसे पूजित ऐसा

ह्रदरूपी तीर्थ है इसतीर्थमें हे महादेव स्नानकर, स्नान करते ही कपाल छुट जावेगा।

यौऽसौमाग्रतो दिव्यो ह्रदः पद्मोत्पलैर्वृतः।
एष तीर्थवर पुण्यो देवगंधर्वपूजितः॥ ४७॥

एतस्मिन्प्रवरे पुण्ये स्नानं शोभनमाचर।
स्नानमात्रस्य चाद्यैव कपालं परिमोक्ष्यति॥ ४८॥

पीछे हे रुद्र कपाली नामसे विख्यात होजावेगा और कपाल मोचन प्रख्यात होगा केशवके वचनको सुन उस कपालमोचनतीर्थमें विधिपूर्वक स्नान किये और स्नान करते ही महादेवजीके हाथसे कपाल छुट गया और वह स्थान कपालमोचनतीर्थके नामसे प्रसिद्ध हुआ।

एवमुक्तः सुरेशेन केशवेन महेश्वरः।
कपालमोचने सस्नौ वेदोक्तविधिना मुने॥
स्नातस्य तीर्थेत्रिपुरांतकस्य-
परिच्युतं हस्ततलात्कपालम्।
नाम्नाबभूवाथ कपालमोचनं-
तत्तीर्थवर्यं भगवत्प्रसादात्।

और्वनाम महान् ऋषिका महादेवजीको शाप देना और फिर इन्हींके बताए उपायसे शापमोचन होना।

वाराहपुराण उत्तरार्द्ध अ० १४१ में लिखाहै। कि गोनिष्क्रमण नाम स्थानपर और्वनाम महान् ऋषिने सत्तर कल्प विष्णुका तप किया एक दिन कमलके पुष्पोंको लेनेके लिये हरिद्वार गया। उसी समय महादेवजी उस स्थानपर पहुंचे उनके तेजसे वह स्थान भस्म होगया और शिवजी हिमालयको चलेगये।

इधर और्व ऋषि गंगास्नानादिसे निवृत्त हो पुष्प ले अपने स्थान पर गये तो निजस्थानको कुटीसमेत भस्म होता देख क्रोधियुक्त हो कहने लगे कि जिसने हमारे आश्रमको दग्धकिया है वह भी अनेक दुःखोंसे संतप्त संसारमें भ्रमण करता हुआ क्षणमात्र भी सुख न पावेगा इस भांति शाप देकर और्व ऋषि तपमें लगगये ।

येनैष चाश्रमो दग्धो बहुपुष्पफलोदकः ।
सोऽपि दुःखेन सन्तप्तः सर्व्वलोकान् भ्रमिष्यति॥१६॥

हे धरणि ! शिवजी परमेश्वर हैं, साक्षात् लोकके नाथहैं तथापि ब्राह्मणकाशापतो धारण करलेहि बना । इस कारण वह भ्रमण करने लगे । तबतो देवताओंको बड़ी चिन्ता हुई और विष्णु भी दुःखी हुए क्योंकि वह दोनों एकही रूप हैं तब पार्वतीजीने विष्णुजीसे कहा कि आप और शिव दोनों दुःखी होरहे हैं इससे निवृत होनेके लिये आप और्व ऋषिके पास जाकर अपराध क्षमा कराओ क्योंकि विना उनकी कृपाके यह दुःख दूर नहीं होगा ।

पार्वतीजीकी वाणी सुन दोनों उनके समीप गये विनयपूर्वक शांतिकर निज क्लेशसे निवृत्त होनेकी प्रार्थना की ।

ततो नारायणं गत्वा सहतेन तमौर्वकम् ।
विज्ञापयामो रुद्रस्य शापोऽयं विनिवर्ततताम् ॥
सन्तप्ताः स्म वयं सर्वे तस्माच्छापं निवर्त्तय ।

तब प्रसन्नहो मुनिने कहा कि क्लेश जबही शांत होगा जब सुरभी नाम गौके दुग्धोंसे स्नान करोगे ।

और्वोऽप्युवाचनोक्तं मे अनृतन्तु कदाचन ।
सुरभीगणमानीय गत्वैतं स्नापयन्तु वै ॥
रुद्राशापोत्तिवृतः स्यात्तेनैव किल नान्यथा ॥

इसके पश्चात् विष्णुने सातसौ गौओंको उत्पन्न किया उनके दूधसे शिव और विष्णुने स्नानकर क्लेशसे छूट सुखको प्राप्त भये ।

एतस्मिन्नन्तरे देवि ! मया गावोऽवतारिताः ।
सप्तसप्तति कल्याणि सौरभे या महोजसः ॥
तेनाप्लावितदेहाश्च परां निवृतिमागताः ॥

महादेवजीको युद्धमें श्रीकृष्ण महाराजका जीतना और पार्वतीजीकी प्रार्थना करनेपर अस्तुसे मुक्ति करना फिर शिवजीकी प्रार्थना करनेपर बाणासुरका छोड़ना ।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंड अध्याय २५०में लिखा है कि जब श्रीकृष्ण महाराजके पुत्र अनिरुद्धजीको पकड़ ले गये और बाणासुर से संग्राम हुआ तब उसने नागपाश से उनको फंसा लिया जिसका सब वृत्तांत नारदने कृष्ण महाराजसे जाकर कहा तब वह सेना समेत युद्ध स्थानपर गये—वहां महादेवजी उसकी सहायतापर थे जिनको देख सेनाको पीछे छोड़ कृष्ण बलभद्र और प्रद्युम्नको साथ लेकर गये और महादेवजीसे युद्ध प्रारम्भ करते हुए । जब महादेवने शीतज्वरको छोड़ा तब कृष्णने तापज्वरसे निवारण किया फिर कृष्णने दुरासह मोहन अस्तुको महादेवजीपर छोड़ा उस समय महादेव उस अस्त्रसे मोहित हो वारंवार जंभाई लेकर मूर्छित होकर पृथ्वीपर गिर पड़े ऐसा देख स्वामी कार्तिकजी शक्ति लेकर श्रीकृष्णके सन्मुख गये जिनको हुंकार हीसे भगा दिया इस प्रकार श्रीकृष्णजीने शूलपाणि त्रिलोचन श्रीमहादेवजीको जीतकर प्रतापयुक्त होकर बड़े शब्दसे पांचजन्य शंखको बजाया । ३९ ।

एवं जित्वा यदुश्रेष्ठः शूलपाणिं त्रिलोचनम् ।
महास्वनं पांचजन्यं शंखदध्मौ प्रतापवान् ॥

जब बाणासुरने यह सुना तब वह उनके समीप जाकर अनेक अस्त्र शस्त्र छोड़े जिनको भगवान्‌ने काट अपने शस्त्रोंसे उसकी भुजाओंको काट डाला तब उनके समीप पार्वतीजीने जाकर उनसे कहा कि आपने मुझको कैलास पर्वतपर निरन्तर प्रसन्न होकर सदा सौभाग्य होनेके लिये वर दिया था और आपका नाम भी गौरी सौभाग्य है आप अपने नामको सत्य कीजिये और हमारे पति को जिलाइये ।

तत्सत्यं कुरु गोविन्द गरुडारूढ शाश्वत ।
तस्मान्मम पतिं देवत्वं जीवायितु मर्हसि ॥ ४९ ॥

तब श्रीकृष्णजी उस अपने अस्त्रको संहार कर देते हुए तब श्रीकृष्णके अस्त्र से छूटकर सब भूतोंके पति शिवजी उठकर भगवान्‌के हाथ जोड़कर ५१ श्लोकसे ८३ श्लोक तक स्तुति करकहा कि बलिके पुत्रने पूर्व समयमें हमारी तपस्याकी थी उस समय मैंने अमर होनेका वर दिया था अब आप इसकी रक्षा कीजिये। तब गोविन्दने चक्रको संहार कर बाणासुर को छोड़ दिया तत्पश्चात् महादेवजी पार्वती सहित श्रेष्ठ बैल पर चढ़ अपने रहने के स्थान कैलासपर चले गये ॥

वृषभेन्द्रसमारूह्य पार्वत्या सहिता प्रभुः
ययौ च वसतिस्थानं कैलासं धरणीधरम् ॥

विष्णु महाराज की आज्ञासे शिवका, भस्म, हाड़, चर्म इत्यादि धारणकर तामस पुराणोंको रचना, और पापकी निवृत्तिकेलिये विष्णु महाराजके दिये हुए मंत्रको जप कर ब्रह्मानन्द में रहना ।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तर खण्ड—अध्याय २३५ में लिखा है कि

एक बार पार्वतीजीने शिवजीमहाराजसे पूछा कि आप मुण्ड, भस्म, चमड़ा और हाडोंको कि जिसका धारण करना वेदसे निन्दित है इनको आप किसलिये धारण करते हैं और वह किस हेतुसे निन्दित हैं महाबुद्धिमान् यह सब हमसे कहिये शिवजीने कहाकि पूर्व समयमें स्वायम्भुवमनुके अन्तरमें नमुचि आदिक महा दैत्य महाबली, महावीर्यवान् थे जो सब विष्णुजी में रत शुद्ध सब पापोंसे वर्जित और त्रयधर्मसे युक्त थे उन्होंने इन्द्रादिको भग्न कर दिया तब सब देवता विष्णुजी के समीप जाकर कहने लगेकि इन महाबली दैत्योंको आपही मारिये अन्य देवताओंके मारने योग्य नहीं है तब विष्णुजीने हमसे कहाकि हे रुद्रजी दैत्योंके मोहनके लिये आप तामसपुराणोंको कहिये और मुण्ड, चर्म, भस्म और हाड़के चिन्होंको धारण कर तीनों लोकोंको मोहित कीजिये और मैं भी अवतारोंमें तामसोंके मोहनके लिये तुम्हारी पूजा करूंगा इस सूरतसे दैत्य गिरजायंगे तब मैंने कहा इससे मेरा भी तो नाशहोगा तब उन्होंने कहाकि आप हमारे सहस्रनाम को जपिये यह मंत्र सम्पूर्ण पापोंका नाश करने वाला है और भस्म और हाडोंके धारण करनेका भी पाप सब नाश हो जायगा हे पार्वती देवताओंके हितके लिये मुण्ड, चर्म्म, भस्म, और हाडोंकी मालामैंने धारणकी और उनकी आज्ञासे तामसपुराणोंको मैंने किया जिससे सब राक्षस भगवान्से विमुख होगये। तब उनको देख समूहने जीत लिया जो हमारे मतको धारण कर पृथ्वीतलमें घूमते हैं वे सब धर्मोंसे रहित होकर सदैव नरक को देखते हैं।

येमे मतमवष्टभ्य चरंति पृथिवीतले।
सर्वधर्मैश्चरहिताः पश्यंति निरयं सदा॥

हे देवी इस प्रकार देवताओं के हितके लिये हमारी वृत्ति निन्दित है विष्णु की आज्ञा पाकर मैंने भस्म और हाड़ोंको धारण किया है।

एवदेवं हितार्थाय वृत्तिर्मे देवि गर्हिता।
विष्णोराज्ञां पुरस्कृत्य कृतं भस्मास्थिधारणम्॥

यह मेरे वाह्य चिह्न वैरियोंके मोहनके लिये है परंतु हृदयमें नित्य जनार्दनदेवका ध्यानकर तारकमंत्र जो विष्णुके सहस्रनाम के समान है और रघुवंशियोंके कुलका बढ़ानेवाला षडक्षर महामंत्र को सदा जपकर सदैव आनन्दके अमृतसे युक्त हो निरन्तर महासुख को भोगता हूं ।

महादेवजीका रामजीकी स्तुति करना

पद्मपुराण षष्ठी उत्तरखंड अध्याय २४ में लिखा है जब श्रीरामचंद्र जी महाराज वनसे आकर राजगद्दीपर विराजमान हुए उस समय देवताओंके सन्मुख महादेवजीने रामचन्द्रजी की स्तुति की हम और पार्वती संसारमें आपको ही पूजते हैं आपका नाम जपनेवाली पार्वती मैं हूं ।

आवां राम जगत्पूज्यौ ममपूज्यौ सदा युवाम् ।
त्वन्नामजापिनी गौरी त्वन्मंत्रजपवानहम् ॥

पद्मपुराण सृष्टिखण्ड अध्याय १४ में लिखा है एक समय ब्रह्मा जीने सृष्टि रचनेका विचार किया तो उनके पसीनेसे एक अति विकराल पुरुष धनुर्बाण हाथमें लिये उत्पन्न हुआ । जो ब्रह्माजीहीको मारनेको दौड़ा तब उन्होंने कहाकि तुम हमसे उत्पन्न हुए हो हम हीको मारते हो तब वह महादेवजीके निकट गया जिसको देखकर विष्णुके आश्रमपर जा कहा कि महाराज हमारी रक्षा करो । विष्णुने हुंकारकी ध्वनिसे उसको ऐसा मोहित किया वह सब प्राणियोंसे अदृश्य होगया उस समय महादेवजीने भूमिपर गिरकर साष्टाङ्ग प्रणाम किया ।

आर्य्य सेठ—श्रीमान् इन कथाओंके पाठ करनेसे सर्व प्रकार से विष्णु महाराजका बड़प्पन प्रतीत होता है इसको विस्तारभयसे यहीं समाप्त करताहूं अब आपको संक्षेपसे शिवका बड़प्पन सुनाता हूं कृपापूर्वक सुनिये ।

शिव महत्त्व ।

अर्थात् ।

विष्णु और ब्रह्माजीसे शिवजीका अधिक बड़प्पन ।

शिवपुराण ज्ञानसंहित अध्याय २ वा ३ में लिखा है कि जब नारायण जलमें शयन कर रहे थे तब उनकी नाभिसे कमल हुआ और उस कमलसे हिरण्यगर्भ नाम मैं उत्पन्न हुआ और परमात्माकी मायासे मोहित हो मैंने कमलके विना कुछ न जाना कि मैं कौन हूं, कहांसे आया हूं मैं किसका पुत्र हूं। इस प्रकार चिन्ता कर के विचार किया कि मैं क्यों मोहमें ग्रसित हूं जहां इस कमलका स्थल होगा वही मेरा कर्त्ता होगा तो फिर मैं कमलकी डण्डी पकड़ १०० वर्षतक नीचे चलागया परन्तु कमलोत्पत्तिका स्थान न मिला तो मैंने फिर कमलपर आनेकी इच्छाकर कमलको पकड़ ऊपर आया परन्तु कमलका अग्रभाग न मिला इस प्रकार १०० वर्ष होगये तो क्षणमात्र थक कर स्थिर हुआ तब आकाशवाणी हुई कि तप करो। तब द्वादश वर्ष तप करनेसे विष्णु चारभुजा शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारें हुये आगे देखे, तब मैंने कहा तुम कौनहो तब कहा, भगवान् हरि हे वत्स ! तुम सत्य जानो तुम्हारे बनाने वाले विष्णु हैं तब मैंने मायासे मोहितहो घुड़क कर कहा तुम मुझे वत्स कैसे कहते हो पापरहित मैं ही संसारकी उत्पत्ति पालन करता हूं तुम गुरुके समान बन शिष्यके समान मुझे हास्य पूर्वक बोलते हो मैं साक्षात् जगत्का रचनेवाला प्रकृतिका भी प्रवर्त्तक सनातन अज विष्णु हूं। हेब्रह्मन् जगत् मुझसे ही उत्पन्न होता है और तुम मेरे अविनाशी शरीरसे उत्पन्न हुये हो और मैंनेही पूर्व कालमें २४ तत्वकी रचनाकी है यह उनके वचन सुनकर ब्रह्माजीको क्रोध हुआ और घुड़ककर बोले तुम कौन हो कोई तुम्हारा भी कर्त्ता होगा और मायासे मोहित हो कठिनयुद्ध होने लगा उसके शान्त करने और दोनोंको समझानेके निमित्त हम दोनोंके बीचमें एक अद्भुत रूप लिङ्ग प्रकट हुये जो सहस्रों ज्वाला करके भुक्तप्रलय कालकी

अग्निके समान था क्षय और वृद्धिसे रहित आदि मध्य अंतसे वर्जित उपमारहित अनिर्वाच्य व्यक्तसे परें संसारका उत्पत्ति कारण उसकी सहस्रों ज्वालासे भगवान् हरि मोहित हो बोले अब क्यों वृथा ईर्षा करते हो यहां यह तीसरा हमारे तुम्हारे बीचमें प्रादुर्भूत हुआ इसकी परीक्षाके लिये हंसरूप धारण करके ब्रह्मा ऊपरको और विष्णु वाराह रूपधारणकर शीघ्रतासे पातालको गये इस प्रकार एकसहस्र वर्ष विष्णु नीचे २ फिरते रहे उसी समयसे संसारमें श्वेतवाराह कल्प प्रसिद्ध हुआ और जब उन वाराहरूप विष्णुने और हँसरूप ब्रह्माने आदि न पाया तो ब्रह्मा नीचेको और विष्णु ऊपरको चले अन्तमें वे दोनों मिलकर महादेवकी स्तुति करने लगे तब १०० वर्षके पश्चात् ओमिति यह शब्द त्रिमात्र युक्त प्रकट सुनाई दिया फिर विचारकर कहा जहां से यह शब्द उत्पन्न हुआ उसके निमित्त नमस्कार है ऐसा कह लिंगके दक्षिण भागमें उस सनातन ओंकारको देखा प्रथम अक्षर अकार और उसके उत्तर उकार और मध्यमें मकार और अंतमें नाद इस प्रकार ओंकारका दर्शन किया इस ओंकारमें अकार सृष्टिका कर्त्ता उकार पालन कर्त्ता और मकार नित्यप्रति अनुग्रह करने वाला है और उसी समय उनके पांच मुख दश भुजा कपूरके समान गोरा शरीर देखकर हम ब्रह्मा विष्णु स्तुति करने लगे तब वे हँसते हुये लिंगमें स्थित हुये और उनके सम्पूर्ण अंगोंको देख विष्णुजीने फिर प्रार्थना की तब उन्होंने कहाकि सृष्टिके कर्त्ता ब्रह्मा और पालन कर्त्ता हरि और मेरा एक अंश सृष्टिका संहार करने वाला होगा और तीनों देवताओंके अंशको एक २ शक्ति प्राप्त होगी और वह सम्पूर्ण गण मेरी आज्ञासे सृष्टिका कार्य्य करें और ओंकारात्मक परतत्व प्राप्त करके विष्णु भगवान्ने उन परमात्माका परतत्व जानकर उस रूपका दर्शन किया और पांच मंत्रोंसे हरि जप करने लगे।

पंचमंत्रंतथालब्ध्य जजाप भगवान् हरिः।

विघेश्वरी संहिता अध्याय ६ में लिखा है कि विष्णु महाराज ईश्वरत्वकी इच्छा करके भी सत्यवक्ता रहे इस कारण महादेवजीने प्रसन्न होकर देवसमूहके देखते अपनी समानता विष्णुजीको दे दी।

ईश्वरउवाच ।

वत्स प्रसन्नोऽस्मिहरेयतस्त्व-
मीशत्वमिच्छन्नपि सत्यवाक्यम् ।
ब्रूयास्ततस्ते भविताजनेषु-
साम्यं मया सत्कृतिरप्यलभ्सि ॥ ३१ ॥
इतः परन्ते पृथगात्मनश्च-
क्षेत्रप्रतिष्ठोत्सव पूजनं च ॥ ३२ ॥
इति देवः पुराप्रीतः सत्ये न हरये परम् ।
ददौस्वसाम्यमत्यर्थं देवसंघे च पश्यति ॥ ३३ ॥

विष्णु महाराजका यह प्रश्न कि आप किसप्रकार प्रसन्न होते हैं ज्ञानसंहिता अध्याय ४में लिखा है विष्णुने शंकरसे पूछा कि तुम किस प्रकार संतुष्ट होते हो और आपका ध्यान किसप्रकार करना चाहिये। तब शिवजीने कहा कि इस लिंगका सदैव पूजन करना योग्य है और जैसा मेरा रूप इस समय तुमको दीखता है वैसा ही सदैव तुमको ध्यान करना उचित है फिर उन्होंने कहा ब्रह्मा तुम सृष्टि उत्पन्न करो और विष्णु पालन करते हुए मेरी परमभक्तिको करो। फिर विष्णुने अनेक प्रकार उनकी महिमा वर्णन की और इसी समयसे लिंगकी पूजा चली और जो कोई लिंगके समीप इस आख्यान अर्थात् शिवपुराणके अध्याय ४के पाठ करता है वह ६ मासमें शिव-स्वरूप हो जाता है।

यस्तुलिङ्गसमाख्यानं पठतेशिवसन्निधौ ।
षण्मासाच्छिवरूपो वै नात्रकार्यविचारण ॥

और विष्णुने कहा कि हे शंकर हे कृपासिंधु हे जगत्पते! आप सुनिये जो कुछ आपने कहा है यह सब कुछ आपकी आज्ञा से मैं करूंगा।

शंकरश्श्रूयतामन्न: कृपासिंधो जगत्पते ।
सर्वं चैतत्करिष्यामि भवदाज्ञापरायणः ॥

आपका मैं सदा ध्यान करूंगा इसमें संदेह नहीं और पूर्वकाल में मैंने ही आपसे सामर्थ्य की प्राप्ति की थी ।

ममध्येयः सदात्वं च भविष्यसि न चाऽन्यथा ।
भवतः सर्वसामर्थ्यं लब्धं चैव पुरामया ॥

आप परमात्माका ध्यान मेरे चित्तसे कभी भी क्षण मात्रको दूर न हो ।

क्षत्रमात्रमपि च ते ध्यानं वै परमात्मनः ।
चेतसो दूरतश्चैव मा गच्छतु कदाचन ॥

श्रीकृष्ण महाराजका शिवके परमभक्ति उपमन्यु से अपनी जयके निमित उपाय पूछ शिवका पूजन कर मंगलका प्राप्ति करना ।



ज्ञानसंहिता अध्याय ६९ में लिखा है कि श्रीकृष्ण महाराजने उपमन्युसे शिवजीके आराधानका मन्त्र पाकर सात महीने तक निरन्तर कमल, वेलपत्र, सौपत्र, कुश, कन्नेर दूब, आकके फूल, कमलपुष्प और शङ्खपुष्प इत्यादि चढ़ाकर शिवजी को सन्तुष्ट किया । तब मन से प्रसन्न हो वासुदेव बोले कि हे शङ्कर ! इस समय आपकी कृपासे मेरे सबकुछ विद्यमान हैं परन्तु दैत्योंसे पीड़ित होकर आपकी शरणमें आयाहूं आपको ब्रह्मादि पूर्वजोंने भी सेवन किया है । जब इस प्रकारसे प्रार्थना की तब शिवजी प्रसन्न होकर बोले कि धन, धान्य, पुत्र, स्त्री अनेक विध सुख और महा पराक्रम तुममें होजायगा उस समय पार्वतीने भी अनेक वर दिये ।

दैत्यैश्च पीडितश्चाहं त्वामहं शरणंगतः ।
पूर्वैश्च सेवितः शम्भुर्ब्रह्मणा सेव्यतेऽधुना ॥ १९ ॥
एवं च प्रार्थितिस्तेन पुनः प्रोवाच वै शिवः ॥
धनं धान्यं तथा पुत्रान्स्त्रियश्च विविधास्तथा ॥२०॥

यह शिवजीके वचन सुन कृष्ण बहुत प्रसन्न हो बोले । हे देव श्रेष्ठ पहिलेभी आपने हमारी प्रार्थनापर पालनाकी थी हे प्रभो आपनेही सुदर्शन चक्र दिया था उसीसे मैं सम्पूर्ण देवादिकोंका भी जय कर सक्ताहूं, इस समय भी आपनेमनोवांछित फल प्रदान किया है ऐसा कह कर शिवजीकी पूजाकी । तब परमेश्वर प्रसन्न होकर बोले हेकृष्ण जाओ आजसे नित्य तुम्हारे मंगलकी वृद्धि होगी यह आज्ञा पाय कृष्ण द्वारिका को चलेगये और सन्तुष्ट हो सबका पालन करने लगे वहां शिवजी बिल्वेश्वर नामसे व्याख्यात हुये । वेलोक समुदायक शंकर आजतक यहीं विराजे । सात महीने तक कृष्णमहाराजने नित्यही वेलपत्र देवेशको चढाये इससे वह बिल्वेश्वर विख्यात हुए उनके ऊपरसे बेलपत्री उतारके एक स्थान पर रखदी । कृष्णजीकी प्रार्थनापर लोकके मंगलके हेतु वहां स्थितहुए उसी दिनसे भगवान् श्री. कृष्ण भक्ति, मुक्तिके फल देने और श्रीशङ्करका सेवन करने लगे।

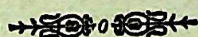
कृष्ण महाराजका शिवजीकी तपस्या कर पुत्र प्राप्ति करना ।

शिवपुराण वायुसंहिता अ० १ वायुने कहाकि श्रीकृष्णने स्वेच्छासे अवतार धारण कियाथा कारण कि वे वासुदेव हैं उन्होंने क्लेशकारकमनुष्य शरीरकी निन्दा करते मुनिश्रेष्ठको देखा। रुद्राक्ष की मालाके गहने पहने जटामण्डलसे मण्डित अपने शिष्य हुए मुनियोंसे वेदशास्त्रके समान आवृत हुए शिवके ध्यानमें रत शान्त स्वभाव महा द्युतिमान्, उपमन्यु को देखकर सब शरीर प्रसन्न

होगया और बड़े मानसे श्रीकृष्णने उनकी तीन प्रदक्षिणा करके उनका सत्कार किया। उनके दर्शनमात्रसे ही श्रीकृष्णके सब अमंगल दूर होगए। जो मायामय कर्म थे सब मिट गए। तब निर्मल होकर श्रीकृष्ण उप मन्यु को भस्मादि लगानेके मन्त्र जैसे अग्निरीति भस्म, वायुरीत भस्म इत्यादिसे विधिपूर्वक सत्कार करके फिर बारह महीनेमें होने वाला साक्षात, पाशुपतव्रत मुनिने श्रीकृष्णसे कराकर उनको उत्तम ज्ञान दिया। उसदिनसे व्रत धारण करने वाले वे मुनि श्रीकृष्णके दिव्य पाशुपतव्रतसे युक्त हुए समीपमें रहने लगे। तब गुरुकी आज्ञा से परम शांतिमान् श्रीकृष्णने पुत्र होनेकी इच्छासे साम्बके उद्देश्यसे शंकरका तप किया एक वर्षके उपरान्त तपकरके महेश्वरका दर्शन किया और व्यग्रतारहित हो सगण साम्ब पुत्रको पाया जिस कारण कि अम्बा पार्वती सहित महादेव ने यह अपना पुत्र दिया।

तपश्चकार पुत्रार्थं साम्बमुद्दिश्य शंकरम् ।
तपसा तेन वर्षान्ते दृष्ट्वादेवं महेश्वरम् ॥
साम्बं सगणमव्यग्रो लब्धवान्पुत्रमात्मनः ।
यस्मात्साम्बो महादेवः प्रददौ पुत्रमात्मनः ॥

विष्णुमहाराजका स्तुति कर महादेव जीसे वरप्राप्ति करना ।



लिंगपुराण अध्याय १९में लिखा कि जब विष्णुमहाराजने महादेवजीकी स्तुतिकी उस समय शिवजीने प्रसन्न हो कर कहा कि हम तुमसे प्रसन्न भयको त्यागन कर दर्शन कीजिये। तुम दोनों मेरेही शरीरसे उत्पन्न हुए हो वर मांगो। उस समय विष्णुजीने कहा कि यदि आप हमसे प्रसन्न हो तो यही वर दीजिये कि आपके चरणों में हम दोनोंकी दृढ़भक्ति हो यह सुन महादेवजीने कहा कि ऐसाही होगा तब विष्णुजीने दण्डवत कर कहा कि आप हमारे भ्रमके दूर करने के

अर्थ प्रकट हुए यह आपकी बड़ी कृपा है। उस समय शिवजीने कहा कि मैं ही ब्रह्मा, विष्णु और रुद्ररूप होकर सृष्टिस्थितिसंहार करता हूं इस हेतु तुम तीनों मेरे ही रूपहो, तुम इस मोहको छोड़कर जगत् का पालन करो। पाद्म कल्पमें ब्रह्माजी तुम्हारे पुत्र होंगे तब भी तुम दोनोंको मेरा दर्शन होगा। इतना कह महादेव अन्तर्द्धान होगये। उसी दिनसे जगत् में शिवलिंगकी पूजाका प्रचार हुआ। लिंगकी वेदी अर्थात् जलहरी पार्वती लिंग साक्षात् शिवका रूप है। सब जगत्का उसीमें लय होता है इस लिये उसका नाम लिंग है।

विष्णु और ब्रह्माका संवादमें विष्णुके कथनानुसार शिवका आदिपुरुष और ब्रह्मा बीज और विष्णुका योनि होना प्रकट है।

लिंगपुराण अध्याय २ सब ऋषि सूतजीसे पूछते हैं कि पद्म में ब्रह्माजी पद्मसे किस भांति उपजे और ब्रह्मा और विष्णुजीको किस भांति शिवजीका दर्शन हुआ। सूतजीने कहा कि प्रलय समय समुद्र में पद्म धारण किये शेषनाग रूपी शय्यापर लक्ष्मी सहित अचिंत्य योगमें स्थित होकर श्री विष्णुजी शयन करते भये। उस समय क्रीड़ाके निमित्त शतयोजन विस्तार वाला एक कमल अपनी नाभिसे उत्पन्न किया इसी बीच चतुर्मुखी आये। विष्णु को देख आश्चर्य्यसे कहने लगे कि तुम कौन हो और यहां क्यों सोते हो तब विष्णु उठ कर कहने लगे कि प्रति कल्पमें हम यहां ही शयन करते हैं और आकाशवाणी स्वर्ग आदिके हमही प्रभु हैं। फिर

नोट—देखिये कि पद्मपुराण में तो महादेव विष्णुकी स्तुतिकी तब विष्णुने प्रसन्नहो वरदिया तो महादेवने यह मांगा कि आपके चरणोंमें हमारी दृढ़ भक्ति रहे। और लिंगपुराणमें विष्णुने भक्ति का वर महादेव से प्राप्त किया कि आपके चरणों में हमारी निश्चय भक्ति रहे। और देवी भागवत में इन तीनों देवों ने देवी की स्तुति और उसकी भक्ति की है। विद्वान् लोग स्वयं विचार स्थिर कर सक्ते हैं कि पुराणों की रचना किस प्रकार की है॥

उनसे पूछा कि तुम कौन हो और कहांसे आये हो कहांको जाओगे कहां रहते हो हम तुम्हारा क्या सत्कार करें। यह विष्णुजीका वचन सुन शम्भुके मायासे मोहित हुये २ विष्णुजीको बिना जाने ब्रह्माजी कहने लगे कि जैसा तुम जगतके प्रभु अपनेको कहते हो इसी भांति हम भी जगत्के स्वामी और सिरजने हारे हैं इस प्रकार ब्रह्माजीका वचन सुन विष्णुजी को बड़ा आश्चर्य हुआ और उनकी आज्ञा पाकर विष्णुजी मुखमें प्रवेश करते हुये वहां ब्रह्माजी के उदर में अठारह द्वीप सात समुद्र बड़े २ पर्वत सात लोक ब्राह्मणादि चार वर्ण अनेक भांति स्थावर, जंगम विष्णुजी देख विस्मित हो विचार करने लगे कि बड़ा भारी तप ब्रह्माजीका है इधर उधर विचरनेलगे परन्तु हज़ारों वर्ष तक कभी अंत न पाया फिर मुखके मार्ग निकल आये और ब्रह्माजीसे कहा कि आपके पेटका कुछ अंत नहीं परंतु आप मेरे उदर में प्रवेश करें यह सुन ब्रह्माजी उनके पेट में गये तो सब लोकों कोदेखा परन्तु अन्त न पाया और विष्णुजी सब द्वार बंद कर शयन करने लगे। जब उनके निकलनेकी इच्छा हुई और मार्ग न मिला तो सूक्ष्मरूप धारण कर विष्णुजीकी नाभिके मार्ग कमल नालके सहारे बाहर निकल आये और उसी पर विराजमान होगये। इतनेमें त्रिशूल हाथमें लिये शुक्लवस्त्र धारण किये हुये महादेव वहां आये उनके चरणोंसे पीड़ित हुए समुद्रजलके बिन्दु आकाश तक पहुंचे और अतिशीतल कभी अतिउष्ण वायु चलने लगी यह बड़ा आश्चर्य देख ब्रह्माजी विष्णुजीसे कहने लगे कि यह जलके बिन्दु और यह प्रचंड पवन इस कमलको कंपायमान कर रहा है यह क्या उपद्रव है, यह आप कहें। यह ब्रह्माजीका वचन सुन मनमें विचार कर विष्णुजी बोले कि तुम कौन हो क्या भय तुमको हुआ तब ब्रह्माजी बोले कि जिस प्रकार आपने हमारे उदरमें प्रवेश कर सब लोक देखे उसी भांति हमने भी आपके उदर में देखे परंतु जब हमने बाहर निकलना चाहा तब आपने ईर्षासे द्वार रोक लिये तब मैं सूक्ष्मरूप धारण कर कमल नालके मार्गसे बाहर निकल आया इसमें आप बुरा न मानें जो कुछ आपको करना

हो करें हम आपके आधीन हैं। ब्रह्माकी यह मधुरवाणी सुन विष्णुने कहा हमने आपको बोध कराने के लिये सब द्वार रोके थे इसका आप कुछ क्षोभ न करें। आप हमारे मान्य और पूज्य हैं इस लिये हमसे जो कुछ अपराध बना हो क्षमा कर दीजिये और इस कमल से नीचे उतर जाइये क्योंकि हम आपका बोझ नहीं सह सके आप जगत् गुरु हैं।

तब ब्रह्माने कहा कि आप हमसे वर मांगो तब विष्णु ने कहा कि यही वर है कि आप इस कमलसे नीचे उतर आवें और हमारे पुत्र बनें तो आप भी परम हर्षको पावेंगे।

सहोवाच वरं ब्रूहि पद्मादवतरप्रभो।
पुत्रोभवममारिघ्नमुदं प्राप्स्यसि शोभनाम्॥ ५४॥

आजसे आप सबके स्वामी पगड़ी धारे रहो पद्मयोनि तुम्हारा नाम हमारे पुत्र होकर सात लोक के स्वामी होंगे। यह तो विष्णु जी ने कहा और ब्रह्माजी ने मांगे थे उनको देख सब मनके विकल्प दूर करते हुए इसी अवसर में सूर्य के समान प्रकाशमान् बड़ा मुख दश भुजा त्रिशूल हाथ में लिये भयङ्कर रूप धारे आदि भयानक शब्द करते हुए शिवजी चले आते हैं यह देख ब्रह्माने विष्णुजीसे पूछा कि यह कौन है तब विष्णु बोले ठीक है इनके चरणों से समुद्र व्याकुल हो रहा है और जल के विंदुओं से तुम भीग भी गयेहो इनकी नासिका के पवनसे यह हमारी नाभिकमल तुम्हारे सहित कांपता है यह साक्षात् महादेव हैं।

पद्भ्यां तलनिपातेन यस्य विक्रमतार्णवे।
वेगेन महताकाशेऽप्युयिताश्च जलाशयः॥
स्थूलाङ्कविश्वतोऽत्यर्थं सिच्यसे पद्मसम्भव।
घ्राणजेन य वातेन कम्प्यमानं त्वया सह॥
दोधूयते महापद्म स्वच्छन्दं मम नाभिजम्।
समागतो भवानीशो ह्यनादिश्चान्तकृत्प्रभुः॥

अब हम दोनों इनकी स्तुति करें। यह सुन ब्रह्मा क्रोध कर बोले कि आप अपने स्वरूपको और हमारे स्वरूपको नहीं जानते यह हमसे अधिक महादेव नाम कौन है। यह सुन विष्णुजी बोले कि ब्रह्माजी ऐसा आप न कहें यह जगत्के हेतु हैं और सब इनके बीज हैं ये बीजवान् हैं। पुराण परमेश्वर इन्हीं को कहते हैं यह जगत् इनका खिलोना है बीजवान् ये हैं आप बीज हैं और हम योनि हैं।

मामैवं वद कल्याण! परिवादं महात्मनः।
महायोगेन्धनो धर्म्मो दुराधर्षो वरप्रदः॥
हेतुरस्याथजगतः पुराणपुरुषोऽव्ययः।
वीजीखल्वेषवीजानां ज्योतिरेकः प्रकाश्यते॥
बालक्रीड़नकैर्देवः क्रीडते शङ्करः स्वयम्।
प्रधानमव्ययो योनिरव्यक्तं प्रकृतिस्तमः॥

ब्रह्मा और विष्णुकी स्तुति सुन महादेवजीका दोनोंको वरदेना फिर ब्रह्माका तपकरना और उनके आंसुओंसे सर्पका उत्पन्न होना और उनका मूर्च्छितहो गिरना फिर प्राणोंका देना।

लिंगपुराण अध्या २२। जब ब्रह्मा और विष्णुने स्तुतिकी तब महादेवजी अत्यंत प्रसन्न हुये और दोनोंको जानते भी थे परन्तु क्रीड़ाके निमित्त पूछते हुयेकि तुम दोनों कौन हो? जो आपसमें

नोट—देखिये पंडित महाराज इस कथाके पढने से भलीभांति इन ब्रह्मा, विष्णु, की सर्वज्ञता शक्तिमत्ता, का समझगये होंगे कि दोनों एक दूसरेके पेटमें हजारों वर्ष रहे और घूमाकरे परन्तु एक दूसरेने किसीका पार न पाया परन्तु महादेवके देखते ही आप योनि बन गये और ब्रह्माको बीज और महादेवको बीजवान सबका पिता बनादिया।

बड़ी प्रीति रखकर इस घोरसमुद्रमें स्थित होरहेहो । यह महादेव जीका वचन सुन ब्रह्मा, विष्णु आश्चर्य्यसे देखने लगे किहे भगवन् ! क्या आप हमको नहीं जानते आपने ही तो अपनी इच्छासे हमको उत्पन्न किया है । यह उनका वचन सुन श्री महादेव प्रसन्नहो कहने कि हे ब्रह्माजी हे विष्णु जी ! हम तुम्हारी इस दृढ़ भक्ति और उत्तम स्तुतिसे बहुत प्रसन्न भये हैं जो कुछ वर आपको चाहिये मांगो। यह शिवजीका वचन सुन विष्णुजीने कहाकि महाराज आपके दर्शन पाये इससे अधिक और क्या वर होगा जो आप मुझपर प्रसन्न हैं तो अपने चरणारविन्दमें दृढ़भक्ति देवो । यह विष्णुजीसे सुन उनको अपनी दृढ़ भक्ति दी । ब्रह्माजीसे भी महादेव कहते भये कि तुम इस लोकके कर्त्ता होगे सब जगत्के स्वामी रहोगे इतना कह प्रीतिसे दोनोंकी पीठ पर हाथ फेर कर कहा कि तुम दोनों मेरेंको अति प्रिय हो और मेरे तुल्यहो अब हम जाते हैं तुमभी प्रसन्न रहो और अपना २ व्यवहार करो इतना कह वह अंतर्द्धान हो गये ।

ब्रह्माजी भी विष्णुजीसे ज्ञान पाय प्रजा सिरजनेकी इच्छासे उग्र तप करने लगे। बहुतकाल तप किया परन्तु कुछभी सिद्धि नहुई तबतो ब्रह्माजीको क्रोध भया। नेत्रोंसे अश्रुके विंदु गिरें उन वात पित्त, कफ रूपी विन्दुओंसे महा विष करके युक्त बड़े भयानक सर्प उत्पन्न भये जिनको देख वह बड़े दुःखी हुये और कहने लगेकि हमारे तपको धिक्कार है जो पहिलेही संहारकरने वाली प्रजा उत्पन्न भई, अब क्या करें इतना कहते ही ब्रह्माजी दुःखसे मूर्च्छित हो गिर पड़े और प्राणत्याग दिये ।

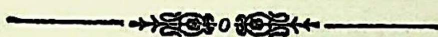
उस समय उनकी देह से बड़ी दीनता के कारण रोते हुये रुद्र निकले और रोनेसे ही उनका नाम रुद्र हुआ शिवजीने ब्रह्माजी की यह दशा देख ।

तस्य तीव्रा भवन्मूर्च्छा क्रोधामर्ष समुद्भवा ।
मूर्च्छाभिर्परिपातेन जहौ प्राणान्न प्रजापतिः ॥

दयासे फिर उनको प्राण दिये और चैतन्य किया ।

ब्रह्माजी भी शिवजी को बारर देख प्रणाम कर स्तुति करते थे।

विष्णुजीका हिमालय पर शिवलिंग स्थापन कर शिवजीकी आराधना कर अपने नेत्र उखाड़-कर चढाना फिर शिवजीका प्रसन्न होकर नेत्र और सुदर्शन चक्रका देना।



लिंग पुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ९८ और, शिवपुराण ज्ञान-संहिता अध्याय ७०में लिखा है कि पूर्वकालमें देवताओं और दैत्योंका बड़ा घोरसंग्राम हुआ उसमें दैत्योंने नाना शस्त्रोंसे देवताओं को पीड़ितकर पराजित किया तब देवता विष्णु भगवान्की शरणमें गये उन्होंने जानेका कारण पूछा तब उन्होंने अपने उपरोक्त दुःखको वर्णन किया और कहा कि यदि आपको महा-देवसे सुदर्शनचक्र नाम शस्त्र मिलजावे तो दैत्योंका बध होसक्ता है अन्यथा नहीं। तब विष्णु भगवान्ने कहा कि हे देवताओ शिवजी का आराधन करो शीघ्र तुम्हारा दुःख दूर करेंगे चिन्ता मत करो इ-तना कह वह हिमालय पर्वत पर जाय मेरुपर्वतके समान अति मनोहर विश्वकर्माका बना हुआ शिवलिंग स्थापन कर त्वरि सूक्त और रुद्राध्यायसे गंगाजलकरके स्नान कराय गन्ध, पुष्प, नैवेद्य आदि उपचारोंसे पूजाकर भक्तिसे हवन कर हाथ जोड़ स्तुतिकर स-हस्र नामोंके आदिमें प्रणव और अन्तमें नमः लगा प्रतिनामसे एक २ कमलका पुष्प शिव लिंगके ऊपर चढ़ाने और इसीभांति नित्य

नोट—क्यों महाराज सुना आपने कि ब्रह्मा और बिष्णु स्वयं अपने मुखसे महादेवस कह रहे हैं कि आपहीने तो हमें अपनी इच्छासे उत्पन्न किया है क्यों ब्रह्मामें जिनको कि अंशावतार कहते हैं महादेवके बरदानके पूर्व सृष्टि उत्पन्न करनेकी शक्ति नथी तब यह कथन कि ब्रह्माने सृष्टि रची कैसे सार्थक होगा। ब्रह्माके रोने से जो अश्रु गिरे उनसे सर्प उत्पन्न होगये ब्रह्माके आंसू थ कि सांपोंके अंडे? जब ब्रह्मा और बिष्णु दोनों शरीर धारी समुद्रपर थे तो उनके शरीर कहांसे आये और स-मुद्र क्यों सृष्टिसे पृथक है यदि आप कहें कि उनके शरीरों को निराकार ने रचा तो जिसने कि ब्रह्मा और विष्णुको रचा (उत्पन्न किया) क्या उसमें इस सृष्टिके रचनेकी सामर्थ्य न थी जोकि ब्रह्मा, बिष्णु, महादेवादिको रच इनसे सहायता लेता।

हवन करनेलगे इस बीचमें शिवजीने उनकी भक्तिकी परीक्षाके लिये गिने हुए : हजार कमलों में से एक कमल गुप्तकर दिया विष्णुजीनेभी सब कमल चढ़ाय देखा तो एक घट रहा तब भगवान ने कमल पुष्प न मिलनेसे अपना नेत्र कमल उत्पाटन कर शिवजीके अर्पण किया

हृतपुष्पो हरिस्तत्र किमिदन्त्वाभ्यचिन्तयत् ।
ज्ञात्वा स्वनेत्रमुद्धृत्य सर्वसत्त्वावलम्बनम् ॥ १६१ ॥

इस भांति विष्णु भगवान्का दृढ़भाव देख कोटिसूर्य्यके समान देदीप्यमान जटा और मुकुटसे मण्डित ज्वाला, माला करके व्याप्त सब शरीर पर भस्म लगाये अग्निकुंडमें शिवजी प्रकट हो अतिभयानक रूप देख सब देवता भयभीत हो भागे और ब्रह्मांड कांप उठा, विष्णु भगवान् भक्तिसे प्रणामकर हाथ जोड़ आगे खड़े हुए, शिवजी ने कहा कि हे विष्णुजी हम देवताओंका कार्य्य जानते हैं आपने भी हमारी बहुत सेवाकी है तुम हमारे भयंकर रूपका ध्यान करते हुए युद्ध करो तुम विना आयुधके भी जय पाओगे इतना कह हजारों सूर्य्यके तुल्य प्रकाशक सुदर्शनचक्र शिवजीने विष्णु भगवान्को दिया और कमलके समान अति सुन्दर नेत्र भी दिया। उसी दिनसे भगवानका नाम पुण्डरीक हुआ।

नेत्रञ्च नेता जगतां प्रभुर्वै पद्मसन्निभम् ।
तदा प्रभृतितं प्राहुः पद्माक्षमिति सुव्रतं ॥

फिर भगवान्के ऊपर प्रेमसे हाथ फेर शिवजीने कहा कि तुमने अपनी दृढ़भक्तिसे हमको वश कर लिया जो कुछ वर चाहो मांगो तब विष्णु महाराजने कहा कि आपमें दृढ़ भक्ति हो यही वर चाहताहूं तब शिवजीने कहा कि तुम सदा देवता और दैत्योंके पूज्य होंगे और जब दक्षकी पुत्री सती अपने माता पितासे क्रोधकर शरीर

नोट—देखिये पंडितजी कैसे आश्चर्य्यकी बात है और विशेष कर इसको वैष्णावी भाई ध्यान पूर्वक सुनें कि उनके उपास्यदेवने शिवजीकी पूजाकी और जब महादेवने एक फूल चुरालिया तो विष्णुने अपनी आंख निकालकर शिवलिंगपर चढ़ादी क्या इन्हीं विष्णुको ईश्वरावतार और सर्वज्ञ मानते हैं। फिर न कि यह केवल की विष्णु शिवके भक्त ही रहे।

त्याग हिमालयके घर उत्पन्न होगी तब अपनी भगिनीको ब्रह्माजीकी आज्ञानुसार हमको विवाह देगे तब दिनसे हमारे सम्बन्धी और जगत्पूज्य होजाओगे और हमको अपना मित्र समझोगे ।

भगिनी तव कल्याणीं देवीं हैमवतीसुमाम् ।
नियोगाद्ब्रह्मणः साध्वीं प्रदास्यसि ममैवताम् ॥
मत्सम्बन्धी च लोकानां मध्ये पूज्यो भविष्यति ।

इसी लिंगपुराणमें कहीं जगह यह लिखा कि शिव पिता और विष्णु, ब्रह्मा पुत्र क्या महादेव के वरदानसे पूर्व विष्णु जगत् और पूज्य न थे ।

ब्रह्माजीका देवतोंके सहित क्षीरसागरपर जा और स्तुति कर विष्णुजीसे पूंछना कि किस की पूजा करना चाहिये ।

ज्ञानसंहिता अध्याय २५में लिखा है कि एक बार ब्रह्मा सब देवताओं सहित क्षीरसागरपर जाकर स्तुति करने लगे तब समय विष्णु ने पूछा कि आप किस प्रयोजन से आये हैं ब्रह्माने कहा कि हमको किसकी पूजा करनी योग्य है तब उन्हों ने कहा कि हे देवाधिदेव सब दुःखों के दूर करनेहारे शंकर की पूजा करनी योग्य है ।

यदि सेव्यः सदादेवाः शंकरः सर्वदुःखहा ।
ममापि कथितं तेन ब्रह्मणोपि विशेषतः ॥

प्रत्यक्ष तुमने देखा कि तारकासुरके पुत्र शिवकी पूजा न करने से ही नष्ट होगये इस लिये शिवलिंगका पूजन करना उचित है इस की पूजा में सब देवता दानव आजाते हैं और उन्हींकी पूजा करने से सांसारिक और पारमार्थिक सुखोंकी प्राप्ति होती है इस लिये उसी समय से पद्मराग, मणिके लिंगको, इन्द्र सुवर्णके लिंगको, कुवेर पीले मणिमयलिंगको धर्मराज श्यामलिंगको, वरुण इन्द्रमणिके

लिंगको, विष्णु सुवर्णमयलिंगको, ब्रह्मा, विश्वेदेवा और वसुओं को चांदी का, वायुको आरकट् (पीतल) अश्वनी कुमारको मृत्तिका का; लक्ष्मी देवीको स्फटिकमणिका, आदित्यको ताम्रका, सोमराज को मौक्तिकका, अग्निको हीरेका, ब्राह्मणोंको मृत्तिकाका और चन्दन के शिवलिंग में इष्ट हुआ एवं अनन्तादि नाग मूंगोंका दैत्य गोमयका और इसी प्रकारका सहाबली राक्षस भी पूजने लगे तथा पिशाच लोहमयलिंगका शिवा देवी मक्खन के निमित्त योगी भस्म सूर्य्य पत्नी छायापिष्ट ब्राह्मणी रत्नका यक्ष दहीके इत्यादि सब देवता और ऋषि, ब्रह्मा विष्णु सिद्धि की इच्छासे शंकर का पूजन करते हैं।

ते पूजयंति सर्वे वै देवाऋषिगणास्तथा।
ब्रह्मा चैव तथा विष्णुरये देवाश्च ये पुनः॥
पूजयंति तदा देवं नित्यं सिद्धिमीहया।

शिवमहत्त्व अर्थात् ब्रह्मा विष्णुसे कहना कि मैं ही ईश्वर हूं।

शिवपुराण विद्येश्वरी संहिता अ० ६ व ७ व ८ व ९ एक वार ब्रह्मा विष्णुके यहां गये और उनसे कहने लगे कि तुम कौन हो क्यों अभिमान करते हो? मैं तुम्हारा स्वामी हूं। विष्णुने कहा यह जगत मुझमें स्थित है, तुम चोर के समान किस प्रकार कहते हो, तुम मेरी नाभि से उत्पन्न हुये, इस लिये मेरे पुत्र हो, फिर मुझे पुत्र क्यों कहते हो। दोनोंमें संग्राम होने लगा, देवता व्याकुल होकर शिव के पास गये और सब वृत्तान्त जान गणोंको समरमें जाने की आज्ञा दी और आपभी गये जहां ब्रह्मा और विष्णु थे वहां दोनों के बीच में निर्गुण ब्रह्म स्थित हुये इस महा अग्नि के प्रकट होते ही दोनों आपस में कहने लगे कि यह इन्द्रियगोचर क्या है। इसका पता लगाना चाहिये। ऐसा कह विष्णु शूकरका रूप धर नीचेको, ब्रह्मा हंसका रूप हो ऊपरको गए। फिर विष्णुने सत्य कहा ब्रह्माने मिथ्या

भाषण किया जिसपर शिवजी ब्रह्मासे अप्रसन्न और विष्णु से प्रसन्न हुये। फिर ब्रह्मा का मद दूर करनेके लिये महादेवने अपनी भृकुटी से भैरव को उत्पन्न किया उसने कहा मैं क्या करूं शिवने कहा कि यह जगत् के आदि देवता ब्रह्मा हैं इनका तीक्ष्ण धार वाले खड्गसे प्रहार करो सुनते ही भैरव ने एक हाथसे केश पकड़ ब्रह्मा का पांचवां असत्यभाषी शिर काट कर औरभी शिर काटनेकी इच्छाकी।

वत्सयोऽयं विधिः साक्षाज्जगतामाद्य दैवतम्।
नूनमर्चय खड्गेन तिग्मेन जवसा परम्॥
स वै गृहीत्वैक करेण केशं तत्पंचमंदृप्तमसत्यभाषणम्
छित्वाशिरांस्यस्य निहंतुमुद्यतः प्रकंपयन्खड्गमतिस्फुटंकरे।

तब ब्रह्मा भैरव के चरणों पर गिर पड़े, तब विष्णुने कहा कि पहिले आपने कृपा करके पांच शिर दिये एक जाता रहा अब जाने दीजिये तुमने अपनी पूजा होने के लिये छल किया इस लिये लोक में तुम्हारा सत्कार और उत्सव न होगा। अंतको जब दोनोंने शिव लिङ्गकी पूजाकी तब शिव ब्रह्मा, विष्णु से प्रसन्न हुए और कहने लगे कि मैं ही परब्रह्म हूं, मैं ही ईश्वर हूं।

अहमेव परंब्रह्मसत्स्वरूपं कलाकलम्।
ब्रह्मत्वादीश्वरश्चाहं कृत्यं मेनुग्रहादिकम्॥

यही कथा लिंगपुराण अध्याय १६ में आई है।

रामचन्द्र आदिका ब्रह्महत्या दूर करनेके अर्थ शिवकी उपासना करना।

लिंगपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय १७में लिखा है कि ब्रह्मा आदि देवता बड़े २ राजा मुनि आदि शिवलिंगकी पूजा करते हैं विष्णुके

अवतार रामचंद्रजीने ब्रह्माके पुत्रको मार तदुपरान्त ब्रह्महत्या रूपी निवृत्तिके लिये समुद्रके तटपर शिवलिंग स्थापन किया हज़ारों पाप करके सैकड़ों ब्राह्मण मारकर जो शुद्ध भावसे शिवजीकी शरणमें जाय वह निस्संदेह मुक्ति ही पावे। सब लोक लिंगमय हैं और लिंगमें स्थित हैं इस कारण मुक्तिपदकी इच्छा वाला पुरुष सदा शिव लिंगको।

सर्वोलिंगमया लोकाः सर्वे लिङ्गे प्रतिष्ठिताः।
तस्मादभ्यर्चयेल्लिंग यदीच्छेच्छाश्वतं पदम्॥

सरयूतीर श्रीरामके भोजन करानेके समय शिवका अतिथिरूपमें जा चमत्कार दिखला शिवरूप प्रकटकर रामजीसे प्रसन्न हो उनको भक्ति वर देना।

पद्मपुराण पंचम पाताल खंड अध्याय १४में लिखा है श्री रामचन्द्रजी सरयूतीर नारदादि महात्माओंको भोजन करारहे थे उसी समयमें एक वृद्ध ब्राह्मणने जिसके मुंहसे लार निकलती थी शरीर कांपता था खाल सब झूली पड़ी थी श्रीरामसे कहा कि हमको भी भोजन दो तब रामने लक्ष्मणसे कहा कि इनके पैर तुम धोओ हम अन्योंके धोवें उस अभ्यागतने कहाकि जब आपही हमारे पैर धोवेंगे तब ही हम भोजन करेंगे क्या हमसे श्रेष्ठ इनमें कोई और ब्राह्मण है जो हमारे अनादर करते हो इससे तुम नरकको जाओगे

नोट—देखिये महाराज पद्मपुराणमें जो शिवके भक्त बनगए और लिंगपुराणमें शिवके भक्त विष्णु बने क्यों एक दूसरे के विरुद्ध यह नहीं है? अब इन दोनों श्लोकोंका आशय विष्णु इत्यादिका पूजन छोड़ शिव बन वरन रौरव नरकके भागी एव जार इत्यादिको दोष लिंग पुराण लगावेगा। हम यह दर्शा चुके हैं कि देवीभागवतमें रामचन्द्रने देवीका पूजन किया और पद्मपुराणमें एकादशी व्रतसे और लिंगपुराणमें शिवलिंगके पूजनसे समुद्रपार हुए कहिये पंडित जी इनमेंसे किसको ठीक मानें॥

तब श्री रामजीने पैर धोये फिर श्राद्धकी सब क्रिया कर ब्राह्मण भोजन कराने लगे तब वह वृद्ध ब्राह्मण सब परोसा हुआ भोजन एक ही ग्रासमें खागया फिर भोजन मांगा तब रामजीने शम्भु मुनिसे कहा कि आप इनको भोजन कराइये क्योंकि आप साक्षात् शिव हो और श्री आपकी पार्वती हैं तब पार्वतीने कहा कि मैं अभी अघवाये देती हूं इतना कह सुवर्णके पात्रमें भात ले सुवर्णकी करछीसे यह कहकि यह भोजन विप्रको अक्षय हो ऐसा कह उसके दहिने हाथमें दिया उसने फिर बायां हाथ निकालकर पायस मांगा, वह दोनोंसे खाने-लगा जब वह न चुका तो एक हाथ और निकाला पार्वतीने उसमें दिया इस भांति सहस्र हाथ तक निकाले और देवीजीने सहस्र हाथ तक सब पूर्ण करदिये तब उस विप्रने कहा कि अब हम पूर्ण होगये जलसे आचमन किया और उस वृद्धको बुलाया वह न गया तब रा-मजीने कहा कि चलो तब उससे कहा कि उठा नहीं जाता तब रामजी ने कहाकि हमारे हाथके सहारेसे उठो पर न उठा तब हनुमानने एक हाथ अपना पकड़वाकर दूसरेसे खैंचा पर न खिंचा और रोदन कियाकि हमारे हाथको खेद होता है अब तुम कोई और भाग पकड़ कर खींचो तब हनुमान अपनी पूंछसे उसका शिर लपेटकर दौड़े पर वह नहिला तब हनुमानने दोनों पैर जमाकर हाथोंसे उठाकर घर ऊपर उठाय फेंक दिया वह गृह फूट गया ब्राह्मण बाहर आगये फिर उसने जल मांगा तब लक्ष्मण लेकर गये उसने कहाकि सीताको भेजो वह मेरे सब अंगोंको धोवे सीता गई उसने जल दिया उसने कुल्ला मुखपर कर दिया सीताने कुछ नहीं कहा वही उनको भूषण होगया फिर सीताजीने खकार आदि सब धोकर सब नाकका मैल निकाल बाहर किया फिर लक्ष्मणने आचमन कराकर कहा कि उठो तब उन्हों ने कहाकि हमपर उठा नहीं जाता तब जाम्बवन्तने उठाकर जहां सब ब्राह्मण बैठे थे बिठादिया तब राम आदिने प्रदक्षिणाकी कि रामने सीतासे कहाकि इनका मल स्वच्छ नहीं किया सीताने कहाकि अभी सब क्रियाको तो भी मैला होगा तब विप्रने कहा कि हमारी दोनों जरू तो सीता पकड़े रहे और आप दोनों हाथ । भरत पंखा करें

लक्ष्मण हमारे शिरके केश संवारते रहें शत्रुघ्न हमारी खड़ाउं धोते रहें तब सबोंने ऐसाही किया तब सीताने तिरछी भौहैंकी यह सुन शंख चक्र गदा धारण किये अतिथिजी प्रसन्न हुये पीताम्बर ओढ़ प्रकाशित हो बोले कि जिस शम्भुकी तुमने पूर्वकालमें आराधनाकी वे अब प्रसन्न हुये इतना कह रामचन्द्रजीका हाथ पकड़ कर शिवजी खड़े होगये तब सबने बहुत सत्कार से नमस्कार किया छातीसे लगा मस्तक सूंघा कहा कि वर मांगो ।

तब रामजी ने कहा कि हमको कुछभी मांगना नहीं है क्योंकि पृथिवी मण्डलका राज्य प्राप्त ही है स्वर्ग कर्मोंसे मिल रहा है नाना प्रकारके भोगविलास आपके चरणोंके दर्शनसे मिल रहे हैं शरीरकी आरोग्यता और यश आदि सब हैं स्त्री सीता सब स्त्रियों में श्रेष्ठ है इस लिये यह वर मांगते हैं कि तुममें हमारी स्थित भक्ति हो ॥ १८४ ॥

स्वर्गश्चकर्मभिः प्राप्तो भक्तिस्त्वत्पाददर्शनात् ।
आरोग्यं पश्य भुंजेहं सा सीतायोषितां वरा ॥
तथापि वरयो किंचिद्भक्तिरस्तुस्थिरात्वपि ।

दूसरा वर यह है कि हे देव तीन वर्ष तक तुम हमारे घर में इसी रूप से बस कर सब धर्म करते रहो ।

तथा ममगृहे देव त्रिवर्षातिष्ठेह प्रभो ।
ब्रुवन्समस्तधर्मांश्च रूपेणानेन शंकरम् ॥

तब शम्भु ने कहा कि राम ऐसा ही होगा । तब विष्णु भगवान् जो लोकालोक के पारसे श्रीरामके साथ आये थे बोले कि हम भी तुमसे प्रसन्न हैं वर मांगो श्रीरामजी ने कहा कि हमको तुमसे कुछ अब मांगना नहीं है क्योंकि जो कुछ मिलना था वह सब शम्भु से मिल चुकाहै सो अभी आपके सामने भी कह चुके हैं हां विष्णु सदा प्रसन्न बने रहो तब उन्होंने सीतासे कहाकि हम तुमसे प्रसन्न हैं

तुम वर मांगो सीताने कहा कि हमने तो पूर्व समयमें भर्त्ताका वर मांगा था अब अन्य वर नहीं मांग सक्तीं जो वर दिया चाहोतो यही वर दोकि परपुरुषसे वर मांगनेकी इच्छा न हो। तब शिवने कहा कि हम पार्वती सहित तुम्हारे मन्दिरमें वसेंगे।

एकांतमंदिरे रम्ये देव्यासह वसामि ते।

शिवजीका बड़प्पन अर्थात् विष्णुभक्त राजा क्षुप और शिवभक्त दधीचि मुनिसे युद्ध होना जिसमें छुपकीसहायता के लिये विष्णु महा-राजका आकर लड़ना और उससे हारना।

लिंगपुराण अध्याय ३५ व ३६ सनत्कुमार जी! ब्रह्माजीका पुत्र क्षुप नाम एक राजा दधीचिमुनीका परम मित्र था। एक दिन दोनों का विवाद हुआ, दधीचिने कहा कि ब्राह्मणसे श्रेष्ठ राजा क्षत्रिय उत्तम होते हैं। दधीचिको क्रोध आया और राजाके शिरमें मूका मारा, तब क्षुपने बज्रसे गिराया। तब दधीचिने शुक्रजी महाराजका स्मरण किया, जिन्होंने बहुत शीघ्र आकर अमृत संजीवनी विद्यासे राजाको चंगा कर दिया और कहा कि तुम महादेवकी आराधना करो जिससे अवध्य होजाओ। हमने भी यह विद्या महादेवजीसे प्राप्तकी है। फिर उसके जयकी विधि बतलाई जिसको सुन दधीचि मुनिने बड़े तपसे शिवको प्रसन्न किया और उनके वरसे अवध्य होगया और बज्रके तुल्य अस्थि होगए और सब दीनता जाती रही तब फिर आकर राजाको ताड़न किया और क्षुपराजाने भी दधीचिकी छाती में बज्रमारा परन्तु उसके न लगा, क्योंकि शरीर अवध्य होगया था तब राजा भी विष्णुजीका आराधन करने लगा जब विष्णु प्रसन्न हुये तब राजाने अपना सब वृत्तान्त कहा तो विष्णु बोले कि जो ब्राह्मण

शिवकी शरण रहते हैं उनको किसी प्रकारका भय नहीं होता, शिव भक्त चाहे नीच भी हो इस लिए तुम्हारा विजय न होगा अब हम दधीचि मुनिको क्रोध कराते हैं जिससे देवताओं सहित हमको शापदे जिससे दक्षके यज्ञमें देवताओं सहित हमारा नाश हो केवल तुम्हारे जप होनेके कारण हम यत्न करते हैं।

यह सुन राजाने कहा कि जैसी आपकी इच्छा हो वैसा कीजिये तब विष्णुजी ब्राह्मणका रूप धारणकर दधीचि आश्रममें गये और कहा कि हे ब्रह्मदधीचि तुमसे एकवर मांगते हैं आपहमको दें तब उन्होंने कहा कि तुम्हारा अभिप्राय मैं जानता हूं मैं आपसे भी नहीं डरता आप विष्णु हैं और ब्राह्मणकारूप धारणकर आये इसको छोड़ दीजिये यह सुन उन्होंने ब्राह्मणकारूप छोड़ दिया और अपना रूप धारण कर दधीचिने कहा कि तुम परमशिवभक्त हो इसलिये सर्वज्ञ हो तुमको किसीका भी भय नहीं परन्तु हमारे कहनेसे राजा क्षुपसे सभामें कहदो कि हम तुमसे डरते हैं जब दधीचिने न माना और कहा कि मैं शिव की कृपासे किसीसे भी नहीं डरता तबतो भगवानूको बड़ा क्रोध आया और दधीचिके दग्ध करनेके लिये चक्र उठाया परंतु कुंठित होगये उस समय राजा क्षुपभी वहीं था तब दधीचिने कहा कि आपको चक्र शिवजीसे मिला है इसलिये शिवभक्तोंपर नहीं चला अब आप किसी दूसरे अस्त्रसे मारनेका यत्न करें यह सुन सब अस्त्र एक साथ चलाये और देवता भी उनकी सहायताके लिये आये दधीचिने उस समय शिवजीका स्मरण किया और एक कुशाकी मुष्ट सब देवताओंपर फेंक दी जो कालाग्निके तुल्य त्रिशूल होगया उसने भी यही सोचा कि सब देवताओं को दग्धकर हूं इन्द्र विष्णु आदिने जो अस्त्र छोड़े थे वह सब त्रिशूलको प्रणामकरने लगे और देवता व्याकुल होकर भागगये विष्णुनेकरोड़ों गण अपने समान उत्पन्न किये परन्तु दधीचिने सबको एकहीवारमें भस्मकर दिया तबतो दधीचिको विस्मय करनेको विश्व रूपधारा दधीचिनें उनके शरीरमें करोड़ों देवता रुद्रगण और ब्रह्मांड देखे तब दधीचिने जलसे अभ्युक्षण करके कहा कि आप इस माया को छोड़ देवें। मैं आपको दिव्यदृष्टि देताहूं मेरे शरीर ही में आप,

-----

ब्रह्मा विष्णु रुद्र आदि करोड़ों देवता और ब्रह्मांड देखलीजिए इतना कह दधीचने अपने शरीरमें सम्पूर्ण विश्व दिखा दिया और कहा कि इन मायाओंसे कुछ फल नहीं आप इस मायाको त्याग युद्ध कीजिये मुनिका प्रभाव देखकर विष्णुजीको ब्रह्माने आकर युद्धसे हटाया। विष्णु भी दधीचको प्रणामकर अपने लोकको जाते भए। राजा क्षुप भी दुःखी होकर दधीचकी पूजाकर बारबार प्रणामकर कहने लगा आप मेरे अपराधको क्षमा कीजिए विष्णु अथवा और देवता भी आपका कुछ नहीं करसके आप परमशिवभक्त हैं यह भक्ति मुझसे अधम क्षत्रियोंको क्योंकर मिल सकती है।

इस लिए आप अनुग्रह करें और अपराध क्षमा किया जावे यह राजाका दीन वचन सुन उन्होंने अनुग्रह किया और सब देवताओंको शापदिया कि दक्षप्रजापति यज्ञमें विष्णु सहित सब देवता रुद्रके क्रोधरूप अग्निमें दग्ध होंगे।

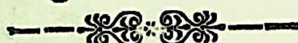
रुद्रकोपाग्निना देवाः सदेवेन्द्रा मुनीश्वरैः।
ध्वस्ता भवन्तु देवेन विष्णुना च समन्वितः॥

इस प्रकार युद्धकर मुनिने कहा कि सबसे बलवान् और पूज्य सदा ब्राह्मण हुआ करते हैं मुनि कुटीमें पधारे। जहां युद्ध हुआ उस स्थानका नाम स्थानेश्वर भया वहां जो शरीरको त्याग करें वह शिवलोकको पाते हैं और जो इस वृत्तान्तको पढ़ताहै वह अल्पमृत्यु को जीतता है और ब्रह्मलोकको जाता है।

देवश्च पूजा राजेन्द्र नृपैश्च विविधैर्गणैः।
ब्राह्मण एव राजेन्द्र बलिनः प्रभविष्णवः॥
इत्युक्त्वास्वोरजं विप्रः प्रविवेश महाद्युतिः।
दधीचमभिवन्द्यैव जगाम स्वं नृपः क्षयम्॥
तदेव तीर्थमभवत् स्थानेश्वरमिति स्मृतम्॥
स्थानेश्वरमनुप्राप्य शिवसा पूज्यमाप्नुयात्।

य इदं कीर्त्तयेद्दिव्यं विवाद क्षुवदधीचयोः।
जित्वाल्पमृत्युं देहान्ते ब्रह्मलोकं प्रयाति सः॥

श्वेतमुनिका शिवलिंगकी पूजाकर और जपकरके मृत्युको जीतना।



लिंगपुराण अ० ३० श्वेतमुनि एक पर्वतकी गुहामें रहते और तप करते थे जब उनकी मृत्यु समीप आई तब वह नमस्ते रुद्र मन्यवे इत्यादि रुद्राध्यायसे श्रीमहादेवजीकी स्तुति करने लगे इस अवसरमें कालभगवान् भी श्वेतमुनिका आयुष समाप्त हुआ जान उनको ले जानेके अर्थ उनके आश्रममें आए श्वेतमुनि भी काल को देख त्र्यम्बक भगवान्का स्मरण करते हुये पूजन करने लगे और कहने लगे कि हमारा मृत्यु क्या कर सकती है श्री महादेवजी के अनुग्रहसे हमही मृत्युके भी मृत्यु होगए उनको देख काल भगवान्ने हँस कर कहा कि हे श्वेतमुनि अब हमारे पास चले आओ इस पूजापाठसे क्या फल है, शिव, ब्रह्मा, विष्णु आदि कोई भी हमारे ग्रास किए जीवके छुड़ानेको समर्थ नहीं यह तुम्हारी आयुष समाप्त होगई है अब हम क्षणमात्रमें तुमको यमलोक में ले चलते हैं। यह कालका वचन सुन हा रुद्र हा रुद्र इस भांति ऊंचे स्वरसे श्वेतमुनि विलाप करने लगे और शिवजीके लिंगको दीन दृष्टिसे देखते हुए व्याकुल हो कालके प्रति कहने लगे कि हे काल इस लिंगमें हमारे प्रभुभक्तोंका भय हरने हारे श्री महादेवजी विराजमान हैं इस लिए तुम अपने स्थानको जाओ हमारा कुछ नहीं कर सकते यह श्वेत का वाक्य सुनते ही बड़े क्रोध से गर्ज कर काल भगवान्ने पाश से श्वेतमुनिको बांध लिया और कहा कि हे श्वेत! यमलोकमें लेजाने के अर्थ हमने तुमको बांधा है अब रुद्र ने क्या सहायता की कहां शिव कहां तेरी भक्ति तेरी पूजा और पूजा का फल इसी लिंगमें जो रुद्र स्थित हैं वह निश्चेष्ट हैं इस लिये उनकी

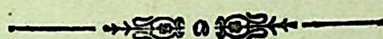
नोट—यह कथा स्पष्टरूपसे शिवको उच्च और विष्णु को न केवल शिवसे ही किन्तु उनके भक्त दधीचसे भी कमजोर (?) बनारहा है।

पूजा करना उचित नहीं इतना कहते ही नन्दीगण, पार्वती और शिवजी महाराज वहां प्रकट होगये तब तो काल भगवान् भयभीत हो भूमिपर गिरपड़ा तब श्वेतमुनिने प्रसन्न हो महादेवको सहित पार्वतीके प्रणाम किया आकाशसे फूलोंकी वर्षा हुई शिव जीका प्रभाव देख नंदीने प्रणामकर कहा कि महाराज यह मूर्ख काल अपने अज्ञानसे मृत्युवश भया अब इसके ऊपर कृपा कीजिये।

आर्य्यसेठ श्रीमान् पंडितजी ब्रह्मा विष्णु और महादेवजीके बड़प्पनको तो आप सुन चुके अब देवी महारानीके अद्भुत और अपूर्व गुणोंके सारको भी श्रवण करलीजिये।

सुयोग पंडितजी—बहुत अच्छा।

विष्णु महाराजकी निद्रा दूर करनेके अर्थ ब्रह्माजी का वम्रीको उत्पन्न करना जिसने धनुषको काटा शिर उनका लवण समुद्रमें गया फिर सब देवताओंका भगवतीकी तपस्या करना घोड़ेका शिर जोड़ना।



दैत्योंसे दश हज़ार वर्षोंतक युद्ध हुआ इसके पश्चात् वह किसी स्थानपर पद्मासन कर कंठमें धनुषकोटि लगा करके शयन कर रहे थे तो वेही कुछ दैवयोगसे बहुतही निद्रित हुए कुछ दिनोंके प-

---

नोट—क्यों महाराज कालका वास्तविक अर्थ तो समय है परन्तु लोकमें प्राणोंके वियोग का नाम काल है यद्यपि समयवाची कालकी नवद्रव्यों में संख्या है परंतु जो कि मृत्युका पर्यायवाची काल माना जाता है वह केवल, मृतप्राणवियोगका अर्थ देता है। विद्वज्जन विचार कर सक्ते हैं कि काल कोई वस्तु नहीं फिर उससे बातें करना और उसका बांधना यह बातें असम्भवादि दोषोंसे परिपूर्ण नहीं तो केवल इतना है कि सबप्रकारसे शिवका महत्त्व प्रकट हो, लिंग पूजाका प्रचार बढ़े।

पश्चात् ब्रह्मादि देवोंकी इच्छा यज्ञ करनेकी हुई इसलिये सर्वयज्ञोंके स्वामी विष्णुजीके समीप सम्मति लेनेको गये परंतु वैकुंठमें विष्णुजी को न पाया तब ज्ञानदृष्टिसे जहां विष्णु भगवान् थे वहां पहुंचे देखा कि विष्णुजी सोरहे हैं तब कुछ दिनोंतक आशा देखी कि अब जागे परन्तु न जागे तो इन्द्रने कहा कि किसीयत्नसे निद्राभंग करो परन्तु इस में बड़ा दूषण है तुम लोग यज्ञकार्य्यकी और युक्ति विचारो। तब ब्रह्मा जीने वम्रीनामक कृमि उत्पन्न करके विचारा कि जो यह धनुषको-टिका भक्षण करै तो जिससे कि हरि उसीपर कंठ धरे हुये शयन करते हैं। जाग उठेंगे यह उससे भी कहा तब वह वम्री बोली कि मैं निद्रा भंग न करूंगी क्योंकि लिखा है निद्राभंग, कथा छेद, स्त्री पुरुषकी प्रीतिमें भेद डालना, माता पुत्रको छुड़ादेना यह चार कर्म्म ब्रह्महत्याके समान हैं फिर जो कोई ऐसा काम करता है वह किसी लालचके कारण करता है सो हमको क्या मिलेगा? तब ब्रह्माजी नेकहा कि यज्ञमें जो होम कर्ममें कुछ अन्यत्र पायसादि पतित होगा वह तुम्हारा भाग होगा, अब जगानेकी युक्ति करो। यह सुन उसने धनुषका अग्रभाग भक्षण करलिया तबतो प्रत्यंचा चापसे भिन्न होगई उसके अन्यत्र होते ही ऐसा शब्द हुआ कि जिससे चतुर्द्दशभुवन क्षो-भको प्राप्त हुये, पृथिवी कंपित हो उठी, समुद्र खलबला उठे, सर्वजल-जन्तु बहने लगे प्रचंड पवन चलने लगी और पर्वत कांपने लगे, अनेक उल्कापात हुये, दिशाओंमें अंधकार छागया, सूर्य्य अस्त होगया, उस समयमें यह विदित न हुआ कि उनका शिर कुंडलसहित कहां चला-गया तब सब देवता रुदन करने लगे हा विष्णु जो अछेद्य अभेद्य थे उनकाशिर कृन्तत होगया अब हम लोग विना आपके कैसे जीवेंगे, इस संसारकी क्या दशा होगी।

एवं चिन्तयतां तेषां मूर्धाविष्णोः सकुंडलः।
गतः समुकुटः क्वापि देवदेवस्य तापसाः॥

दे० भा० स्कन्द १ अ० ५ श्लोक ३०।

दृष्ट्वा कबंधं विष्णोस्ते विस्मिताः सुरसत्तमाः ।
चिन्तासागरमग्नाश्च रुरुदुः शोककर्षिताः ॥

जब इस प्रकार वहां रुदन होने लगा तब बृहस्पतिजीने कहा कि अब रोने पीटनेसे क्या, कोई उपाय करना चाहिये यह सुन इन्द्र बोले कि दैव ही जो चाहता है वह होता है पुरुषको धिक् है जो हम सब के देखते ही देखते शिर कट गया अब क्या करें ।

देहवान् सुखदुःखानां भोक्ता नैवात्र संशयः ।
यथा कालवशात् कृत्तं शिरो मे शंभुना पुरा ॥४४॥

तथैव लिङ्गपातश्च महादेवस्य शापतः ।
तथैवाद्य हरेर्मूर्धा पतितो लवणाम्भसि ॥

सहस्रभगसंप्राप्तिर्दुःखं चैव शचीपतेः ।
स्वर्गाद्भ्रंशस्तथा वासः कमले मानसे सरे ॥ ४६ ॥

तब ब्रह्मा बोले कि जैसा समय आता है वैसाही होजाता है जैसा कि शम्भुजीने हमारा शिर काट डाला और महादेवका पात हो गया वैसाही विष्णुका शिर लवण समुद्रमें कटके जागिरा। इन्द्रके अङ्ग में सौ भग होगये यही इन्द्र कमलमें छिपे इससे यह ही समझना चाहिये कि संसारमें आकर किसको दुःख नहीं होता ।

एते दुःखस्य भोक्तारः केन दुःखं न भुज्यते ।
संसारेऽस्मिन्महाभागास्तस्माच्छोकन्त्यजन्तु वै ॥

अब चिन्ता न करो और सर्वजगजननी भगवतीका ध्यान करो तो सकल कार्य्य सिद्ध होंगे इतना कह वेदोंको आज्ञा दी जो कि मूर्तिको धारण किये आगे खड़े थे कि तुम महामाया, महाविद्या, जगन्माताकी स्तुति करो, वेद यह सुन अति विचित्र बड़ी स्तुति करने लगे ।

तच्छ्रुत्वा वचनं तस्य वेदाः सर्वाङ्गसुन्दराः ।
तुष्टुवुर्ज्ञानगम्या तां महामायां जगत्स्थिताम् ॥

अन्तको कहा कि हे देवी ! क्या तुम सिन्धुपत्नीसे अप्रसन्न हो इनको पतिहीन क्यों देखना चाहती हो अब अपने ही अंशसे उत्पन्न हुई लक्ष्मीके अपराधको क्षमा कीजिये और विष्णुको उठाके महालक्ष्मीको हर्षित कीजिये ।

सिन्धोः पुत्र्यां रोषिता किं त्वमाद्ये ।
कस्मादेनां प्रेक्षसे नाथहीनाम् ॥
क्षंतव्यस्तेस्वांशजातापराधो ।
व्युत्थाप्यैनं मोदितां मां कुरुष्व ॥ ६६ ॥

हे अम्बे ! यह हम नहीं जानते कि विष्णुका मस्तक कहां गया और उनके जीनेका अन्य उपाय क्या है जिस भांति अमृत जीवनके कर्ममें दक्ष है वैसे ही जगत्को जीवन देनेवाली तुम हो ।

मूर्धागतः क्वांबहरेर्न विद्मो ।
नान्योस्त्युपायः खलु जीवनेद्य ॥
यथा सुधाजीवनकर्मदक्षा ।
तथा जगज्जीवितदासिदेवि ॥ ६८ ॥

इसके पश्चात् आकाशवाणी हुई कि देवताओ सोच न करो जो इस वेदोंके किये हुए स्तोत्रको पढ़ेगा वह सर्ववांछित फल पावेगा।

अब इसका कारण सुनिये जिससे विष्णुका शिर कटा एक दिन की बात है कि लक्ष्मीजीका मुख देखकर हरिजी बहुत हँसे तब लक्ष्मीजीने जाना कि हमारे मुखमें कुछ दोष विचारकर हास्य करते हैं अथवा हमसे उत्तम कहीं स्त्री देखली है इस कारण हँसते हैं नहीं तो न हँसते यह विचार तामसी प्रकृतिका आश्रयकर लक्ष्मीजीने धीरेसे कहा कि आपका शिर गिर पड़े ।

शनकैः समवाचेदमिदं पततु ते शिरः ।
दे० भा० स्कं० १ अ ५ श्लो० ८०

स्त्रीस्वभाव, भावीवश और कालयोगसे ऐसा शाप दिया जिससे अपने ही सुखका नाश किया सौतके दुःखको विधवाके दुःखसे अधिक समझा ।

स्त्रीस्वभावाच्च भावित्वात्कालयोगाद्विनिर्गतः ।
अविचार्य तदा दत्तः शापः स्वसुखनाशन ॥

वासुदेवका शिर अभी संयुक्त होजायगा परन्तु शापयोगसे लवण समुद्रमें है इसमें एक प्रयोजन और भी है पूर्वसमयमें हयग्रीव नाम दैत्य सरस्वतीके तटपर एकाक्षरी अर्थात् बीजमंत्रको जपता था जब निराहार एक हज़ार वर्ष तप करते होगये तब उसने हमारी बड़ी स्तुतिकी तब मैंने कहा क्या अभीष्ट है उसने कहाकि मैं कभी न मरूं योगी होऊं सुरोंसे मेरी कभी हार न हो तब हमने कहा कि यह कभी नहीं होसक्ता क्योंकि जिसका जन्म होता है उसका मरण अवश्य होता अब तुम विचारसे वर मांगो तब उसने कहा कि यदि मृत्यु हो तो हयग्रीवसे अर्थात् जिसका शिर घोड़ेका हो अन्य सर्वाङ्ग चाहे जैसा हो यह सुन हमने कहा कि तू अपने घरको जा ऐसा ही होगा यह सुन वह निज गृहको गया हमारी मूर्त्ति अन्तर्द्धान हो गई इससे अश्वका मस्तक काटके त्वष्टासे कहो कि विष्णुके लगा दे ।

तस्माच्छीर्षं हयस्यास्य समुद्धृत्य मनोहरम् ।
देहेऽत्रविशिरोविष्णोस्त्वष्टासंयोजयिष्यति ॥
देवी भा० सं० १ अ० ६ श्लोक १०४

फिर यह किसी यत्नसे मर नहीं सकते यह सुन सब देवताओं ने भगवतीकी स्तुतिकी । और त्वष्टासे कहा कि ऐसाही करो, तब उन्होंने घोड़ेका शिर काटके विष्णुके कन्धेपर जोड़ दिया ।

इति श्रुत्वा वचस्तेषां त्वष्टा चातित्वरान्वितः ।
वाजिशीर्षं च कर्त्ताशु खड्गेन सुरसन्निधौ ॥१०८॥

विष्णोः शरीरे तेनाऽऽशु योजितं वाजिमस्तकं ।
हयग्रीवोहरिर्जातो महामायाप्रसादतः ॥१०९॥

बहुत दिनोंके पश्चात् जब वह दैत्य अति मदमें मस्त हुआ तब भगवान् हयग्रीवजीने उसको बध किया ।

नोट—क्या विष्णु महाराज सदा सोयाही करते थे ? यदि किसीकी निद्राभग्न करना पाप है तो उसके भागी ब्रह्मा भी हुए परन्तु ब्रह्माकी बुद्धि तो देखिये कि विष्णुके जगानेका उपाय क्या अच्छा सोचा कैसी असंभव बातोंसे इसकी रचना की गई । कि वम्री नामक कीड़े का उत्पन्न करना और फिर उससे बात होना फिर यह न जाने वह कैसी कल्पित प्रत्यंचा थी कि जिसके कटने से न केवल ।

२–धनुविडोल ही हुआ किन्तु सूर्य्य तक अस्त होगया परन्तु आश्चर्य्य यह कि ऐसी तो प्रत्यंचा और उसका काटने वाला एक कीड़ा (उ) जगाया क्या बिचारें विष्णुको मारने हीके पूरे ढंग कर दिये क्या ब्रह्माको पहिलेसे इतना भी ज्ञान न था कि ऐसा करनेसे विष्णु का शिर भी कट जायगा जो पीछेसे रोना पड़ा ।

३–क्या इन्हीं विष्णुको अछेद्य और अभेद्य कहते हैं और इन्हीं का नाम सर्वशक्तिमान् है ?

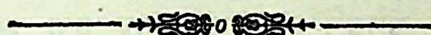
४–इससे स्पष्ट प्रकट है कि परमात्मा इन सबसे पृथक् है वरन् वृहस्पतिजी यह न कहते कि दैव जो चाहता है वह होता है ।

५ ब्रह्माजीने वेदोंको आज्ञा दी जिन्होंने स्तुतिकी पाठक गण क्या वेदभी शरीरधारी थे जो मूर्ति धारण किये स्तुतिकी ।

६–पतिव्रता स्त्री कभी अपने पतिको शाप नहीं देती तिस पर लक्ष्मी सी पतिव्रता स्त्री और विष्णु महाराजसे पति जिसपर लक्ष्मी का ऐसा शाप कि तुम्हारा शिर गिर पड़े ।

७–क्या कोई आयुर्वेदका जानने वाला ऐसी असम्भव बात लिख सक्ता है कि घोड़ेका शिर विष्णुके धड़पर जोड़ दिया ।

ब्रह्मा, विष्णु, शिवका स्त्री होना फिर देवीजीकी स्तुतिकर यथार्थज्ञान प्राप्त करना ।



देवी भागवत स्कंद ३के अध्याय ३ ब्रह्मांडकी उत्पत्ति का प्रश्न है वहां नारद जी स्कन्द २ में कहते हैं कि यही प्रश्न हमने अपने पिता ब्रह्माजीसे पूंछा था तो उन्होंने कहा कि तुमने विष्णुजी में भी शङ्का की ये वृत्तरागी कोई नहीं जानते किन्तु मत्सररहित विरक्त ही जानते हैं ।

एक समय हमने जलही जल देखा तो भयभीत हुये कि हम कहां से आये और हमारा रचनेवाला कौन है तब हम कमलके देखने को गये १००० वर्ष तक हमको धरती न मिली तब फिर हम कमल पर आ बैठे तब आकाशवाणी हुई कि तप करो फिर ४००० वर्षतक तप किया फिर शब्द सुनाई दिया कि सृष्टिकरो तब हमने सोचा कि कैसे करें इतनेमें मधुकैटभ दो दैत्योंने हमको भयभीत किया तब हम कमलके सहारे वहां पहुंचे जहां महा विष्णु योगनिद्रामें तपस्या कर रहे थे तब बड़ी चिन्ताकी और भगवतीकी स्तुतिकी कि विष्णु महाराजसे भगवतीनिकलकर आकाशमें स्थित हुई और विष्णुजी उठे ५००० वर्ष युद्ध करके अपने कोरामें उनके मुण्ड धरके काट डाले । उसी समय महादेवजीभी आये तब हम तीनों ने कहाकि अपनी सृष्टि, पालन,नाश युक्त हो कार्य्य करो तब हमने कहा कि सृष्टि कहां होगी न पृथिवी न भूतादि तब देवी आकाशसे आह्वान करके उसमें बिठाकर अद्भुत २ पदार्थ दिखाने लगी हमारा विमान ऐसे स्थान पर पहुंचा जहांसे जल दृष्टि नहीं आता था वहां नाना भांतिके फल वृत्तों में लगे हुए, पक्षी बोल रहे थे जहां पृथ्वी पर्वत नदी, स्त्री पुरुष आदि सब विद्यमान् थे आगे चलकर ब्रह्मलोकमें पहुंचे तब हम तीनोंसे पूंछा कि यह कौन ब्रह्मा है ? हमने कहा कि हम नहीं जानते । वहां भी सकल मूर्तिमान् नदी आदि थीं । फिर विमान कैलासपर पहुंचा जहां शिवजीके

पांच मुख, दश भुजा विद्यमान वहां सनातन विष्णुको बैठे देखकर बड़े आश्चर्य्यमें हुए फिर विमान आगेको चला तो अमृतका समुद्र देखपड़ा जहां जल जन्तु और अनेक प्रकारके वृक्ष जिनपर पक्षी बोल रहे हैं उसके निकट समुद्रमें एक शय्यापर एक अत्युत्तम वनिता बैठी है जो रक्तमाल अरुणवस्त्र लालचन्दनके अतिरिक्त कोटि विद्युद्दीप्त संयुक्त और अनेक लक्ष्मीकी शोभा सहित विराजमान है और ह्रीं इस मन्त्रसे पक्षीगण उसका जप करते हुए सेवा कर रहे हैं जिसके १००० नेत्रादि हैं। जिसको देख अति विस्मित हुए तब विष्णुजीने कहा कि यह आदिमाया आदिशक्ति भगवती है, यही सब वस्तुओंके बीज अपने शरीरमें रखकर महाप्रलयमें क्रीड़ा करती है प्रलयान्तमें हमको वट पत्रपर इसीके दर्शन हुए थे हमारे चरणका अंगूठा इसीने मुखमें डालाथा।

फिर विष्णुने कहा चलो स्तुति कर वर मांगो यह विचार, वहां पहुंचे, देखते २ स्त्री होगये तब बड़े विस्मयको प्राप्त हो भगवतीके चरणों के निकट जा पहुंचे जिनकी कोटि सहचरी सेवा कर रहीहैं वह हमारे जन्मका कमल भी था। इसी भांति १०० वर्ष तक देखते २ उन सब स्त्रियों के मध्य में हम भी स्थित रहे फिर एक दिन विष्णु स्तुति करने लगे और अनेक प्रकार से स्तुति की उसी में यह भी कहा कि हे देवी महाविद्ये! तुम्हारे चरणोंको हम प्रणाम करते हैं सब अर्थ देनेवाली और कल्याणरूपिणी जो तुम हो सो हमें सदा के लिये ज्ञानका प्रकाश देवो फिर शिवजी ने बड़ी प्रार्थना की और कहा कि अपना नवाक्षर मन्त्र हमें बतलाइये जिसको जप भवसागर से तरें। तब भगवती ने नवार्णव मन्त्रका उच्चारण किया जिसको ग्रहण कर महादेवजी जपनेमें लग गये कि महामाये आप को वेद नहीं जानते इस लिये हम अपने को जगत्का कर्त्ता समझते हैं और इसी अहंकारमें हम मान रखते थे सो आज यथार्थवादी होकर यह कहते हैं कि तुम्हारी ही कृपा से सब होता है अब तुमसे यही मांगते हैं कि इस वासनाको मिटा कर अपनी भक्ति दो जो मनुष्य तुम्हारी प्रभुताको नहीं जानते हैं वे हमको ही प्रभु कहते हैं। और

जो यज्ञादि करके इन्द्रादि लोकको जाते हैं वह भी तुमको नहीं जानते इस अपराधको क्षमा कीजिये तुम्हारी शक्तिसे युक्त हो हम संसारको बनाते हैं विष्णु पालन करते हैं हर नाश करते हैं इस भांति ब्रह्माने स्तुतिकर कहा एक ब्रह्म अद्वितीय जो लिखा है सो तुमही हो इसका उत्तर अपने ही मुख से दो और यह भी बताओ कि स्त्री हो या पुरुष जिससे हम भवसागर से तरें।

विष्णुभगवान्‌ने देवीका यज्ञ कर सामर्थ्य प्राप्तकी।

एक समयकी बात है कि श्रीहरिने वैकुंठमें बैठ स्थित भोगही सुधासागरके मध्यवर्ती मणिद्वीपका स्मरण किया जहां उस महामाया शक्ति भगवतीको देखा और अम्बायज्ञ करनेका विचार किया वैकुंठ से उतर कर महादेव ब्रह्मा, रुद्र, कुवेर, अग्नि, यम, वसिष्ठ कश्यप,दक्ष वामदेव बृहस्पति आदिको बुलाकर बड़ी पुष्कल सामग्री और देवीसे विधि पूर्वक यज्ञ किया अंतमें आकाशवाणी हुईकि हेविष्णु तुम सम्पूर्ण देवताओंमें श्रेष्ठ हो और सबमें मान्य पूजनीय और सामर्थ्यवान् होगे ब्रह्मा, रुद्र, आदि सकल देवता तुम्हारी पूजा करेंगे। मनुष्योंको तुमही वर दोगे सब यज्ञोंमें मुख्य पूजा तुम्हारी होगी दानवलोग तुम्हारी शरण आवेंगे जब २ धर्मकी ग्लानि होगी तब २तुम अपने अंशसे अवतारले धर्मकी रक्षा करो और सम्पूर्ण भुवनोंमें विख्यात होंगे और प्रत्येक अवतारमें वाराही, नृसिंही आदि एक शक्ति भी आपके संग रहेगी आप उसका खंडन अपमान न करना वरन पूजन करना जिससे भारत खंडके लोग पूजन करें और वे उन्हें सकल मनोर्थ देवे और मनुष्योंके पूजा करनेसे आपका यश होगा यह कह आकाश वाणी समाप्त होगई भगवान्‌ने यज्ञ समाप्त किया और देव-

ताओंको विसर्जन कर आप वैकुंठको चले गये आकाशवाणी को सुन सबके हृदयमें भगवतीका स्मरण स्थित हुआ।

श्रीरामचन्द्रने नवरात्रि व्रतकर रावणको मारा

देखो देवीभागवत स्कंद ३ अध्याय ३में लिखा है कि रामचन्द्र उदास बैठे थे वहां नारद आये कहा कि आप सोच क्यों करते हैं रावणके नाशका उपाय यह है कि क्वार मासमें विधि पूर्वक नवरात्रि व्रत कीजिये हम करा देंगे सब कार्य्य सिद्ध होंगे इस व्रतको पूर्वकाल में विष्णु महादेव, ब्रह्मा, इन्द्र, विश्वामित्र और परशुरामादिने कियाथा फिर श्रीरामने विधि पूंछी उसको उन्होंने कहा तब विधिपूर्वक श्रीरामजी और लक्ष्मणजीने नवरात्रि व्रत किया उस समय भगवती सिंह पर चढ़ गईं और दर्शन दे रामसे कहा कि मैं आपके व्रतसे प्रसन्न हूं वर मांगिये तुम नारायण अविनाशी हो दशमुखमारनके लिये तुम्हारा अवतार हुआ है वानरों की सहायता लेकर लंकापर चढ़ रावण को मारो यह कहकरके देवी चली गई रामचन्द्रजी ने ऐसा ही किया।

नोट—क्या यज्ञ करने से पूर्व विष्णु में यह सामर्थ्य न थी जो देवीने प्रसन्न हो उनको प्रदान की उधर शिवपुराण कह रहा कि विष्णु भगवान्ने शिवकी उपासनादि करके सर्वप्रकारकी सामर्थ्य प्राप्त की कहिये दोनों में क्या सत्य है

(१) पद्म पुराणमें लिखा है " कि एकादशीव्रतके प्रभावसे " रामचन्द्रने सेतु बांधा और विजय हुई।

(२) पौराणिकोंका यह आग्रह है कि " अत्र पूर्वं महादेव " इस वाल्मीकीय श्लोकानुसार रामचन्द्रने महादेवका पूजन किया परंतु इसमें लिखा है।

(३) कि रामचन्द्रने नवरात्रिमें दुर्गापूजन किया जिसके प्रभावसे सेतु बांध विजयी हुए। अब बताइये कि इसमें कौनसी कथा सत्य है?

श्रीविष्णुके कानके मैलसे मधुकैटभका उत्पन्न होना और भगवतीकी तपस्या कर वर प्राप्तकर विष्णुसे लड़ना विष्णुजी का भगवतीकी स्तुतिकर उसका मारना।

देवीभागवत स्कंद ७ व ८ व ९ में जब तीनों लोक एक आवरण मेंलीन होगये और जनार्दन भगवान् शेषशय्यापर शयन कर रहे थे कि विष्णुके कर्णके मैलसे मधु, कैटभ दो दैत्य उत्पन्न हुये और बहुत दिनों तक जलमें विचरते रहे एक दिन उन्होंने सोचा कि यह जल कहांसे आया और किसपर स्थित है हम कौन हैं हमारे माता पिता कौन हैं।

तब कैटभ, मधुसे कहने लगा कि यह सर्वशक्तिके आश्रय है उसी पर जल स्थित है यह विचार चिंता करने लगे तब आकाशवाणी हुई उसे उन्होंने ग्रहण करके अभ्यासकरना आरंभकर दिया तब आकाशमें बिजुली चमकी उससे उन्होंने मंत्र विचार किया फिर उन्हें आकाशमें सरस्वतीकी मूर्ति दिखलाई दी तब निराहार होकर उसीमें चित्त लगाया। १००० वर्ष तपस्याकी तब फिर आकाशवाणी हुई कि हम तुम से प्रसन्न हैं वर मांगो तब उन्होंने कहा कि जब हम कहें तभी हमारा मरण हो। आकाश वाणी हुई कि ऐसा ही होगा देवता और दैत्य तुम्हें न जीत सकेंगे वह बहुत दिनों तक जलजन्तुओंके साथ फिरते २ एक दिन उन्होंने पद्मपर स्थित ब्रह्माजीको देखकर उनसे कहा कि या तो लड़िये वरना निर्बल हो तो आसनको छोड़ चले जाइये क्यों कि यह वीरोंके योग्य है तुम डरपोक दीख पड़ते हो ब्रह्माजीने यह सोचा कि यह बलवान् और मैं तपस्वी हूं इसलिये उन्होंने जीतने के अर्थ विष्णुजीकी स्तुति करना आरम्भ करदिया बड़ी स्तुति करने पर न जगे तब उन्होंने योगनिद्रा भगवतीकी बड़ी स्तुति की हे भ-

गवती इन दैत्योंका वध कीजिये अथवा विष्णुजीको जगाइये नहीं तो यह हमें मारडालेंगे यह सुन परमकारुणिक योगनिद्रा विष्णुजीके सकल अंगोंसे विरक्त होकर ब्रह्माजीके निकट गई और भगवान् जागे वह दर्शन करके आनंदित हुये और बोले कि तुम यहां कैसे आये तब उन्होंने कहा कि जो आपके कानोंके मैलसे मधु कैटभ दो दैत्य उत्पन्न भये हैं वह हमें मारनेपर उद्यत हैं उन्होंने कहा चिन्ता मत करो हम उनको मारेंगे दैत्य वहां पहुंचे और ब्रह्मासे कहा कि ऐसे छिपकर तुम न बचोगे पहिले तुम्हें मारकर फिर इनको भी मारेंगे तब हरिने कहा कि यदि तुम्हारी लड़नेकी इच्छा हो तो हमसे लड़ो युद्ध होने लगा पहिले मधु और उसके थकनेपर कैटभ भिड़ा ब्रह्मा और भगवति अन्तरिक्षमें देखरहे थे लड़तेहुए जब ५००० वर्ष बीतगये तब भगवान्ने विचारा कि यह थकते नहीं और हम थकितसे होगये हैं तब वे दोनों दैत्य बोले कि यदि बल न रहा हो तो कह दो कि अब हम तुम्हारे दास हैं नहीं तो युद्ध करो तुम्हें मारकर इन चार मुखवाले को मारेंगे जो यह खड़े हैं तब भगवान्ने कहा कि हमको लड़ते २ अकेले ५००० वर्ष होगये हैं और तुम बारी २ से लड़ते हो इस लिये हम भी सस्ता लें तब वह दूर खड़े होगये तब विष्णुने सोचा तो मालूम हुआ कि इनको देवीका वरदान है तब उन्होंने भगवतीकी बड़ी स्तुति की तब भगवतीने कहा कि आप युद्ध करिये हम उन्हें मोहित करती हैं वे आप मृत्यु मागेंगे अब देर न कीजिये भगवान् युद्ध करने लगे भगवतीने अपना उत्तम रूप धारणकर कामबाणसे उनको ऐसा मोहित किया कि वे व्याकुल होगये जब हरिने यह दशा देखी तब दैत्योंसे कहा कि हम तुमसे प्रसन्न हैं वर मांगो वही दें क्योंकि ऐसा युद्ध आज तक किसी दैत्यने नहीं किया तब वह महाअभिमानी भगवती करके मोहित बोले कि हम याचक नहीं हां हम भी आपके युद्धसे प्रसन्न हैं आप वर मांगिये तब हरिने कहा कि यदि तुम हमसे प्रसन्न हो तो यही वर दो कि तुम हमारे हाथोंसे मरो यह सुन दानवोंने सोचकर कहा कि हम छले गये और सब तरफ़ जलको

देखकर बोले कि जहां निर्जल देश हो वहां मारिये यही वर देते हैं कि आपके हाथोंसे मरें यह सुन विष्णुने सुदर्शन चक्रका स्मरण किया और वह आये तो अपनी जङ्घाको फैलाकर कहा कि देखलो यहां जल नहीं है हमने अपना वचन सत्य किया तुम भी अपना वचन पाल इस पर अपना शिर धरो हम काट डालें यह सुन उन्होंने अपनी देही हज़ार योजनकी करली तब विष्णुने दोहज़ार योजनमें अपनी जङ्घा फैला दी तब उन्होंने जाना कि इस प्रकारसे न बचेंगे अपन। २ शिर धर दिया उन्होंने चक्रसे काट डाला उनके मेदससे सकल संसार व्याप्त होगया और उसीसे पृथिवी बन गई इसी हेतुसे इसका नाम मेदिनी हुआ इसी कारण मृत्तिकाको कभी खाना न चाहिये और इसी हेतु भगवती सब जगतमें बन्दनाके हेतु है। और यही कथा मत्स्यपुराण अध्याय १६९ में लिखी है।

नोट—विष्णुके कान थे वा क्या ? वैद्यकशास्त्रमें तो स्त्रीके वामकुक्षिमें गर्भाशयकी स्थिति लिखी है परन्तु यहांकी व्यवस्था ही निराली है कि पुरुष रूपी विष्णुके दक्षिण और वाम दोनों कानोंमेंसे पुत्रोत्पत्ति हुई यदि हम थोड़ी देरके लिये इस कथाको मानलें कि विष्णुसे पुत्रोत्पत्ति हुई तब यह शंका उत्पन्न होती है कि जैसा जिसका कारण होता है वैसाही उसका कार्य्य होता है तो विष्णु जैसे सात्विकी पुरुषसे उन राक्षसोंकी उत्पत्तिका होना भी आश्चर्यजनक है।

(२) इसके उपरांत मैलमें उत्पादन शक्ति नहीं वह एक प्रकार का शारीरिक विष है जिसमें से दोनों कानोंके द्वारा दो दैत्य उत्पन्न होगये और बड़े होकर जलपर क्रीड़ा भी करने लगे परन्तु विष्णुको ख़बर तक नहीं कि क्या होरहा है जो उनकी सर्वज्ञताका बाधक है।

(३) अब सुनिये कि बिजुलीसे मंत्र सीख और आकाशमें सरस्वतीकी मूर्तिको देख तपस्या कर देवीसे वर पाकर सबसे पहिले ब्रह्मा हीको सताया और ब्रह्माने अपने आपको बलहीन समझ विष्णुकी स्तुतिकी क्या इन्हीं ब्रह्माने सृष्टि उत्पत्तिकी और यही अंशावतार हैं

(४) फिर न केवल ब्रह्माही की ख़बर ली किन्तु उन्होंने विष्णु तकको परास्त किया तब विष्णुने देवीकी स्तुतिकी कृपया इस कम को और ईश्वरावतारको विचारपूर्वक मिलाइये तो सार यही निक-

लता है। कि यह सब देवीकी महिमा बढ़ानेको कपोलकल्पना रची गई।

(५) इधर तो देवीजी वे उनको वरदान दिया फिर उनको कामबाणसे पीड़ित किया क्या यही न्याय है।

(६) जब दैत्य देवी पर आसक्त होगये तब विष्णुनें कहाकि हम तुमसे प्रसन्न हैं वर मांगो कहिये सनातनी भाइयो यहां दैत्योंने कौनसा काम वर पानेका किया जिससे विष्णु वर देने लगे यदि वे देवी पर आसक्त होगये इस कारणसे विष्णु प्रसन्न होकर देने लगे तो बताइये कि यह कौनसे मनुष्योंका काम है।

(७) परन्तु हमारी सम्मतिमें दैत्य विष्णुसे बुद्धिमान् थे और कहाभी सच कि वर मांगे जो याचक हो क्योंकि मांगना छोटेका कामहै तुमही हमसे वर मांगो जब विष्णुने अपने आपमें उसके मारनेकी शक्ति न देखीतो उनको छलसे मारनेका यत्न किया क्या ऐसेही विष्णु पृथ्वीका भार उतारनेको जन्म लेते हैं।

(८) कहिये इस बातका कहीं अंत है कि ८००० कोसमें जांघ फैलादी धन्य है......... ।

(९) हमारे सनातनी भाई इसपर ध्यान दें कि दैत्योंके मेदसे यह मेदिनी नाम वाली पृथिवी रची गई है जिसके लिये लिखा है कि मृत्तिकाको खाना न चाहिये अब भी आप पार्थिव पूजा करेंगे और हमारे पौराणिक भाइयोंको पृथिवीसे उत्पन्न हुई वस्तु भी न खानी चाहिये क्या इससे पूर्व पृथिवी न थी यदि नहीं तो विष्णु इत्यादि कहां रहते थे और जल किस पर स्थित था यदि विचारपूर्वक देखिये तो पुस्तकनिर्माता असम्भवादि दोषोंके कारण षट्शास्त्रोंसे नितान्त विरुद्ध है क्योंकि शास्त्रकार ३ पदार्थोंको अनादि मानते हैं ईश्वर, जीव प्रकृति—परन्तु इनकी विद्या ही निराली है कि पृथ्वी दैत्यमेदसे बनगई।

श्रीमान् पंडितजी—अब सेठजी समाप्त कीजिये क्या ऐसी २ और भी कथायें हैं।

आर्य्य सेठ—महाराज अनेकान भरी हैं मैंने तो आपको बहुत ही कम सुनाई हैं इसके उपरांत भविष्यपुराणमें सूर्य्यनारायण और गणेशपुराणमें गणेशजी महाराजका बड़प्पन दिखलाया है कहिये श्रीमान् क्या इन कथाओंसे तीनों देवा एक ही सेवासे प्रसन्न होना प्रकट होता है।

पंडितजी—कदापि नहीं—सत्य तो यह है यह सब कथायें व्यासप्रणीत मालूम नहीं होतीं।

आर्य्यसेठ—जो कुछ आपके विचारमें आवे। अब मैं समाप्त करता हूं। ओ३म् शम्।

श्रीमान् पंडितजी व अन्य सभ्यगणोंने चलने की तय्यारी की

आर्य्यसेठ—श्रीमान् नमस्ते

पंडितजी—आयुष्मान्

अन्य सभ्य पुरुषोंने श्रीमान्को यथायोग्य कहा और चल दिये आर्य्य सेठ—भोजनादि कार्य्य में लग गये—

इतिपञ्चम परिच्छेदः

षष्ठ परिच्छेद।

आर्य्य सेठ—श्रीमान् को आतेदेख उठ दोनों हाथ जोड़ नमस्ते कर कहा कि आइये, पधारिये।

पंडितजी—आयुष्मान् कह विराजमान हुए इतनेमें अन्य महाशयगण भी आते गये।

आर्य्य सेठ—ने सबको नमस्ते किया सज्जन महाशय गण यथायोगके पश्चात् विराजमान होते गये ।

आर्य्यसेठ—पंडित जी महाराज आप आर्य्योंसे इस कारण से अप्रसन्न हैं कि वह अजन्मा ईश्वरको जन्मवाला नहीं मानते और न वह ईश्वरावतारोंकी प्रकृतिकी बनी हुई प्रतिमाओंका पूजन करते हैं श्रीमान् को सबसे प्रथम यह जानना चाहिये कि जन्म, मरण कर्म से होता है और परमात्मा कर्म करता है या नहीं यदि कर्म करता है तो उसका जन्म होना सम्भव है वरनह नहीं देखिये।

ऋ० मं० १ सू० १६४ मं० १० में लिखा है ।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षम् परिषस्वजाते । तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्नन्न्यो अभिचाकशीति ॥

(द्वा) दो जीव और ब्रह्म (सुपर्णा) पक्षी हैं (सयुजा) इकट्ठे मिले हुए व्याप्य, व्यापक भावसे संयुक्त (सखाया) परस्पर मित्रतायुक्त सनातन और अनादि हैं (समानम्) एक (वृक्षम्) शरीररूपी वृक्षपर (परिषस्व जाते) मिले हुए रहते हैं (तयोः) इन दोनोंमें (अन्य) एक (पिप्पले) अपने किये हुए कर्मरूपी फलोंको (स्वादु) स्वादपूर्वक (अत्ति) खाता है (अन्यः) दूसरा ब्रह्म (अनश्नन्) विना खाये (अभिचाकशीति) बड़ाभारी बलवान् है ।

शिवपुराण वायुसंहिता अध्याय ४ श्लोक ९४ में लिखा है दो सुपर्ण अर्थात् परमात्मा और जीव समान अवस्थामें सखा हैं देहरूपी वृक्षमें समानतासे स्थित एक जीव इसमें कर्मफलको भोगता है अर्थात् वृक्षके फल खाता है और दूसरा देखता है । जैसा कि:—

द्वौ सुपर्णौ च सयुजौ समानं वृक्षमास्थितौ । एकोऽत्ति पिप्पलं स्वादुपरोऽनश्नन्प्रपश्यति ॥

श्रीमद्भागवत स्कन्द ११ अध्याय १०में श्रीकृष्णमहाराजने उद्धवजीसे कहा है कि आत्मा और परमात्मा यह दोनों पक्षी चैतन्यरूप, शरीररूपी वृक्षपर बैठे हुए हैं जिनमें एक इस शरीरके फलको भोगता है दूसरा साक्षी होकर देखता है परन्तु भोगता नहीं तो भी ज्ञानशक्तिकर अतिबलिष्ट है।

सुपर्णावेतौ सदृशौ सखायौ यदृच्छयैतौ कृतनीडौ वृक्षे। एकस्तयोः खादति पिप्पलान्नमन्यो निरन्नोऽपि बलेन भूयान् ॥ ६ ॥

अर्थात् परमात्मा कर्म नहीं करता इस कारण फल भी नहीं भोगता फिर अवतार कैसा ? हां जीव कर्म करता है वही भोगता है देखिये यजुर्वेद अध्याय ४० मं० ४में लिखा है कि जो ब्रह्म अद्वितीय, अचल मनके वेगसे भी अतिवेगवान्, सबसे आगे चलता हुआ अर्थात् जहां कोई चलकर जावे वहां प्रथम ही सर्वत्र व्याप्तिसे पहुंचता हुआ ब्रह्म है इस पूर्वोक्त ईश्वरको चक्षु आदि इन्द्रिय नहीं प्राप्त होते। वह ब्रह्म अपने आप स्थिर हुआ, अनन्त व्याप्तिसे विषयोंकी ओर गिरते हुए आत्माके स्वरूपसे विलक्षण मन, वाणीआदि इन्द्रियोंका उल्लङ्घनकर जाता है। उस सर्वत्र व्यापक ईश्वरकी स्थिरतामें अन्तरिक्षमें प्राणोंका धारण करने हारा वायुके समान जीव कर्म वा क्रिया को धारण करता है जैसा किः—

अनेजदेकं मनसो जवीयो
नैनद्देवा आप्नुवन्पूर्वमर्षत्।
तद्धावतोऽन्यानत्येति
तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ॥

ऐसा ही पुराण भी पुकार २ कर कहरहे हैं देवीभागवत स्कन्द ४ अध्याय २ में लिखा है कि इस त्रिगुणयुक्त ब्रह्माण्डकी उत्पत्ति कर्म

होसे होती है जीवका आदि अन्त मध्य कुछ नहीं। कर्मरूपी बीजसे योनियोंमें उत्पन्न होता है। और मरता है कर्म विना देहसंयोगके कभी नहीं होसकता शुभ, अशुभ मिश्रित इन्हीं कर्मों करके जीव बँधा हुआ है कर्म तीन प्रकारके होते हैं १ संचित२ भविष्य३ प्रारब्धिक। जो देहमें विद्यमान रहते। ब्रह्मादि देव सबकर्मके वशमें हैं और सुख दुःख, कीर्ति, मरण, हर्ष शोक, काम, क्रोध, लोभ यह सब देहके गुण हैं दैवाधीन हैं और रागद्वेषादि भाव स्वर्गमें भी देवता मनुष्य और तिर्यग्-योनिके होते हैं चाहे पूर्वके वैरयोगसे और चाहे स्नेहके योगसे ये विकार देहके साथ ही उत्पन्न होते हैं सब जन्तुओंकी उत्पत्ति विना कर्म नहीं होती कर्मसे ही सूर्य्य चलता है, चन्द्रमा क्षयीरोगसे पीड़ित होता है, महादेव खुपड़ियोंकी माला पहिनते हैं। इस अनादि निधन संसारका कारण कर्म ही है। तिससे यह स्थावर जङ्गम संसार नित्य ही है। इससे इसका बीज कर्म ही है यह जगत् कर्म करके बँधा हुआ भ्रमणकर रहा है और नाना योनियोंमें विष्णुजीके जन्म होते हैं यदि इच्छासे हों तो नीच योनियोंमें क्यों होते। कर्म हीके वश जीवात्मा गर्भवासमें आता है जिसके समान कोई दुःख नहीं विष्टा, मूत्रका घर जिसमें आंतोंसे बँधा हुआ जीव रहता है यदि कर्माधीन न होता तो क्यों ऐसे २ दुःख सहता, गर्भवाससे परे संसारमें अन्य दुःख नहीं। इसी कारण मुनिजन संसारी भोगोंको छोड़ योग करते हैं। गर्भमें कृमि काटते हैं; नीचे उदरकी अग्नि प्रज्वलित होती है उससे जलता रहता है इस हेतु इस गर्भवाससे बन्दीगृहमें बेड़ी पहिनकर रहना अच्छा है क्योंकि गर्भवासमें क्षण २ कल्पके समान बीतता है प्रथम दश मास तक गर्भवासके दुःख फिर अतिसङ्कीर्ण योनिमार्गसे निकलना फिर बाल-भावके अनेक कष्ट, कि न बोल सकते, न अपने कुछ कार्य्य सकते हैं भूख, प्यास कुछ भी नहीं बता सकते तिसपर माता औषधि पिलाती हैं कहां तक वर्णन करें नाना प्रकारके कष्ट जीवको बाल्यावस्थामें होते हैं इससे यह स्पष्ट प्रकट है कि गर्भमें सुखपूर्वक कोई नहीं आता किन्तु कर्म करके प्रेरित हुए सब आते हैं।

पद्मपुराण—षष्ठ उत्तरखंड अध्याय १३२में लिखा है कि देवता और ऋषिभी कर्मों से बंधे हुए हैं कैलास पर्वतमें महादेवजीकी देहमें स्थित सांपविषका भोजन करतेहैं अमृत भोजन करनेको असमर्थ हैं क्योंकि कर्म्मकी योनि बड़ी बलवान् है। महादेव ब्रह्मादि देवता मनुष्य और असुर यह सब कर्मों से बंधे हुए पृथ्वी पर घूमते हैं।

देवा वै कर्मभिर्बद्धा ऋषयश्च तथापरे ।
कैलासे रुद्रदेहस्था भुजंगाविषभोजिनः ॥ १२० ॥

असमर्थाः सुधा भोक्तु कर्मयोनिर्बलीयसी ।
रुद्रब्रह्मादयो देवा मानवाश्चासुराश्च ये ॥ १२३ ॥
ते सर्वे कर्मबद्धाश्च विचरंति महीतले ।
कर्माधीन जगत्सर्वं विष्णुना निर्मितं पुरा ॥ १२४ ॥

शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय ३९में लिखा है यह सारा जगत् कर्मसे स्थित है, सब कर्मके बन्धनमें पड़े हुए हैं, कर्मसे सुख दुःख होते हैं।

सुखं च जायते तेन दुःखं तेनापि संभवेत् ।
तस्माच्च पूज्यते कर्म सर्वं च कर्मणिस्थितम् ॥

पताळखंड अध्याय ३९में लिखा है श्रीरामचन्द्र महाराजने कहा है कि कर्म्मसे स्वर्ग मिलता है। व कर्म्मसे प्राणी नरक को जाता है। कर्म्म हीसे पुत्र पौत्रादिक सब होते हैं। इन्द्र सौ अश्वमेध यज्ञ करके परमपद इन्द्रासनको प्राप्त हुए ब्रह्मा भी कर्म हीसे अद्भुत सत्यलोक को प्राप्त हुए। ४५। ४६।

कर्मणा प्राप्यते स्वर्गः कर्मणा नरकं व्रजेत् ।
कर्मणैव भवेत्सर्वं पुत्रपौत्रादिकं बहु ।

शक्रःशतं क्रतूनांतु कृत्वाऽगात्परमं पदम् ।
ब्रह्मापि कर्मणाल्लोकं प्राप्य सत्याख्यमद्भुतम् ॥

ब्रह्मवैवर्त्त पुराणके गणपति खंड अध्याय ११ में शनिश्चर ने पार्वतीसे कहा है कर्मसे ही जीवजन्तु होते हैं तथा नरक और स्वर्ग के दुःख सुख को पाते हैं अर्थात् कर्मोंके द्वारा ही समस्त कार्य्य सिद्ध होते हैं।

कर्मणा जायते जन्तुर्ब्रह्मेन्द्रसूर्यमन्दिरे ।
कर्मणा नरकं याति वैकुण्ठं याति कर्मणा ॥

श्रीमद्भागवत स्कन्द १० पूर्वार्द्ध के अध्याय २४ में कृष्ण महाराजने कहा है कर्मके प्रभावसे जीव जन्म धारण करते हैं कर्मसे ही देह का त्याग होता है सुख, दुःख, कल्याण, भय, क्षेम कर्मसे ही प्राप्तहोती है ईश्वर कर्मानुकूल पुरुषों को फल देते हैं।

अस्तिचेदश्वरः कश्चित् फलरूप्यन्यकर्मणाम् ।
कर्त्तारं भजते सोपि न ह्यकर्तुः प्रभुर्हि सः ॥

य० अ० २ मं० २८ में लिखा है कि जो जैसा कर्म करता है वैसा फल पाता है विपरीत कभी नहीं। इसलिये धर्मयुक्त ही कार्य्य करना चाहिये।

अग्ने॑ व्रतपते व्र॒तमं॑चारिषं॒ तद॑शक॒ं तन्मे॑ऽराधि॒ दम॒हं य ए॒वास्मि॒ सो॒ऽस्मि ॥ २८ ॥

वह परमेश्वर कभी माता पिता के संयोग से उत्पन्न नहीं हुआ न होता है न होगा और न वह शरीर धारण करके बालक, तरुण और वृद्ध होता है उसकी प्रतिमा किसी प्रकार की नहीं क्योंकि वह मूर्त्ति अनन्त सीमा रहित सब में व्यापक है जो तेज वाले सूर्यादि के उत्पन्नका कारण है जैसा य० अ० ३२ मं० ३ में लिखा है।

और अध्याय ४९ मन्त्र ८में कहा है कि वह परमेश्वर जो सबका जानने वाला और सबके मनका स्वामी सबके ऊपर विराजमान् और अनादिस्वरूपसे जो अपनी प्रवाहरूपसे अनादिस्वरूप प्रजाको अन्तर्यामिरूपसे और वेदके द्वारा सब व्यवहारोंका उपदेश किया करता है जो सबमें आकाशके तुल्य व्यापक,अत्यन्त पराक्रमी "स्थूल सूक्ष्म लिङ्गशरीरसे रहित,, एवं फोड़ा फुंसी आदि विकारोंसे तथा नाड़ी, नसोंके बन्धनसे पृथक्, सब दोषों से अलग शुद्ध और सब पापोंसे रहित है।

सपर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धं । कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः ।

ऐसा ही पुराणों में लिखा है देखो

देवी भागवत स्कंद ३ अध्याय ६ श्लोक ७० में लिखा है कि जितने पदार्थ संसारमें दृष्टि आते हैं वे सब त्रिगुणयुक्त होते हैं निर्गुण तो संसारमें न हुआ न होगा निर्गुण एक परमात्मा है जो कभी दृष्टि नहीं आता जैसा कि ।

दृश्यं च निर्गुणं लोके न भूतं न भविष्यति ।
निर्गुणपरमात्मासौ न तु दृश्यः कदाचन ॥

अ० ७ श्लोक ९ में ब्रह्माजीने कहा है कि निर्गुणका रूप नहीं होता जो दृष्टिगोचर होसके, जो पदार्थ दीख पड़ता है उसका नाश अवश्य होता है और अरूप दृष्टिमें नहीं आता ।

ब्रह्मोवाच ।

निर्गुणस्य मुने रूपं नभवै दृष्टिगोचरम् ।
दृश्यं च नश्वरं यस्मादरूपं दृश्यते कथम् ॥

विष्णुपुराण अंश २ अ० १४ श्लोक २९ में लिखा है कि वह एक सर्वव्यापक, समान, रूप, शुद्ध, निर्गुण, प्रकृतिसे परे जन्म वृद्धि मरणादिसे रहित सबमें गत अवयव आत्मा है।

एको व्यापी समः शुद्धो निर्गुणः प्रकृतेः परं।
जन्मवृद्ध्यादि रहित आत्मा सर्वगतोऽव्ययः ॥२९॥

श्रीमद्भागवत स्कंद १२ अध्याय ५ में लिखा है कि शरीर सत, रज, तमके कारण उत्पन्न होता है परमात्मा न जन्मता, न मरता है वह स्थूल, सूक्ष्म शरीरसे परे स्वयं प्रकाशवान, निर्विकार अनंत और निरुपम है।

न तत्रात्मा स्वयं ज्योतियो व्यक्ताऽव्यक्तयोः परः।
आकाशइवचाधारो ध्रुवोऽनन्तोपमस्ततः ॥

कूर्मपुराण—में लिखा है कि परमेश्वर रूप रस गंध हाथपैर आदिसे रहित अन्तर्यामी है जो बहुत शीघ्र चलता है जो विना नेत्रोंके देखता है और विना श्रावणके सुनता है।

अपाणिपादो जवनो गृहीता हृदिसंस्थितः।
अचक्षुरपि पश्यामि तथाकर्णः शृणोम्यहम् ॥

लिङ्गपुराण—अध्याय १ में लिखा है कि वह जन्म मरण आदि से रहित है और सर्वव्यापक है।

प्रधान पुरुषातीतं प्रलयोत्पत्ति वर्जितम् ॥

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण—ब्रह्मखण्ड अ० २ में लिखा है कि वह ईश्वर रोग, बुढ़ापा, मृत्यु, शोक, भयसे रहित है।

आधिव्याधिजरामृत्युशोकभीति विवर्जितम्।

पद्मपुराण सृष्टि—खंड अ० ३में पुलस्त्यजीने कहा है—

परः पराणां परमः परमात्मा पितामहः।
रूपवर्णादिरहितो विशेषणादिवर्जितः ॥ ८ ॥

सब परोंसे परे है इससे परमात्मा कहाता है। वे रूप, वर्णादिकों से रहित हैं वे महतत्वादिसे विवर्जित हैं ॥ ८४ ॥

अपक्षयविनाशाभ्यां परिणामर्द्धिजन्मभिः।
गुणैर्विवर्जितः सर्वैः समातीति हि केवलम् ॥ ८५ ॥

वृद्धि विनाशसे भी रहित हैं इससे उनका अंत कभी नहीं होता व सत, रज, तम गुणोंसे भी रहित हैं जो सदा प्रकाशित रहते हैं। ८५।

सर्वत्राऽसौसमश्चापि वसन्ननुपमोमतः।
भावयन्ब्रह्मरूपेणविद्वद्भिः परिपठ्यते ॥

सब कहीं सब जड़ों व चैतन्योंमें उनकी समान मूर्ति रहती है इससे उनकी उपमा किसीके साथ नहीं देसकते।

तं गुह्यं परमं नित्यमजमक्षयमव्ययम्।
तथा पुरुषरूपेण कालरूपेण संस्थितम् ॥

इसीसे इनको ब्रह्मरूपसे सब जगत्को भावित करने वाला मुनि लोग कहते हैं वह परमगुह्यरूप सदा विद्यमान्, अज, नाशरहित अव्यय व पुरुषरूप, कालरूपसे स्थित हैं।

द्वितीयखण्ड अ० ६३में सुकर्माजीने कहा है गतिहीनपर सब कहीं चलाजाता है उसका कुछ रूप नहीं, पर सर्वत्र दिखलाई देता है। हाथ नहीं परन्तु सब पदार्थोंको ग्रहण करता है। पाद् नहीं परन्तु अति वेगसे दौड़ता है।

गतिहीनो व्रजत्सोऽपि स हि सर्वत्र दृश्यते।
पाणिहीनोऽपि गृह्णाति पादहीनः प्रधावति ॥

पद्मन पातालखंड अध्याय ८२में लिखा है कि वह हस्तपादसे रहित है तोभी सब कुछ करता है व सब कहीं चला जाता है व सब स्थावरजंगमविश्वको ग्रहण करता है। हे महीपाल! मुख, नासासे विहीन, पर खाता व सूंघता। कान नहीं पर सुनता सब कुछ है व वह जगत्पति सबोंका साखी है।

> हस्तपादविहीनश्च सर्वत्र परिगच्छति ।
> सर्वं गृह्णाति त्रैलोक्यं स्थावरं जंगमं पुनः ॥
> नासामुखविहीनस्तु घ्राति भक्षति भूपते ।
> अकर्णः शृणुते सर्वं सर्वसाक्षी जगत्पतिः ॥

वायुपुराण अध्याय ४ श्लोक १८में कहा है कि परमात्मा गंध, वर्ण, रस रहित है शब्द, स्पर्शसे पृथक् है। कभी उत्पन्न और नाश नहीं होता वह स्वयं ही स्थित है।

> गन्धवर्णरसैर्हीनं शब्दस्पर्शविवर्जितम् ।
> अजातं ध्रुवमक्षय्यं नित्यं स्वात्मन्यवस्थितम् ॥

शिवपुराण—वायुसंहिता अध्याय ४में लिखा है कि परमात्मा के सब ओर हस्त, चरण, नेत्र, मुख, शिर हैं और सब ओर इन्हींके कारण हैं यह सबको आवरण करके स्थित हैं विना नेत्रके देखते विना कानके सुनते हैं जो सबको जानते और जिनका जानने वाला कोई नहीं उसीको पुराणपुरुष कहते हैं यह सूक्ष्म से सूक्ष्म' महान्से महान् और अविनाशी वही परमेश्वर इसप्राणीके हृदयमें स्थित है। ८५-८६-८७

> सर्वत्र पाणिपादोऽयं सर्व्वतोऽक्षि शिरोमुखः ।
> सर्व्वतः श्रुतिमांल्लोके सर्व्वमावृत्य तिष्ठति ॥
> अचक्षुरपि यः पश्यत्यकर्णोऽपि शृणोति यः ।
> सर्व्वं वेत्ति न वेत्तास्य तमाहुः पुरुषं परम् ॥

महाभारत शांतिपर्वमें लिखा है कि मोक्षका देने वाला परमात्मा न ठण्डा है, न गर्म्म है, न कोमल है, न कठोर है, न खट्टा है, न कषैला है, न मीठा है, न तीखा है, न वह शब्दयुक्त न गन्ध-विशिष्ट है वह इन्द्रियरहित है उसके स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर भी नहीं। वह सूक्ष्मसे सूक्ष्म महत्से महत है उसमें ही सब भूत लीन हुआ करते हैं। वह सदा निश्चल भावसे निवास करता है तो भी वह किसीके दृष्टिगोचर नहीं होता इसी प्रकार इन पुराणोंमें अनेकान लेख हैं उनको हम विस्तारभयसे नहीं लिखते। इसके उपरांत जिस ई-श्वरकी आज्ञानुसार सूर्य्य, चांद, पृथ्वी, तारे पशु और पक्षी अग्नि, वायु, जल, आदि सब अपना २ कार्य्य कर रहे हैं, जिसकी आज्ञा पहाड़ोंकी कंदराओं और समुद्रकी तहोंमें यथावत् पालन होरही है जिसके ब्रह्माण्डकी रचनाको देख पूर्ण तत्ववेत्ताओंके छक्के छूट जाते हैं उसकी अपार महिमाका आज तक मुनिजनोंने भी पार नहीं पाया जिसके गुणोंका कीर्त्तन महात्माजन न कर सके उसके भेद योगी राजोंने भी अच्छे प्रकार न पाये। जिसने वनोंमें शेर, हाथीको उत्पन्न किया जंगलमें नाना प्रकारके वृक्षों और घासोंको उगाया पृथ्वी पर अद्भुत और अपूर्व पहाड़ और समुद्रोंको रचा जिसके न्याय प्रतापसे बड़े २ राजे महाराजे बली पहलवान ऋषि, मुनि महात्मा डाकू और तस्कर सब ही अपनी २ करनीके फलोंको भोगते चले जाते हैं अर्थात् चींटीसे लेकर छोटे रेंगनेवाले जीव और आकाशमें उड़ने और पा-तालमें रहने वाले पक्षी पखेरू जीव जन्तु इत्यादि सब उसकी आज्ञा शिर माथे धर पालन कर रहे हैं तो फिर ऐसा कौन है जो उसकी आज्ञाके विरुद्ध कार्य्य कर दंडका भागी न हो कैसे शोक और महान् शोककी बात है कि ऐसा परमेश्वर रावण और कंस इत्यादि दुष्टोंको विना गर्भमें आये और राम, कृष्ण आदिका स्वरूप धारण किये विना दंड न देसके तो क्या उपरोक्त सब पुराणोंके लेख जो वेदानुकूल हैं सब मिथ्या हैं इसके उपरांत पंडितजी जिन विष्णुमहाराजको आप परमे-श्वर कहते हैं और उन्हींके अवतार श्रीकृष्ण और रामचन्द्र बतलाते

हैं वह स्वयं देवीभागवत स्कंद ४ अध्याय १८ में कहते हैं कि मैं स्वतन्त्र हूं, न ब्रह्मा और न शिव इसी प्रकार इन्द्र, अग्नि, यम, त्वष्टा, सूर्य्य और वरुण भी स्वतन्त्र नहीं हैं। यह सब स्थावर जङ्गम जगत् योगमायाके वश है। ज़रा बुद्धिसे विचारो जो मैं स्वतन्त्र होता तो महासमुद्रमें मछली कच्छुआ क्यों होता, तिर्य्यग्योनिमें क्या लाभ, क्या भोग और क्या कीर्त्ति है क्या सुख नीचयोनि को प्राप्त हुआ जो मैं हूं तो मुझे इसमें क्या पुण्य है, क्या फल है, अर्थात् कुछ नहीं, वाराह व नरसिंह व वामन क्यों होता। अय ब्रह्माजी! मैं जमदग्नि का बेटा परशुराम क्यों होता। अय! देवेन्द्र राम होकर दण्डक वनमें पैदल गुदड़ी वाला जटाजूट और वक्कल धारण कर मैंने प्रवेश किया इसीप्रकार रामावतारमें भी मैंने निरन्तर दुःख पाया क्योंकि मैं निश्चय पराधीन हूं फिर और कौन स्वतन्त्र होगा। ब्रह्माजी सुनो मैं निश्चय परतन्त्र हूं इसीभांति तुम भी और महादेव और सब देवता हैं।

विष्णुरुवाच

नाहं स्वतन्त्र एवात्र न ब्रह्मा न शिवस्तथा।
नेन्द्रोऽग्निर्नयमस्त्वष्टा न सूर्यो वरुणस्तथा॥ ३३॥
परतंत्रोऽस्म्यहं नूनं पद्मयोने निशामयः।
तथात्वमपिरुद्रश्च सर्वे चान्ये सुरोत्तमाः॥ ६०॥

स्कन्द ३ अध्याय २९ में रामचन्द्र महाराज लक्ष्मणजीसे कहते हैं कि विना जानकीके हमारा जीना दुर्लभ है देखो राजगया, वनदुःख, पितामरें, स्त्री हरी गई, देखिये दुष्ट भाग्य क्या २ करता है। रघुकुल में हमारे समान कोई भी दुःखी नहीं हुआ क्या करें इस दुःखसागर से तरने का कोई उपाय नहीं।

न प्राप्ता जानकी नूनं नाहं जीवामि तां विना।
नगमिष्याम्ययोध्यायामृते जनकनंदिनीम्॥ २१॥

गतं राज्यं वने वासो मृतस्तातो हृताप्रिया।
पीडयन्मां स दुष्टात्मा दैवोग्रे किं करिष्यति ॥ २२ ॥
नकोऽप्यस्मत्कुलेपूर्वमत्समोदुःखभाङ्नरः।
अकिञ्चनोऽक्षमःक्लिष्टो न भूतो न भविष्यति ॥ २६ ॥
किं करोम्यद्यसौमित्रे मग्नोऽस्मि दुःखसागरे।
न चास्ति तरणोपायो ह्यसहायस्य मे किल ॥ २७ ॥

इसके उपरांत श्रीमद्भागवत स्कंद १० उत्तरार्द्ध अध्याय ७० से प्रकट होता है श्रीकृष्ण महाराज स्वयं तीन सूर्य्य उदयसे दो तीन घड़ी प्रथम उठकर जलसे आचमन कर मायासे परे जो स्वरूप है उसका ध्यान करते थे।

ब्राह्मे मुहूर्त्त उत्थाय वायुस्पृश्य माधवः।
दध्यौ प्रसन्नकरण आत्मानं तमसः परम् ॥

इसी प्रकार श्रीरामचन्द्र महाराज प्रातः सायंकाल संध्या समय परमेश्वरका ध्यान करते थे।

देखो वाल्मीकि रामायण बालकांड सर्ग ३५ श्लोक २० अयोध्याकाण्ड सर्ग ४५ श्लोक १३ में लिखा है ॥

सु प्रभाता निशा राम पूर्वां संध्यां प्रवर्त्तते।
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रंते गमनायभिरोचय ॥
उपास्य तु शिवां संध्यां दृष्ट्वा रात्रिमुपागताम्।
रामस्य शयनं चक्रे सूतः सौमित्रिणा सह ॥

पद्मपुराण पाताल खंड अध्याय ११में लिखा है कि शंकरादि सब देव महर्षि लोग संध्यावंदन करने की इच्छा से बाहर निकले व गणेशादि सब लोगोंने तड़ागपर संध्यावंदन किया।

संध्यावंदनकामाश्च सर्व एवविनिर्गताः ।
कृत संध्यास्तटाके तु नद्देशाद्यास्तु कृत्स्नशः ॥

पं० पा० खं० संस्कृत अ० ११४ श्लो० ४३ ॥

अब श्रीमान्को विचारना योग्य है जिन पुराणोंके बल पर पौराणिक भाई परमेश्वरका अवतार मानते हैंउन्हीं पुराणोंसे मैं आपको वेदानुकूल यह बतला चुका हूं कि परमेश्वर सर्वत्र है जो विना इन्द्रियोंके सब कार्य्य करता है इसके उपरांत स्वयं आपके विष्णु और श्रीरामचन्द्रजी अपने को परतंत्र बतलाते हैं तदनंतर सनातन धर्म सभाके माने हुए परमात्माके अवतार श्रीकृष्ण और रामचद्र महाराज भी मायासे परे जो परमात्मा है उसकाध्यान धरते थे इससे भी स्पष्टप्रकटहोता है जिसका उपरोक्त महाशयगण ध्यान करते थे वही पूर्ण ब्रह्म परमात्मा है इसलिये हम सबको भी उसी ईश्वरकी उपासना करनी चाहियेक्योंकि परमेश्वर य० अ० १९ मं० १११ में आज्ञा देते हैं कि जो सत्पुरुषहोचुके हैं उनकाही अनुकरण करना चाहिये अन्य अधर्मियोंका नहीं जैसाकि—

ऋतावानं महिषं विश्वदर्शतमग्निᳬसुम्नायं दधिरे पुरोजनाः । श्रुत्कर्णᳬसप्रथस्तमं त्वागिरा दैव्यं मानुषा युगा ॥ १११ ॥

य० अ० ५ मं० २३ में यह लिखा है कि मनुष्योंको इस सृष्टिमें विद्वानोंका अनुकरण करना चाहिये मूर्खोंका नहीं ।

रक्षोहणं वलगहनं वैष्णवीमिदमहन्तं वलगमुत्किरामि यम्मे निष्टयो ममभात्यो निचखानेदमहन्तं वलगमुत्किरामि यम्मे समानो यमसंमानो निचखानेदमहन्तं वलगमुत्किरामि यम्मे सबन्धुर्यमसंबन्धुर्निचखानेदम-

हन्तं बलगमुत्किरामि यन्मे सजातो यमसंजातो निचखानोत्कृत्याङ्किरामि ॥ २३ ॥

ऐसा ही गीता, महाभारत आदिमें भी लेख है फिर हम क्यों ईश्वर अवतारोंकी पूजा करें जब कि ईश्वर अवतार ही नहीं लेता। फिर प्रतिमा पूजा कैसी इन सब बातोंके उपरांत जिन पुराणोंमें प्रकृतिकी मनुष्यरचित मूर्तियोंकी पूजाका विधान किया है उन्हींमें मूर्तिपूजकोंकी निन्दाकी है सुनिये श्रीमद्भागवत स्कंद १० उत्तरार्द्ध अ० ८४ में लिखा है।

यस्यात्मबुद्धिः कुणपे त्रिधातुके स्वधीः कलत्रादिषु भौम इज्यधीः। यत्तीर्थबुद्धिः सलिलेन कर्हिचित्, जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः ॥

अर्थात् जो धातु आदिमें आत्म बुद्धि करते हैं और नदी, पहाड़, आदि स्थानोंमें तीर्थबुद्धि और स्त्री पुत्रादिमें ममता रखते हैं वह मनुष्योंके बीचमें गधे वा बैल हैं।

महाभारतमें लिखा है।

तीर्थेषु पशुयज्ञेषु काष्ठपाषाणमृण्मये।
प्रतिमादौ मनोयेषां ते नराः मूढचेतसा ॥

तीर्थ और पशुओंके यज्ञ, काष्ठ, पाषाण, मिट्टीकी प्रतिमा अर्थात तसवीरोंमें जिनका मन है वह मनुष्य मूर्ख हैं। और भी कहा है।

मृच्छिला धातुदार्वादि मूर्त्तावीश्वर बुद्धयः।
क्लिश्यन्ति तपसा मूढाः परां शान्ति न यान्ति ते ॥

जो मनुष्य सर्वव्यापक परमात्मा न्यायकारीकी धातु, पत्थर, लोहा, पीतल, चांदी, सोना आदि किसी भांतिकी मूर्त्ति बनाते हैं वह अज्ञानी हैं।

गीतामें लिखा है।

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः
परं भावमजानन्तो ममाव्यक्तमनुत्तमम् ॥

और भी कहा है।

अवजानंति मां मूढनुषंतनु मामाश्रितम् ।
परं भावमजानन्तो ममभूत महेश्वरम् ॥

मूर्खजन मनुष्यकी देह धारण करने वाला और उत्पन्न हुआ परमेश्वरको जानते हैं उसके परमभावको नहीं जानते, कि सबका महेश्वर अर्थात् स्वामी है। सर्वव्यापक होनेसे एकस्थानपर मूर्त्तिमान् नहीं होसका।

अध्यात्मरामायण रामगीता श्लो० ३५में लिखा है।

कदाचितात्मा न मृतो न जायत न क्षीयते नापि विवर्द्धते क्वचित् । निरस्त सर्वातिशयः सुखात्मकः स्वयंप्रभुः सर्वगतोह्यद्वयः ॥

हे लक्ष्मण! वह ईश्वर न कभी मरता है न उत्पन्न होता है न उसका नाश होता है न कभी बढ़ता है। किन्तु निरन्तर सबसे बड़ा, सुखात्मक, स्वयंप्रभु तथा सबके अन्दर व्याप्त है उससे दूसरा नहीं।

जन्मापवादं द्रोहं च तथा मिथ्यावभाषणम् ।
कामं क्रोधं तथा चौर्यं परदाराभिमर्षणम् ॥
वीभत्सं मरणं क्षोभम् दुष्क्रिया विविधा कलौ ।
पाषण्डिनो विधास्यन्ति विशुद्धे परमात्मनि ॥

कलियुगके पाखण्डीलोग शुद्ध परमात्मामें ऐसे २ दोष लगावेंगे कि परमात्माने जन्मधारण किया निन्दाकी, द्रोह किया, झूंठ बोला,

काम, क्रोध, तथा चोरीकी, परदाराओंके साथ प्रीति, भय, मृत्यु इत्यादि २ नाना प्रकारकी दुष्क्रियारोंकी ।

श्रीमान् जब पुराण वेदानुकूल वर्णन कररहे हैं फिर आप अन्य वेदविरुद्ध पुराणोंके लेखोंको क्यों मानते हैं इसके उपरांत वह स्पष्ट कह रहे हैं कि परमात्माका पूर्णज्ञान स्वाध्याय और योगाभ्यास रूपी दो नेत्रोंसे हो सक्ता है अन्यनेत्रोंसे वह दिखलाई नहीं देता । जैसाकि—

विष्णुपुराणमें लिखा है ।

तदीक्षणाय स्वाध्यायश्चक्षुर्योगस्तथापर ।
न मांसचक्षुषा द्रष्टुं ब्रह्मभूतः स शक्यते ॥ ३

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण ब्रह्मखण्डम् । अ० २ में लिखा कि योगी लोग योगसे तथा ज्ञानचक्षुसे उस परमात्माका ध्यान करते हैं ।

ध्यायन्ते योगिनः शश्वद् योगेन ज्ञानचक्षुषा ।

शिवपुराण वायु संहिता अध्याय ४ में लिखा है कि वह परमेश्वर सबमें है और सबको व्याप्त कर स्थित हो रहा है तथापि कोई पुरुष उसको प्रत्यक्ष नहीं देख सक्ता ।

सर्व्वं तत्र सर्व्वत्र व्याप्यातिष्ठति शाश्वतः ।
तथापि क्वापि केनापि व्यक्तमेष न दृश्यते ॥

नेत्र अथवा दूसरी इन्द्रियोंसे कोई इसे ग्रहण नहीं करसक्ता केवल उसको योगाभ्यासके द्वारा मनको शोध कर महात्मा जन इसे जानते हैं ।

नैवायं चक्षुषा ग्राह्यो ना परैरिन्द्रियैरपि ।
मनसैव प्रदीप्तेन महानात्मा वसीयते । ४७ ।

जिस प्रकार तिलोंमें तेल, दहीमें घृत, स्रोतमें जल, अग्निमें सुवर्ण रहता है उसीभांति आत्मामें आत्मा विलक्षणरूपसे स्थित है जो सत्य और तपयुक्त होनेसे दीखता है जैसाकि।

तिलेषु वा यथातैलं दध्निर्वा सर्पिरर्पितम्।
यथापः स्रोतसिव्याप्ता यथारण्यां हुताशनः॥
एवमेव महात्मानमात्मन्यात्म विलक्षणम्।
सत्येन तपसा चैव नित्ययुक्तोऽनुपश्यति॥ ७४

यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र ४ में कहा है कि ब्रह्मके अनन्त होने से जहां २ मन जाता है वहां २ प्रथमसे ही अभिव्याप्त ब्रह्म वर्त्तमान है उसका विज्ञान शुद्ध मनसे होता है चक्षु आदि इन्द्रियों और अविद्वानों से देखने योग्य नहीं है वह आप निश्चल हुआ सब जीवों को नियम से चलाता और धारण करता है उसके जाने सूक्ष्म इन्द्रियगम्य न होनेके कारण धर्मात्मा विद्वान् योगीको ही उसका साक्षात ज्ञान होता है अन्यको नहीं।

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन्पूर्वमर्षत्।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति॥

और अध्याय ३४ मंत्र ४४ में कहा है कि जो मनुष्य योगाभ्यासादि सत्कर्मों करके शुद्ध मन और आत्मा वाले धार्मिक पुरुषार्थी हैं वे ही व्यापक परमेश्वरके स्वरूपको जानते और उसको प्राप्त होने योग्य होते हैं।

तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते। विष्णोर्यत्परमं पदम्॥

महाभारत शांतिपर्व २३८ में कहा है कि मनको नियमन करने वाले ब्राह्मणके द्वारा बुद्धि से आत्माको देखते हैं।

मनीषी मनसा विप्रः पश्यत्यात्मानमात्मनि ॥१५॥

इस आत्माको नेत्रसे नहीं देखा जाता सब इन्द्रियोंसे भी देखने की सामर्थ्य नहीं। महान् आत्मा मानसप्रदीप के द्वारा प्रकाशमान होता है।

नह्ययं चक्षुषा दृश्यो न च सर्वैरपीन्द्रियैः।
मनसा तु प्रदीपेन महानात्मा प्रकाशते ।१६।

श्रीमद्भागवत स्कंद १० पूर्वार्द्ध अध्याय २७में और उत्तरार्द्धमें लिखा है।

ईश्वर बाधारहित, ज्ञानस्वरूप, अनंत है जो देखनेमें नहीं आता स्वयं प्रकाश है जिसको पूर्णयोगी ही देखते हैं।

सत्यंज्ञान मनंतं यद् ब्रह्म ज्योतिः सनातनम्।
यद्धि पश्यंति मुनयो गुणापाये समाहिताः।

पद्मपुराण पंचम पातालखण्ड अध्याय ८२में लिखा है मुनीन्द्र लोग ज्ञानसे युक्त परमार्थमें परायण उस सर्व्वज्ञ, सर्व्वदर्शकको देखते हैं।

केवलज्ञानरूपेण दृश्यते परं चक्षुषा।
योगयुक्ता महात्मानः परमार्थपरायणाः॥
यं न पश्यति मुग्धास्तु सर्वज्ञं सर्वदर्शकम्॥

महाभारत शान्तिपर्व अध्याय २०२में लिखा है कि जो मनुष्य रसोंसे जिह्वा, गन्ध से नासिका, शब्दसे कान, स्पर्शसे त्वचा और रूपसे नेत्र को निवृत्त करता है वह परमात्माके दर्शन करने के योग्य होता है।

निवर्तयित्वा रसनां रसेभ्यो घ्राणञ्च गन्धवणौ च शब्दान्।

स्पर्शात्त्वचं रूपगुणात्तु चक्षुस्ततः परं पश्यति स्व स्वभावम् ॥ ५ ॥

और इसी पर्वके अध्याय २३९ में कहा है कि जब मन सहित पञ्चइन्द्रिय बुद्धिमें स्थित होकर संकल्प को त्याग कर देती है तब उस निर्मलअन्तःकरणमें ब्रह्मप्रकाशित होता है।

पञ्चेन्द्रियाणि सन्धाय मनसि स्थापयेद्यतिः ।
प्रसीदन्ति च संस्थाय तदा ब्रह्मप्रकाशते ॥ १९ ॥

यजुर्वेद अध्याय २० मन्त्र २७में कहा है कि जब ध्यानावस्थित मनुष्यके मनके साथ इन्द्रियां और प्राणायाम ब्रह्म में स्थिर होते हैं तब ही वह नित्यआनन्दको प्राप्त होता है।

अꣳशुना॑ते अꣳशुः पृ॑च्यतां॒ परु॑षा॒ परुः॑ । ग॒न्धस्ते॒ सोम॑मवतु॒ मदा॑य॒ रसो॒ऽअच्यु॑तः ॥

इसलिये विद्वान् पुरुषोंको योग्य है कि सदा सृष्टिकर्ता ईश्वर का हृदयरूपी अवकाशमें ध्यान, पूजन करते रहें। जैसाकि यजुर्वेद अध्याय ३१ मंत्र ९ में कहा है।

तं य॒ज्ञं ब॒र्हिषि॒ प्रौक्ष॒न्पुरु॑षं जा॒तम॑ग्र॒तः ।
तेन॑ दे॒वा अ॑यजन्त सा॒ध्या ऋष॑यश्च॒ ये ॥

जब मनुष्य उपरोक्त रीतिसे ईश्वरकी उपासना करते हैं वे सुन्दर जीवन आदिके सुखोंको भोगते हैं क्योंकि कोई भी मनुष्य ईश्वरके आश्रयके विना पूर्ण बल और पराक्रमको प्राप्त नहीं होता जैसाकि यजुर्वेद अध्याय १० मंत्र २५ में कहा है।

इन्द्र॑स्यायु॒र॑स्यायु॒र्मयि॑ धेहि यु॒ङ्ङसि॒ वर्चो॑ऽसि॒ वर्चो॒ मयि॑ धे॒ह्यूर्ग॒स्यूर्ज॒म्मयि॑ धेहि । इन्द्र॑स्य वां वी॒र्य॒कृतो॑ बा॒हू अ॑भ्यु॒पाव॑हरामि ।

श्रीमद्भागवत स्कंद १२ अध्याय ४ में लिखा है कि जिस प्रकार अग्निमें सुवर्ण स्थित होकर अपने मलको दूर करता है उसी भांति विष्णुभगवान् योगी राजोंके हृदयमें स्थित होकर अशुभवासनाओंको दूर करते हैं।

यथा हेम्नि स्थितो वह्निदुर्वर्णं हंति धातुजम्।
एवमात्मगतो विष्णुर्योगिनामशुभाशयम् ॥ ४७ ॥

शिवपुराण वायुसंहिता अध्याय ४ में कहा है जो परमात्माको हृदयमें स्थित जानता है वह प्राणी अमृत हो जाता है। १०२।

हृदये सन्निविष्टं तंज्ञात्वैवामृतमश्नुते।

श्रीमान् योगके द्वारा उपासनाको पुराण भी स्वीकार करते हैं परन्तु वह इस प्रकारकी उपासनाको ज्ञानियोंके लिये करते हैं और अज्ञानियोंके लिये मूर्त्तिपूजा लाभदायक बतलाते हैं जैसाकि शिव-पुराण ज्ञानसंहिता अध्याय २६ श्लोक २५ व २६ में लिखा है कि वेदार्थकतत्वके जानने वाले कहते हैं कि ईश्वर सबके हृदयमें विराजमान है जिन पुरुषोंको ऐसा ज्ञान है उनकोप्रतिमा पूजनसे क्या। हां जिनको ज्ञान, विज्ञान नहीं हैं उनका प्रतिमा पूजन महा पुण्य दायक है।

एवमाहुस्तदा चान्ये सर्वे वेदार्थतत्वगाः।
हृदि संसारिणं साक्षात्सकलः परमेश्वरः ॥
इति विज्ञानयुक्तस्य किं तस्य प्रतिमादिभिः।
इति विज्ञानहीनस्य प्रतिमाकल्पनाशुभा ॥

परन्तु हम प्रथम पुराणोंसे यह दिखला चुके हैं कि परमेश्वर ज्ञानके नेत्रोंसे जाना जाता है तो क्या अज्ञानियोंको पाषाणपूजनसे ज्ञानकी प्राप्ति हो जाती है कदापि नहीं, कदापि नहीं, कदापि नहीं हां अब इस स्थानपर यह विचार करना अभीष्ट है कि वह कौनसी

मूर्त्ति वा प्रतिमा है जिसकी पूजासे अज्ञानियोंको ज्ञानकी प्राप्ति हो-सक्ती है इसके जाननेके लिये जब हम परमेश्वररचित सृष्टिको देखते हैं तो प्रत्यक्ष होता है कि जगत्पिताने दो प्रकारकी मूर्तियोंको बनाया है एक जड़ जैसे सूर्य्य, चांद, पृथिवी सितारें। दूसरे चैतन्य जैसे मनुष्य, पशु, पक्षी, जीव, जन्तु इत्यादि इन दोनों प्रकारकी मूर्तियोंमें मनुष्यको श्रेष्ठ माना है और मनुष्योंमें ज्ञानी महात्माकी मूर्ति सर्वोपरि है, इसलिये संसारमें ज्ञानीपुरुषकी प्रतिमा ऐसी है जो अज्ञानियोंको ज्ञानी बनासक्ती है नकि जड़ मूर्ति जो स्वयं ही ज्ञानसे शून्य, इन्द्रियोंसे रहित है। इसके उपरांत ज्ञानी पुरुषकी मूर्तिको परमात्माने बनाया है और प्रकृतिकी प्रतिमाको मनुष्यने गढ़ा है तिसपर धर्मसभा यह भी करतीहै कि पंडित जन मन्त्रोंको पढ़ उस प्रकृतिकी मूर्तिमें परमेश्वरका आह्वान करते हैं परन्तु ज्ञानियोंके हृदयमें वह मन्त्र सदा विद्यमान रहते हैं तदनन्तर प्रकृति मूर्तिकी रक्षा चैतन्य पुरुष करता है यहां तक वही उठाता बिठाता और बनवाता है तिसपर भी वह कुछ नहीं करती परन्तु परमात्मा रचित मनुष्यरूपी मूर्त्ति स्वयं सब कार्योंको करती है देखिये ईश्वररचित गाय कैसी चलती फिरती और उत्तम दूध देती है क्या कुम्हारकी बनाई हुई गाय वैसा ही कार्य्य करती है कदापि नहीं इसलिये माता, पिता, गुरु, अतिथि इत्यादिकी मूर्त्तियां जिनके सत्संगसे मनुष्य शरीरका लालन, पालन, सत्यविद्या और सत्योपदेशकी प्राप्त होती है जो परमेश्वरप्राप्तिकी सीढ़ियां हैं। अतएव ज्ञानकी प्राप्तिके लिये परमेश्वर रचित उपरोक्त मूर्तियोंकी सेवा टहल करना चाहिये जैसा पहिले समयमें होता था स्वार्थीजनोंने अपने स्वार्थसिद्धिके लिये प्रकृति-पूजाकी ओर झुका दिया देखिये! इन चैतन्य मूर्तियोंके विषयमें श्रीमद्भागवत स्कंद ७ में लिखा है। कि आचार्य्य ब्रह्मकी पिता प्रजापतिकी भ्राता मरुत्पतिकी माता साक्षात पृथ्वीकी, दया बहनकी धर्मकी अतिथि, अग्निकी अभ्यागत और सब भूतोंमें आत्मा समभता अपनी मूर्तिको माना है जैसाकि।

आचार्यो ब्रह्मणो मूर्त्तिः पितामूर्त्तिः प्रजापतेः ।
भ्रातामरुत्पतेर्मूर्तिर्माता साक्षात् क्षितेस्तनुः ॥
दयाया भगिनीमूर्त्तिर्धर्मस्यात्माऽतिथिः स्वयम् ।
अग्नेरभ्यागतोमूर्त्तिः सर्वभूतानि चात्मनः ॥

महाभारत अनुशासनपर्व अध्याय ७ में कहा है कि जिन् कर्मोंसे पिताको प्रसन्न किया जाता है उसीके द्वारा माताको प्रसन्न किया जाता उस ही के सहारे पृथ्वी पूजित होती है । जिन कर्मोंसे गुरु प्रीतियुक्त किया जाता है उससे ही ब्रह्मपूजित होता है । इस हेतु वनपर्व अध्याय ५७ में कहा है कि जो मनुष्य माता, पिता, अग्नि, गुरु और अपनी आत्माकी पूजा करते हैं उनके दोनों लोक सुधर जाते हैं ।

शान्तिपर्व अध्याय १०८ में भीष्मजीने कहा है कि पिता, माता और गुरु ये तीनों त्रिलोक स्वरूप हैं ये ही तीनों आश्रम, तीनों वेद अग्निस्वरूप हैं ।

एत एव त्रयोल्लोका एत एवाश्रमास्त्रयः ।
एत एव त्रयोवेदा एतएव त्रयोऽग्नयः ॥ ६ ॥

अनुशासनपर्व अध्याय ६ में कहा है—कि पिता, माता और गुरु ये तीनों ही जिससे आदरयुक्त होते हैं उसके सब धर्म पूर्ण होजाते हैं और जहां इनका निरादर होता है वहां सब क्रिया निष्फल होजाती है । और अध्याय ७५ में लिखा है कि जो लोग पिता, माता, भ्राता, गुरु और आचार्य्यकी पितृवत् सेवा करते हैं उनको स्वर्ग में सुख मिलते हैं ।

वामनपुराण—अध्याय ४७में लिखा है कि जो आचार्य्य, माता, पितासे द्वेष करते हैं और वृद्धोंका मान नहीं करते वह सब राक्षस हैं ।

पद्मपुराण—द्वितीय भूमिखण्ड अध्याय ६३ में लिखा है कि जो माता, पिता, गुरुकी सेवा नहीं करते वह पृथ्वीपर प्रेत हैं। इसलिये वेदादि सर्वशास्त्रोंका अटल सिद्धान्त है कि उपरोक्त मूर्तिमान् देवोंकी पूजा करनेसे देवोंके देव महादेव जाने जाते हैं और विशेषकर गुरु सेवा करने से।

श्रीमद्भागवत—पञ्चमस्कन्दके पांचवें अध्यायमें लिखा है कि वह गुरु नहीं जो मृत्युसे बचनेका उपाय न बतावे। मृत्युके क्लेश आत्मिकज्ञान विना दूर नहीं होसकते इसलिये आत्मिकज्ञानके लिये गुरु करना चाहिये। **पद्मपुराण तृतीय स्वर्ग** खण्ड अध्याय ५२ में लिखा है कि ज्ञानका कारण गुरु है इसलिये गुरुसे परे कोई मित्र भूषण नहीं। **लिङ्गपुराण** अध्याय ८६ श्लोक १०१ में कहा है कि गुरुकी कृपासे ही निर्मलज्ञानकी प्राप्ति होती है। **विष्णुपुराण** में कहा है कि गुरुके उपदेश विना ज्ञान और ज्ञानविना मोक्ष नहीं होती। **यजुर्वेद** अध्याय ३ मन्त्र ५५ में लिखा है कि विद्वान् माता, पिता, आचार्य्यकी शिक्षाके विना मनुष्योंका जन्म सुफल नहीं होता।

पुनर्नः पितरो मनो ददातु दैव्यो जनः। जीवं व्रातं सचेमहि ॥

इसी हेतु प्राचीन समयमें सन्तानें विद्या और ज्ञानकी प्राप्ति के लिये गुरुजनोंके निकट जाया करती थीं देखो परशुरामने कश्यप महाराजके निकट, राजा जनकने पञ्चशिखजी से, रामचन्द्रने वशिष्ठ और श्रीकृष्ण महाराजने सन्दीपन नाम पंडितके निकट रहकर अर्थात् गुरुकुलमें वासकर विद्या पढ़ी थी उसी भांति अब भी ज्ञानकी प्राप्तिके लिये माता, पिता, आचार्य्य इत्यादि ईश्वररचित चैतन्य मूर्त्तियोंकी पूजा करनी चाहिये क्योंकि विना गुरुके विद्या और विना विद्या और शिक्षाके ज्ञान और विना ज्ञान परमेश्वरका बोध नहीं होता जैसा श्रीकृष्ण महाराजने उद्धवजीको उपदेश किया है देखो श्रीमद्भागवत स्कन्द ११।

शिवपुराण धर्मसंहिता अध्याय १७में कहा है कि गुरु उपदेश सुननेसे ज्ञान बढ़ता है इसलिये चित्ताकी निर्मलताके लिये उनके वाक्योंको मनुष्य सदा विचार करते रहैं। फिर हम नहीं जानते कि शिवपुराणका कर्त्ता क्योंकर अज्ञानियोंको जड़मूर्त्तियोंकी पूजासे उनका भला समझते हैं जबकि शिवपुराणमें वायुसंहिता उत्तरार्द्ध अध्याय १३में लिखा है कि गुरु साक्षात् देवता और उसका घर मन्दिर है।

गुरुर्देवोयतः साक्षात्तद्गृहं देवमन्दिरम्।

इसके उपरांत जड़मूर्त्तियोंकी पूजा जहां नाना प्रकारके पुष्पोंसे लिखी है वहां अग्निपुराण अध्याय २०२में लिखा है कि अहिंसा, इन्द्रियनिग्रह, दया, शान्ति, शम, तप, ध्यान और सत्य इन आठ पुष्पोंसे संतुष्ट होते हैं।

अहिंसा प्रथमं पुष्पं पुष्प मिन्द्रियनिग्रहः।
सर्वपुष्पं दयाभूते पुष्पं शान्तिर्विशिष्यते॥
शमः पुष्पं तपः पुष्पं ध्यानं पुष्पं च सप्तमम्।
सत्यश्चैवाष्टमं पुष्पमेतैस्तुष्यति केशवः॥
पुष्पान्तराणि सन्त्यत्र वाह्यानि मनुजोत्तम!।

ऐसा ही पद्मपुराण पातालखंड अध्याय ८१में लिखा है। और शिवपुराण कैलाससंहिता अध्याय ८में भी लिखा है कि वर्णाश्रमके आचाररूपी पुष्पोंसे परमेश्वरका पूजन करना चाहिये।

श्रीमान् इन पुष्पोंसे जड़मूर्त्तियोंकी पूजा नहीं होती वरन् संसारमें चैतन्य मूर्त्तियोंकी पूजा होती है यही पूजाका सार है जो विना ज्ञानके अत्यंत कठिन है और ज्ञानका मूल भक्ति और भक्तिका मूल देवताओं अर्थात् विद्वानोंका पूजन, उसका मूल सद्गुरु और सद्गुरुकी प्राप्ति सत्पुरुषोंकी सङ्गति और उत्तम सङ्गतिसे विद्या और उससे ज्ञान विज्ञान मिलता है इसलिये गुरुसे विद्या और शिक्षा पानेके

उपरांत सदा उत्तम पुरुषोंका सत्संग करना चाहिये जैसा किश्री. कृष्ण महाराजने श्रीमद्भागवत स्कंद ११ में कहा है।

हे उद्धव संसारसे पार होनेके लिये संतसंगसे उत्तम कोई उपाय नहीं है क्योंकि उससे भक्ति उत्पन्न होती है और भक्तिसे पार हो जाता है इसलिये साधुओंकी संगत परम श्रेष्ठ है।

प्रायेण भक्तियोगेन सत्संगेन विनोद्धव।
नोपायो विद्यते सध्र्यङ्‌ प्रायणं हि सतामहम्॥

इसी विषयमें श्रीकृष्ण महाराजने श्रीमद्भागवत स्कंद १० उत्तरार्द्ध अध्याय ८४में कुरुक्षेत्रके बीचमें व्यास, नारद, च्यवन, देवल, विश्वामित्र, शतानन्द, भारद्वाज, गौतम, परशुराम, वशिष्ठ, गालव, भृगु, पुलस्त्य, कश्यप, अत्रि, मार्कण्डेय, बृहस्पति, द्वित, त्रित, अंगिरा, अगस्त्य, याज्ञवल्क्य, वामदेव इत्यादि मुनियोंकी सभामें कहा है।

आज हमने अपने जन्मको सफल किया क्योंकि देवताओंको दुर्लभ ऐसे योगीश्वरके दर्शन प्राप्त हुए।

अहो वयं जन्मभृतो लब्धं कात्स्न्येन तत्फलम्।
देवानामपि दुष्प्रापं यद्योगेश्वर दर्शनम्॥

श्रीमद्भागवत द० ३–अ० ८४ श्लो० ९

जो जन तीर्थमें स्नान करनेको तप जानते हैं और केवल प्रतिमा ही को देवता माने है ऐसे मनुष्योंको योगीश्वरोंके दर्शन, स्पर्श व वार्त्ता अर्थात् उनसे प्रश्नोंके उत्तर आदि चरणसेवा करना नहीं मिलती।

किं स्वल्पतपसां नृणामर्चायां देवचक्षुषाम्।
दर्शनस्पर्शन प्रश्न प्रह्वपादार्चनादिकम्॥१०॥

जलमय तीर्थ नहीं है मृत्तिका और शिलानके देवता नहीं हैं यह बहुत काल सेवा करनेसे पवित्र करते हैं परन्तु साधु महात्मा दर्शन हीसे पवित्र करते हैं ।

नह्यम्मयानि तीर्थानि न देवा मृच्छिलामया ।
ते पुनंत्युरुकालेन दर्शनादेव साधवः ॥ ११ ॥

क्योंकि साधु कुछ चाहना नहीं करते निरपेक्ष और समदृष्टि म-मता, अहंकाररहित, शान्ति, सुख, दुःख, कुछ नहीं इसलिये उनका संगही मनुष्योंको तारता है जैसा कि श्रीमद्भागवत स्कंद ११ अ-ध्याय २६ श्लो० २७ में लिखा है ।

संतोऽनपेक्षामच्चित्ताः प्रशांताः समदर्शिनः ।
निर्ममा निरहंकारा निर्द्वन्द्वा निष्परिग्रहाः ॥

शिवपुराण सनत्कुमारसंहिता अध्याय ५३में लिखा है कि जो ब्रा-ह्मण वेदवित् और अग्निहोत्रपरायण है वह श्रेष्ठ है वही पूजन क-रनेसे तार देते हैं । १७ ।

क्योंकि ब्राह्मण मिथ्यावती नहीं होते प्राणियोंकी हिंसा नहीं क-रते वह किसीकी सेवा नहीं करते और पापाकारी नहीं होते । २७ ।

जो ब्राह्मण तपस्वी तथा वेदविद्यामें विशारद हैं वह देवता-ओंके भी देवता मुक्ति देनेहारे हैं । (२५)

जिस प्रकार अग्निकी सेवासे शीत और अंधकार जाता उसी भांति नेत्रोंसे संसारी पदार्थोंका ज्ञान होता है । जिस भांति अच्छे सिखलाये घोड़ोंसे युक्त रथद्वारा मनुष्य आनन्दपूर्वक एक स्थानसे दूसरे स्था-नको शीघ्र पहुंच जाते हैं वैसे ही विद्या और सज्जनोंके संग और योगा-भ्यासके द्वारा शीघ्र परमात्माको प्राप्त होते हैं । जैसा कि यजुर्वेद अध्याय २३ मंत्र ६ में कहा है ।

युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसा रथे शोणा धृष्णू नृवाहसा ॥

इसहेतु जो मनुष्य चैतन्य मूर्त्तिमान देवोंके सत्संग योगाभ्यासादि सत्कर्मोंके द्वारा मनको शुद्ध करनेवाले धार्मिक और पुरुषार्थी हैं वेही व्यापक परमेश्वरके स्वरूपको जानते और उसको प्राप्त होने योग्य होते हैं अन्य नहीं जैसाकि यजु० अ० ३४ मं० ४४ में कहा है।

तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवा॑ᳪसः समिन्धते। विष्णोर्यत्परमं पदम्॥

श्रीमान् प्रकृतिकी बनी हुई प्रतिमाओंके पूजनेसे अज्ञानियोंको कुछ लाभ नहीं। क्योंकि य० अ० १७ मं० ३१ में स्पष्ट कहा है कि जो ब्रह्मचर्यादि व्रत, आचार, विद्या योगाभ्यास, धर्मके अनुष्ठान सत्संग पुरुषार्थसे रहित हैं वे अज्ञानरूपी अन्धकारमें दबे हुए हैं इसलिये वह ब्रह्मको नहीं जानते। हां! जो उपरोक्त गुणोंसे अपनी आत्माको पवित्र करते हैं वही उस ब्रह्मको जानते हैं। जैसाकि—

न तं विदाथ य इमा जजानान्यद्युष्माकमन्तरं बभूव नीहारेण प्रावृता जल्प्या चासुतृप उक्थ शासश्चरन्ति।

इसलिये प्रकृतिकी बनी हुई मूर्त्तियोंकी पूजाका त्यागन करना अभीष्ट है क्योंकि यजुर्वेद अध्याय ४० मंत्र ९में लिखा है कि जो असम्भूत अर्थात् अनुत्पन्न, अनादि प्रकृति कारणकी ब्रह्मके स्थानमें उपासना करते हैं वे अंधकार अर्थात् अज्ञान और दुःखसागरमें डूबते हैं और संभूत जो कारणसे उत्पन्न हुए कार्य्यरूप पृथिवी आदि भूत पाषाण और वृक्षादि अवयव और मनुष्यादिके शरीरकी उपासना ब्रह्मके स्थानमें करते हैं उस अन्धकारसे भी अधिक अंधकार अर्थात महामूर्ख चिरकाल घोर दुःखरूपनरकमें गिरते हैं जैसाकि—

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते ततो भूय इवते तमो य उ संभूत्या॑ᳪ रताः।

अतएव सत्संग और विवेक रूपी निर्मल नेत्रोंसे मार्गको जान-कार्य्य कीजिये क्योंकि जिसके यह उपरोक्त दोनों नेत्र नहीं हैं वही अन्धा और कुमार्गमें जानेवाला है जैसा कि गरुडपुराण अध्याय १६ श्लोक ५७में कहा है।

सत्सङ्गश्चविवेकश्च निर्मलं नयनद्वयम्।
यस्यनास्ति नरः सोन्धः कथं नस्पादमार्गगः ॥५७॥

और जो कुमार्गमें जाते हैं उनको किसी प्रकारका सुख नहीं मिलता इसलिये प्रथम सबको गुरुकुल भेज शिक्षा कराइये तत्पश्चात् वह सत्संग और विवेकरूपी नेत्रोंसे सत्मार्गको जान परमेश्वरकी उपासना करसकें हैं तब ही सर्वप्रकारके सुख उनको मिल सक्ते है अन्यथा नहीं इसीलिये यजुर्वेद अध्याय ३४ मंत्र १३में कहा है कि जो मनुष्य विद्वानोंके बताये मार्गपर चलते हैं वे ही ईश्वरके गुण, कर्म और स्वभावको जान परमेश्वरकी आज्ञानुसार कार्य्य करते हैं तब उनकी ईश्वर तथा विद्वान्जन निरन्तर रक्षा करनेवाले होते हैं। जिसके कारण वे कभी सन्तानोंसे रहित न होकर लक्ष्मीवान् और दीर्घायुवाले होते हैं।

त्वन्नो अग्ने तव देव पायुभिर्मघोनो रक्षतन्वश्च वन्द्य। त्राता तोकस्य तनये गवामस्य निमेषꣳ रक्षमाणस्तव व्रते ॥

पण्डितजी महाराज जब तक इस देशके मनुष्य ईश्वरकी उपरोक्त आज्ञाके अनुसार परमात्माके गुण, कर्म और स्वभावको जान उपासना करते रहे तब तक यह देश स्वर्गधाम बना रहा।

और प्रतिदिन आनन्दरूपी अमृतकी वर्षा होती रही—ज्यों ही इस आज्ञाके विरुद्ध कार्य्य आरम्भ किया त्यों ही भारतका, भारत होना आरम्भ होगया जिसको आप प्रत्यक्ष देखरहे हैं।

जड़मूर्त्तियोंकी पूजासे परमात्माके गुण, कर्म और स्वभाव नहीं जाने जाते हां स्वार्थियोंके स्वार्थ सफल होते हैं जिसके लिये उन्होंने सबसे प्रथम गुरुकुलोंकी शिक्षाको उठा दिया और वेदोंके पठन, पाठनको एकदम बन्द करदिया इधर ऋषि, मुनियोंके नामसे ग्रन्थ रच वेदोंके स्थानपर सुनाने आरम्भ कर दिये जिनमें मनके लुभानेवाली बातें बहुतायतसे लिख बड़े २ पापोंके मोचन अत्यन्त सुगम बता दिये जिनको सुन स्त्री, पुरुष यकायक उधरको झुक गये फिर वही संसारका मार्ग बनगया फिर क्या फिर तो हम सब प्रकृतिकी मनुष्यकृत मूर्त्तियोंकी पूजा और जल स्नानसे मोक्ष पुरुषों आदिके चढ़ानेसे सन्तान, धन और आरोग्यता और मन्त्रजप और स्तोत्रोंके पाठसे सर्वकार्य्यकी सिद्धिकी आशापर ब्रह्मचर्य्य, पुरुषार्थ, बल, विद्या इत्यादिको तिलाञ्जली दे, ऐसे गदा बनगये कि अब विद्याके प्रकाश होने और उत्तमोत्तम उपदेश सुननेपर भी टससे मस नहीं करते और अब भी पोपी बातोंमें फँसे हुए चले जाते हैं उनमें से कुछ संक्षेपसे इस स्थानपर सुनाता हूं और कुछ फिर सुनाऊंगा क्योंकि इन्हीं बातोंसे पुराण भरे पड़े हैं।

पण्डितजी—सेठजी आज यहां ही विश्राम दीजिये।

सेठजी—अच्छा श्रीमान् ओ३म् शम्।

श्रीमान् पण्डितजी—और अन्य सज्जन पुरुषोंने चलनेकी तैयारी की।

आर्यसेठ—ने श्रीमान्को नमस्ते कह अन्य सब महाशयोंसे यथायोग्य की।

श्रीमान् पण्डितजी—लालाजी आयुष्मान् भवः।

अन्य सभ्यगणों—ने यथायोग्य कहा—सब चलदिये।

सेठजी—भोजनादि कार्योंमें लगगये।

॥ इति षष्ठम परिच्छेदः ॥

सप्तम परिच्छेद ।

आर्य्य सेठ—नियत समयपर श्रीमान् पण्डितजी पधारे जिन को देख । सेठ-दोनों हाथ जोड़ नम्रतापूर्वक नमस्ते कह, कहा कि श्रीमान् ! आइये, विराजमान हूजिये ।

पण्डितजी—आशीर्वाद देकर विराजमान हुए और कहा कि सेठजी जिन बातोंको आज आप वर्णन करना चाहते हैं उनको संक्षेपसे किसी एक दो पुराणोंसे सुना दीजे क्योंकि अवतारविषयमें हमको सुनना है ।

आर्य्य सेठ—श्रीमा की जैसी आज्ञा । मैं वैसा ही करूंगा । परन्तु आप अन्य पुराणोंमें भी अवश्य स्वयं देखलें ।

पण्डितजी—मैं अवकाश होने पर अवश्य देखूंगा ।

इतने में अन्य श्रोतागण भी आगये जिनको लालाजीने यथा-योग्य कहा और वह सब उत्तर दे आनंदसे बैठ गये तब सेठजी ने कहा कि ।

श्रीमद्भागवत स्कंद ११ अध्याय २७ श्लोक ५२में लिखा है कि जो मनुष्य प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करता है वह राजा होता है । मन्दिर बनवानेसे त्रिलोकीका राज्य और पूजादि कार्य्य करनेसे ब्रह्म-लोक मिलता है और जो उपरोक्त तीनों कार्यों को करता है वह सा-युज्य मुक्तिको पाता है ।

प्रतिष्ठयासार्वभौमं दानेन भुवनत्रयम् ।
पूजादिना ब्रह्मलोकं त्रिभिर्मत्साम्यतामियात् ॥५२॥

पद्मपुराण सप्तमक्रियायोगसार अध्याय १९ से ।

जगन्नाथके पूजनका फल ।

जो पुरुष जगन्नाथका पूजन करता है वह सब व्याधियोंसे छूट, इस लोकसे सब कामनाओंको भोग, अन्तमें हज़ार युगतक भगवान्के मन्दिरमें स्थित होता है ।

शीतनिवारण फल ।

पुत्र पौत्रोंसे मुक्त हो, इस लोकमें सब कामनाओंको भोग अन्तमें देवताओंसे भी दुर्लभ विष्णुके पुरको जाता है ।

दूधस्नानका फल ।

वह अपने कर्मसे दुस्तर नरकरुपी समुद्रमें डूबते हुए करोड़ पुरुषोंका उद्धारकर, भगवान्के पदको पाता है ।

शंखसे स्नानका फल ।

ब्राह्मण, गऊ, स्त्री और गर्भकी हत्या और मदिरा आदि पीनेके पापसे छूट, वैकुण्ठमें जा सब सुखोंका भोग करता है ।

शङ्खेन स्नापयेद्यस्तु भगवन्तं जनार्दनम् ।
विप्रगोस्त्री भ्रूणहत्या सुरापानादि पातकैः ।
विमुक्तो याति वैकुंठं भुंक्ते हि सकलं सुखम् ॥७१॥७२॥

प्रदक्षिणाका फल ।

जो २ ब्रह्महत्यादिक बड़े २ पाप हैं वे सब प्रदक्षिणाके पद २ में नाश होजाते हैं । जो भक्तिसे विष्णुकी प्रदक्षिणामें जितने पग रखता है उनसे हज़ार कल्प विष्णुजीके साथ आनंद करता है । ११५ ।

ब्रह्महत्यादि पापानि यानियानि महांति च ।
तानि तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे ॥ ११५ ॥

यावत्पादं नरो भक्त्या गच्छेद्विष्णुप्रदक्षिणे ।
तावत्कल्पसहस्त्राणि विष्णुना सहमोदते ॥११६॥

संसारमें जितना सब फल प्रदक्षिणा करनेसे होता है उससे करोड़-गुणा फल भगवान्‌की प्रदक्षिणा करनेसे होता है जो तीनदिनमें दो-बार विष्णुजीकी प्रदक्षिणा करता है वह निस्सन्देह इन्द्रके पदको प्राप्त होता है ॥ ११८–१२१ ॥

भगवान्‌के मंदिरमें झाड़ू देनेका फल ।

(१) विष्णुके मंदिरसे जितनी धूल बाहर चली जाती है उतने सौमन्वन्तर मनुष्य विष्णुजीके मंदिरमें स्थित रहता है। श्लोक ४२।

(२) जो ब्राह्मणका मारने वाला भी भगवान्‌के घरमें झाड़ू देता है। तो वह भी परमधामको जाता है बहुत कहनेसे क्या है । ४३ ॥

चतुर्थ ब्रह्मखण्ड अध्याय २से मन्दिर लीपनका फल ।

(१) लीपनेसे जितनी धूल नाश होती है उतने हज़ार कल्प मनुष्य सुखपूर्वक विष्णुके मन्दिरमें स्थित रहता है । श्लोक ५ ।

इतिहास ।

इस विषयमें चतुर्थ ब्रह्मखण्ड अध्याय २में लिखा है कि पूर्व समय द्वापरयुगमें दण्डक नामक चोर हुआ जो ब्राह्मणोंकी द्रव्य चुरानेवाला, मित्रोंका नाश करनेवाला, झूठ बोलनेवाला, क्रूर, पराई स्त्रियोंके गमनमें रत, गऊका मांस खानेवाला, मदिरा पीनेवाला, पाखण्डी मनुष्यके सङ्ग रहनेवाला, ब्राह्मणोंकी जीविका छीननेवाला, शरणा-गतोंके नाशनेवाला, वेश्योंमें लोलुपादि अवगुणोंसे युक्त था ।

पुरासीद्दण्डको नाम्ना चौरोलोकभयप्रदः ।
ब्रह्मस्वहारी मित्रघ्नो युगे द्वापरसंज्ञके ॥ ६ ॥

असत्यभाषी क्रूरश्च परस्त्रीगमने रतः ।
गोमांसाशी सुरापश्च पाखण्डजनसङ्गभाक् ॥ ७ ॥
वृत्तिच्छेदी द्विजातीनां न्यासापहारकस्तथा ।
शरणागतहन्ता च वेश्या विभ्रमलोलुपः ॥ ८ ॥

वह मूढ़बुद्धि एक समय किसी विष्णुमन्दिरमें चोरी करनेको गया और देवस्थानके द्वारमें प्रवेशकर कीचड़से युक्त अपने पावोंको वहांकी भूमिमें पौंछता हुआ । श्लोक १०

इसी कर्मसे पृथ्वी लिप गई फिर आनन्दसे लोहेकी शलाकाओंसे किवाड़को उखाड़कर भगवान्‌के मन्दिरमें प्रवेश करता हुआ । श्लो० ११

वहां चोरने सुन्दर शय्यापर राधा समेत भगवान्‌को देखा और राधाके स्वामीको प्रणाम किया, उसी समय पापरहित होगया । फिर कहने लगा कि चोरी करूं या न करूं ? मैं सेवा करनेमें समर्थ नहीं हूं । मैं सदाका चोर हूं और सब काम द्रव्यसे होते हैं यह कह भगवान्‌के रेशमी कपड़ेको बिछाकर सब वस्तुओंको बांधा उसके चलते समय कांपनेसे बड़ा शब्द हुआ इसलिये जाग होगई सब दौड़े वह वस्तु छोड़ भागा । कुछ दूर गया वहां सर्पने खालिया वह पापी मरगया । फिर यमके दूत आये बांधकर लेगये तब यमराजने चित्रगुप्तसे पूछा कि इसने क्या २ किया है सब कहो । तब मन्त्रीने कहा कि पृथ्वीपर जितने पाप बनाये हैं सब इसने किये हैं मैं सत्य कहता हूं ।

अब इसकी सुकृत भी सुनिये यह पापियोंमें श्रेष्ठ भगवान्‌की द्रव्य चुराने गया था वहां भगवान्‌के द्वारमें अपने पावोंकी कीचड़को इसने पौंछ दिया उससे पृथ्वी लिपी, बिल और छेदोंसे रहित होगई, तिसी पुण्यके प्रभावसे उसके बड़े भारी पाप नष्ट होगये इसलिये यह आपके दण्डसे निकलकर वैकुंठ जानेके योग्य है ।

बभूवालिप्ता सा भूमिर्बिलाच्छिद्र विवर्जिता ।
तेन पुण्यप्रभावेन निर्गतं पातकं महत् ॥

वैकुंठं प्रति योग्यो सौ निर्गतस्तव दंडतः ॥ २९ ॥

यह सुन यमराजने सोनेका पीठ उसके बैठनेको दिया फिर उसकी पूजाकी और नम्रतापूर्वक शिरसे नमस्कारकी और कहा कि तुम्हारे चरणकी धूलियोंसे मेरा मन्दिर पवित्र होगया।

पवित्रं मंदिरं मेद्य पादयोस्तद्धि रेणुभिः ॥ ३१ ॥

मैं निस्सन्देह कृतार्थ हुआ हूं। हे साधो! इस समय तुम भगवान्के उत्तम मंदिरको जाओ ॥ श्लोक ॥ ३२ ॥

जो अनेक प्रकारके भोगोंसे युक्त जन्म, मरणका निवारण करनेवाला है ॥ ३३ ॥

इतना कह धर्मराजने हंसोंसे युक्त सोनेके रथपर उस पापरहितको चढ़ा भगवान्के मन्दिरको भेजदिया ॥ ३४ ॥

वह वैकुंठ गया, बहुत काल सुखसे रहा जो भक्तिसे भगवान्के मन्दिरको लीपते हैं उनके पुण्यको तो मैं नहीं जानता कि क्या होगा। ३५।

जो एकाग्रचित्त होकर इसको सुनता वा पढ़ता है उसके करोड़ जन्मके पाप निस्संदेह नाश होजाते हैं।

य इदं शृणुयाद्भक्त्या पठेद्यो वा समाहितः।
कोटिजन्मार्जितं पापं नश्यत्येव न संशयः ॥ ३७ ॥

प्रणामका फल।

जो भगवान्को सातबार पृथ्वीमें दण्डवत् प्रणाम करता है उसके शरीरके सब पाप उसी क्षण भस्म होजाते हैं। पृथ्वीमें सब अंगोंको गिराकर जो प्रणाम करता है तब जितनी धूलिसे मनुष्यका शरीर भूषित होगया है उतनेही हज़ार कल्प वह भगवान्के समीप स्थित होता है।

वामनपुराण अध्याय ९४में लिखा है कि कोटिसहस्र और

करोड़ों, सैकड़ों तीर्थोंका जो स्नान करना है सो नारायणको प्रणाम करनेकी सोलहवीं कलाको भी नहीं पहुंचता है।

तीर्थकोटि सहस्राणि तीर्थकोटि शतानि च।
नारायण प्रणामस्य कलां नार्हंति षोडशीम् ॥६२॥

चतुर्थ ब्रह्मखण्ड अध्याय १७से

चरणोदक माहात्म्य।

(१) सब पापोंके नाश करनेवाले शुभ विष्णुजीके चरणोदकको जो कणमात्र भी प्राप्त होता है वह सब तीर्थोंके फलोंको पाता है। २॥

(२) विष्णुजीके चरणजलके स्पर्श करनेसे पापनाश होजाते हैं अकालमृत्यु नहीं होती और छूनेवाला गङ्गास्नानके फलको प्राप्त होता है। ३॥

(३) जो पापी विष्णुजीके चरणोदकको पीता है तो उसके किये हुए देहकी स्थित पाप निस्सन्देह नाश होजाते हैं ॥४॥

(४) जो मनुष्य भक्तिसे तुलसी संयुक्त विष्णुके चरणामृतको शिरसे धारण करता है वह अन्तमें भगवान्के स्थानको जाता है ॥५॥

(६) मेरु पर्वतके बराबर सोना देनेसे जो फल मिलता है वह फल मनुष्योंको हरिजीके चरणजलके स्पर्शसे प्राप्त होता है ॥ ६ ॥

(७) हज़ार करोड़ गौवोंके देनेसे जो फल मनुष्योंको मिलताहै वह फल हरिजीके चरणजल छूनेसे निश्चय मिलता है ॥ ७ ॥

(८) हज़ार करोड़ यज्ञ उससे करोड़गुणा और करोड़ कन्यादान औरकरोड़ हाथीके देनेसे जो फल मिलता है वही हरिजीके चरणोजल स्पर्शसे मिलता है ॥ ८ ॥

इतिहास।

पूर्वसमयके त्रेतायुगमें सुदर्शन नाम एक पापी ब्राह्मण जो

एकादशीको नित्य ही भोजन करता था और जो अधम एकादशीमें भोजन करता है वह विष्ठा भोजन करता है और घोर नरकको जाताहै।

इसलिये इसको सौ मन्वन्तर पर्य्यन्त नरकमें स्थान दीजिये तद-नन्तर गांवके सुअरकी योनिमें जन्म होगा।

यमराजकी आज्ञासे सौ मन्वन्तर तक विष्टाके नरकमें गिराया गया जब नरकसे छूटा तो पृथ्वीमें गांवका सुअर होकर बहुत काल तक एकादशीके भोजन करनेसे नरकका भोजन करता रहा। फिर काल प्राप्त होनेपर मरकर कौवेकी योनिमें जन्म लेकर सदैव विष्ठा भोजन करता रहा। एक दिन दूरदेशमें स्थित श्रीहरिजीके चरण-जलको पानकर सब पापोंसे रहित होगया।

उसी दिन बहेलियाका कौवा गिरा तब कालमें बहेलियाने कौ-वेको भी मारडाला तब दिव्य शुभराजहंसोंसे युक्त रथ वैकुण्ठसे आया तिसपर कौवा चढ़ भगवान्‌के मन्दिरको जाता हुआ।

जो कोई इस पाप नाश करनेवाले चरणजलके माहात्म्यको सु-नता है उसके पाप नाश होजाते हैं।

यः शृणोति नरः पापी तस्य पापं विनश्यति ॥ २८ ॥

शिवपुराण धर्मसंहिता अध्याय १६से

मन्दिर बनवानेका फल।

सौ कुल अगले और पिछले शिवमन्दिर बनवानेवालेके तर जाते हैं और अक्षयलोककी प्राप्ति होती है ॥ १७ ॥

सातजन्मका पाप थोड़ा या बहुत शिवमन्दिर निर्माण करते ही नष्ट होजाता है ॥ १८ ॥

सप्तजन्मकृतंपापं स्वल्पं वा यदि वा बहु।
शम्भोरालय विन्यास प्रारम्भादेव नश्यति ॥ १८ ॥

मन्दिर बनवाते हुएको देखकर जो मनमें यह विचार करते हैं कि मेरे धन हो मैं भी बनवाऊंगा तो उसका कुल भी शीघ्र स्वर्गको चला जाता है ॥ २७ ॥

शिवलिङ्गकी प्रतिष्ठा ।

अच्छे स्थानमें शिवलिङ्गकी प्रतिष्ठा करके पुरुष कृत्य २ होजाता है और फिर यमपुर नहीं जाता ॥ २४ ॥

जो लोग लिङ्गस्थापनकी मनमें इच्छा करते हैं वे आठ कुलका उद्धारकर शान्तशिवलोकको जाते हैं ॥ २६ ॥

यम उनके पास नहीं जाते—जो मनुष्य शङ्करकी उपासना करते हैं, रात दिन शिव २ कहते हैं, जो पुष्प, धूप, वस्त्रोंसे वा अपने प्रिय भूषणोंसे शिवका यजन करते हैं जो मन्दिरको लीपते बुहारते हैं उन तीन कुलों और जिन्होंने मन्दिर बनवाया उनके सौ पुरुषोंके और जिसने भगवान्का लिङ्ग बनवाया उनके कुलके दश सहस्र मनुष्योंमें तुम्हारा अधिकार नहीं ।

येन वा यतनं शम्भोः कारितं तत्कुलोद्भवम् ।
पुंसां शतं नावलोक्यं भवद्भिर्दुष्टचेतसा ॥ ३६ ॥
येन लिंगं भगवतो महेश्वरस्य कारितम् ।
नरायुतं तत्कुलजं भवतां शासनातिगम् ॥ ३७ ॥

घृत और मधुसे स्नानका फल ।

कृष्णचतुर्दशीको जो प्रजापतिके लिङ्गको स्नान कराता है और पूजन करता है वह सब पापोंसे छूटजाता है ॥ ४३ ॥

ज्ञान व अज्ञानसे मनुष्य जो पाप करता है वह सन्ध्याको घृतसे शङ्करको स्नान करानेसे नष्ट होजाते हैं ॥ ४४ ॥

जो दूधसे स्नान कराता है उसको सात जन्म तक आरोग्यता, सुन्दररूप आदि मिलते हैं ॥ ४८ ॥

घृत, क्षीरके देखते ही शिवजी प्रसन्न होजाते हैं शङ्करके स्नान करानेसे सबकी स्निग्धता होजाती है ॥ ५२ ॥

अग्निपुराण अध्याय ३८ और ३२६से ।

जो कृष्ण वासुदेवके मंदिरको बनवाता है वह कुलसहित विष्णुलोकको जाता है और वह इसलोक तथा परलोकमें पूजनीय होता है। और मंदिरके बनवानेका प्रारम्भ करनेसे ही सातजन्मका किया पाप नष्ट होजाता है बनवानेवाला पुरुष स्वर्गको जाता है नरकको कभी नहीं जाता। वही सुकृति है और उसीसे ही कुल पवित्र है।

सकुलस्तस्य वै कर्त्ता विष्णुलोके महीयते ।
सएव पुण्यवान्न पूज्य इहलोके परत्र च ॥
कृष्णस्य वासुदेवस्य यः कारयतिकेतनम् ।
जातः स एवसुकृती कुलं तेनैव पावितम् ॥
सप्तजन्मकृतं पापं प्रारम्भादेव नश्यति ।
देवालयस्य स्वर्गीस्यान्नरकं न स गच्छति ॥

मंदिरका बनवानेवाला सौकुलका उद्धार करके विष्णुलोकको जाता है।

कुलानां शतमुद्धृत्य विष्णुलोकं नयेन्नर ।

प्रतिदिनके यज्ञ करनेसे जो महाफल होता है वही फल विष्णुके मंदिर बनवानेसे प्राप्त होता है।

अहन्यहनि यज्ञेन यजतो यन्महाफलम् ।
प्राप्नोति तत्फलं विष्णोर्यः कारयतिकेतनम् ॥

अध्याय ३२६से कि सम्पूर्ण यज्ञ, तप, दान तथा तीर्थमें स्नान करने और वेदोंके पढ़नेसे जो फल होता है उससे करोड़ गुणा अधिक शिवलिङ्गके स्थापित करनेसे प्राप्त होता है।

सर्वयज्ञतपोदाने तीर्थेवेदेषु यत्फलम् ।
तत्फलं कोटिगुणितं स्थाप्यलिङ्गं लभेन्नरः ॥

पद्मपुराण षष्ठ उत्तर खण्ड अध्याय ८३ से ।

शालग्रामकी पूजाका फल ।

(१) शालग्रामजीकी मूर्त्ति जहां होती है वहां भगवान् रहते हैं । वहांपर स्नान और दान करना काशीजीसे भी सौगुणा अधिक है ॥ ४३ ॥

(२) कुरुक्षेत्र, प्रयाग और नैमिषारण्यसे करोड़गुणा पुण्य शालग्रामकी मूर्त्तिके पूजनसे होता है ॥ ४४ ॥

(३) मनुष्य ब्रह्महत्यादिक पापोंको जो करता है वे सब शालग्रामकी मूर्त्ति पूजनसे शीघ्र नाश हो जाते हैं ॥ ४६ ॥

ब्रह्महत्यादिकं पापं यत्किंचित्कुरुते नरः ।
तत्सर्वं नाशयेदाशु शालग्रामशिलार्चनात् ॥

चतुर्थ पातालखण्ड अध्याय २०में लिखा है कि पुरुष चाहे महापापी हो चाहे ब्रह्महत्यादि पापोंसे युक्त भी हो तो भी शालिग्रामशिलाके स्नानका जल पीकर परमगतिको जाता है ।

अपि पापसमाचारो ब्रह्महत्यायुतोऽपि वा ।
शालग्रामशिलातोयं पीत्वा याति परांगतिम् ॥२८॥

चतुर्थ ब्रह्मखंड अध्याय १६से भगवान्को घी समेत लाई और कौड़ी देनेका फल ।

(१) जो मनुष्य कुआरके महीनेमें पौर्णमासीके दिन श्री हरिजीको घी समेत लाई और खेलनेके लिये कौड़ी भक्तिसे देता है वह हरिजीके

स्थानको जाता है वहांसे फिर नहीं आता जो मनुष्य कौड़ी नहीं देता तिसके ऊपर भगवान् प्रसन्न नहीं होते ॥ १२ ॥ १३ ॥

(२) जो मनुष्य कुआरकी पूर्णमासीके दिन जितनी कौड़ी भगवान्को देता है उतने ही दिन हरिजीके स्थानमें बसता है। १४।

वराटिकां यावतीं यो हरये पौर्णिमा दिने।
तावद्दिनं हरेः स्थानं आश्विने संवसेद्ध्रुवम् ॥ १४ ॥

इतिहास।

प्राचीन समयमें करवीरपुरमें एक दयारहित कालद्विज नाम शूद्र था जो स्वामीके कार्य्यका बिगाड़नेवाला था वह एक समय कालके गालमें आकर मरगया तब यमदूत यमराजके पास लेगये उन्होंने उसके विषयमें मंत्रीसे पूंछा तब चित्रगुप्तने कहा यह पापी दुराचारी और स्वामीके कार्य्यका नाश करने वाला है इसको अणुमात्र भी पुण्य नहीं इसलिये सौ मन्वन्तर सांपकी योनिमें पत्थरके घरमें जन्म लेकर निरन्तर स्थित रहे ऐसा ही हुआ अर्थात् नरकमें गिरा और पत्थरके घरमें सांपकी योनिमें उत्पन्न हुआ। एक समयमें कुआरके महीनेकी पौर्णमासीके दिन यह सांप लाई और कौड़ी बिलसे बाहर फेंकता हुआ वह भगवान्के आगे गिरती हुई तब हरिजी दयालु दुःख नाश करनेवाले आप ही शीघ्र उसके पापको नाश करदेते हुए काल प्राप्त होनेपर वह मरगया। यमके दूत आये और लेजाना चाहते थे कि इतनेमें विष्णुके दूत भी आगये और सुन्दर रथमें बिठा लेजाले और यमके दूत भागगये विष्णुदूतोंसे वेष्टित होकर सांप विष्णु मन्दिरको जाता भया और वहांपर फिर लौटनेसे रहित होकर भगवान्के आगे स्थित होता हुआ जो मनुष्य भक्तिसे भगवान्को घी समेत लाई और कौड़ी देता है उसकी पुण्यको मैं नहीं जानता। २८।

भक्त्या यो हरये दद्याल्लाजांश्च सघृतान्द्विजः।
वराटिकां तस्य पुण्यं न जाने किं भवेद्ध्रुवम् ॥ २८ ॥

जो कोई पापनाशन इस अध्यायको सुनता है उसके पाप नाश हो जाते हैं।

तुलसी माहात्म्य ।

पद्मपुराण सप्तम क्रिया योगसार अध्याय २४ से ।

(१) जहांपर तुलसीका वृक्षस्थित होता है तहांपर ब्रह्मा, विष्णु और महादेवादिक सब देवता स्थित होते हैं। ५॥

(२) तुलसीके पत्तेमें केशव भगवान्, पत्रके आगे ब्रह्माजी और पत्रके मूलमें शिवजी सदैव स्थित रहते हैं॥ ६॥

(३) लक्ष्मी, सरस्वती, गायत्री, चण्डिका तथा और सब देवियां तुलसीके पत्रों बसती हैं। ७॥

(४) इन्द्र, यमराज नैर्ऋति, वरुण पवन और कुबेर तिसकी डालमें बसते हैं। ८॥

(५) सूर्य्यादिक सब ग्रह, विश्वदेवा, वसु मुनि सब देवर्षि। ९॥

(६) पृथ्वीमें करोड़ ब्रह्माण्डोंके बीचमें जितने तीर्थ हैं वे सब तुलसीके दलमें जाग्रत होकर सदैव बसते हैं। १०॥

(७) जो भक्तिभावसे युक्त होकर तुलसीको सेवता है उसने तीर्थ और ब्रह्मादिक सब देवताओंका सेवन किया। ११॥

(११) जो मनुष्य तुलसीकी जड़में उत्पन्न तृणोंके समूहोंको काट डालते हैं तो उनके शरीरमें स्थित ब्रह्महत्याको भी भगवान् उसी क्षण नाश करदेते हैं। १२॥

छिन्दन्ति तृणजालानि तुलसीमूलजानि ये।
तदङ्गस्थां ब्रह्महत्यां क्षिणत्ति तत्क्षणाद्धरिः॥१२॥

(१२) जो अंजुलीभर पानीसे सींचता है वह सब पापोंसे रहित होकर स्वर्गको प्राप्त करता है॥ १६।

(१३) जो दूधसे सींचता है तो निश्चय उसके घरमें लक्ष्मीजी रहती हैं । १२ ॥

(१४) जो मनुष्य तुलसीको प्रणाम करता है उसकी उमर, बल, यश, द्वेष, और संतति बढ़ती है ॥ २४ ॥

तुलसीप्रणमद्यस्तु नरोभक्तिसमन्वितः ।
आयुर्बलंयशोवित्तं संतातिस्तस्य वर्द्धते ॥

अध्याय १२ से

पीपल और आंवलेके वृक्षका माहात्म्य ।

पीपलके देखने, छूने और प्रणाम करनेसे भगवान् देहमें स्थित सब पापोंका नाश करते हैं ॥ ४७ ॥

पीपलकेवृक्षको देख कर जो प्रणाम करता है वह श्रेष्ठस्थानको जाता है और उसकी उमर बढ़ती है । ४१ ॥

अध्याय २४

(१) जिस प्रकार विष्णुजीको तुलसी प्यारी है उसी भांति सब पापका नाश करने वाला आंवला । ४७ ॥

(२) तुलसीमें जो २ देवता स्थित हैं वही सब आंवलेमें बसते हैं । ४८ ॥

(३) जहां आंवला है वहां ही गंगादिक तीर्थ हैं । ४९ ॥

(४) जहां आंवला और तुलसी नहीं होगा वह स्थान अपवित्र होता है ॥

धात्रीत्र तुलसीदेवी न तिष्ठद्यत्र जैमिने ।
स्थानं तदपवित्रंस्यान्न च क्रियाफलं लभेत् ॥

और क्रियाका फल नहीं मिलता और सब कर्म किया हुआ निष्फल जाता है ॥ ५३ ॥

न तिष्ठत्याश्रमेयस्य धात्री च तुलसीशुभा ।
तेन कर्मकृतंसर्वं नूनं गच्छति निष्फलम् ॥

(५) जहां तुलसी और आंवला नहीं लक्ष्मीजी नहीं रहतीं और उसने सब पापोंको किया वहां ही सब पाप रहते हैं ॥ ५४ ॥

धात्र्या तुलस्या हीनं च निलयं यस्य भूसुर ।
अलक्ष्मीः पातकं सर्वं कलिश्चतेन दूषितः ॥

मंत्रमहिमा ।

शिवपुराण वायुसंहिता अध्याय ४१ में (ओं नमः शिवः) इस मंत्र की बड़ी महिमा वर्णन की है और यह भी लिखा है कि इससे सब कार्य्य सिद्ध होते हैं इसके उपरांत जो और मन्त्रों में दोष हैं वे इसमें नहीं इसमें जाति आदिकी भी अपेक्षा नहीं अ-र्थात् कोई जातिका क्यों न हो । जैसा कि-

ये दोषाः सर्व्वमन्त्राणांनतेऽस्मिन्सम्भवन्त्यपि ।
अस्य मन्त्रस्य जात्यादि ननपेक्ष्य प्रवर्त्तनात् ॥

अध्याय २३ में लिखा है कि ऐसी कोई वस्तु नहीं जो इससे न मिल सके । यह सम्पूर्ण श्रेयका साधन है इसीसे दुर्भिक्षादिकी शांति करे ।

दुर्भिक्षादिषु चात्यर्थं शान्तिकुर्य्यादनेन तु ।

उपरोक्त मन्त्र सातकरोड़ मन्त्रोंमें महामन्त्र है जिसकी जिभ्या-पर यह रहता है । मानों उसके सब कार्य्य सिद्धिको प्राप्त होगये । उसीका जीवन सफल है । नीच-अधम-मूर्ख वा पण्डित जो कोई पंचाक्षरी मन्त्रको जपता है वह पापोंके पंजर से छूटजाता है ।

जिह्वाग्रे वर्त्तते यस्य सफलं तस्य जीवितम् ।
अन्त्यजो वाधमो वापि मूर्खो वा पण्डितोऽपि वा ।
पञ्चाक्षरजपेनिष्ठो मुच्यते पापपञ्जरात् ।

जो दूषित, कृतघ्नी, निर्दयी, दुष्टात्मा है तथा लोभी और जो कुटिलमन वाले भी मुझमें मन लगाते, भक्ति करते हैं उनको मेरी संसारभयतारिणी पंचाक्षरी विद्या है। हे देवी! मैंने पृथ्वीतलमें एक बार प्रतिज्ञाकी है कि कैसा भी पतित हो इस विद्यासे मुक्त हो जाता है।

मयैवमसकृद्देवि प्रतिज्ञातं धरातले।
पतितोऽपिविमुच्यते तमद्भुतो विद्यपानय॥

इस कारण तप, यज्ञ, व्रत, नियम, पंचाक्षरसे अर्चन करनेके कोटि अंशके भी समान नहीं।

तस्मात्तपांसि यज्ञाश्च व्रतानि नियमास्तथा।
पंचाक्षरार्चनस्यैते कोट्यंशे नापिजो समाः॥

सदाचारहीन, पतित, अन्त्यजकी रक्षा करनेको कलियुगमें पञ्चाक्षरसे बढ़कर कोई मन्त्र नहीं है।

सदाचारविहीनस्य पतितस्मान्त्यजस्य च।

चलते खड़े होते अथवा स्वेच्छासे कर्म करते हुए अशुचि वा शुचिमें भी यह मन्त्र निष्फल नहीं होता।

गच्छतस्तिष्ठतो वापि स्वेच्छया कर्मकुर्व्वतः।
अशुचेर्वाशुचेर्वापि मन्त्रोऽयं च निष्फलः॥

जो पुरुष आचार रहित है अविशुद्ध षडध्व वालोंका यदि गुरुने उपदेश न दिया हो तो भी यह मन्त्र निष्फल नहीं होता।

इसके विषयमें लिङ्गपुराण और स्कन्दपुराणके ब्रह्मोत्तरखण्ड अध्याय एकमें बड़ी महिमा वर्णनकी है—वहां एक इतिहास भी वर्णन किया है। मथुरानगरीमें दाशार्द नाम एक राजा था जिसका कलावती नाम एक कन्यासे विवाह हुआ था। एक रात्रिको राजाने रानीको बुलाया उसने इनकार किया। राजा कामके वश होरहा था रानीको

विना इच्छाके आलिङ्गन किया। जिसके करते ही रानीका शरीर लोहेके पिण्डके समान जलने लगा जिससे राजाका शरीर तप्त होगया इस हेतु राजाने रानीको छोड़ दिया। उस समय रानीने विनयकी कि मुझे बालपनमें दुर्वासा मुनिने उपरोक्त पञ्चाक्षरीमन्त्रका उपदेश किया था जिसके कारण मेरा शरीर निष्पाप होगया तबसे मन्त्रहीन और पापीपुरुष मुझे स्पर्श नहीं करसकते। आप रजोगुणी हैं। मदिरापान और वेश्याओंका सेवन करते हैं, स्नान, सन्ध्या, मन्त्रका जप, शिवका आराधन आप कभी नहीं करते फिर हमारे आलिङ्गनकी इच्छा क्यों करते हो। तब राजाने कहा कि शिवके उस मन्त्रका मुझको भी उपदेश कर। रानीने उत्तरमें निवेदन किया कि स्त्रीका गुरु पति होता है इसलिये मैं आपको मन्त्रका उपदेश नहीं करसकती इसलिये आप अपने कुलगुरुके पास चलो। दोनों गर्ग मुनिके पास गये और सब वृत्तान्त कहा तब गर्गमुनि दोनोंको यमुनाके तटपर लेगये। वहां एक उत्तम वृक्षके नीचे बैठे। फिर यमुनामें स्नान करा शिवपञ्चाक्षरी मन्त्रका जप किया उस मन्त्रके प्रभावसे गर्गमुनिके हाथके स्पर्शसे राजाके देहसे करोड़ों काक जिनके पङ्ख जलरहे थे और बुरीभांति चिल्लाते हुए भूमिपर गिरने लगे और वहां ही भस्म होने लगे। यह देख राजा, रानीको सन्देह हुआ तब मुनिने कहा कि शिवपञ्चाक्षरीमन्त्र तेरे हृदयमें जाते ही अनेक जन्मोंके पाप काकरूप होकर निकले और भस्म हुए करोड़ों ब्रह्महत्या, अगम्या गमन, सुवर्णकी चोरी, भ्रूणहत्यादि लाखों पाप जो अनेक जन्मोंके इकट्ठे होरहे थे वे सब शैवपञ्चाक्षरी मन्त्रके धारण करनेसे दूर होजाते हैं हे राजा! ये तेरे करोड़ों जन्मोंके पाप दग्ध होगये।

इस मन्त्रके विषयमें शिवपुराण धर्मसंहिता अध्याय ५में लिखा है कि जब महादेवजीने शुक्राचार्य्यको पेटमें धरलिया तब उन्होंने (ओं नमः शिवः) को ही जपकर शिवके उदरसे लिंगमार्ग द्वारा निकल पड़े थे।

इमं मन्त्रवरं जप्त्वा शुक्रो जठरपञ्जरात्।
निष्क्रान्तो लिङ्गमार्गेण शम्भोः शुक्रमिवोत्कटम्॥

धर्मसंहिता अध्याय ३५में लिखा है कि यह शिवका परममन्त्र सम्पूर्ण अर्थसाधक है, यह परमोक्ष, परशुद्धि, परधर्म और परमविभुरूप है। इससे ब्रह्महत्यादि पाप, अगम्यामें गमन करना, मद्यपान, सुवर्णकी चोरी, गर्भहत्या, गुरुभार्यामें गमन करना, विश्वासी मित्रको मारना, गुरु और पिताका मारनेवाला, माता, स्त्री तथा गुरुवधके जो पाप हैं यह सब इस मन्त्रराजके स्मरणसे ही भस्म होजाते हैं।

जो सैकड़ों, हजारों अद्भुत पाप हैं यह इस षडक्षरमन्त्रको सौवार जपकर शिवके मस्तकपर फूल धरे तो दूर होते हैं।

वह साधक करोड़ मन्त्रके अर्जनके पुण्यफलको पाता है जो तीनों सन्ध्याओंमें सौ सौवार इस मन्त्रको यत्नसे जपता है। वह संपुट अवरोहणको प्राप्त होकर फिर मृत्युके वशीभूत नहीं होता। ललाट, मुख, हृदय, नाभि, गुह्यमें, बाहु हाथके पार्श्वभागमें, पीठ, जानु, जांघमें, गुल्फ और चरणमें सृष्टिन्यासके क्रमसे देहन्यासकर इस मन्त्रको स्मरण करे वह करोड़ों जन्मके सैकड़ों पापोंसे छूटजाता है। वज्र, ओले, महावर्षा, चोर और व्याघ्रादिके भयमें तथा दूसरी व्याधियोंमें ज्वर, कुष्टके भयमें जिनसे दुःख हो उन सब रोगोंसे छूटजाता है जो इसका जप करता है वह संग्राममें जय और अतुलसौभाग्यको पाता है ॥४३॥

रोगैर्विमुच्यते सर्वैर्भयो दुःखमिहागतम् ।
संग्रामे जयमाप्नोति सौभाग्यमतुलं भवेत् ॥

साधक दिन रात मानसी जप करै। सब अवस्थामें इसका जप करनेसे सिद्धिको प्राप्त होजाता है। तीनों कालोंमें भार्याके सहित मृत्युञ्जय यंत्रारूढ होकर साधक न उपवास न मौन न ब्रह्मचर्य्य न आस्तिकामें प्रयत्न करै किन्तु इसी मन्त्रके सहित सब कार्य्यमें आरूढ हो तो सिद्ध होजाता है।

नोपवासं न मौनं च ब्रह्मचर्यं न चास्तिकम् ।
सर्वकर्मप्रवृत्तस्तु सिद्ध्यत्येव न संशयः ॥

धनके नाश न होने और नाश हुएके प्राप्त होनेका सरल उपाय।

मत्स्यपुराण अध्याय ४२में लिखा है कृतवीर्यके पुत्रका नाम सहस्त्रबाहु था जिसने अपने धनुषबाणसे ही समुद्र पर्य्यन्त पृथ्वीको विजय करलिया था जो मनुष्य प्रातःकाल सहस्त्रबाहु राजाका नाम लेगा उसके धनका कभी नाश नहीं होगा और नाश हुआ धन मिल-जाता है और जो कोई और पवित्र होकर यथार्थरीतिसे इसके जन्म की कथाको वर्णन करेगा वह स्वर्गलोकको प्राप्त होगा।

यस्तस्यकीर्तयेन्नाम कल्पमुत्थाय मानवः।
न तस्य वित्तनाशः स्यान्नष्टञ्च लभते पुनः॥
कार्तवीर्यस्य यो जन्म कथयेदिह धीमतः।
यथावत् स्विष्ट पूतात्मा स्वर्गलोके महीयते॥५२॥

लक्ष्मीके मिलने और कारागारसे छूटने शत्रुओंके मारने आदिका सरल उपाय।

शिवपुराण ज्ञान संहिता अध्याय २९में लिखाहै कि जिसको लक्ष्मीकी इच्छा हो वह शंकरपर एक लाख शङ्खपुष्पीके पुष्पोंको चढ़ावे। इतनी पूजा से कारागार से छूट जाता है। और राज्यकी इच्छा वाले पुरुषको पार्थिव पूजा करना चाहिये। और दश करोड़ पुष्पोंसे शिवजी संतुष्ट होजाते हैं। जिसकी प्रधान होनेकी इच्छा हो पांच करोड़से पूजा करे। रोगसे क्त होनेवाला पचास हजार। और कन्याकी इच्छावाला पचीस हजारसे। विद्या चाहने वाला साढ़ेबारह हज़ार और शत्रुसंकट होनेपर दशसहस्त्रसे और शत्रुउच्चाटनके लिये भी इतनी ही। मारनमें चार लाख और मोहनमें दो लाख। अधिपतिके

के जप करनेमें कोटि पूजा और राजोंके वशी करणमें दश सहस्र और यशके निमित्त भी प्रेमसे पूजा करनी उचित है वाहनकी प्राप्तिके लिये सहस्र लिंगका पूजन करना और मुक्तिकी इच्छा होतो पांच करोड़ शिवलिंगका पूजन और ज्ञानकी इच्छा वाला एक करोड़ और शिव-दर्शनकी इच्छावाला पचासलाख शिवका पूजन करे। आयुकी इच्छा वाला दूर्वासे। पुत्रकी कामना वाला धतूरेसे। अगस्तके फूलोंसे यश और तुलसीका पूजन करे तो भक्ति मुक्तिकी प्राप्ति होती है। आक के फूलकी पूजा शत्रुओंको मृत्यु देने वाली है। कनेरके फूल। रोगनाश आभूषणकी इच्छा होतो दुपहरियाके फूलोंसे। वाहनके लिये जाई और अलसीके फूलोंके पूजनेसे विष्णुका प्यारा होता है शमीपत्रसे पूजेतो मुक्त होता है चमेलीके पुष्पोंकी पूजा करने वालोंके घरमें धानोंका अभाव नहीं होता कर्णिकारसे पूजेतो वस्त्रोंकी सम्पत्ति और निगुण्डीके फूलोंसे पूजन करनेमें निर्मल मन होता है। तिलके फूल चढ़ानेसे मुक्ति, काली राईके फूल शत्रुओं को मारने वाले हैं।

धर्मसंहिता अध्याय २८में लिखा है कि जिस प्रकार दहीमें घृत, पर्वतोंमें हिमालय इसी भांति यह सब स्तोत्रोंका स्तवराज है जो कोई शिवके एक सहस्र और आठ नामका पाठ करता है उसको परमसिद्धि मिलती है।

धान्य फल।

चावल चढ़ानेसे लक्ष्मी। एक लक्ष तिल चढ़ानेसे हित होता है। यवपूजासे स्वर्गसुख बढ़ता है। लक्ष गेहूं चढ़ानेसे सन्तान बढ़ती है मूंगसे पूजन करनेसे सुख लक्ष उर्दसे पूजन करे तो रोगनाश होता है। शत्रुके मारनेके निमित्त एकलाख राई और एकलाख सरसोंसे शत्रुकी मृत्यु होती है मिरचसे भी शत्रुका नाश होता है।

धारा फल।

जल धारा ज्वर शान्ताय–सन्तानके लिये घृत धारा इसीसे प्रमेह-रोगकी शान्ति होती है। नपुंसकरोग भी जाता है। बुद्धिकी जड़ताके

दूर करनेके लिये, दुग्ध धारा। शत्रुओंको दुःख देनेके निमित्त, तैल-धारा। सुगन्धित तैलधारासे भोगकी वृद्धि होती है। सरसोंके तैलकी धारासे शत्रुका नाश होजाता है। शहतकी धारा राजयक्ष्मारोग नाश करती है। गन्नेके रसकी धारा सब दुःखके हरनेवाली है। गङ्गाजलकी धारासे मुक्ति मिलती है।

पद्मपुराण सप्तम क्रियायोगसार अध्याय १२से विष्णुभगवानूकी फूलोंसे पूजाका फल।

जो पुरुष चैत्रमें टेसूके फूलोंसे पूजा करता है उसका यमराज नाम नहीं लेता। तिलके फूलोंसे पूजा करनेवालेका पृथ्वीमें फिर जन्म नहीं होता। अशोकके फूलोंसे पूजा करनेवाला आपदामें नहीं पड़ता। जो शाण्डिल्याके अखण्ड पत्रों और धतूरा और मदारके फूलोंसे पूजन करता है वह संसाररूपी समुद्रसे पार होजाता है। जो विष्णुको उत्तम केलेके फल देता है उसको इन्द्रादिक सब देवता दिन, रात बन्दना करते हैं। गोपालरूपी विष्णुको जो चैत्रके महीनेमें गेहूंका पिष्टक देता है वह सब पापोंसे छूट जाता है। जो वैशाखमें यवअन्नको देता है उसका फल कोई पण्डित नहीं कहसकता क्योंकि इसका फल नाशरहित है। जो कार्त्तिकमें कमलके पत्तोंसे नहीं पूजता उसके जन्म २ में लक्ष्मी घरमें स्थित नहीं रहती। जो कमलके बीज भेट करता है वह प्रत्येक जन्ममें शुद्ध ब्राह्मणके कुलमें उत्पन्न होता है फिर वह चारों वेदोंका मित्र, धनवान्, बहुत पुत्र वाला, कुटुम्बोंका पालन करनेवाला होता है। जैमिनि कमलके फूलके समान फूल नहीं है जिससे गोविन्दजीका पूजनकर पापी भी मोक्ष पाता है। जो एक ही कमल भगवानको देता है उसका भयदायक संसारमें जन्म नहीं होता।

चम्पाके फूलोंका फल।

जितने चम्पाके फूल भगवान्को दियेजाते हैं तितने हज़ार युग देनेवाला विष्णुजीके मन्दिरमें स्थित होता है।

सुमेरु पर्वतके समान सोना देकर जो फल होता है वह एक ही चम्पाके फूलसे भगवान्का पूजनकर होता है।

जिसने चम्पाके फूलोंसे विष्णुजीका आराधन नहीं किया वह रत्न और सुवर्ण आदिसे जन्म २ में हीन होता है।

पद्मपुराण ब्रह्मखण्ड अध्याय ३में लिखा है कि अगस्तके फूलोंसे जो पूजन करता है वह देवताओंके दुर्लभ मोक्षको पाता है। जो घीसे युक्त सुन्दर रसको भगवान्को देता है वह सब पापोंसे छूट भगवान्के स्थानको जाता है जो कार्त्तिकमें आकाशमें दीप देता है वह ब्रह्महत्यादिक पापोंसे छूट जाता है।

इतिहास।

एक समयमें एक ब्राह्मण,हरिजीको घीसे पूर्ण दीपक दे घरको गया वहां घी खानेके लिये एक मूसा आया जब तक वह खानेका आरम्भ करना चाहता था तब दीपक अधिक जलने लगा तब अग्निके डरके कारण वह भागा भगवान्की कृपासे उसके सब पाप नष्ट हो गये।

फिर सांपने खालिया वह मर गया यमके दूत आये और यमपुर लेजाना चाहते थे इतनेमें विष्णुके दूत आये उन्होंने कहा कि इनको छोड़ दो यह विष्णु लोक जायगा तब उन दूतोंने पूंछा कौन पुण्य है यह तो महापापी है तब विष्णुके दूतोंने कहा कि इसने वासुदेवके आगे दीपकको प्रज्वलित किया है इसी पुण्यसे विष्णु लोकको लिये जाते हैं जो विना इच्छाके भी विष्णुके दीपकको प्रज्वलित करता वह करोड़ जन्मोंके इकट्ठे किये पापोंको छोड़कर भगवान्के स्थानको जाता है जो भक्तिसे कार्त्तिकके दिनोंमें भगवान्को

दीप देता है उसके पुण्यको हरिके बिना कोई नहीं कह सक्ता-यह सुनकर यमराजदूत चले गये ।

सर्वहत्यामोक्षप्रायश्चित्त ।

लिङ्गपुराण अध्याय १५ में कहा है कि अघोरेभ्यो घोरेभ्यः इत्यादि हमारा यह मन्त्र एक लाख जपनेसे ब्रह्महत्या दूर होती है उसमें आधा जप करने से वाचिक पाप उससे आधा मानस और चार गुणा करने से क्रोध करके किये सब पातक उपपातक दूर होते हैं। लक्ष जप करने से मातृहत्या दूर होती है—गौ हत्या — कृतघ्नता, स्त्रीघातक और भी अनेक पापोंसे युक्त मनुष्य दश हज़ार जप करने से निष्पाप हो जाते हैं ।

ब्रह्महत्यादिकान् घोरांस्तथान्यापि पातकान् ।
हीनांश्चैव महाभाग ! तथैव विविधान्यपि ॥
उपपातकमप्येवं तथा पापानि सुव्रत ! ।
मानसानि सुतीक्ष्णानि वाचिकानि पितामह !॥
कायिकान सुमिश्राण तथा प्रासङ्गिकानि च ।
बुद्धिपूर्व्वं कृतान्येव सहजान्तुकानि च ॥
मातृदेहोत्थितान्येवं पितृदेहे च पातकम् ।
संहरामि न सन्देहः सर्व्वपातकजं विभो ! ॥
लक्षं जप्त्वा ह्यघोरेभ्यो ब्रह्महा मुच्यते प्रभो ! ।
तदर्द्धं वाचिके वत्स ! तदर्द्धं मनसे पुनः ।
चतुर्गुणं बुद्धिपूर्व्वे क्रोधादष्टगुणस्मृतम् ।
वीरहा लक्षमात्रेण भ्रूणहा कोटिमभ्यसेत् ।
मातृहानियुत जप्त्वा शुध्यते नात्र संशयः ॥

गौघ्नश्चैव कृतघ्नश्च स्त्रीघ्नः पापयुतो नरः ।
अायुता घोरमभ्यस्य मुच्यते नात्र संशयः ॥

पैष्टी सुरा पीनेवाला लक्ष जप करनेसे । वारुणी पीनेवाला पचास हज़ार जप कर और विना स्नान किये भोजन करनेवाला भी एक सहस्र जप करके शुद्ध होता है । ब्राह्मणका धन हरने वाला, सुवर्ण चुराने वाला, दश लक्ष जप करके शुद्ध होता है । गुरुकी स्त्रीसे गमन करने वाला, ब्राह्मणको वध करने वाला भी दश लक्षमें और पापी पुरुषोंके संसर्ग से जो पाप होते हैं वह पाप दश हज़ारके जप से जाते हैं ॥

सुरापी लक्षमात्रेण वुद्ध्याऽवुद्ध्यापि वै प्रभो ।
मुच्यतेनात्र सन्देहस्तदर्द्धेन च वारुणीम् ॥
अस्नाताशी सहस्रेण अदाता च विशुध्यति ।
ब्राह्मणस्वापहर्त्ता च स्वर्णस्तेयी नराधमः ।
नियुतं मानसं जप्त्वा मुच्यते नात्र संशयः ।
गुरुतल्परतो वापि मातृघ्नो व नराधमः ।
ब्रह्मघ्नश्च जपेदेवं मानसं वै पितामह ॥
सम्पर्कात् पापिनां पापं तत्समं परिभाषितम् ।
तथाप्ययुत्र मात्रेण पातकद्वै प्रमुच्यते ॥

बड़े पातकको निवृत्तिके लिये लक्ष अथवा चार लक्ष वा आठ लक्ष वाचिक जप । महापातकसे आधा जप । उपपातक दूर करनेके अर्थ और विना जाने किये पाप दूर होनेको उपपातकके जपसे आधा जप करे ।

संसर्गात् पातकी लक्षं जपेद्वै मानसं धिया ।
उपांशु मच्चतुर्द्धा वै वाचिकश्चाष्टधा जपेत् ॥

पातकार्द्धमेवस्यादुपपातकिनां स्मृतम् ।
तदर्द्धं केवले पापे नात्र कार्य्यविचारणा ॥

राजाको छोडकर अन्य शत्रुओंपर विजय पानेका उपाय ।

लिंगपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय ५०में लिखा है । कोई मनुष्य जब अपने मारनेके लिये आवे तो उसके लिये यह विधान करना चाहिये ब्राह्मणपर यह प्रयोग कभी न करे जब शत्रु अपनेको दबाले और अधर्म युद्ध होनेलगे तब राजा इस विधानको करावे तो बहुत शीघ्र शत्रुका निग्रह हो जाय परन्तु इस प्रयोगको क्रूर स्वभाव अर्थात् दयाहीन, ब्राह्मण द्वारा करावे प्रयोग करने वाला ब्राह्मण प्रथम एक लाख जप अघोर मंत्रका कर तिलोंका दशांश हवन करे और अघोर मंत्र करके एक लक्ष श्वेत पुष्प भी महादेवपर चढ़ावे तब उसको मंत्रसिद्धि होती है उसका किया विधान भी सफल होता है बाणलिंग अग्नि अथवा दक्षिणमूर्ति शिवपर लक्षपुष्प अर्पण करे इस प्रकार सिद्धमंत्र और शिवभक्त ब्राह्मण प्रेतस्थानमें अथवा मातृका स्थानमें बैठे अपने राजाके कल्याणके अर्थ इस विधिको करे पूर्वसे ईशान पर्यन्त आठों दिशाओंमें आठ त्रिशूल गाड़कर अति भयंकर वेषधार मध्यमें बैठे और सबके नाश करने हारे अघोर परमेश्वरका ध्यान करे और अपने रूपको भी करोड़ प्रलयाग्निके समान प्रकाशमान ध्यावे और अघोर परमेश्वरकी आठों भुजाओंमें त्रिशूल, कपाल, पाश, दंड, धनुष, बाण, डमरू और खड्गका ध्यान करे और यह भी ध्यावेकि जिनका कंण्ठ नील वर्ण दृष्टि अति क्रूर मुख बडी दंष्ट्राओंसे अतिभयानक, तीननेत्र, हूं फटकारके शब्दसे दशो दिशा भर रही है नाग पाश करके मुकुट बांध रखता है वृश्चिक और सर्पोंके भूषण पहिने हैं नीलांजनके पर्वतके समान जिनका वर्ण, चिताकी भस्म शरीरपर लपेट, सिंहका चर्म ओढे, हाथीका चर्म पहिने भूत प्रेत पिशाच और डाकि-

नियोंसे चारों ओर वेष्टित है, इस भांति अतिभयंकर अघोर परमेश्वर का ध्यान कर छत्तीस लाक्षरके प्राणायाम करे और महामुद्रा बांध बध कर्म करे। प्रेतस्थानमें पूर्वदिशा चारों दिशा और मध्यमें पांच कुंड बनवाय चिताग्निका स्थापन करे। मध्यके कुंडमें सिद्धमन्त्र आचार्य्य और दशाओंके कुंडो चार साधक हवन करने बैठें और त्रिशूल चारो ओर गाडलेवे। बत्तीस अक्षरोंसे युक्त अघोर परमेश्वर का ध्यान कर बहेडेके काष्ठकी द्वादशांगुल प्रमाण राजाके शत्रुकी मूर्ति बनाय कुंडके नीचे उस मूर्त्तिको अति क्रोधसे गाडे उस मूर्त्तिका शिर नीचे और पाद ऊपर करे। तुषों सहित चिताकी अग्निको कुण्डोंमें स्थापन कर प्रज्वलित करे और सर्प चुंचक, तुष, कपासके वीज एक रक्त और तेलका हवन करे परन्तु तेल अपने हाथसे बनालेवे कोल्हू कृष्ण चतुर्दशीसे अष्टमी पर्य्यन्त नित्य अष्टोत्तर शत हवन प्रज्वलित अग्नि में करे इस विधिके करनेसे राजाके सब शत्रु सकुटुम्ब यमलोकको जाते हैं। इसी मन्त्रसे मनुष्योंका कपाललेकर उसमें मनुष्योंके नख,केश अंगार सर्पका केंचुक तुप, पुराने वस्तुका टुकड़ा राजमार्गकी धूल घरमें झाडूकी धूलि विषयुक्तके दांत, वृषके दांत, गौके दांत, व्याघ्रके नरद और दंत विडाल और नकुलके दान्त, कृष्णमृगके दांत, और शूकरकी दंष्ट्रा स्थापन कर एकसौ आठवार अघोरमन्त्रसे कपालका अभिमंत्रण कर मृतकके वस्तुसे वेष्टित करे और जब शत्रुको अष्टम सूर्य्य अथवा अष्टमचन्द्र आवे तब उस कपालको शत्रुके देश नगर घर क्षेत्र अथवा श्मशानमें गड़वा देवे तो उस स्थान और परिवार सहित शत्रुका नाश हो जाय राजा जिस समय युद्धमें जाने लगे उस समय आचार्य्य राजाके शत्रुकी मूर्त्तिको अति उत्तम भूमिपर लिख वितान तोरण दर्भमाला आदिसे उस स्थानको शोभित करे पीछे अघोर मन्त्र पढ अपने दहिने चरणसे शत्रुकी प्रतिमाके मस्तकमें क्रोधसे ताडन करे। इसविधिके करनेसे राजाके शत्रुका नाश हो जाता है। परन्तु जो दुर्बुद्धि ब्राह्मण क्रोधसे अपने देशके राजापर यह अभिचार कर्म करे वह अपना और कुटुम्बका नाश करता है इस कारण मंत्र औषधि आदिसे अपने देशके राजाकी भली भांति रक्षा करे।

अग्निपुराणके अध्याय १४२में युद्ध विजयके अर्थ लिखा है कि निम्नलिखित मन्त्रके जप करनेसे विजय होती है शस्त्र चलानेकी आवश्यकता नहीं किन्तु मन्त्रद्वारा ही सिद्धि होजाती है।

ओं नमो भगवति ! वज्र शृङ्खले ! हन २ ओं भक्ष २ ओं खाद २ ओं अरे रक्तं पिव कपालेन रक्ताक्षि ! रक्त पटे ! भस्माङ्गि भस्मालिप्त शरीरे ? वज्रायुधे ? वज्रप्राकारनि चित्ते ! पूर्वां दिशं बंध २ ओं दक्षिणां दिशं बन्ध २ ओं पश्चिमां दिशं बन्ध २ ओं नागान् बन्ध २ नागपत्नी बन्ध २ ओं असुरान् बन्ध २ ओं यक्षराक्षसपिशाचान् बन्ध २ ओं प्रेतभूतगन्धर्वादियोयेकेंचिदुपद्रवास्तेभ्यो रक्ष २ ओं अर्द्ध रक्ष २ अधो २ ओं क्षुरिकं बन्ध २ ओं ज्वल महाबले ! घटि २ ओं मोटि २ सटावलि वज्राग्नि वज्रप्राकारे ! हुंफट् ह्रीं ह्रूं श्रींफट् ह्रीं हः फुंफें फः सर्वग्रहेभ्यः सर्वव्याधिभ्यः सर्वदुष्टोपद्रवेभ्यो ह्रीं अशेषेभ्यो रक्ष २ ॥

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय ८०में लिखा है कि बहुत मन्त्र और बहुत व्रतोंसे क्या है (ॐ नमोनारायणाय) यह मन्त्र सब अर्थोंका साधन करनेवाला है।

किंतेन मंत्रैर्बहुभिः किंतेन बहुभिर्व्रतैः ।
ॐ नमोनारायणयेति मंत्रः सर्वार्थसाधकः ॥

पद्मपुराण सप्तम क्रियायोगसार अध्याय १५ में लिखा है कि राम ये दो अक्षर सब मंत्रोंसे अधिक हैं जिनके उच्चारण मात्र हीसे पापी श्रेष्ठ गतिको प्राप्त होता है।

रामेत्यक्षरयुग्मंहि सर्वमंत्राधिकं द्विजः ।
यदुच्चारणमात्रेण पापी याति परांगतिम् ॥

चतुर्थ पातालखंड अध्याय ८७में लिखा है कि नाना प्रकारके अपराधोंसे युक्त भी प्राणी हो उसको चाहिये कि राम, कृष्णादि नामोंका स्मरण करता रहे क्योंकि कलियुगमें तरनेके दो उपाय मुख्य हैं एक गंगास्नान करना व दूसरा हरिका नाम लेना क्योंकि हज़ारों हत्यायें सहस्त्रों उग्र पाप व कोटि गुरुकी स्त्रियोंके संग सम्भोग चोरी करना ऐसा ही और भी बड़े छोटे पाप भी हरिके प्रियगोविन्द इस नामसे दूर हो जाते हैं ॥१२॥

हत्यायुतं पापसहस्त्रमुग्रं गुर्वंगना कोटि निषेवणं च ।
स्तेयान्यथान्यानि हरेः प्रियेण गोविन्दनाम्नान च संति भद्रे॥

अध्याय ८७में लिखा है कि गोविंदका नाम व्याजसे भी निकले तो निस्संदेह पापोंको भस्म करदेता है । दशसहस्त्र हत्या व सहस्त्र बड़े पाप व एक नहीं कोटि गुरुस्त्रियोंके संग भोग करना अनेक प्रकारकी चोरियां गोविन्दके प्रिय नामके उच्चारणसे तुरन्त नष्ट हो जाते हैं ॥ २३ ॥ २३ ॥

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंड अध्याय १३२ में लिखा है कि अजामिल अपने धर्मको छोड़कर पापही करता था परन्तु अन्त समयमें नारायण पुत्रको स्मरणकर निश्चय मुक्तिको प्राप्त होगया ॥४३ ॥

स्तोत्र माहात्म्य ।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय ७१में लिखा है कि एक समय नारदमुनि ब्रह्माके दर्शनके लिये मेरुपर्वतपर गये और उनसे कहा कि नाशरहित भगवान्के नामकी महिमा वर्णन कीजिये । तब ब्रह्माने कहा कि सबको झूठ जानकर हरिके नाम जपे तो सब पापोंसेछूट विष्णुपदको प्राप्त होता है ।

मिथ्याज्ञात्वा ततः सर्वं हरेर्नाम पठन् जपन् ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो याति विष्णोः परं पदम् ॥

नाम उच्चारणसे भारी पाप छूटजाते हैं। जो राम २ यह बारंबार कहे तो चाण्डाल भी हो तो निःसंदेह पवित्रात्मा हो जावे।

सचाण्डालोपि पूतात्मा जायते नाऽत्र संशयः।

कुरुक्षेत्र, काशी, गया, द्वारिका ये सब तीर्थ नामके उच्चारण मात्रसे ही उसने करलिये और जो कृष्ण २ यह जपे वा पढ़े तो इस लोकको छोड़कर वह विष्णुजीके समीप आनन्द करे और आनन्दसे नृसिंह यह सदैव जपे वा पढ़े तो कलियुगमें वह भगवान्का भक्त मनुष्य महापापोंसे छूट जावे। सत्युगमें ध्यान, त्रेतामें यज्ञ, द्वापरमें पूजा करनेसे जो फल मिलता है वही कलियुगमें नाम लेनेसे इसी प्रकार मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कलंकी, दश अवतार इनके नाममात्र लेनेसे सदा ब्राह्मणका मारने वाला शुद्ध होजाता है और सवेरे विष्णुका नाम जपनेसे निस्संदेह वह नारायण ही होजाता है।

प्रातः पठन् जपन् ध्यायन् विष्णोर्नाम यथा तथा।
मुच्यते नात्र संदेहः सवै नारायणो भवेत् ॥

इससे अधिक मैं नहीं जानता जो अधिक सुननेकी इच्छा हो तो कैलासपर जाओ जो सब भक्तोंमें विष्णुके श्रेष्ठ भक्त हैं। नारद वहां गये दंडवतकर पास बैठे तो उन्होंने कहा कि कलियुगमें मनुष्य थोड़ी उमर होकर अधर्ममें नित्य रत रहते हैं। नाममें उनकी निष्ठा नहीं होती। ब्राह्मण पाखंडी अधर्ममें सदा रत, संध्यासे हीन, व्रतोंसे भ्रष्ट, दुष्ट मलीनरूप रहते हैं। इसी प्रकार क्षत्री, वैश्य, शूद्र द्विजोंसे बाहर हैं जो कलियुगमें धर्म अधर्म को नहीं जानते इसलिये नाम का माहात्म्य आपसे सुननेको आया हूं यह सुन प्रसन्न हो महादेवजी बोले कि विष्णुके हज़ार नाम गोप्य हैं जिसको सुन मनुष्य दुर्गतिको नहीं प्राप्त होते हैं। हे नारद! एकबार पार्वतीजीने पूछा था तुम

सुख, ऐश्वर्य्य, धन, मान अर्थ और विद्याका देने वाला है। रोग से दुःखित दीन, चोर और राजाके भय छूट जाते हैं और इसी स्तोत्र के प्रभावसे इसी देह करके श्रेष्ठ वर्णको प्राप्त हो जाता है। ११।

यथा सर्वेषु देवेषु विशिष्टो भगवाञ्छिवः।
तथास्तवो वरिष्ठोऽयं स्तवानां वेननिर्मितः ॥८।
राजकार्यविमुक्तो वा मुच्यते महतो भयात्।
अनेनैवतु देहेन वर्णानां श्रेष्ठतां व्रजेत् ॥ ११

इस स्तोत्रके प्रताप से मन और वाणीसे किये पाप सब नष्ट हो जाते हैं। १६

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय ७३में लिखा है रामरक्षा स्तोत्र का पाठ करते हैं वे पुण्यभागी होते हैं।

अध्याय ७६में लिखा है आभ्युदयिक और और्ध्व दैहिक स्तोत्र का पाठ करते हैं तो ब्राह्मणका मारने वाला भी पापसे छूट जाताहै।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंड अध्याय १ के१५८ में लिखा है कि जो कोई आदित्य, भास्कर, भानु, रवि, विश्व प्रकाशक, तीक्ष्णांशु, मार्तण्ड, सूर्य्य, प्रभाकर, विभावसु, रुहस्राक्ष और पूषण इस प्रकारके इन बारह सूर्य्योंके नामोंको जो बुद्धिमान् मनुष्य पढ़ता है वह धन, पुत्र और पौत्रोंको प्राप्त होता है और जो एकएक नामका आश्रय कर जो मनुष्य पृथ्वीमें पूजन करता है वह सात जन्म तक धनसे युक्त और वेदका पारगामी ब्राह्मण होता है—क्षत्रिय राज्यको-ब. नियां धनको और शूद्र भक्तिको प्राप्त होता है इससे इस श्रेष्ठ सूक्त का जपना योग्य है।

अत्र द्वादशनामानि गत्वा ये वै पठान्ति च।
ते नराः पुण्यकर्माणो यावज्जीवं न संशयः॥

आदित्यं भास्करभानु रवि विश्वप्रकाशकम् ।
तीक्ष्णांशुं चैव मार्त्तण्डं सूर्यं चैव प्रभाकरम् ॥
विभावसुं सहस्राक्षं तथा पूषणमेव च ।
एवं द्वादशनामानि यः पठत्प्रयतः सुधीः ॥
धनं वै पुत्रपौत्रांश्च लभते नगनं दिति ।
एकैकं नाम आश्रित्य योर्चयेत नरो भुवि ॥
सप्तजन्मभवेद्विप्रो धनाढ्यो वेदपारगः ।
क्षत्रियो लभते राज्य वैश्योधनमवाप्नुय त् ॥
शूद्रो वै लभते भक्तिं तस्मात्सूक्तं परं जपेत् ।

ब्रह्मवैवर्त पुराण ब्रह्मखंड अध्याय ३ में कृष्णस्तोत्रके विषय में लिखा है कि जो उपरोक्त स्तोत्रको तीनों संध्याओंमें पढ़ता व सुनता है उसके पापका नाश हो जाता है और पुत्रार्थीको पुत्र, भार्य्यार्थीको भार्य्या, जिसका राज्य जाता रहा हो उसको राज्य, धन जिसका नष्ट हुआ हो उसको धन, विपत्तियोंसे ग्रस्तको छुटकारा और रोगीको निरोगता तथा कैदीको नियमपूर्वक एक वर्ष तक सुननेसे छुटकारा मिलता है ।

नारायणकृतं स्तोत्रं यः शृणोति समाहितः ।
त्रिसन्ध्यश्च पठेन्नित्यं पापं तस्य न विद्यते । १५ ॥
पुत्रार्थी लभते पुत्रं भार्यार्थी लभते प्रियाम् ।
भ्रष्टराज्यो लभेद्राज्यं धनंभ्रष्टधनो लभेत् । १६ ॥
कारागारे विपद्ग्रस्तः स्तोत्रेण मुच्यते ध्रुवम् ।
रोगात्प्रमुच्यते रोगी वर्षश्रुत्वा तु संयतम् ।१७॥

प्रिय पण्डितजी ! आपने सुना कि मन्दिर बनवाने, प्रतिमाप्रतिष्ठा कराने, प्रणाम करने, चरणामृत पीने, घृत, मधु आदिसे स्नान

कराने, पूजन करने, तुलसी, पीपल, आंवले इत्यादिके दर्शन करनेसे बड़े २ पाप अर्थात् ब्राह्मणोंका द्रव्य चुराना, मित्रोंका नाश करना, झूठ बोलना, पराई स्त्रियोंके साथ रति करना, मदिरा पीना इत्यादि बड़े २ पाप नष्ट होजाते हैं। इसी प्रकार मन्त्र जपने और नाना प्रकारके फूल चढ़ाने, स्तोत्र पाठ करनेसे राज्य, धन, आयु इत्यादि कार्योंकी सिद्धि होती है। फिर क्या कारण है कि भारत प्रतिदिन गिरता चलाजाता है। इसके उपरान्त प्राचीनकालमें भी यह पुराण उपस्थित न थे और यदि थे तो बड़े २ पापियोंको आधीन करनेके लिये देवताओंने क्यों नहीं अघोरेभ्यो० इत्यादि मन्त्रों और स्तोत्रों को पढ़ अपने कार्य्यकी सिद्धि की। रावण और कंस इत्यादिके मारनेके लिये श्रीराम और श्रीकृष्ण महाराजको क्यों जन्म लेना पड़ा। अमृतका घड़ा दैत्योंसे लेनेके लिये मोहिनीरूप धरना पड़ा। मैं कहां तक आपको बताऊं जब २ देवतोंपर भीड़ पड़ी तब २ ब्रह्मा, विष्णु, शिव इत्यादिके पास गये जिन्होंने उनके नानाप्रकारसे काम किये जो पुराणोंसे प्रकट हैं फिर मन्त्र स्तोत्र कहां रहे। इसके उपरान्त नानारोग मन्त्रोंके जपसे जाते रहते हैं तो परमात्माने औषधियोंको क्यों बनाया। लक्ष्मणजी के शक्ति लगनेपर श्रीरामचन्द्रजी ने सुषेण हकीम को क्यों बुलाया। हनुमान्‌जीको औषधि लेनेको क्यों भेजा। जब बड़े २ पाप मूर्त्तिपूजादिसे ही जाते हैं तो फिर पुराणोंमें धर्मपालनके लिये क्यों शिक्षा है श्रीकृष्ण और श्रीरामचन्द्र महाराजने धर्मके दश लक्षणों और योगादिकी क्यों महिमा की। सदाचारादिके गुण क्यों गाये। इसके अतिरिक्त यदि विजय इन ही मन्त्रों इत्यादि बातोंसे प्राप्त होती थी तो राजा दशरथ इत्यादिने पुत्रेष्टियज्ञ क्यों किये, और धनकी प्राप्तिके लिये पुरुषार्थ और व्योपार इत्यादिकी क्या आवश्यकता। शत्रुओंपर विजय पानेके लिये श्रीरामजीने लङ्कापर क्यों चढ़ाई की। महाभारतका घोर-संग्राम क्यों हुआ। श्रीकृष्ण महाराज जरासन्धके सम्मुखसे क्यों भागे।

सच तो यह है कि इन्हीं लूटकोंने भारतवासियोंको तमाम करदिया। वेदोंमें उपदेश है कि विद्या और ब्रह्मचर्य्य तथा योगाभ्यासवे शरीर और आत्माके बलकी वृद्धिकर पथ्या पथ्यका विचार और उत्तम सत्संगमें रह धर्मके दशों अङ्गोंको पालनकर, पुरुषार्थ द्वारा धनादि पदार्थोंका संग्रह करें।

जो पुरुष मन, वच, कर्मसे कभी भी किसी प्रकारके पाप करनेकी इच्छा नहीं करता उसीको सर्वप्रकारके सुख और आनन्द मिलते हैं जैसा कि—य० अ० ३४ मं० ३ में कहा है।

असुर्य्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः।
ताँस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः॥३॥

जो मनुष्य मन, वाणी और कर्मसे निष्कपट हो उत्तम आचरण करते हैं वे ही देव और आर्य्य हैं। वही जगत्को पवित्र करते हुए अतुलसुखोंको भोगते हैं और जो इसके विपरीत कार्य्य करते हैं वे ही असुर, राक्षस, पिशाचादि हैं वह कभी अविद्यारूपीसागरसे पार हो आनन्द नहीं प्राप्त कर सकते।

इसलिये पुराणोंमें भी लिखा है कि विना धर्मके कोई कार्य्य सिद्ध नहीं होता और यजन, तप, दान, इन्द्रियोंका दमन, क्षमा ब्रह्मचर्य्य साधुओंका संग उनकी सेवा गुरुओंकी टहल यह धर्मके द्वार हैं जैसा कि मत्स्यपुराण अध्याय २११ वा २१२में लिखा है।

वामनपुराण अध्याय १४में लिखा है कि अहिंसा, सत्य, चोरीका त्याग, दान, क्षमा, इन्द्रियोंका दमन, शान्ति, कृपणता, शौच, तप, इन दश लक्षणोंसे युक्त धर्मका सबको सेवन करना चाहिये।

श्रीमद्भागवत स्कंद १ अध्याय १६ में लिखा है कि यथार्थ बोलना, शुद्ध रहना, अन्यका दुःख सहन करना, क्रोधको रोकना, धनका देना, आनंदसे रहना, टेढ़ा न बोलना, मनको निश्चल रखना,

बाह्यइन्द्रियोंको रोकना, स्वधर्मका त्याग न करना, सबमें समदृष्टि का रखना, हानि लाभमें उदासीन रहना, सत्शास्त्रोंका विचार करना, ईश्वरको मानना अर्थात् नास्तिक न होना, तृष्णाका त्याग संग्राममें उत्साह, प्रभाव, चतुराई, स्मरण, स्वतंत्र रहना, क्रिया करनेमें चतुर, स्वच्छ रहना, व्याकुल न होना निष्ठुर न होना, बुद्धिका प्रकाश; विजयी रहना, उत्तम स्वभाव, सहनशील, पराक्रम, देहमें बल, गम्भीर रहना, चञ्चल न होना, सबमें श्रद्धा, यशकार्य्योंको करना, सम्मानयोग्य कार्य्योंको करना, घमंड न करना, यह गुण और भी महागुण महत्वकी इच्छा रखनेवालोंको करने योग्य हैं। और स्कन्द ११ अध्याय १९में कहा है हिंसा न करना, सत्य बोलना, मनसे भी पराई वस्तुकी चोरी न करना, किसी वस्तुपर आसक्ति न होना, लज्जा धर्ममें विश्वास, ब्रह्मचर्य्य, मौन, स्थैर्य्य, क्षमा, अभय यह बारह संयम, शौच, जप, होम, श्रद्धा, अतिथिसेवा, तीर्थयात्रा, परोपकार, संतोष और आचार्य्यकी सेवा इन नियमोंको नित्य सेवन करे तो सब कार्य्य सिद्ध हो जाते हैं। जैसा किः-

अहिंसासत्यमस्तेयमसंगो ह्रीरसंचयः।
आस्तिक्यं ब्रह्मचर्यं च मौनं स्थैर्यं क्षमाऽभयम्॥
शौचं जपस्तपो होमः श्रद्धाऽऽतिथ्यं मदर्चनम्।
तीर्थाटनं परार्थे हा तुष्टिराचार्यसेवनम्॥
एते यमाः सनियमा उभयोर्द्वादशस्मृताः।
पुंसामुपासितास्तात यथा कामं दुहंति हि॥

पद्मपुराण पातालखण्ड अध्याय ८४में लिखा है कि जो मनुष्य भक्तिसे परमात्माकी पूजा करते हैं वह मन, वच और कर्मसे अहिंसा, सत्य, चोरीका त्याग ब्रह्मचर्य्य, शुद्धता, स्वल्पभोजन करना, वेदोंका पढ़ना, चुगली न करना आदि उत्तम व्रतोंको धारण करते हैं उन्हींको पुत्र स्त्री, दीर्घायु, बल, राज्य स्वर्ग, मोक्ष और अनेकान वांछित पदार्थ मिलते हैं।

श्रीमान् अब आपपर प्रकट होगया होगा कि उपरोक्त लेख स्वार्थियोंने अपने स्वार्थसाधनके अर्थ लिखे हैं इसलिये इनपर विचारकर वेदोक्तविधिसे परमात्माका ध्यान कीजिये । पुराणोंमें जहां तहां यह भी लिखा है कि हे धरणी हम पापात्मा पुरुषोंकीकी हुई पूजाको ग्रहण नहीं करते ।

पण्डितजी—बस सेठजी अब इस विषयको समाप्त कीजिये हमने इतनेमें ही जानलिया ।

सेठजी—बहुत अच्छा—ओ३म् शम् ।

पण्डितजी आदि सब महाशय चलदिये ।

सेठजी—सब महाशयोंको नमस्ते की ।

पण्डितजी—ने आशीर्वाद दिया अन्य महाशयोंने यथायोग्य कहा—सेठजी भी अपने गृहको चलेगये ।

इति सप्तमपरिच्छेदः ।

अष्टमपरिच्छेदः ।

आर्यसेठ—नियत समयके व्यतीत होनेपर और अन्य महाशय गणोंमेंसे बहुधा जनोंके आजानेपर कहा कि आज श्रीमान् पण्डितजी अभी तक नहीं पधारे क्या कारण ।

अन्य सज्जन महाशय—सेठजी साहिब कोई ऐसा ही कारण आगया होगा वरनह आज श्रीमान् कदापि न रुकते क्योंकि पण्डितजी कल मार्गमें कहते थे पुराणोंमें कैसी २ बातें लिखी है जो बुद्धिमें नहीं आती अब हमको अवतारविषय सुननेकी बड़ी रुचि है

इसलिये मैं कल शीघ्र आऊंगा आप सब सज्जन महाशय भी नियत समयपर अवश्य आजावें जिससे फिर कथाके आरम्भमें विलंब न हो।

लाला जानकीप्रसाद सेठ—पधारे और यथायोग्यके पश्चात् कहा कि श्रीमान् पण्डितजीकी माताजीके सिरमें दर्द होता है इससे वह कुछ विलंबमें आयेंगे।

अन्य महाशय—इधर उधरकी बातें करने लगे आधघंटा व्यतीत होनेके पश्चात् श्रीमान् पण्डितजी पधारे।

सेठजी और अन्य सभ्य महाशयोंने—यथा योग्य कह पण्डितजीने सब सज्जनों को आशीर्वाद दिया और विराजमान हुए।

पण्डितजी—ने कहा कि मेरी माताजीके शिरमें पीड़ा होजाने के कारण मुझको विलंब होगया इसलिये आप क्षमा करें और सेठजी अब आप अवतार विषयमें जो कुछ कहना चाहें संक्षेपसे कहिये।

सेठजी और महाशय—आपकी मातजीकी पीड़ा परमेश्वर दूर कर आनंद देंगे।

सेठजी—जो आपकी आज्ञा है मैं उसीका पालन करूंगा।

श्रीमान्—परमात्मा न कभी कर्म करता है न जन्म लेता है-फिर प्रकृतिपूजा कहां इस पर भी आपका यही विश्वास है तो सुन लीजिये पुराण एकस्वर होकर कह रहे हैं कि जब २ धर्मकी हानि होती है तब २ भगवान् हरि आत्माको प्रकट करते हैं।

जैसा **श्रीमद्भागवत स्कंद ९** अध्याय २४ में लिखा है।

यदा यदाहि धर्मस्य क्षयोवृद्धिश्च पाप्मान्।
तदा तु भगवानीश आत्मानं सृजते हरिः॥

ऐसाही मार्कण्डेयपुराण अध्याय ४ में लिखा है।

श्रीमद्भागवत स्कंद १० अध्याय ३७ में नारदजीने कहा है कि राक्षसोंके नाशके लिये धर्ममर्य्यादाकी रक्षाके लिये अवतार लिया है।

सत्वं भूधरो भूतानां दैत्य प्रथम रक्षसाम्‌ ।
अवतीर्णो विनाशाय सेतूनां रक्षणाय च ॥

शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय १० में लिखा है कि जब विष्णुने लिंगकी पूजा की और शिव प्रसन्न हुए तब शंकरने कहा कि तुम सब लोकमें मान्य और पूज्य होगे और ब्रह्माके बनाये जगत्में जिस समय दुःख हो उस समय तुम सब दुःखोंके दूर करनेमें तत्पर हो और अनेक अवतारोंको धारण करके उत्तम कीर्त्तिका विस्तार करो और संसारके उद्धारके लिये तुम लीला करो।

तस्मात्त्वं सर्वलोकेषु मान्यः पूज्यो भविष्यसि ।
ब्रह्मणा निर्मिते लोके यदा दुःख प्रजायते ॥
तदा त्वं सर्वदुःखानां नाशनेतत्परो भव ।
विविधानवतारांश्च गृहीत्वा कीर्त्तिमुत्तमाम्‌ ॥

पद्मपुराण पातालखंड अध्याय २२में लिखा है कि तुम्हारा जन्म कभी नहीं होता न है। जगत्पते! कभी तुम्हारा अन्त नहीं होता है। व हे विभो वृद्धि, क्षय वा बन्धन तुममें नहीं होतो भी भक्तोंकी रक्षा करनेके लिये व धर्म्मरक्षा करनेके लिये जन्मकर्मको करते हो। ३१। ३२।

तव जन्म तु नास्त्येव नांतस्तव जगत्पते ।
वृद्धिक्षयपरीक्षाभास्त्वपि संत्येवनो विभो ॥

तथापि भक्तरक्षार्थं धर्मस्थापन हेतवे ।
करोषि जन्मकर्माणि ह्यनुरूप गुणानि च ॥

श्रीमान् पंडितजी यदि हम इस बातको मान भी लें कि भगवान्का जन्म विना कर्म किये पापियोंके मारनेके लिये होता है तो क्या इस कल्पमें सृष्टिकी आदिसे आज तक संसारके सब भागोंमें इसी एक भारतमें सम्पूर्ण पापी उत्पन्न हुए जिनके नाश करनेके लिये यहां ही भगवान्के सब अवतार हुए । यदि आप विचार पूर्वक पुराणोंका पाठ करें तो प्रत्यक्ष प्रकट होजाता है कि परमात्माके अवतार धारण करनेका कारण धर्मरक्षाके सिवाय ऋषियोंके शाप आदिका कारण भी है देखिये ।

देवीभागवत स्कंद ४ अ० १० में लिखा है कि जब शुक्रकी माताने कहा कि मैं अभी इन्द्र सहित विष्णुको अपने तपोबलसे भक्षण करे लेती हूं तब विष्णुने सुदर्शन चक्रसे उसका शिर काट डाला तब भृगुजीने कहा कि तुमने ब्राह्मणीको मार डाला है इस लिये जाओ तुम्हारे अवतार मृत्युलोकमें वारंवार हुआ करेंगे ।

इसके उपरांत पद्मपुराण द्वितीय खंड अ० १७ में लिखा है कि ब्रह्माजी महाराज पुष्कर क्षेत्रमें यज्ञ कररहे थे जहां विष्णु महादेव इत्यादि देवता भी उपस्थित थे जब यज्ञका समय आया और सावित्रीजीको आनेमें देर हुई तब इन्द्रने एक योग्य कन्याको जो गुण कर्मसें दूसरी लक्ष्मी थी लाकर उनके सन्मुख खड़ी करदी जिसका विष्णुकी सम्मतिसे ब्रह्माने गान्धर्वविवाह कर यज्ञका आरम्भ करदिया इतनेमें सावित्रीजी आईं और सब व्यवहारको जान विष्णुजीको शाप दिया कि जाओ मृत्युलोकमें मृत्युके शापसे जो तुम्हारे अवतार होंगे उनमें एक अवतारमें तुमको स्त्रीका वियोग सहना पड़ेगा और बड़े क्लेशके पीछे स्त्री मिलेगी ।

शुक्रशप्ता तदा देवी विष्णुं वाक्यमथाब्रवीत ।
भृगुवाक्येन ते जन्म यदा मर्त्ये भविष्यति ॥

भार्यावियोगजं दुःखं तदा त्वं तत्र भोक्ष्यसे ।
हृताते शत्रुणा पत्नी परे पारे महादधेः ॥
न च त्वं ज्ञास्यसे नीतां शोकोपहृत चेतनः ।
भ्रात्रासह परं कष्टामापदं प्राप्य दुःखितः ॥
यदा यदुकुले जातः कृष्णा संज्ञो भविष्यसि ।
पशूनां दासतां प्राप्य चिरकालं भ्रमिष्यसि ।

श्रीमद्भागवत स्कन्द १ व २में निम्नलिखित अवतार लिखे हैं।

प्रथम				द्वितीय स्कन्द
१–पुरुष	....	....	......	वाराह
२–वाराह	......	......	......	यज्ञ
३–नारद	......	......	......	कपिल
४–नारायण	......	......	......	दत्तात्रेय
५–कपिल	......	......	......	कुमार
६–दत्तात्रेय	......	......	......	नारायण
७–यज्ञ	......	......	......	ध्रुव
८–ऋषभ	......	......	......	पृथु
९–पृथु	......	......	......	ऋषभ
१०–मत्स्य	......	......	......	हयग्रीव
११–कूर्म	......	......	......	मत्स्य
१२–धन्वतरि	......	......	......	कूर्म
१३–मोहिनी	......	......	......	नृसिंह
१४ नृसिंह	......	......	......	हरि
१५–वामन	......	......	......	वामन
१६–परशुराम	......	......	......	हंस
१७–व्यास	......	......	......	मनु
१८–रामचन्द्र	......	......	......	धन्वन्तरि
१९ श्रीकृष्ण	......	......	......	परशुराम
२०–बलदेव	......	......	......	राम
२१–बुद्ध	......	......	......	कृष्ण
२२–कल्कि	......	......	......	व्यास
	......	......	......	२३–बुद्ध
	....	......	......	२४–कल्कि

गरुड़पुराण अध्याय ८ श्लोक १० और ११ में लिखा है कि मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिंह, तथा वामन परशुराम, रामचन्द्र, बुद्ध और कल्कि यह दश नाम पंडितोंके सदास्मरण करने योग्य हैं।

मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नारसिंहश्च वामनः
रामो रामकृष्णश्च बुद्धः कल्की तथैव च ॥
एतानि दशनामानि स्मर्तव्यानि सदा बुधैः।

ऐसाही शिवपुराण धर्मसंहिता अध्याय ९ और वाराह पुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ४ में लिखा है।

पंडितजी श्रीमद्भागवत प्रथम स्कंदमें २२ और द्वितीयमें २४ अवतार लिखे हैं अर्थात् पुरुष, नारद और मोहिनी अवतार नहीं लिखे इसी प्रकार प्रथममें कुमार, ध्रुव, हरी, हंस और मनु पांच अवतारोंका वर्णन नहीं है अब आप ही विचार लें कि एक ही व्यासजी जो स्वयं परमात्माके अवतार और त्रिकालदर्शी इसके लिखने वाले फिर इस भेदका क्या कारण अब आप बतलाइये कि आप २२ मानेंगे वा २४। हमारी समझमें २७ अवतार मानने चाहियें, परन्तु शोक है कि २७ अवतार कोई पौराणिक नहीं मानते इसके अतिरिक्त पंडितजी परमात्माने सबसे श्रेष्ठ योनि मनुष्यकी बनाई परन्तु पुराणोंके लेखानुसार जब स्वयं परमेश्वरने अवतार लिये तो मनुष्ययोनिके अन्य वाराह, मत्स्य, कूर्म योनियोंमें भी अवतार लिया। श्रीमहाराज सत्य तो यह है कि।

विनाशकाले विपरीतबुद्धिः।

अर्थात् विनाशकाल आने पर बुद्धि उलटी हो जाती है जिसके कारण भली बुरी और बुरी भली जान पड़ती है जैसाकि सनातन धर्मी भाई इस समय निन्दाको स्तुति और स्तुतिको निन्दा समझ

कर कार्य्य कर रहे हैं और करानेकी चेष्टामें लगे रहते है और यथार्थ का कुछ विचार नहीं करते।

देखिये श्रीमान् अवतारके अर्थ उतरनेके हैं क्योंकि अवतार शब्द अव उपसर्ग पूर्वक तृ धातुसे घञ् प्रत्यय करनेसे बनता है इसलिये जिन जिन मनुष्योंमें विशेष गुण देखे उन्हींको पौराणिक पण्डितोंने अवतार मान लिया इसी कारण इनमें मत भेद है। श्रीमद्भागवत स्कंध १ अध्याय ३ में यह भी लिखा है कि सतोगुणी हरिके असंख्य अवतार हैं जिस भांति कि अगम्य जल वाले सरोवरसे हज़ारों नदियां बहती हैं। जैसाकि--

अवतारा ह्यसंख्येया हरेः सत्वनिधेर्द्विजाः।
यथाऽविदासिनः कुल्याः सरसः स्युः सहस्रशः २६॥

अब कहिये आप असंख्य अवतार मानेंगे या २२वा २४ वा दस। इसके अतिरिक्त श्रीमद्भागवत स्कंद १ अ० ८ श्लोक ३० पर भी दृष्टि डालिये जो साफ़ २ कह रहा है कि विश्वात्मन् अकर्ता होने पर भी आपका आत्मासे कर्म करना और जन्मरहित होनेपर भी आप वाराह, मत्स्यादि तिर्यङ्क् (जीव) योनियोंमें जन्म लेना तथा रामचन्द्र और वामन आदिका रूप धारण करना अत्यन्त आश्चर्य जनक और कथनमात्र है।

इस पर भी आप परमेश्वरके अवतार मानते हैं तो यह बतलाइये कि नारद महाराज किस प्रकार परमेश्वरके अवतार हैं। जब कि इनके पूर्वजन्म दासीपुत्रका वृत्तांत श्रीमद्भागवत स्कंद १ अध्याय ५ में लिखा है।

अहं पुरातीत भवे ऽभवे मुने दास्यास्तु कस्याश्चन वेदवादिनां।

इसके उपरांत पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंड अध्याय २४१में महादेवजीने पार्वतीजीसे कहा है कि श्रीराम और श्रीकृष्ण यह दोनों अवतार उपासना करनेके योग्य हैं क्योंकि यह उत्तम गुणोंसे परिपूर्ण जिनकी ऋषियोंने भी उपासनाकी और जो मोक्षके दाता हैं जैसाकि-

उपास्यौ भगवद्भक्तैर्विप्रमुख्यैर्महात्मभिः।
रामकृष्णावतारौ तु परिपूर्णौहि सद्गुणैः।
उपास्यमानावृषिभिरपवर्गप्रदौ नृणाम्। ८१ ॥

क्या पण्डितजी अन्य अवतार उपासनाके योग्य नहीं। खैर, कुछ हो इसका भी न्याय आपही कीजिये। अब हम आपको श्रीकृष्ण और श्री रामचन्द्रके गुणोंका संक्षेप कीर्त्तन सुनाते हैं जिस पर पौराणिक महाशय फूलते हैं। तदन्तर-

कपिल, पृथु, दत्तात्रेय, व्यास, नारद, वामन, मोहिनी, परशुराम और बलदेवजी महाराजके वृत्तांत अत्यंत संक्षेप से सुनाते हैं जिनके चरित्रोंने परमात्माके गुणोंमें भी धब्बा लगा दिया और अवतारियोंको देवपदवीसे भी गिरा दिया तिस पर भी आप यही कहते हैं कि आर्य्य लोग अवतारोंकी निन्दा करते हैं इसलिये यह नास्तिक हैं। कृपाकर सुन लीजिये फिर न्याय कीजिये।

श्रीकृष्ण महाराज।

महाभारत आदिपर्वमें लिखा है कि कृष्ण और बलदेवजी विष्णु महाराजके एक काले बाल और एक श्वेत बालके अवतारहैं जैसाकि-

सचापि केशौ हरिरुच्च जहे शुक्लमेकम् परं चापि कृष्णम्।

तौ चापि केशौ निविशेता यदूनां कुले स्त्रियौ देवकी रोहिणीं च ॥

तयोरेको बलदेवो वारवर्णोऽसौ श्वेतस्तस्य देवस्यकेशः कृष्णो द्वितीयः केशवः सम्बभूव केशोयोऽसौ वर्णतः कृष्ण उक्तः ॥

विष्णुपुराण—अंश ५ अध्याय १में पराशरजी कहते हैं कि हे महामुने ! जब देवताओंने भगवान् परमेश्वरकी इस प्रकार स्तुति की तब उसने अपने दो बाल एक सफ़ेद और दूसरा काला उखाड़े और देवताओंसे कहा कि यह मेरे बाल भूमण्डलमें अवतार लेकर भूमिका भार और पीड़ा दूर करेंगे। हे देवो ! देवताके सदृश जो देवकी नाम वसुदेवकी स्त्री है उसका आठवां गर्भ यही मेरा बाल होगा और वह पृथ्वीमें अवतार लेके कंसको मारेगा।

एवं संस्तूयमानस्तु भगवान् परमेश्वरः ।
उज्जहारात्मनः केशौ सित कृष्णौ महामुने ॥
उवाच सुरानेतौ मत्केशौ वसुधा तले ।
अवतीर्य भुवोभार क्लेशहानिं करिष्यत ॥
वसुदेवस्य या पत्नी देवकी देवतोपमा ।
तस्यायमष्टमो गर्भो मत्केशो भविता सुरा ॥
अवतीर्य च तत्रायं कंसघातयिता भुवि ।

विष्णुपुराण—अंश ५ के प्रथम अध्यायमें लिखा है कि कृष्ण विष्णु महाराज के अंश का अंश है जैसा कि अंशांशावतारः ।

देवीभागत—स्कंद ४ अध्याय १९ श्लोक ३४में लिखा है कि यदु-कुलमें विष्णु अंशमात्रसे वासुदेवका बेटा होगा।

अंशेन भविता तत्र वसुदेवसुतो हरिः ।

श्रीमहाराज यह अन्तर क्यों। अब—

शिवपुराण—ज्ञानसंहिता अध्याय ६७ में शिवजीने अर्जुन से कहा है कि कृष्ण मेरेही अंश से उत्पन्न है वह तुम्हारा कार्य्य करेंगे। ४० ४१।

कृष्णं च कथयिष्यामि साहाय्यान्ते करिष्यति।
सावैममांश भूतश्च सतं कार्यं करिष्यति॥

ऐसाही ब्रह्मपुराण अध्याय ७२ श्लोक ५२ में लिखा है वायुसंहिता अध्याय २५ में लिखा है कि श्रीकृष्णने स्वेच्छासे अवतार धारण किया था कारण कि वे सनातन वासुदेव हैं।

स्वेच्छाया ह्यवतीर्णोऽपि वासुदेवः सनातनः।

ब्रह्मवैवर्त्तपुराण—कृष्णजन्मखण्डके अध्याय ४, ५, ६, और ७ से जान पड़ता है इन्हीं श्रीकृष्णजीने जिन्होंने ब्रह्मा, विष्णु और महेश को उत्पन्न किया पृथ्वीका भार उतारने के लिये जो इन तीनों देवतों से नहीं होसका था मथुरा में देवकी और वसुदेव के यहां जन्म लिया॥

और कृष्णजन्मखण्डके ६ श्लोक २२६ से ज्ञात होता है कि श्री कृष्ण के अवतार लेने का कारण राधाजीका स्नेह ही था। यथा।

तव हेतोर्गमिष्यामि कृत्वा कंसभयं छलम्।

प्रकृतिखण्ड अध्याय ३० में यमने सावित्रीसे कहा है कि सब ईश्वरोंके ईश्वर सब कारणोंके कारण सबके आदिस्वरूप सबकी आत्माओंमें वास करने वाले सब देवताओंसे पूजनीय श्रीकृष्ण ही हैं वे मायासे अनेक रूपोंको धारण करते हैं। यथार्थमें वह निर्गुण हैं जो कोई इनका अन्य देवताओंके साथ समता करता है वह ब्रह्महत्या को पाता है। १५४। १५५॥

सर्वेश्वरेश्वरे कृष्णे सर्वकारणकारणे ।
सर्वाद्ये सर्वदेवानां सेव्ये सर्वान्तरात्मनि । १५४।
माययाऽनेक रूपे वाप्येक एव हि निर्गुणे ।
करोत्यन्येन समतां ब्रह्महत्यां लभेत्तु सः । १५४ ॥

भगवत् गीता अध्याय ७में कृष्ण महाराजने कहा है कि मैं सम्पूर्ण जगत्का उत्पन्न करने वाला हूं तथा नाश करने वाला हूं। अय अर्जुन मुझसे परे अथवा बड़ा और कुछ नहीं है। यह सब जगत् मुझमें ऐसे वर्त्तमान है जैसे धागेमें मणिसमूह।

अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥
मत्तः परतरन्नान्यत्किञ्चिदस्ति धनंजय ।
मयि सर्वमिदम्प्रोतं सूत्रेमणिगणा इव ॥
श्रीमद्भागवत स्कंद १ अध्याय ३ में लिखा है।

एतेचांशकलाः सर्वेः कृष्णास्तु भगवान् स्वयम् ॥२८॥

अर्थात् सब अंश कला अवतार हैं। पर श्रीकृष्ण स्वयम् भगवान् हैं।

श्रीमान् पण्डितजी श्रीकृष्ण महाराजके चरित्र जाननेके लिये विशेष कर श्रीमद्भागवत स्कंद १० पर दृष्टि डालिये क्योंकि इसी पुराणसे महात्मा व्यासजीकी आत्माको शांति हुई थी।

(१) श्री कृष्ण महाराजने मिट्टी खाते समय अपनी माताको तीनों लोक अपने मुखमें दिखलाये।

(२) गोपियोंके दूध माखन चुरा २ कर खाना, कंसके राजाके धोबीसे कपड़ोंको मांगना और जब उसने उनको न दिये तब उसको

वहीं मार डालना फिर वस्त्र पहन कर किसीसे माला चन्दन ले आप धारण करना ।

(३) गोपियां श्रीकृष्णको उपपति जार समझती थीं न कि पार ब्रह्म ।

कृष्णां विदुः परं कान्तं न तु ब्राह्मणया मुने ।

उसी परमात्माको जारबुद्धिसे प्राप्त हुईं ।

तमेव परमात्मानं जारबुध्यापि संगताः ।

(४) जिस समय गोपियां जमुना स्नानको गईं तो कृष्ण महाराज उनके वस्त्र और चीर उठा कर क़दम पर चढ़ गये और उनके मांगने पर भी वस्त्र न दिये फिर जलसे बाहर अपने सन्मुख खड़ा कर लिया फिर उनको वस्तु दिये यह बात अभी तक प्रसिद्ध है और अभी तक यात्रियोंको यह वृत्तांत सुनाया जाता है ।

(५) अजगरों और राक्षसोंको मारा, गोवर्द्धनको अंगुली पर उठाया, जरासिंघसे १७ वार हार अठारहवीं वार द्वारिका भाग कर बचे फिर भीमसेनको साथ लेजाकर जरासिंघसे मल्लयुद्ध कराकर उसको मरवाया ।

६-इसके उपरान्त जब पाण्डव द्रोणाचार्य्यको न जीत सके तो कृष्ण महाराजने युधिष्ठिरसे झूठ बुलवाया कि आपका पुत्र मारा गया तब द्रोणाचार्य्य यह सुन मूर्च्छित हो गिर पड़े फिर कृष्ण और पांडवोंने उनको मार डाला ।

७-श्रीकृष्ण महाराजकी १६००० रानियां लिखी हैं फिर प्रत्येकके दश सन्तान होना बतलाया है इस हिसाबसे १ लाख ६० हज़ार पुत्र हुये जैसा कि-

एकैकशस्ताः कृष्णस्य पुत्रान्दशदशाऽबलाः ।
अजीजनन्ननवमान् पितुः सर्वात्म सम्पदा ॥

पत्न्यस्तु षोडश सहस्रमनङ्गवाणौर्यस्येन्द्रिय विमथितुं करणैर्नशेकुः ॥

और हरिवंशमें लिखा है।

दशायुत समाख्याता वासुदेवस्य वै सुता।

अर्थात् कृष्णमहाराजके १ लक्ष सन्तान थीं।

८-अब पण्डितजी महाराज और सुनिये शिवपुराण वायुसंहिता अ० १में लिखा है कि श्रीकृष्ण महाराजने एक वर्ष शिवका उग्रतप कर महेश्वरका दर्शन पाया जिससे उनके सब असंगल दूर हो मायामय सब कर्म्म मिटगये और निर्मल हो गये तब पार्वती और महादेवके वरसे साम्ब पुत्रको पाया।

पश्चकारपुत्रार्थं साम्बमुद्दिश्य शंकरम्।
तपस्ततेन वर्षान्ते इष्टदेव महेश्वरम्॥२०॥
साम्बस्तगणमव्यग्रोलब्धवान्पुत्रमात्मनः।
यस्मात्साम्बोमहादेव प्रददौ पुत्रमात्मनः॥

९ शिवपुराण धर्मसंहिता अ० ८ में लिखा है कि जिस समय दैत्योंमें मुख्य दैत्य युद्धमें निहत हुये तब विष्णु स्त्रियोंको हरण कर पातालमें स्थित हो प्रसन्न हुये वही त्रेतामें रामरूप होकर जानकीको प्राप्त कर स्त्रीके विलास धन और पुत्रोंसे तृप्त न हुये स्त्री सहित वनवासी होनेके कारण कलियुगमें फिर केशवने जन्म ग्रहण किया जिन्होंने बाल्यावस्थामें गोपियोंके साथ विहार किया उन्होंने गोपालोंके दशसहस्र पुत्रोंकी उत्पत्तिकी फिर युवावस्थाको प्राप्त हो रुक्मिणीके साथ विवाहकर प्रद्युम्नादि पुत्रोंको उत्पन्न किया फिर नरकासुरको मार सोलहहज़ार रानियोंको हरण किया और उनसे रति फल भोगकर नव्वे सहस्र पुत्रोंको उत्पन्न किया जब इस प्रकारसे स्त्रियों से तृप्त न हुवे तब रात्रिमें धैर्य्यच्युत हो राधिका नामी स्त्रीसे विहार

किया इस प्रकारसे नित्य ही स्त्रीजनोंसे प्रेम किया देखो श्लोक ६२ । ६३ । ६४ । ६६ । ६७ । ६८ । ६९ ।

भ्रातृणां दैत्यमुख्यानां हतानां दारुणे युधि ।
स्त्रियो हृत्वा तु पाताले निक्रीड चमुमोदच ॥६१॥
त्रेतायुगे रामरूपी विष्णुः संप्रपजानकीम् ।
नोतृप्तः स्त्रीविलासानां वित्तस्य च सुतस्य च ॥६२॥
रेतः संभ्रषणाश्चापि प्रोषितस्य स्त्रियामपि ।
तस्मात्कलियुगे भूयो गृहीत्वा जन्मकेशवः ।
वसुदेवस्य देवक्यां मथुरायां महाबलः ।
बालस्तु गोपकन्याभिर्वने क्रीडां चकारसः ॥६४॥
दशलक्षाणि पुत्राणां गोपालानां ससर्जह ।
ततस्तु यौवनाक्रांतो रुक्मिणी प्रददर्शह ॥ ६५ ॥
विवाहयित्वापुत्रांश्च प्रद्युम्नाद्यांश्च निर्ममे ।
तथापिनरकं दैत्यं प्राग्ज्योतिषपतिंबलात् ॥
हत्वा स्त्रीणां सहस्राणि षोडशैव जहारसः ।
तासां रतिफलं भक्त्वा पुत्राणा नवतितथा ॥
सहस्राणि ससर्जाशु मत्स्येचाण्डमहाद्भुतम् ।
स्त्रीणां तथापि नो तृप्तो दिव्यनां तुरतेर्यदा ॥६८॥
तदा राधास्त्रियं कांचिन्निशिधैर्य दघर्षयत् ।
तथापि परनारीणां लंपटो नित्यमेव हि ॥

(९) पद्मपुराण पंचमपातालखण्ड अध्याय ७४में लिखा है कि अर्जुनने कृष्णमहाराजसे प्रार्थनाकी आप मुझको वह आनंद दिख-

लाइये जो आज किसीने न देखा हो इस पर एक सरोवरमें स्नान कराये वह स्त्री होगये फिर उन्होंने उसी रूपमें श्रीकृष्णजी और राधा को देख स्त्री रूपीं महाराज अर्जुन काम वश होगये इस दशा को श्रीकृष्ण महाराज जान अर्जुन रूपी स्त्रीका हाथ पकड़ बनको लेगये और जैसा चाहा वैसा विहार करते रहे यद्यपि वह योगीश्वर थे फिर उससे कहाकि पश्चिमवाले सरोवरमें स्नान करो स्नान करते ही फिर अर्जुन होगये।

रामावतार।

(१) वाल्मीकि रामायणमें लिखा है रामजीका अवतार नारद मुनिके शापसे हुआ।

२ जब रामचन्द्र महाराजने धनुष तोड़ा तब परशुराम जी आये और उनसे वार्तालाप हुआ परंतु एकने दूसरे को जब कि दोनों अवतार थे नहीं पहचाना अंत को जब उनके तरकसको श्रीरामने चढ़ा दिया तब उनको श्रीराम का अवतार जानपड़ा।

३-जब श्रीराम दंडक वन में गये तो उन्होंने अगस्त्य मुनिका स्थान सुतीक्ष्ण से पूछकर जाना था।

४-रावण की बहन शूर्पणखा राम से विवाह करना चाहती थी तब उन्होंने कहा कि तू लक्ष्मणजीके पास चलीजा उनका अभी विवाह नहीं हुआ परंतु ब्रह्मवैवर्त पुराणसे प्रगट होता है कि उनका विवाह होचुका था जब वह उनके पासगई तो फिर रामजीने सैन देकर लक्ष्मणसे उसके नाक कान कटवा लिये जिससे रावण और रामका वैर होगया।

५-जब रावण के कहनेपर मारीच हरिण बनकर आया तो राम जी ने उसको नहीं जाना।

६-जब सीताका हरण होगया तो उन्होंने यह नहीं जाना कि रावण लेगया वा कौन क्योंकि वह वन २ ढूंढ़ते हुये पंपापुर पहुंचे जहां हनूमानसे भेंट हुई जिसने सुग्रीवसे मिलाया वहां उसने वैरी बालि को छल से मारा।

७-जब राम, लक्ष्मण मारीच को मारकर वापिस आये और वहां सीता को न देखा तो अत्यन्त शोकसे संतप्त होकर रोदन किया।२६०।

८जब सीताको ढूंढतेहुए श्रीराम लक्ष्मण गोदावरीपर पहुंचे तब उससे पूछते हुए कि हे प्रिय ! तुम हमारी सीता को जानती हो जब वह न बोली तो उसको शाप दिया कि तुम्हारा जलरक्त होजावे तब वह मुनियोंको साथ लेकर उनके पास गई जिन्होंने कहा कि यह आप के चरणकमलोंसे उत्पन्न हुई है शापके योग्य नहीं है तब उसको शापसे मुक्त किया।

(९) देवी भागवत स्कन्द ३ अ० १९में लिखा है कि रामजी जब वालि को मारकर एक वर्ष वहां रहे तब एक दिन रामने ल-क्ष्मणसे कहाकि विना जानकीके हमारा जीना अति ही दुर्लभ है और न उनके विना हम अयोध्याको जायंगे। देखो राज गया, वनवास हुआ पिता मरे, स्त्री हरी गई, देखिये दुष्ट भाग्य अब क्या करता है देखो होनहार नहीं मिटता राजा मनुके वंशमें जन्म लेकर ऐसे वन-वासके दुःख भोगरहे हैं तुमभी हमारे साथमें रह सब दुःख उठाते हो और नानाप्रकारके कष्ट भोगते हो हमारे समान इस कुलमें कोई भी दुखी नहीं हुआ न होगा क्या करें इस दुःखसागरसे तरनेका कोई उपाय नहीं। यहां वनमें न द्रव्य है न सेना किसके ऊपर कोप करें तुम्हीं अकेले साथी हो जो जैसा करता है वैसा भोगता है देखो सीता दुष्ट रावणके यहां किस प्रकारसे जीवेगी। स्त्रीके साथ रखनेसे हम ऐसे ऐश्वर्य्यवान्को भी दुःख हुआ तो फिर सामान्य मनुष्यकी क्या गणना है। तब लक्ष्मणजीने कहा धीरजको धारण करो रा-वणसे सीता लेआवेंगे जो आपत्ति और सम्पत्तिमें धीरज धरते हैं वही धीर कहाते हैं अल्पबुद्धि लोग दुःखोंसे दुःखी होकर दुःखोंको भोगते हैं सुख दुःखको दैवाधीन समझकर दुःखको त्यागो जिसकाल से राज गया सीता हरीगई उसीकालसे सीता मिलेगी।

देखो अकेले राजा रघुने दशो दिशाओंको जीत लिया था उन्हींके वंशमें आप हैं फिर क्यों सोच करते हो इसी प्रकार दोनों भाई बातें

कर रहे थे कि आकाशसे नारद मुनि आये जिनकी पूजाकी तब उन्होंने कहाकि आप प्राकृत मनुष्योंकी नांति क्यों शोक करते हो आपका जन्म सीताहरण और रावणके मारनेके लिये हुआ है क्या आप नहीं जानते पूर्व समयमें सीता एक मुनिकी कन्या थी वह वनमें तपस्या करती थी तब रावणने प्रार्थनाकीकि आप हमारी भार्य्या हूजिये जब उसने न माना और हठसे पकड़ लिया तब उन्होंने शाप दियाकि जा तेरे नाशके निमित्त हम पृथिवीपर उत्पन्न होंगी। जब हमको लेजावेगा तब तेरा नाश हो जायगा। वही लक्ष्मीका अंश जानकी उत्पन्न हुई है वह अपने नाशके निमित्त उनको लेगया है अजन्मा आप हैं तिसका जन्म भी इस दुष्टके मारनेके निमित्त देवताओंकी प्रार्थना करनेपर राजा दशरथके यहां हुआ है आप परमेश्वर और सीता परमेश्वरी, इससे आप धीरज धारण कीजिये मैं रावणके नाशका उपाय बताता हूं आप क्वार मासके नवरात्रिका व्रत कीजिये हम करादेंगे सब कार्य्य सिद्ध होजावेंगे। पूर्व समयमें ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्रने यही व्रत किया था यह सुन नारदकी विधिके अनुसार व्रत किया तब भगवती सिंहपर चढ़कर आईं और कहाकि तुम नारायण हो वानरोंकी सहायता लेकर रावणको मारो।

(१०) अग्निपुराण अध्याय १० में लिखा है कि जिस समय हनुमान्जीने लंकासे लौटकर मणि रामचन्द्रजीको दी उस समय उन्होंने विरहमें दुःखित होकर रोदन किया।

(११) सीताकी खबर पानेपर सुग्रीवादिकी सहायता लेकर लंकापर चढ़ाई की।

(१२) जब रामचन्द्र समुद्रपर पहुंचे तो पार उतरनेके लिये मार्ग नहीं पाया। इसके विषयमें पद्मपुराण षष्ठ खंड अ० ४४ में लिखा है कि रामने लक्ष्मणजीसे कहा है कि अब क्या करें तब लक्ष्मणजीने कहाकि यहांसे २ कोसपर वकदाल्भ्य मुनि और अन्य उत्तम ब्राह्मण रहते हैं उनके समीप चल कोई उपाय पूछकर कार्य्य करिये यह सुन

श्रीराम उनके समीप गये और वृत्तान्त कहा तब मुनिने कहाकि तुम एकाग्रमन होकर इस व्रतको करो जो फागुनके कृष्णपक्षमें विजया एकादशी होती है।

एकाग्र मनसो भूत्वा व्रतमेतत्समाचर।
फाल्गुनस्यासिते पक्षे विजयैकादशी भवेत् ॥ २४ ॥

तिसके व्रतसे आपकी जीत होगी वानरों समेत समुद्रको तर जाओगे।

तस्या व्रतेन हेराम ! विजयस्ते भविष्यति।
निःसंशयं समुद्रस्त्वं तरिष्यसि सवानरः॥

फिर उन्होंने सब विधि सुनाई जिसको सुन उसीसमय रामजीने यथोचित व्रत किया और करने हीसे रामकी जीत हुई।

इति श्रुत्वा ततोरामो यथोक्तमकरोत्तदा।
कृते व्रते सविजयी बभूव रघुनंदनः॥
प्राप्ता सीता जिता लंका पौलस्त्यो निहतो रणे।

(१३) तुलसीकृत रामायणमें लिखा है कि उन्होंने महादेवकी स्थापना कर पूजाकी तब समुद्र आया उनका कार्य्य सिद्ध हुआ।

(१४) इसी भांति संग्रामके समाचार अंगदादि वानरों द्वारा मिला करते थे।

(१५) जब लछमणजीके शक्ति लगी तो रामने बड़ा विलाप किया फिर विभीषणकी सम्मतिके अनुसार वैद्यको बुलाकर औषधि कराई।

(१६) जब रामने रावणको मार सीताजीसे भेंटकी उससमय उन्होंने बहुत निन्दित वचन कहे तब सीता भी अग्निमें प्रवेश करगई तब महादेव आदि देवता रामजीके समीप आये और बहुतकुछ राम और

सीताकी प्रशंसा की इतनेमें अग्नि शरीर धारण कर आया और कहा कि इससीताको लो यह पापरहित है मैं सत्य २ कहता हूं तब अग्निके ऐसा कहने पर उसको ग्रहण किया।

(१७) रावणको मारकर १२ वर्ष पश्चात् अयोध्यामें आकर राजा होकर राज्य करने पर लोकापवादके भयसे गर्भवती सीताको वनोवास किया।

(१८) फिर निकाली हुई सीता वाल्मीक ऋषिको दो पुत्र सौंप रामके चरणोंका ध्यानकर पृथिवीछिद्रमें प्रवेश करगई। तब वह ईश्वर होनेपर भी शोकको न रोकसके, क्या यही ईश्वरतारका चिह्न है।

हत्वा मधुवने चक्रे मथुर नाम वै पुरीम् ।
मुनौ निक्षिप्य तनयौ सीताभर्ता विवासिता ॥
ध्यायंती रामचरणौ विवरं प्रविवेश ह ।
तच्छ्रुत्वा भगवान् रामो रुधन्नपि धियाशुचः ॥

१५—रामचन्द्रजी ने ब्रह्महत्या दूर करनेके अर्थ अगस्त मुनिकी आज्ञानुसार अश्वमेध यज्ञ किया।

पद्मपुराण—पञ्चम पाताल खण्ड अ० ९ में जब रामचन्द्रजी राज्य कररहे थे और अगस्त्य मुनि उनके यहां गये थे तब उनको मालूम हुआ कि रावण ब्राह्मण था तब उन्होंने बहुत विलाप किया कि हमने स्त्री के अर्थ वेदशास्त्रविवेकी ब्राह्मणके कुलका संहार करदिया भला हमारे समान दुर्मति, बुद्धिहीन कौन होगा।

अहो मे पश्यताज्ञानं विमूढस्य दुरात्मनः ।
यद्ब्रह्माण कुलेरूढं हतवान्काममलोलुपः ॥

महिलार्थेत्वहं विप्रं वेदशास्त्रविवेदं व नु।
हतवान्वाडवं कुलं बुद्धिहीनोति दुर्मतिः ॥

इक्ष्वाकु राजाके वंशमें आज तक किसीने ब्राह्मणोंको दुर्वचन न कहा सो ऐसा कर्म करते हुये उस कुलको कलंकित कर दिया जो ब्राह्मण पूजाके योग्य थे उनको हमने मारा इससे हम नहीं जानते कि हमारे पापोंको कुम्भीपाक न सह सकेगा और ऐसा कोई तीर्थ नहीं दिखाता जो हमको पवित्र करनेमें समर्थ हो।

इक्ष्वाकूणां कुले ज्ञातु ब्राह्मणो न दुरुतिभाक्।
ईदृशं कुर्वता कर्म मयै तत्सुकलं कितम् ॥
ये ब्राह्मणास्तु पूजार्हा दानसम्मानभोजनैः।
ते मया निहता विप्राः शरसंघातसंहितैः ॥
कालोकान्न गमिष्यामि कुंभीपाकोपि दुःसह ॥

न यज्ञ, न तप, न दम, न देवताकी प्रतिमा आदिक ऐसी हैं जो ब्राह्मणके मारने वालेको पवित्र कर सकें।

न तादृशं तीर्थमस्ति यन्मां पावयितुं क्षमम्।
न यज्ञो न तपो दानं न वाचैव व्रतादिकम् ॥

इसलिये आप कृपा करके कोई व्रत, तप, दान बताइये जो हमारे पापोंको भस्म करे।

प्रब्रूहितादृशं मह्यं यादृशं पापदाहकम्।
व्रतं दानं मखं किंचित्तीर्थमाराधनं महत् ॥

जिससे हमारी विमल कीर्त्ति हो जो सब लोगोंको पीछेसे पवित्र करे चाहे वह लोग पापाचरणसे पापी होगये हों, ब्रह्महत्यासे उनकी दीप्ति जाती रहो हो वह सबको पवित्र करें।

येन मे विमला कीर्त्तिर्लोकान्वै पावयिष्यति ।
पापाचारासकालुष्यान्ब्रह्महत्या हतप्रभान् ॥

तब अगस्त्यजीने कहा कि जो अश्वमेध यज्ञ करता है वह सब पापोंसे उत्तीर्ण होजाता है इसलिये आप सुशोभित होकर अश्वमेध यज्ञ कीजिये ।

सर्वं सपापं तरति योऽश्विमेधं यजेत वै ।
तस्मात्त्वं यज विश्वात्मन्वाजिमेधेन शोभिना ॥

तब उन्होंने अश्वमेध यज्ञ किया जिसका सविस्तार वर्णन आगेके अध्यायोंमें लिखा है ।

पद्मपुराण पातालखण्ड अ० ३७में लिखा है कि अगस्त्यमुनिके कहनेसे रामचन्द्र ब्रह्महत्या मिटानेके लिये सामग्री समेत यज्ञ करते हैं ।

अगस्त्यवाक्याच्छ्रीरामो विप्रहत्यापनुत्तमे ।
यागं करोति सुमहान्सर्वसंभारसंभृतम् ॥

पण्डितजी महाराज इसी प्रकार अन्य और भी लिखा है जो ईश्वरतारके विपरीत है इसी कारण तो हम कहते हैं कि ईश्वर कभी अवतार नहीं लेता । न यह परमेश्वर अवतार थे वरन् दोनों योग्य महात्मा, धर्मात्मा और सज्जनपुरुष थे जिनके विषय हमारे शत्रुओंने पुराणोंमें क्या २ अनोखे लेख लिखदिये हैं जिनको हम नहीं मानते।

कपिलअवतार ।

कर्दम ऋषि प्रजापति देवहूतीको भगवान् वर देकर (कि मैं तुम्हारे यहां जन्म लूंगा) अंतर्द्धान होगये तो कर्दम ऋषिने देवहूतीसे कहा कि तुमने मेरे साथ बहुत तपस्याकी और असंख्य कष्ट उठाये अब मैं चाहताहूं कि तुझको सुखदे आनंद उठाऊं । तब देवहूतीने

कहा मुझे आनंदकी इच्छा नहीं किंतु आपके चरणसेवा की इच्छा रहती है। परन्तु कर्दम ऋषिने नमाना और सरोवरमें स्नान करनेकी आज्ञा दी और उसने ऐसा किया तब तो स्नान करते ही सोलह वर्षकी सुंदरी हो गई। उसके साथ ही हजार लड़कियां तालावमें से निकलीं और वहां सोनेके महल रत्नोंसे जड़े हुए बनाये जो अपनी सुंदरतामें वैकुंठको लजाते थे फिर कर्दम ऋषिने भी उसी तालावमें स्नानकी जिससे वह भी सोलह वर्षके जवान पट्ठा हो गये फिर वह दोनों उस स्थान पर विषयभोग और नानाप्रकारके सुख भोगते रहे। उनके पास एक विमान था जिसके ऊपर वह दोनोंबैठकर देवलोक, भूलोक, पाताललोक इत्यादिमें यात्रा किया करते थे कहीं भी कोई रोक इनकेलिये नहींथी इसप्रकार भोग करते हुए बहुत दिनोंके पीछे देवहूती ने कहा कि अब भोग और सुख बहुत हो चुका अब जैसा श्रीभगवान्का वर है वैसा मेरे पुत्र उत्पन्न हो इतने कहनेकी देर थी कि तुरन्त नारायणका अंश उसके गर्भमें आगया। ब्रह्माजीने उसी समय आकर सूचना दी कि तुम्हारे घर अवतार नारायणका होगा। और कपिल देवजी परमयोगीश्वर जटाधारी जन्म लेंगे। संसारमें तुम्हारा नाम स्मरण रहेगा।

श्रीमहाराज! इस भागवतने हर स्थान पर ईश्वरीनियमको तोड़कर सत्यधर्मकी कुदृशा करदी। मेरी समझमें अब गङ्गास्नानकी कुछ आवश्यकता नहीं वरन उस सरोवरकी खोज करनी चाहिये क्योंकि यदि वह मिल गया तो दरिद्र दूर हो जायगा हमारे वृद्ध सोलह वर्षके जवान पट्ठा बनजायेंगे सहस्रों दासियां भी मिलेगीं साथ ही सोनेके भवन रत्नोंसे जड़ित बन जायेंगे। सत्य तो यह है कि अविद्याने जिनके नेत्रोंका प्रकाश खोदिया हो वह क्या देखसकते हैं। पक्षपातने जिनका मन फेरदिया वह सत्य झूठकी परीक्षा कहांसे करें। ब्रह्माजीकी साक्षीके सन्मुख भला कौन इसको असम्भव बतला सकता है। परन्तु सत्य किसी प्रकार मारा नहीं जाता इस लिये आप भी इसमेंसे सत्यको ग्रहण कीजिये।

राजा पृथुका अवतार ।

जब राजा बेन ब्राह्मणोंके शापसे मरगया तब उसकी माताने कहा कि उसके शरीरको जलाना नहीं जिन्होंने इसको मारा है वह आप ही जिलावेंगे, ब्राह्मणोंने विचार किया कि मृतकको जिलाना ठीक नहीं परन्तु अपने ब्रह्मतेजसे इसके शरीरसे एक बेटा उत्पन्न करेंगे वह राज्य करेगा और इन तीनोंने उसकी जांघ मथनकी इससे एक ऐसा पुरुष उत्पन्नहुआ जिसकी भयानक सूरत छोटा डील और छोटी गर्दन वाला थाउत्पन्न होइते ही उसने कहा कि मुझको क्या आज्ञा है ब्राह्मणोंने देखा कि इसका स्वरूप राज्यके योग्य नहीं है तब उससे कहा कि भीलोंपर जाकर सर्दारी करो इतना सुनते ही चलागया और फिर उसी मृतक शरीरकी दाहिनी जङ्घासे एक स्वरूपवान् पुरुष और एक परमसुन्दरी स्त्री निकली, पुरुषका नाम पृथु रक्खा, स्त्री से कहा कि तू इसकी भार्य्या है इसके पश्चात जब ब्राह्मणोंने ज्ञानदृष्टिसे देखा तो ज्ञात हुआ कि यह पुरुष नारायणका अवतार है और स्त्री लक्ष्मी है । अधर्मी राजाका सिंहासन इसको शोभा न देगा। कुवेरसे कहा तू इसके लिये ऐसा सिंहासन ला जो रत्नों और मणियोंसे जड़ा हो । उसने उसी समय आज्ञा पालन की और वरुणने छत्र, वायुने चँवर लाकर अर्पण किया और सब देवताओंमें जिनके पास जो कुछ राज्यका सामान था लाकर राजाके सम्मुख रक्खा अब बन्दीजनोंने (जिनको भाट व कवि जो इन्हीं ब्राह्मणोंके गोलमें से थे) राजाकी प्रशंसा करनी प्रारम्भकी और बड़े २ राजाओंका उदाहरण देने लगे परन्तु राजाको यह बात अप्रिय ज्ञात हुई उसने कहा कि अब तक मुझसे कोई अच्छा काम नहीं हुआ व्यर्थ प्रशंसा अच्छी नहीं यह हँसी है । एक नारायणकी स्तुति करनी चाहिये जो सबको प्रत्येक आवश्यक पदार्थ देता है परन्तु बन्दी जनोंने कहा कि तुम नारायणके अवतार हो तुम वे काम करोगे जो अब तक किसीसे नहीं हुए प्रथम हमारी जिह्वासे बुरे बचन निकलते रहते हैं इस लिये हमको उचित है कि हम अपनी वाणीको आपकी प्रशंसासे पवित्र करें ।

जब बहुत समय राजा पृथुको राज करते होगया। एक दिन सम्पूर्ण प्रजा एकत्रित होकर राजाके पास आ निवेदन करने लगी कि हे महाराज! आप हमारे राजा हो हमारे शरीर इस प्रकार जल रहे हैं जैसे कोई सूखे पेड़ोंमें आग लगा देता है हम भूखके मारे व्याकुल हैं हमारे भोजन अन्न और फल हैं। उसको भी पृथिवी अपने गर्भमें चुरा लेगई। पेड़ोंपर फल भी नहीं आने देती। पृथिवी पर बीज हम डालते हैं परन्तु कुछ नहीं जमता। हम क्या खायें, क्या करें। कहां जायें। राजा बेन अधर्मी था इसी कारण पृथिवीने ऐसा किया। आप धर्मात्मा राजा हो, हमारी रक्षा करो। राजा पृथुको यह बात सुनते ही क्रोध आया और धनुषबाण लेकर कहा कि पृथ्वीको मारूंगा और बाणको चढ़ाकर चाहा था कि पृथ्वीके खण्ड २ करूं कि इतनेमें पृथ्वी गौका रूप धारण कर सामने आई राजाने गौके मारनेका भी कुछ दोष न समझा। अब पृथिवी दौड़ी और राजा भी उसके पीछे भागा। जब पृथ्वीने देखा कि कहीं शरण नहीं मिलती तब राजासे कहा कि स्त्री और गौके मारनेका बड़ा पाप है मारना उसको चाहिये जिससे कुछ दुःख पहुंचे यदि मुझको मार डाला तो संसार किस पर बसेगा राजाने

नोट—पृथिवी सब उन औषधि और फलोंको अपने गर्भमें लेगई हमसे, क्या— किसी हिंदूसे ही पूछो तो वह भी कभी इसकी सत्यतापर प्रतीति न करेंगे। यों तो यह अन्न और फल सब पृथिवीके गर्भमें हैं खेतीके नियमके अनुसार यदि पृथिवी को ठीक करके बीज डाला जावे और समय पर वर्षा हो या कुवें या नहरका पानी दिया जावे तो सम्भव नहीं कि पृथिवी अन्न और फल न देवे। पुराणोंकी समझमें जैसा अग्नि, वायु जानदार हैं और उनके देवता पृथक् २ स्थापित किये गये हैं वैसे ही पृथिवीको भी उन्होंने प्राणदार समझा। कल्पना करो पृथिवी उस समय गोरूप बन गई तो यह संसार किस पर रहा? इसके अतिरिक्त इन्हीं पुस्तकोंमें और बहुत से उदाहरण विद्यमान होंगें जब पृथ्वीको कष्ट हुआ वह गौ रूप धारण करके निवेदन करनेके लिये देवताओंके पास गई। अबकी बार अपनी विद्याके प्रतिकूल ऐसे बलमें आई कि आप ही अपने पेटमें सब पदार्थों को लेगई। फिर एक राजा बेन अधर्मी था अन्याई था उसीको कोई कष्ट देती जहां वह बैठा या खड़ा हुआ था वहीं पृथिवी फट जाती और वह भीतर धसजाता सम्पूर्ण प्रजाको कष्ट क्यों दिया जैसा कि पृथिवीका औषधियोंको गर्भमें लेजाना या इसका गौका रूप धारण करना गप्प है वैसे ही राजा पृथुका सारे संसार को अपने योगबलसे जल पर रखना। यदि जल पर संसार ठहर सकता तो पृथिवी रचनेकी क्या आवश्यकता थी।

एक न मानी और कहा तुझको अवश्य मारूंगा और इससंसारको अपने योगबलसे महाप्रलयतक जलपर स्थित रक्खूंगा । यह सुनकर पृथिवी डर गई और सोचा जो कुछ यह कहते हैं वही करेंगे। अंतको राजासे कहा मेरे ऊपर पहाड़ बहुत हैं वहभी कहीं थोड़े कहीं अधिक । लोग भी ऊपर नीचे बस रहे हैं इसीलिये मुझको दुःख हो रहा है ऊंच नीचको बराबर करो और मुझको दुहिये (जैसे गायका दूध निकाला करते हैं) मैं सब ओषधियां दूंगी ।

यह सुनकर पृथु उठ खड़ा हुआ और जितने बड़े पहाड़ पृथिवी पर थे सबको धनुषबाणकी नोकसे उठाकर उत्तराखंडकी ओर डाल दिया और जो छोटे २ रह गये उनको उसी धनुषकी नोकसे पृथिवी पर कूट दिया जो नीचे उतर गये ।

दत्तात्रेय।

मैत्रेय जी विदुर से कहते हैं कि स्वायम्भुवमनु और शतरूपाकी एक कन्या द्विजप्रजापतिसे व्याही गई थी । इनसे एक अत्रिनामका पुत्र उत्पन्न हुआ । अत्रिके तीन पुत्र हुए, इनकी उत्पत्तिकी कथा यह है कि जब अत्रिको संसार पैदा करने की आज्ञा हुई, तब दोनों स्त्री पुरुषोंने विचारा कि संतान वही अच्छी है जो अच्छे मार्ग पर चले। अधर्मी और भगवान्से विमुख न हो इसलिये हम योग्य और सपूतके लिये तप करें । इस इच्छा के साथ उन्होंने सौ वर्ष तक तपस्या की परन्तु तपस्या में किसी देवता का नाम नहीं लिया ।

अंत को ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों देवता प्रकट हुए स्त्रीने तीनों देवताओं को देख प्रार्थना की कि हम एक देवता की तपस्या करते थे तुम तीनों देवताओं ने दर्शन क्यों दिया जब यह सन्देह दूर हो तब हम वर मांगेंगे । श्री विष्णुजी बोले हे अत्रि ! तुमने देवताका नाम नहीं लिया था इसलिये हम तीनोंको आना पड़ा । ईश्वर निराकार अविनाशी पूर्णब्रह्म है वह प्रकट नहीं होता और अपने परमानन्दमें सदा भरपूर रहता है इसके कर्ता, धर्ता हम ही हैं

दुनियांकी उत्पत्ति पालन संहारना हमारे ही आधीन है इस लिये हमने तुमको दर्शन दिये जो इच्छा हो वर मांगलो।

जिनकी यह बुद्धि कि हमारे संतान सुपात्र हों वह तपस्या करते हुए किसी देवता का नाम न लें कैसे आश्चर्य की बात है ऐसे समझदार होकर क्यों अन्धेरेमें ईंटें चबायें। उधर तीनों देवताओंमें मेल नहीं न उनको यह मालूम कि क्या काम है और किसको बुलाया जाता है बिचारे तीनों दौड़े आज कलके ब्राह्मणोंके समान 'एक बुलाये तेरह आये'। विष्णुजीका यह कहना वह निराकार अजन्मा है कभी प्रकट नहीं होता अर्थात् जन्म नहीं लेता यह ठीक है। वही ब्रह्मा विष्णु महेश (जिसकी संख्या जीवनमें होनी चाहिये) अवतार लेते रहे होंगे परन्तु उनके कार्य्य विभाजित हैं यदि यह त्रिकालज्ञ या कुछ अग्रशोची होते तो इस अवसरपर विचार लेते कि अत्रिकी तपस्या केवल सुपात्र संतानके लिये है एक ब्रह्माका या जिसके आधीन उत्पत्तिका कार्य्य था उसका ही जाना आवश्यक था परन्तु ज्ञात होता है कि पुराणोंमें देवताओंके विभाजित कार्य्य भी कल्पित हैं क्योंकि बहुधा कभी एक २ काममें तीनों पैर अड़ा देते हैं।

अत्रिने वर मांगा कि सुपात्र सन्तान हमारे घर पैदा हो अतः इनके तीन पुत्र हुए। एक दत्तात्रेय, यह विष्णुके अंशसे। दूसरा दुर्वासा महादेवजीकी दयासे। तीसरा चन्द्रमा ब्रह्माकी कृपासे। इस प्रकार तीनों देवतोंका आना व्यर्थ न हुआ और कुछ न कुछ कार्य्य करागये परन्तु आश्चर्य्यका अवसर यह है कि इन तीनोंमें से केवल दत्तात्रेय की गणना अवतारोंमें की गई जैसा कि दूसरे स्कन्धके अन्तमें लिखा है शेष वह बिचारे दुर्वासा और चन्द्रमा योंही रहे क्योंकि यह दोनों भी विष्णुके समान कीर्त्तिवाले देवताओंकी कृपासे पैदा हुए थे परन्तु ब्रह्मा या शिवजीके अवतार नहीं कहलाते।

मार्कण्डेयपुराण अध्याय १७में लिखा है कि अत्रि ऋषिने विष्णु महाराजको प्रसन्नकर दत्तात्रेयको उत्पन्न किया जो साक्षात् विष्णु अवतार होकर अत्रिके दूसरे पुत्र कहलाये।

विष्णुरेवावतीर्णोऽसौ द्वितीयोऽत्रेः सुतोऽभवत् ॥ ७ ॥

एक दिन योगीजी बहुत मुनियोंके लड़कोंके साथ एक तालाबपर स्नान करनेको गये और पानीमें गोता लगाकर अन्तर्द्धान होगये। तब ऋषिकुमार उनके दर्शनोंकी इच्छासे तालाबके किनारे खड़े रहे देवताओंके सौवर्ष पीछे महात्माजी उसी तालाबसे एक स्त्री समेत निकले कि स्त्री देखकर मुझको त्यागकर चले जायंगे तो मैं अकेला होकर यहां रहूंगा जब इसपर भी उन्होंने उनका साथ न छोड़ा तब उस स्त्रीके साथ वहां शराब पीने लगे।

ततः सहतया भार्य्या मद्यपानमथा पिबत् ॥

जब वह शराब पीकर मस्त हुए तब उसी स्त्रीके साथ गान और नृत्य करने लगे तब ऋषिकुमार उनको छोड़कर चलदिये।

सुरापानरतन्तेन सभार्य्यं तंतत्यजुः ।
गीतनाद्यादि वनताभोगसंसर्गदूषितं ॥

दत्तात्रेय स्त्रीके साथ वहां रहने लगे जहां वह शराब पीते परन्तु उनको दोष नहीं लगता था क्योंकि वे योगी थे।

मन्यमाना महात्मानं तपसह वहिष्क्रियं ।
नावापद्दोषं योगीशो वारुणीं सपिवन्नपि ॥

उधर दैत्योंके डरके कारण देवता लोग उनके पास गये और उनसे प्रार्थनाकी तब दत्तात्रेयजीने कहा कि मैं तो दीवानाहूं मुझसे क्या चाहते हो, तब उन सबोंने कहा कि राक्षसोंने सब राज्यकर यज्ञभाग भी छीन लिया है इसलिये हमारी रक्षा और उनके बध करनेका यत्न कीजिये तब दत्तात्रेयजीने कहा कि मैं मद्य पीता और उच्छिष्ट इत्यादि खाता पीता हूं और जितेन्द्रिय भी नहीं हूं तो ऐसे उन्मत्तसे आप लोग शत्रुओंके जीतनेकी इच्छा क्यों करते हो।

मद्यासक्तोऽहमुच्छिष्टो न चैवाहं जितेन्द्रियः ।
कथमिच्छथमत्तोऽपिदेवाश्शत्रुपराभवं ॥

देवताओंने कहा कि महाराज तुम सब दोषोंसे रहित हो तुमको कोई दोष नहीं और जगत्के नाथ हो और सब विद्या और ज्ञानके प्रवेश होनेसे तुम्हारा चित्त शुद्ध है इसको दत्तात्रेयीने सुनके कहा कि यद्यपि मुझको समदर्शीविद्या प्राप्त है पर इस स्त्रीकी सङ्गतिसे उच्छिष्टतामें प्राप्त हूं ।

सत्यमेतत् सुराविद्या ममास्ति समदर्शनः ।
अस्यास्तु योषितः सङ्गादहमुच्छिष्टतां गतः ॥

स्त्रीके हरवक्त संभोगके दोषसे मैं सेवायोग्य नहीं हूं यह सुन फिर-

स्त्रीसम्भोगोहि दोषोयं सातत्येनोपसेवितः ।
एवमुक्तास्ततो देवाः पुनर्वचनमब्रुवन् ॥

उन देवताओंने कहा कि आप निर्दोष हैं तब उन्होंने हंसकर कहा कि यदि आपको यह मेरी मत पसंद है तो तुम असुरोंको युद्ध के लिये मेरे सन्मुख बुलाओ उनका तेज बल नष्ट होजावेगा देवताओंने उनको बुलाया और युद्ध करते हुए महात्माके समीप आये जहां महात्माके बायें ओर सर्वाङ्गसुन्दरी चन्द्रबदनी लक्ष्मी बैठी थी जिस को देखकर कामदेवकी उत्तेजना हो व्याकुल होगये और लड़ाईका ध्यान छोड़ उस स्त्री को डोलीमें बिठाकर अपने घरकी ओर ले चले तब महात्मा दत्तात्रेयजीने कहा कि अब तुम अस्त्र शस्त्रोंसे मार गिराओ क्योंकि मैंने अपनी दृष्टिसे उनके तेजको हीन करदिया है और स्त्रीहरणके पापसे उन लोगोंका सब पुण्य जल गया इसलिये वह सब पराक्रम हीनहोगये ॥५४॥

परदारावमर्षाच्च दग्धपुण्याहतौजसः ।

देवताओंने अस्त्र शस्त्र, लेकर युद्धमें उनका नाश करदिया और सुदर्शनजी वहांसे अन्तर्द्धान होकर दत्तात्रेयजीके पास आ विराजीं।

व्यास महाराज।

व्यासजी महाराजके विषयमें पौराणिक बड़ी २ प्रशंसा करते हैं और ईश्वरका अवतार मानते हैं वहां वे उनको अठारह पुराणोंका कर्त्ता और एक वेदके चार करने वाला भी मानते हैं तिसपर उन्हीं पुराणोंमें लिख मारा है कि जब उन्होंने सत्तरह पुराण बना लिये तिसपर भी उनकी आत्माको शान्ति नहीं हुई। एकदिन सोचमें बैठे हुए थे कि नारद मुनि आये और उनकी उपरोक्त दशाको देखकर कहा कि तुम यदि अपनी आत्माकी शान्ति चाहते हो तो श्रीकृष्ण महाराजके गुणोंका कीर्तन करो तब उन्होंने श्रीमद्भागवत पुराणको बनाया जिससे उनकी शान्ति हुई–देखिये पण्डितजी यह तो आपके परमेश्वरके अवतारोंकी दशा है–प्रथम तो स्वयं परमेश्वरके अवतार तिसपर वेदका ज्ञान लेते हुए भी सत्रहपुराणोंको बनाया जिसपर भी उनकी आत्माको शांति नहीं हुई यह कैसे शोककी बात है क्या ईश्वरअवतारियोंकी आत्माको भी ज्ञानकी आवश्यकता होती है–यदि आवश्यकता ही हो तो वेद जो ईश्वरीय ज्ञान है फिर उससे उनकी शान्ति क्यों नहीं हुई–एक वेदके चार क्यों किये। फिर सत्रह पुराण भी जो बनाये जिनसे संसारके पाप तो कटे परन्तु उनके रचयिता व्यासजी को अशान्ति ही रही यह क्या तमाशेकी बात नहीं है।

देवीभागवत–स्कंद १ अध्याय १० व १४ में लिखा है कि व्यासजीने सौ वर्ष तक मेरुपर्वत पर एकाक्षरी मंत्र जप भगवती और शिवका ध्यान किया तब शिवजी उनके पास गये और कहा कि तुम्हारें सब गुण सम्पन्न पुत्र उत्पन्न होगा। एक दिन अरणी सहित गुप्त अग्निको अग्निकी इच्छा करके मथने लगे उसी समय पुत्र होनेकी इच्छा भी चित्तमें स्मरण हो आई कि जिस प्रकार मंथन और अरणी

के संयोगसे अग्नि उत्पन्न होती है उसी भांति हमारे पुत्र क्यों नहीं उत्पन्न होसक्ता इतनेमें घृताची नाम अप्सरा दिव्य रूप धारण किये हुए आकाशमें दीख पड़ी। मुनि कामातुर हो चिन्ता करने लगे कि मुझ को सौ वर्ष तपस्या करते हो गये परन्तु तो भी काम सता रहा है द्वितीय इससे गृहस्थाश्रमके आनन्द भी प्राप्त न होंगे यह तो काम-केलिये पश्चात् आकाशको चली जायगी इसलिये हमारे योग्य नहीं। वह अप्सरा शापके भयसे शुकीका रूप धारण कर निकल गई तब व्यासजी बड़े विस्मित हुये और मन खींचने पर भी न खिंचा और न-नका ... ... अरणीमें पात होगया वह अरणीको अधिक मथने लगे तब उसमें व्यासजीके आकारका पुत्र उत्पन्न हुआ और शु-कीको देख कामातुर हुएथे इसलिये उसका शुक नाम रक्खा।

पण्डितजी—यह व्यास अवतारकी दशा। प्रथम परमेश्वरके अव-तार फिर भी पुत्रकी इच्छा, जिसके लिये शिव और देवीका ध्यान, फिर कामातुर होना, फिर अरणी मथनसे ... ... पात होना जिससे शुककी अद्भुत उत्पत्ति होना।

नारद।

इनके विषयमें सम्पूर्ण पुराण एक स्वर होकर कह रहे हैं कि यह देवताओं और राक्षसोंके समाचार इधर उधर पहुंचाया करते थे तथा बहुधा उपदेश भी किया करते थे इसके उपरांत राजा अम्बरीषकी कन्याका विवाह अपने साथ होनेके अर्थ विष्णुके पास गये थे और कहा था कि उस कन्याको पर्वत ऋषि भी चाहते हैं इसलिये आपउ-नका मुंह बन्दरका सा कर देना परन्तु जब पर्वत ऋषि विष्णुजीके पास गये और सब वृत्तांत कहा तो उनके कहनेसे नारदका मुंह लंगूर का सा बना दिया जब यह दोनों स्वयंवरमें गये तो लड़की इनका मुंह बन्दरकासा देखकर डरगई और उसने इन दोनोंको छोड़ अन्यसे विवाह करलिया परन्तु शोक तो यह है कि अवतारी होनेपर भी उनको यह ख़बर नहीं हुई कि मेरा मुंह कैसा बनादिया है जब नदीके

पानीमें परछाई पड़ी तब ज्ञात हुआ। इसके उपरान्त पद्मपुराणसे प्रकट होता है कि विष्णु महाराजने उनको स्त्री बनादिया और वह बहुत काल तक स्त्री बनेरहे सन्तान भी हुई परन्तु उन्होंने विष्णु महाराजकी मायाको स्वयं अवतारी होनेपर भी नहीं जाना।

विष्णुपुराण अं० १ अध्याय १५से विदित होता है कि जब दक्षने प्रजा बढ़ानेके लिये ५००० पुत्रोंको उत्पन्न किया जिनको नारद महाराजने बहका दिया वह सब पृथ्वीके नापने आदिके लिये चले गये तब दक्षने १००० पुत्रोंको और उत्पन्न किया उनको भी बहका दिया इस कारण दक्षने शाप दिया कि जाओ तुम्हारा यह शरीर छूट जावे फिर गर्भवास हो।

श्रीमद्भागवत स्कंद ६ अध्याय ५ श्लोक ४३में लिखा है कि दक्ष महाराजने कहा कि हे मूढ़ फिरते २ लोकोंमें तेरा एक जगह पैर न ठहरेगा अर्थात् भ्रमण ही करता रहेगा।

तंतुकृतनयन्नस्त्वमभद्रमचरः पुनः। तस्माल्लोकेषु ते मूढ न भवेद्भ्रमतः पदम् ॥

वामनावतार।

जब दैत्योंने देवताओंको नाना प्रकारके दुःख दिये तब श्रीभगवान् अदितिके गर्भसे उत्पन्न हो देवताओंसे कहने लगे हम क्या कार्य्य करें तब सबने कहाकि आप राजा बलिसे तीनों लोक मांगकर हमको दे दीजिये-देवताओंके कहनेपर वामनजी आठ ऋषियों समेत वहां गये राजा बलिने उनको फूलोंके आसनपर बिठला, विधिसे पूजा और प्रार्थनाकर कहाकि आप अपने पधारनेका कारण कहिये तब वामनजीने कहाकि तीन पांव अग्निकुंडके लिये पृथ्वी दीजिये। और कुछ नहीं चाहता। पद्म षष्ठ उत्तरखण्ड अ० २४० श्लोक १४।

अग्निकुण्डस्य पृथिवीं देहि दैत्य ते मम।

तब राजाने प्रसन्न होकर कहा आप लीजिये इतने कहते ही छोटे रूपको छोड़ त्रिविक्रमदेहको धारणकर सब कुछ उसका एकही पगमें नाप सब इन्द्रको दे दिया और बलिको रसातल पहुंचादिया, कहिये श्रीमान् यही परमेश्वरी लीला है? कि देवताओंकी सहायता विना झूंठ बोले वामन महाराज न कर सके जो साक्षात् नारायणके अवतार थे। क्या इसीका नाम सर्वशक्तिमानता है इसके उपरांत ईश्वर संसारका मित्र तिसपर चालाकीसे देवताओंसे मित्रता और दैत्योंसे वैर क्या यही परमात्मापन है।

मोहिनी अवतार।

समुद्रमथन करने पर जब दैत्योंने धन्वन्तरिजी के हाथसे अमृत का पूर्ण कलश छीन लिया तो श्री भगवान्‌ने मोहिनी (स्त्रीकी) मूर्त्ति बन दैत्योंको मोहित कर उनसे अमृत ले देवताओंको अमृतपान करा दिया। इसी रूपके देखनेकी जब इच्छा महादेवजीने प्रकटकी उस समय विष्णु महाराजने गम्भीरभावसे हंसकर कहा कि यदि आपके देखनेकी इच्छा है तो दिखलाऊंगा वह रूप कामका बढ़ानेवाला है इसीसे कामीजन बड़ा मान करते हैं चुनांचे जब मोहिनीरूपको दिखलाया महादेवजी मोहित होगये।

परशुरामजी।

इनके पिताका नाम जमदग्नि और माताका नाम रेणुका था। जमदग्निजीके पास एक कामधेनु गाय थी जिसको कीर्त्तवीर्य्यने चाहा, महात्माने देनेसे इन्कार किया तब बलसे राजाने लेना चाहा उस समय कामधेनुने सींगों और खुरोंसे उसकी सेनाका नाश कर दिया। तब राजाने क्रोधमें आकर महात्माजीको मारडाला इधर परशुरामजीने तप कर भगवान्‌से वरदान पाकर महाबली कीर्त्तवीर्य्यकी सेनाको मार उस राजाको भी मारडाला और इधर उधरके क्षत्रियोंका

नोट—पण्डितजी! क्या यही परमेश्वरके कर्त्तव्य हैं, क्या जीतका इससे अच्छा और कोई नुसखा सर्वशक्तिमान्‌के पास न था।

को नाश कर दिया फिर अश्वमेध यज्ञ करके सातद्वीपवाली पृथ्वीको ब्राह्मणोंको दान करदिया इन्होंने श्रीरामचन्द्रको धनुषके तोड़नेपर बहुत कुछ कहा था फिर उनको भगवान्‌का अवतार जान आप तपस्याको चले गये ।

बलदेवजी ।

इनके विषयमें श्रीमद्भागवत स्कंद १० अध्याय ६१में श्लोक २७से ३७ तक लिखा है, कि कलिंगदेशके राजाने रुक्मीसे कह बलदेवको पांसेके खेलमें लगाया और यह जुआ इतना बढ़ा कि अंतको बलदेवने क्रोधमें आकर दश करोड़ मोहरें दावपर लगाई और बलदेवजी महाराजकी जीत हुई, परन्तु छलसे रुक्मी कहने लगा कि हम जीते। दोनोंमें विवाद होने लगा उसका फ़ैसला आकाशवाणीने किया कि धर्मसे बलदेवजीकी जीत हुई तौभी उन्होंने न माना और बलदेवजीकी हंसीकी। बलदेवजीने फिर उन सबको मारा और द्वारिकाको चले गये।

विष्णुपुराण अंश ५ अ० २५में लिखा है कि बलदेवजीने वनमें आकर गोपियोंके साथ मदिरापान किया ।

विचरन् बलदेवोऽपि मदिरागंधमुद्गतम् ।
आघ्राय मदिरातर्षमवापाथपुरातनम् ॥ ५ ॥

भागवत स्कन्द १० अ० ६५में लिखा है कि बलदेवजी मथुरा आये और दोमास ठहरे और वनमें मीठी मद्यकी गंध लेते २ स्त्रियों सहित मद्य पिया ।

नोट—क्रोधमें आकर कीर्तवीर्य्यकी सेना और राजाके अतिरिक्त आपने विना अपराधके हज़ारों क्षत्रियोंको सिवाय नानाके कुलके नाश किया। क्या ठीक था शायद इसी पर इनको उपास्य नहीं माना जैसा कि पद्मपुराण अध्याय २४१ में लिखा है कि परशुरामजी शक्तिके प्रवेशके कारण उपास्य नहीं श्रेठ ब्राह्मण महात्मा भगवद्भक्तोंको रामकृष्णजीके अवतारों की उपासना करने योग्य है क्योंकि इनमें अच्छे गुण होनेके कारण ऋषियोंने उपासनाकी है। और यही मोक्षकेदेनेवाला है।

"नोपास्यं हि भवेत्तस्य शक्त्यावेशान्महात्मनः"

परन्तु गरुड़ और शिवपुराणादिमें इनके नामस्मरणके लिये आज्ञा है। श्रीमान क्या कहें कहीं कुछ कहीं कुछ, तिस पर भी पुराण व्यासजीकृत मानेजाते हैं।

तं गंधं मधुधाराया वायुनोपहृतं बलः ।
आघ्रायोपगतस्तत्र ललनाभिः समं पयौ ॥ २० ॥

इसके उपरांत व्रजकी स्त्रियोंके साथ विलास करनेसे जिनका चित्त चलायमान है व्रजमें रमण करते जिस प्रकार एक रात्रि व्यतीत हुई उसी भांति सब ।

एवं सर्वानिशायाता एकैव चरतो व्रजे ।
रामस्याक्षिप्तचितस्य माधुर्यैर्व्रजयोषिताम् ॥

बलदेवजीका शराब पीना और सूतको मार बारहवर्ष तक व्रत और प्रायश्चित्त करना ।

मार्कण्डेय पुराण जिल्द १ अ० ६ ।

जब कौरव और पांडवोंका युद्ध हुआ तब बलदेवजीने किसी की ओर न हो कर अपने स्वामियों सहित द्वारिकापुरीको पहुंच कर वहां मधुपान किया ।

गत्वा द्वारवतीं रामो हृष्टपुष्ट जनाकुलाम् ।
स्वगन्तव्येषु तीर्थेषु पयौ पानं हलायुधः ॥

यानी बलदेवजी मधुपान किये हुये वहांसे रैवत नाम वनमें गये उसमें रेवती नाम एक स्त्री जो मदयुक्त और अप्सराके समान रहती थी उसका हाथ पकड़ लिया ।

पीतपानो जगामाथ रेवतोद्यान भृद्धिमन् ।
हस्तो गृहीत्वां समदा रेवतीमप्सरोपमां ॥

उसको साथ लेकर एक वनमें पहुंचे जहां नानाप्रकारके पक्षी बोल रहे थे वृक्ष फलोंसे लदे हुए थे उपमा देखते हुए ऐसे स्थान पर

पहुंचे जहां अनेक ऋषि आसनों पर बैठे जिनके बीचमें सूतजी बैठे हुये कल्याणमयी कथा सुना रहे थे। ब्राह्मणोंने बलदेवजीको देख जिनकी आंखे शराबके नशेमें सुर्ख हो रही हैं जब मुनियोंने उनको नशेमें देखा तो सिवाय सूतजीके और सबोंने शीघ्र उठकर बड़े आदर, मानसे बलदेवजीका पूजन किया।

दृष्ट्वा रामं द्विजाः सर्वे मधुपाना हणे क्षणं।

बलदेवजी सूतजीके न उठने और आदर न करनेसे क्रोधमें आकर मारे गुस्साके आंखें फड़कने लगीं उसी दशामें जैसे राक्षसको मार देते हैं उसी भांति सूतजीको मारडाला।

ततःक्रोधसमाविष्टो हली सूतं महाबलः।
निहृद्यात् विवृत्ताक्षः क्षोभिता शेषदानवः॥

तब ब्रह्मघात देखकर मुनिलोग अपनी २ मृगछाला लेकर वनसे निकलगये और बलदेवजी जिनकी आकृति दीवानों कीसी होरही थी सोचने और पछताने लगे यह बड़े पापकी बात है कि ब्राह्मणके स्थानमें विना अपराधके हमने सूतजीको मारा कि जिसके कारण ब्राह्मणोंने इस वनको छोड़ दिया। ३२॥

ब्राह्मस्थानं गतो ह्यष यत्सूतो विनिपातितः।
तथा हि मे द्विजाः सर्वे मामवेक्ष्य विनिर्गताः॥

जिस प्रकार सड़े मुर्देमें दुर्गन्धि आती है उसी भांति ब्रह्मघातके पापसे मेरा शरीर दुर्गन्ध करता है यह कर्म्म मुझसे बहुत बुरा हुआ अब कहां जाऊं, क्या करूं।

शरीरस्य च मे गंधो हृस्ये वा सुखावहः।
आत्मानं चावगच्छामि ब्रह्मघ्नमिव कुत्सितं॥३३॥

ऐसी ईर्षा और मद्य घमण्ड और असावधानीको धिक्कार है कि जिसमें पड़कर मैंने ऐसा भारी पाप किया। ३४ ॥

धिगमर्षं तथासद्यमतिमानमभीरुतं ।
यैराविष्ट न सुमहन्मया पापमिदं कृतं ॥

अब मैं इस पापके दूर करनेके लिये बारह वर्ष तक व्रत और इस बुरे कर्मका उत्तम प्रायश्चित्त करूंगा।

ततक्षयार्थं चरिष्यामि व्रतं द्वादशवार्षिकम्।
स्वकर्मख्यापनं कुर्वन् प्रायश्चितमनुत्तमम्। ३५ ॥

इतना कहकर वह तीर्थयात्राको गये। और पापको दूर किया। ऐसा ही श्रीमद्भागवत स्कन्द ७ वा ९ में भी लिखा है।

"हा" ऋषिसन्तान! क्या वास्तविक तू इस घोरनिद्रा में पड़ी रहेगी इन निंदितशत्रुनिर्मित पुराणोंको व्यासप्रणीत कहकर अपने पूर्वजोंकी कबतक निन्दा सुनती रहेगी। हे परमात्मन्! अब आप ही सुमति प्रदान कीजिये। हे जगदीश्वर! आप बुद्धिके भंडार हैं उस भंडारमेंसे बुद्धि देकर हमारे बेड़ेको पार लगाइये।

श्रीमान् पंडितजी—सेठजी मेरे मनको इस विषयको इतना ही सुन शांति होगई इसलिये अब इसको समाप्त कीजिये।

सेठजी—बहुत अच्छा—ओ३म् शम्।

नोट—जिनको अंशावतार कहते हैं वही बलदेवजी हमारे सनातनी भाई ईश्वरके भी बड़े भाई जिनको कि जगन्नाथ कहते हैं उनके इन चरित्रों (शराब पीकर अप्सराओंके साथ रमण, निरपराधी सूतका वध) पर ध्यान दें कारण कि यदि हम कुछ इस पर टिप्पणी चढ़ावेंगे तब तो आप कहेंगे कि हमारे इष्टदेवकी निन्दा करते हैं परन्तु अब आप ही सत्यका अवलम्बन करके विचारिये तो सही कि यह कथा उनकी निन्दा करती है या प्रतिष्ठा? क्योंकि उनके चरित्र ही यहां स्वयं साक्षी हैं।

पंडितजी—महाराजने कहाकि आपको उपरोक्त विषयोंके सुनानेमें बहुत परिश्रम करना पड़ा है इसलिये अब पन्द्रह दिनके लिये विश्राम दीजिये।

द्वितीय—मुझको एक कार्य्यके लिये बाहर जाना है।

तृतीय—लाला जानकीप्रसादजी इलाहाबाद जायेंगे।

चतुर्थ—लाला श्यामलाल व लाला केसरीमल व भोलानाथ व पंडित घासीराम व लाला बांकेलालजीको सम्बंधियोंमें जानेकी आवश्यकता है॥

पञ्चम—जगन्नाथ व बाबू हजारीलाल व केदारनाथ लाला बदरीप्रसादजी व मुंशी लक्ष्मीनारायण व मुंशी श्यामसुन्दरलाल व मुंशी प्यारेलाल व नारज़िसाहिब व छदम्मीलाल गायक हरिद्वार आदि स्थानोंमें जाने वाले हैं। इसलिये भी इस कार्य्यको बन्द करना होगा।

लाला मोहनलाल—ने कहा कि यथार्थमें हम सबको आवश्यक काम हैं।

पंडितजी सेठजी हम सब आपको इस परिश्रमका धन्यवाद देते हैं और आशा है कि उपरोक्त विषयोंपर विचार करनेसे प्रत्येकको अधिक लाभ होगा।

सेठजी—मैं इस योग्य नहीं यह सब आपकी बड़ाई है हां मैं अपने परिश्रम को उसी समय सफल समझूंगा जब भारतके प्रत्येक स्त्री और पुरुष मेरे अभिप्रायको जान इसपर सच्चे मनसे विचार कर लाभ उठ येंगे यदि सब सज्जन महाशयोंकी यह सम्मति है और आवश्यक कार्य्य हैं तो मुझको स्वीकार है आज ता० २३ जून है इस हेतु अब ता० ८ जौलाईसे कथाका आरम्भ होगा।

सब सज्जन महाशय चल दिये ।

आर्य्यसेठ—ने नमस्ते की ।

पण्डितजी—ने आशीर्वाद दिया और अन्य सत्पुरुषोंने यथायोग्यकी सेठजी भोजनोंको गये ।

नैपथ्यमें—पुराणोंकी लीला अपार है देखिये आगे क्या २ निकलता है यथार्थ में तो पुराणोंमें कहीं कुछ कहीं कुछ । इतनेमें तीन मार्ग आगये और महाशय गण अपने २ मार्गको तीन टोलियोंमें विभाजित हो चल दिये सबने आपसमें यथायोग्य कहा।

एक टोलीके मनुष्योंकी बात चीत ।

पण्डित प्यारेलाल—पण्डितजी अब तक आपकी समझमें क्या आया ।

पण्डितजी--अभी कुछ न पूछिये मैंने एक दिन अपने मित्रोंके साथ विचार किया था उस समय लाला भोलानाथ और मथुराप्रसाद और ला० प्रागनरायनजी भी उपस्थित थे परन्तु उत्तर कोई यथार्थ न देता था अप्रसन्नताकी झलक झलकती थी अब हम जाते हैं। यात्रा में हमको यदि किसी योग्य पुरुषसे भेट हुई तो अवश्य ही विचार करेंगे फिर आपसे कहेंगे ।

मुं० बिहारीलालजी--ने कहा कि सेठजी न पुराणोंकी वेद-विरुद्ध बातोंका पुराणोंसे ही निश्चय कर दिया इसलिये हमारी समझमें तो यह सब पुराण महर्षि व्यासकृत नहीं ज्ञान पड़ते ।

इतनेमें श्रीमान्‌का स्थान आगया--और नमस्कार कर चल दिये ।

इति अष्टमपरिच्छेदः

पुराणतत्व-प्रकाशका प्रथम भाग समाप्त ।





* ओ३म् *

लीजिये देखिये

हिन्दी-भाषाकी सर्वोपयोगी पुस्तकें जिनसे दोनों लोकोंके आनन्द प्राप्त होवें।

विज्ञापन।

प्रिय-पाठक-गण !

मैं

निम्नलिखित पुस्तकोंकी क्या प्रशंसा करूं जबकि अफरीका इत्यादि देशीय सज्जन पुरुष, मशहूर २ अख़बारोंके लायक़ एडीटर महाशय आदि स्वयं इनकी प्रशंसा कररहे हैं। यही नहीं किन्तु यह पुस्तकें अपनी उत्तमताके कारण छै ६ और सात २ वार छपचुकी हैं। यह भी याद रहे कि जिन २ विषयोंसे सुभूषित यह पुस्तकें हैं इनसे प्रथम कोई पुस्तक इन विषयोंसे पूरित दृष्टि नहीं आती थी किन्तु सैकड़ों पुस्तकें इन पुस्तकोंमेंसे काट छांटकर लोगोंने बनालीं तिसपर भी इनका मान्य प्रतिदिन बढ़ता जाता है और मांगपर मांग चली आती हैं। इसलिये एक वारतो इन पुस्तकोंको मंगाकर अवश्य देखिये।

स्त्रीशिक्षाका प्राचीन ग्रन्थ

नारायणीशिक्षा अर्थात् गृहस्थाश्रम।

गृहस्थाश्रम।

सन् १८८९ में प्रकाशित हो रजिष्टर्ड हो चुका है।

गृहस्थाश्रम।

में ५०० से ज्यादह उपयोगी विषय हैं।

गृहस्थाश्रम।

स्वास्थ्य रक्षाके साधनोंको बतलाता है।

गृहस्थाश्रम।

न्यूनावस्थाके विवाहकी हानियोंका भयंकर चित्र खींचकर दिखलाता है।

गृहस्थाश्रम।

धनकी महिमा और उसकी प्राप्तिके ढंग बतलाता है।

गृहस्थाश्रम।

मन्त्र, यन्त्र, तन्त्र और रसायनके मुख्य प्रयोजनको बतलाता है।

गृहस्थाश्रम ।

ब्रह्मचर्य और विद्याकी म-हिमाको जतलाता है ।

गृहस्थाश्रम ।

में अष्टाङ्गयोगादि और सत्सगका बड़े ज़ोरदार लफ़्ज़ोंमें वर्णन किया गया है ।

गृहस्थाश्रम ।

दानदेनेकी यथावत् रीतिको बताता है ।

गृहस्थाश्रम ।

शौच और आचारको सिख-लाता है ।

गृहस्थाश्रम ।

वेद और पुराणोंके अन्तर और पुराणमाहात्म्यको बतलाता है

गृहस्थाश्रम ।

हरएक प्रकारके शाक-अन्न फल-दूध-दही घी, मसाला, तै-लादिके गुण और अवगुणोंको बतलाता है ।

इसीपुस्तकमें ।

शारीरिक, सामाजिक और आ-त्मिक उन्नतिके उपाय बड़े परि-श्रमसे चरक, सुश्रुत, वेद, शास्त्र, स्मृति, पुराणों तथा योग्य पंडि-तोंकी सहायता तथा मशहूर २ अख़बारोंके लेखोंसे लिखे गये हैं ।

गृहस्थसम्बन्धि कोई ऐसा विषय नहीं जिसका इसमें आन्दोलन न किया गया हो ।

इसीलिये ।

आप घरबैठे प्रत्येक प्रकारके रसोईके पदार्थ, सबकिस्मकी मि-ठाई, पक्वान्न, हरएकतरहके अचार, चटनी, मुरब्बे आदिका स्वाद चाखिये ।

यही नहीं ।

किन्तु स्त्रियोंके असाध्यरोग तथा बालरोगोंकी चिकित्सा, अ-ञ्जन, मंजन, सुहागसोंठका नुसख़ा केश उत्पन्न करनेका उपाय, कृमि-नाशक, लोलम्बराज चूर्ण बवा-सीरकी गोलियां आदि अनेक औषधियोंका इसमें वर्णन है ।

और लीजिये ।

५५ वीर और विदुषी स्त्रि-योंके इसमें जीवनचरित्र भी उप-स्थित हैं ।

इसके उपरांत ।

इसमें पतिधर्म, पतिपत्नी, धर्म, संस्कारोंकी व्याख्या, त्यो-हारों और आर्य्य, ज्योतिष, व्रत, तपस्या, आवागमन, धर्म, नित्य-कर्मादिका वर्णन है ।

सचतो यह है।

कि गृहस्थोंका यह परममित्र और ईश्वर है।

आपको।

यह गृहस्थरूपी ट्रेनमें सवार कराकर ब्रह्मचर्य वानप्रस्थ, संन्यासादि स्टेशनोंपर विश्राम कराता हुआ केवल सवारुपयेके टिकटसे स्वर्गधाम पहुंचाने और मोक्ष प्राप्त करानेके लिये यह हर समय तय्यार है।

फिर हम दावेसे कहते हैं।

कि जैसा अठपेजी ६१२ पृष्ठ और उत्तम काग़ज तथा बंबई अक्षरोंमें छपा हुआ उपरोक्त गुणोंसे परिपूर्ण और बहुत सस्ते मूल्यका यह पुस्तक है वैसा आर्यावर्तमें कोई ग्रन्थ नहीं हैं।

बस अब आप।

को यदि स्वर्गकी शोभा देखें, मोक्षकी प्राप्तिकी इच्छा है तो मय महसूल डाक १॥-) के वी० पी० से इसको मंगाकर आप और अपने मित्र, पुत्र, पुत्रियों तथा स्त्रियों को इसका पाठ करा उपरोक्त गुणोंको प्राप्त कीजिये।

इसके विषयमें दोचार प्रशंसापत्रोंका अवलोकन करलीजिये।

श्रीमान् पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी सम्पादक सरस्वती प्रयाग।

सरस्वती भाग १० संख्या ७ में प्रकाशित करते हैं कि " नारायणीशिक्षा–सम्पादक बाबू चिम्मनलाल वैश्य। पृष्ठ संख्या ६१२। सांचा बड़ा, काग़ज अच्छा, छपाई बंबईके टाइपकी मूल्य सिर्फ १।) " इस इतनी सस्ती परन्तु उपयोगी पुस्तकका दूसरा नाम गृहस्थाश्रम शिक्षा है पुस्तक कोई ३० भागोंमें विभक्त है गृहस्थाश्रमसे सम्बन्ध रखनेवाली शिशुपालन, शरीररक्षा, ब्रह्मचर्य, विवाह, पति, पति पत्नी धर्म, नित्यकर्मादि कितनीही बातोंका इसमें वर्णन और विचार है। श्रुति, स्मृति, उपनिषद्, पुराणादिसे जगह २ पर विषयोपयोगी प्रमाण उद्धृत कियेगये हैं पुस्तकमें सैकड़ों बातें ऐसी हैं जिनका जानना गृहस्थके लिये बहुत ज़रूरी है। इस पुस्तकको लोगोंने इतना पसन्द किया है कि आजतक इसके ६ संस्करण हो चुके हैं।

श्रीमान् पं० विष्णुलालजी साहब शर्मा सबजज

MY DEAR MUNSHI CHIMMAN LALL JI,

The Narayani Shiksha is a library in itself, being a work of Cyclopedia information. No subject theoretical or Practical, which is useful to a house holder has been left untouched. The style is simple, yet impressive. I am not aware of a better book for females in Hindi, and am of opinion that no Hindu family should be without a copy of your book.

श्रीमान् बाबू रामनारायण साहब तिवारी

Dear Sir,

I have read the Narayani Shiksha or Grihasta Ashram compiled by you, I do not know of any other book in Hindi which gives in such a short compass every thing that a Grihastha or a house holder, should know—Besides, I find you book a valuable additeruinn to the literature for Hindu women. It is a pleasure to see that the book is so cheap a lesson that other authors on popular subjects might well learn from you: I think a book on vedic principles should be as cheap as possible and no one will I am sure grumble to spend one rupee and four annas more forten large and useful marters contained in your book.

श्रीमान् ब्रह्मचारी स्वामी नित्यानन्द सरस्वती।

मैंने आपकी बनाई हुई पुस्तकोंको अच्छे प्रकारसे देखा। यह सब किताबें पबलिककी शारीरिक, सामाजिक और आत्मिक उन्नति करने वाली हैं विशेष खूबी यह है कि प्रत्येक विषयके साबित करनेके लिये वेद, स्मृति, पुराण इत्यादिके प्रमाण अच्छे प्रकारसे दिये हैं। जिसके कारण इन पुस्तकोंके पढ़नेवाले पूर्ण लाभ उठाते हैं। दौरेमें मुझसे आपकी पुस्तकोंकी अनेकान पुरुषोंने प्रशंसाकी, वास्तवमें यह प्रशंसा ठीक है क्योंकि आपने इनके लिखनेमें बड़ा परिश्रम किया है इस लिये मेरा चित्त आपसे बहुत प्रसन्न है। मैं परमात्मासे प्रार्थना करता हूं कि आप अपने जीवन भर इस उपयोगी कार्य्यको सदा करते रहें जिससे देशमें वैदिक ख्यालातकी उन्नति होकर सब प्रकार आनन्द हो।

सरस्वतीन्द्र जीवन ।

अर्थात्

श्री १०८ महर्षि श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वतीजीका जीवन चरित्र ।

महाशय गण !

जीवन तो आपने बहुत ही देखे होंगे पर यह जीवन अपने ढंगका निराला है। क्योंकि इसमें सड़ा, गला क़ागज़ नहीं लगाया गया। उर्दू शब्दोंमें नक़ल नहीं की गई। बारीक टाइपमें नहीं छपाया गया किन्तु सफ़ेद मोटे क़ागज़ पर बम्बई अक्षरोंमें बढ़िया स्याहीसे छपवाया गया है तिसपर लुत्फ़ यह है कि अठपेजी ४०० पृष्ठ होने पर भी मूल्य १=) है। इस जीवनमें पं० लेखरामजी संगृहीत उर्दू जीवनके अतिरिक्त कई एक मान्यवरोंके लिखित जीवन चरित्रोंसे सहायता ली गई है और।

(१) काशी शास्त्रार्थ पर कई एक समाचार पत्रोंकी सम्मतियां (२) कलकत्ता, हुगली, डुमरांव, सहारनपुर और शाहजहांपुरमें योग्य पुरुषोंके प्रश्नोंके यथावत् उत्तर (३) उदयपुरमें स्वामीजीकी दिनचर्य्या (४) महाराजा उदयपुरको दिनचर्य्याका उपदेश (५) जैनियोंके सुप्रसिद्ध पं० आत्मारामजी साधु सिद्धकरणजीके प्रश्नों का भले प्रकार समाधान (६) पादरी ग्रे साहब अजमेर और बम्बईमें एक पादरी साहबसे धर्मचर्चा, मसौदामें बाबू विहारीलाल जी ईसाईसे प्रश्नोत्तर (७) आर्य्य संमार्ग संदर्शनी सभाका सविस्तार वर्णन और उसके प्रश्नोंके उत्तर (८) मौलवी मुहम्मद अहसन साहब जालन्धरी मौलवी मोहम्मद क़ासिम साहब, मौलवी मोहम्मद अब्दुलरहमान साहब जज उदयपुरके शास्त्रार्थ (९) स्वामीजीकी शिक्षाका क्या २ फल हुआ। यह बातें सब जीवनोंसे इसमें निराली लिखी गई हैं जब ही तो हम कहते हैं कि यह

जीवन सबसे निराला है।

भाषा इसकी सरल प्रिय जिसको पुत्र, पुत्रियां, स्त्रियां अच्छे प्रकार से समझ सकती हैं। इसलिये एक कापी अवश्य मँगाकर महर्षिके जीवनसे शिक्षा ग्रहणकर स्त्रियों और सन्तानोंमें महर्षिके गुणोंका प्रवेश कीजिये।

इसके विषयमें भी हमारे पास बहुत प्रशंसापत्र आये हैं पर हम स्थानाभावसे सबोंको उद्धृत न कर केवल दो चारको आपके अवलोकनार्थ लिखते हैं।

श्री० पं० विष्णुलालजी एम० ए० सबजज।

मैंने आपके छपाये सरस्वतीन्द्रजीवनको पढ़ा। पं० लेखरामजी स्वर्गवासीके संगृहीत चरित्रोंको छोड़ शेष अब तक जितने छपे हैं उनसे इसमें अधिक हाल पाये। वास्तवमें आपने उर्दूके उन सारगर्भित लेखोंको (जिनके आनन्दसे बिना उर्दू जाननेवाले वञ्चित रहते थे) भाषा करके बड़ा उपकार किया है। मैं समझता हूं कि आपने इस इतिहासके लिखनेमें श्रीस्वामीजीके कार्य्यकालको यथाक्रम रक्खा है। पुस्तककी छपाई अतिसुन्दर है और चित्र भी सर्वाङ्ग उत्तम हैं। मूल्य १=) अधिक नहीं है मैं आपको इस कार्य्यकी पूर्त्तिका धन्यवाद देता हूं।

श्रीमान् ठा० गिरवरसिंह साहिब पूर्वोक्त अवैतनिक उपदेशक श्रीमती आ० प्र० सभा संयुक्तप्रदेश आगरा व अवध।

मैंने मुं० चिम्मनलालजी वैश्य लिखित सरस्वतीन्द्रजीवनको देखा और ध्यानसे पढ़ा और बहुधा स्थानोंपर धर्मेन्द्रजीवनसे मिलान किया तो जान पड़ा कि इसमें निम्नलिखित बातें अधिक हैं जो बड़ी उपयोगी और लाभदायक हैं।

(१) काशी शास्त्रार्थपर कई एक समाचारपत्रोंकी सम्मतियां।

(२) कलकत्ता, हुगली, डुमरांव, सहारनपुर और शाहजहांपुरमें योग्य पुरुषोंके प्रश्नोंके यथावत् उत्तर।

(३) उदयपुरमें स्वामी दयानन्दजीकी दिनचर्य्या।

(४) महाराज उदयपुरको दिनचर्य्याका उपदेश।

(५) जैनियोंके सुप्रसिद्ध पं० आत्मारामजी साधु ठिठुकरयाजीके प्रश्नोंका भले प्रकार समाधान।

(६) पादरी ग्रे साहिब अजमेर और बम्बईमें एक पादरी साहिबसे धर्मचर्चा। मसौदामें बा० विहारीलालजी ईसाईसे प्रश्नोत्तर।

(७) आर्य्यसन्मार्ग संदर्शनीसभा का सविस्तर वर्णन और उसके प्रश्नोंके उत्तर।

(८) मौलवी मुहम्मदअहसन साहिब जालन्धरी, मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहिब, मौलवी मुहम्मद अब्दुलरहमान साहिबजज उदयपुरके शास्त्रार्थ।

(९) स्वामीजीकी शिक्षाका क्या २ फल हुआ।

इसकी भाषा सरल, प्रिय, चित्तको लुभानेवाली है जिसको स्त्रियां भी समझसकती हैं। क़ाग़ज़ उत्तम स्याही और छापा श्रेष्ठ तिस पर भी मुंशीजीने सर्वसाधारणके सुभीतेके लिये ४०० पृष्ठ होने पर भी मूल्य अत्यन्त स्वल्प १=) सजिल्द १) ही रक्खा है।

श्रीमान् पण्डित **निरंजनदेव शर्मा** उप० श्रीमती प्रतिनिधि सभा मैंने इस जीवनको विचारपूर्वक पढ़ा बड़ा ही रोचक है इसकी भाषा सरल अनेकान विषय इसमें ऐसे हैं जो अभी तक नागरीके जीवनचरित्रोंमें नहीं छपे। कम पढ़े मनुष्य और स्त्रियां भी भले-प्रकार समझसकी हैं इसकी उत्तमता वास्तवमें पढ़नेसे ही प्रतीत होगी। सचतो यह है कि अनेक प्रकारसे उत्तम और तीन मनोहर चित्रों सहित होनेपर भी इस पुस्तकका मूल्य १=) सजिल्द १।) है अतः मैं आर्य्यपब्लिक तथा अन्यान्य श्रेष्ठपुरुषोंसे सिफ़ारिश करता हूं कि एक २ जिल्द मँगाकर आप देख अपनी पुत्रियों, पुत्रोंको अवश्य दिखलावें।

श्रीमान् **पं० सदानन्दजी** पेशकार तहसील किचहा ज़ि० नैनीताल—मैं आपके सरस्वतीन्द्र जीवनको देख हार्दिक धन्यवाद देता हूंदरअसल यह पुस्तक अति सराहनीय है। तिसपर भी मूल्य बहुत ही सस्ता है।

(और देखना हो तो बड़ा सूचीपत्र मँगाकर देखिये)

२ गर्भाधानविधि—यह सातवींबार छपाई है इसमें धातु और उसके गुण, स्त्री प्रसङ्ग, गर्भविधान, उत्तमसन्तानकी विधि,

गर्भ परीक्षा, उसकी रक्षा, गर्भमें पुत्र और पुत्रीकी पहिचान, गर्भवती का कर्त्तव्य, गर्भपातके लक्षण और उसकी चिकित्सा, प्रसवकाल प्रसूत की रक्षा, स्त्री पुरुषोंमें सन्तान होनेके कारणके अतिरिक्त शिशुपालन और अनेक कठिन रोगोंकी चिकित्साका वर्णन है। मूल्य =)

३ वीर्यरक्षा—यह पुस्तक सुखकी खानि है अवश्य आप देख-कर सन्तानोंको दिखाइये और उनको भयानक रोगोंसे बचाइये क्योंकि वीर्यरक्षा करना ही सुखोंका मूल है शोक कि सन्तानें इसके लाभों को न जानकर कुमार्गियों के सङ्ग पड़कर कुसमय कुरीतोंसे वीर्यका सत्यानाशकर भारतको ग़ारत करते चले जाते हैं। मूल्य =) यह ५वीं वार छपी है।

४ हम शीघ्र क्यों मरते हैं—वर्तमान समयमें मौतका औ-सत ३३ वर्षपर आगया है जिसके कारण भारतमें रातदिन रुदन मचा रहता है। अनेकान पुरुष इसके लिये ज्योतिषिसे जपकराते और गंडे तावीज बांधते हैं परन्तु फिर भी अल्पायुमें मरते चले जाते हैं इस दुःखसे बचनेके लिये मैंने चरक सुश्रुत और वेदके अनुसार रुचे नुसखे और पथ्यापथ्य लिखा है देखिये अमल कीजिये ताकि भारतसे यह दुःख चले जावें मूल्य =)

५ सत्यनारायणकी प्राचीन कथा—मित्रों सहित सुनिये, देखिये कैसी अच्छी और उपयोगी कथा है। मूल्य -)॥

६ पत्रप्रकाश—यह सातवींवार छपी है इसमें पुत्र और पु-त्रियोंके लिये गद्य और पद्यमें शिक्षायुक्त चिट्ठी लिखनेकी रीति है। मूल्य =)

७ यथार्थशान्तिनिरूपण—यह पुस्तक स्त्री, पुरुषों, पुत्र, पुत्रियों और प्रत्येक मतमतान्तरके लोगोंको शान्ति देने वाली है। इसके पाठ और विचारसे आत्मामें इसप्रकारकी शान्ति आती है जो सब सुखोंका दाता है। यथार्थमें इसके आशय बड़े गम्भीर हैं =)

८ शान्ति शतक—यह प्राचीन कवि शल्हण मिश्र कृत श्लोक हैं जो भाषा सहित इस पुस्तकमें छपे हैं इसके श्लोक सभा और विद्वानोंमें बोलने योग्य और मूर्खोंके समझानेके लिये हैं इसका आशय प्रत्येक मनुष्यको धार्मिक बनानेके लिये उत्तेजित करता है -)॥

९ मित्रानन्द—मित्रता करनेसे प्रथम इसको देख लीजिये फिर कभी मित्रता न टूटेगी। न क्लेश सहन करने पड़ेंगे। मूल्य -)॥

१० धर्मबलिदान—जिसमें धर्मात्मा पुरुषोंके जीवनचरित्र हैं जिन्होंने धर्मार्थ अपने तन, मन, धनको अर्पण कर दिया जिस समय आप छोटे २ पुत्रोंकी धर्मवीरताका वृत्तान्त पढ़ेंगे आपका हृदय कांपने लगेगा। नेत्रोंसे आंसुओंकी धारा बह चलेगी =)

११ नीतिशिरोमणि—यह नीति सब नीतोंकी शिरोमणि है मू० ।)

१२ भरतोपदेश—इसमें महात्मा रामचन्द्रजीने श्रीभरतको चित्रकूटपर उपदेश किया है। मूल्य)॥

१३ ऋषिप्रसाद—इसमें महात्मा शौनकजीका उपदेश है मूल्य)॥ १४ रत्नजोड़ी—इसमें हकीम लुक़मानसाहबकी नसीहतें हैं मूल्य)॥ १५ रत्नप्रकाश—इसमें महर्षियोंकी शिक्षायें हैं मूल्य)॥ १६ सत्यविवेक—इसमें श्रीस्वामी दयानन्दजीकी बहुमूल्य शिक्षायें हैं। मूल्य)॥ १७—राधास्वामीमत परीक्षा—मूल्य -) १८ संध्यादर्पण मूल्य -)॥ नित्यसन्ध्याविधि)। नित्यहवनविधि)। चित्रशाला)॥ द्वैतप्रकाश मू० -) संसारफल)॥ शिष्टाचार)॥ मूर्तिपूजाविचार पैसेकी दो—

स्त्रियोंके लिये उपयोगी छोटी पुस्तकें।

नीत्युक्तस्त्रीधर्म मूल्य =) स्मृत्युक्तस्त्रीधर्म -)॥ स्त्रीविलाप मूल्य)॥

भजनोंका नया सिलसिला ।

भजनसारसंग्रह प्रथमभाग -)। अनाथपुकार)॥ भजनपचासा -) स्त्रीज्ञानगजरा प्रथमभाग)॥ द्वितीयभाग -)॥

चित्र ! चित्र !! चित्र !!!

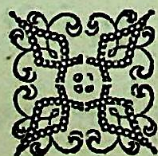
पाठकगणो-मैंने भारतवर्षमें असभ्य चित्रोंका प्रचार देखकर भारत सन्तानको अनेक दुःखोंसे बचानेके लिये उत्तम पुरुषों ऋषियों और महात्माओंके चित्रोंका प्रचार देनेके लिये यत्न किया है जिससे भारतवासियोंको अपूर्व लाभ होनेकी आशा है द्वितीय उनका मूल्य बहुत ही स्वल्प रक्खा है जिससे प्रत्येक पुरुष चित्रोंको लेकर लाभ उठायें महाशयगण यह चित्र विद्वान् महात्मा योग्य पुरुषोंके हैं जिनके देखनेसे आपके तथा आपकी सन्तानोंके चित्तपर बड़ा उत्तम प्रभाव होगा ।

यह सम्पूर्ण चित्र जगत्प्रसिद्ध इण्डियन प्रेस प्रयागमें छपाये गये हैं ।

(१) श्रीस्वामी विरजानन्दजी दण्डीका मूल्य -) (२) श्रीस्वामी दयानन्दजी सरस्वती -) (३) पं० लेखरामजी -, पं० गुरुदत्तजी -) लाला मुन्शीरामजी अधिष्ठाता गुरुकुल कांगड़ी -) (६) महात्मा हंसराजजी प्रिन्सपल दयानन्द ऐङ्गलो वैदिक कालिज लाहौर -) एक चित्र जिसमें सात चित्र हैं मूल्य -)॥

पुस्तकोंके मिलनेका पता—

चिम्मनलाल भद्रगुप्त वैश्य
मुकाम व डाकघर तिलहर
ज़िला शाहजहांपुर यू०पी०



विशेष निवेदन ।

महाशय गण !

इस एडीशनमें मेरे पुत्र और पुत्रीके अधिक बीमार होजानेके कारण बहुधा स्थानों पर अशुद्धियां रहगई हैं इसलिये पाठकगणसे प्रार्थना है कि वह इस समय क्षमा करें । द्वितीय एडीशनमें कोई त्रुटि न रहेगी ।

निवेदक

चिम्मनलाल वैश्य

तिलहर

नोट--बिना मोहरकी पुस्तक चोरीकी समझनी चाहिये ।

पुस्तक मंगाते समय अपना पता साफ़ २ लिखना चाहिये ताकि पुस्तकें भेजनेमें सुभीता रहे ।

पुस्तक मिलनेका पता—

चिम्मनलाल भद्रगुप्त वैश्य

मुक़ाम वा पोस्ट ख़ास तिलहर

ज़िला शाहजहांपूर

☞ कृपा करके इसका द्वितीयभाग भी मंगाकर देखिये।

ओ३म्

पुराण-तत्त्व-प्रकाश

द्वितीयभाग

जिसमें

श्रीमद्भागवत, देवीभागवत, पद्म, विष्णु, शिव, लिङ्ग, अग्नि, कूर्म, वाराह, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त, वामनादि पुराणोंसे सभ्यतापूर्वक यह दर्शाया है कि अठारह पुराण

महर्षिव्यासप्रणीत नहीं हैं

जिसको

श्रीमान् पं० वंशीधरजी पाठक आगरा निवासीकी सहायता से

चिम्मनलाल वैश्य कासगञ्ज निवासीने

निर्मित कर

'आर्यभास्करयन्त्रालयआगरा' में

पं० बाबूराम शर्मा के प्रबन्धसे मुद्रित कराया

जिसकी

रजिष्टरी, ऐक्ट २५ सन् १८६७ ई० के अनुसार कराई गई है

प्रथमावृत्तिः २२०० } सन् १९१० { मूल्य प्रति पुस्तक ॥) आठ आना

॥ ओ३म् ॥



प्रिय पाठकवृन्द !

मेरे परमपूज्य स्वर्गवासी पिता श्री० लाला टीकारामजी को सत्य-प्रिय-भाषण करनेकी बड़ी रुचि थी, इसकारण उनका प्रेम भी ऐसे ही महापुरुषोंके साथ रहता था। मैं अपने पिताका एकलौता पुत्र हूं। मेरे पास ऐसा धनका भण्डार नहीं, जिससे पाठशाला, धर्मशाला, अनाथालय इत्यादि बनवाकर संसारमें उनके नाम स्मरणार्थ छोड़ सकूं। हां मैंने बड़े परिश्रमके साथ इस ग्रन्थको तय्यार किया है, जिसमें सत्य-प्रिय-कथन है जिससे देशके उपकार होनेकी भी सम्भावना है उसीको आज मैं—

अपने माननीय पिताके नामपर समर्पण करता हूं।

हे शक्तिमान् प्रभो !

आप दयाव्यवहार हो। आपकी कृपासे यह पुस्तक लोक-प्रिय हो जिससे मेरे पिताका नाम चिरस्थायी रहे॥ ॐ शम्॥

आवश्यक सूचना !

इस पुस्तकका उर्दू अनुवाद उर्दू जाननेवालोंके हितार्थ शीघ्र छपकर तय्यार होजायगा अतएव कोई महाशय इस पुस्तक और इसके किसी परिच्छेदको उर्दू अनुवाद करनेका कष्ट न उठावें।

आपका शुभचिन्तक—

चिम्मनलाल

स्थान आर्यमन्दिर } तिलहर यू० पी०
२८ फरवरी सन् १९१० } ज़ि० शाहजहांपुर

* ओ३म् *

पुराण-तत्व-प्रकाश

द्वितीय-भाग ।

पन्द्रह दिन व्यतीत होनेके पश्चात् नियत समयपर
श्रीमान् पण्डितजी और अन्य महाशयोंका

प्रवेश ।

आर्यसेठ—श्रीमान् पण्डितजीको आते देख उठकर दोनों हाथ जोड़कर बड़े प्रेमसे श्रीमान्को नमस्ते कर कहा कि आइये, पधारिये, विराजमान हूजिये ।

सुयोग्य पण्डितजी—ने हर्षके साथ आयुष्मान् कहा और विराजमान हुए ।

सेठजी—से कुशल प्रश्न और गृहके समाचार पूछे जिसका उन्होंने यथावत् उत्तर दिया इतनेमें अन्य महाशयगण भी आगये सबने श्रीमान्को यथायोग्य कहकर आनन्द समाचार सुने । इसके उपरान्त श्रीमान्ने सेठजीसे कहा अब आप कथाका आरम्भ कीजिये परन्तु प्रथम आप देव और त्रिदेव-लीलाको संक्षेपसे सुनाकर अन्य विषयको सुनाना आरम्भ करें ।

आर्यसेठ—बहुत अच्छा जो आपकी आज्ञा, प्रथम निम्नलिखित मन्त्रसे ईश्वरकी प्रार्थना की—

ओ३म् भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ।

जो ईश्वर प्राणोंसे प्यारा, दुःखभञ्जन, सुख स्वरूप, जगत्पिता, अत्यन्त भजनेके योग्य, विज्ञानस्वरूप, त्रिगुणयुक्त, सबके आत्माओंका प्रकाशक, सब सुखोंका दाता परमेश्वर है उसको प्रेमभक्तिसे निश्चयकर अपनी आत्माओंमें धारण करें वह हमारी बुद्धियोंको उत्तम धर्मसंयुक्त कामोंमें लगावे ।

पुनः पण्डितजीसे कहा कि अब मैं आपको इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, वशिष्ठ, विश्वामित्र, बृहस्पति, शुक्र, अगस्त्य, भृगुजी बड़े २ देव और मुनियोंकी लीला सुनाता हूं फिर त्रिदेवलीलाको सुनाऊंगा ।

नवम परिच्छेदः

देव और मुनिलीला ।

इन्द्र लीला ।

आर्यसेठ—श्रीमान् इन्द्र महाराज देवलोकमें देवराज कहलाते हैं, परन्तु पुराणोंके पाठ करनेसे उनके कार्य्य बड़े घृणित प्रतीत होते हैं । देखो जब कोई पुरुष तप करनेका प्रबन्ध करता और ज्यों २ तप निर्विघ्न होता जाता त्यों २ देवराजके हृदयमें घबराहट उत्पन्न हो जाती फिर वह उसके तप भंग करनेके अनेकान उपाय सोच उनको कामनें लाते कहां तक कहें वह बड़ी २ अप्सराओंको भेज कामके वशीभूत करा उनको तपसे भ्रष्ट करा देते और स्वयं भी बहुतसी अप्सराओंको रखते थे इसपर भी देवताओंमें श्रेष्ठ देवराज के पद पर सुशोभित रहते थे ।

देवी भागवत स्कंद ४ अध्याय १२ में लिखा है कि शुक्र महाराज दैत्योंकी विजयके लिये महादेवजीके समीप बृहस्पतिसे अधिक मन्त्र लेने गये तब महादेवजीने उनसे कहा कि १०० वर्ष धूम्रपान करो फिर मन्त्र बतलायेंगे । उन्होंने ऐसा ही किया जब यह वृत्तान्त इन्द्र

महाराजको ज्ञात हुआ तो अपनी पुत्री जयन्तीसे कहा कि हम तुमको शुक्र महाराजको दिये देते हैं तुम उनको प्रसन्न कर उनका तपभंग करो या वह हम पर ऐसे दया करने लगे। यह सुन कन्या वहां गई और उनकी अच्छे प्रकारसे सेवाकी। जब १०० वर्ष व्यतीत हो गये और शिवजीने प्रसन्न होकर उनको वर दिया तब शुक्रजीने जयन्तीसे कहा कि तुम कौन हो और क्या चाहती हो सत्य कहो हम तुम्हारी सेवासे प्रसन्न हैं जो तुम मांगोगी वही तुमको देंगे। तब जयन्तीने कहा कि आप अपने तपोबलसे जानलीजिये। इस पर उन्होंने कहा कि मैंने जान लिया। परन्तु तुम भी तो कहो। तब उसने अपने आनेका वृत्तांत कह सुनाया जिसके लिये इन्द्रने भेजा था। जिसको सुन मुनिने कहा कि अच्छा हम तुम्हारे साथ सौ वर्ष तक अलक्षमें विहार करेंगे और वैसा ही किया।

काऽसि कस्याऽसि सुश्रोणि ब्रूहि किं ते चिकीर्षितम् ।
किमर्थमिह संप्राप्ता कार्यं वद वरोरुमे ॥
किं वांछसि करोम्यद्य दुष्करं चेत्सुलोचने ।
प्रीतोऽस्मि त्वत्कृतेनाऽद्य वरं वरय सुव्रते ॥
ततः सा तु मुनिं प्राह जयंती मुदितानना ।
चिकीर्षितं मे भगवत्तपसा ज्ञातु मर्हसि ॥
ज्ञातं मया तथाऽपि त्वं ब्रूहि यन्मनसेप्सितम् ।
करोमि सर्वथा भद्रं प्रीतोऽस्मि परिचर्यया ॥
शक्रस्याऽहं सुता ब्रह्मन्पित्रा तुभ्यं समर्पिता ।
जयंतीनाम तस्याऽहं जयंताऽवरजामुने ॥
सकामाऽस्मि त्वयि विभो वांछितं कुरु मेऽधुना ।
रंस्ये त्वया महाभाग धर्मतः प्रीतिपूर्वकम् ॥

मया सहत्वं सुश्रोणि दशवर्षाणि भामिनि ।
सर्वैर्भूतैरदृश्या चरम स्वेह यदृच्छया ॥
एवमुक्त्वा गृहं गत्वा जयंत्याः पाणिमुद्वहन् ।
तया सहावसद्देव्या दशवर्षाणि भार्गवः ॥

पद्मपुराण—स्वर्ग तृतीयखंड अध्याय २४में भी यह कथा लिखी है।

ब्रह्मवैवर्त्तपुराण—के कृष्णजन्मखण्ड अध्याय ६१में लिखा है कि एकवार इन्द्र मन्दाकिनी नदीके तट गौतम ऋषिकी स्त्री अहल्या को देख कामके वशीभूत होगये । दैवयोगसे किसी दिन गौतम शङ्करके यहां गये हुए थे इधर इन्द्रने अपना मनोरथ सिद्ध्यर्थ महात्मा गौतमका रूप बना अहल्याके यहां जाकर विहार किया ।

एकदा गौतमः शीघ्रं जगाम शङ्करालयम् ।
शक्रो गौतमरूपेण तां सम्भोगं चकारसः ॥ ४४ ॥

इतनेमें गौतम घर आये उन्होंने दोनोंके अनुचित व्यवहारको देखकर इन्द्रसे कहा कि जा तेरे शरीरमें भग ही भग होजायंगी और अहल्यासे कहा कि तू शिला हो जा ।

सर्वं ज्ञात्वा च सर्वज्ञो स्वयं मन्दिरमाययौ ।
निर्गच्छन्तं महेन्द्रश्च ददर्श मुनिपुङ्गवः ॥
नग्नामहल्यां रहसि पीनश्रोणि पयोधरां ।
मुनिः शशाप शक्रं च भगाङ्गश्च भवेति च ॥
कोपाच्छशाप पत्नीश्च रुदन्ती भयविह्वलाम् ।
त्वञ्च पाषाणरूपा च महारण्ये भवेति च ॥

यही कथा गणेशपुराण और मार्कण्डेयपुराण अध्याय ५ में लिखी है ।

नृसिंह उपपुराण अध्याय ६३ में लिखा है कि एक दिन इन्द्र विमानपर बैठकर मानसरोवरपर गये जहां कुवेरकी स्त्रीको देख मोहित होगये और उसके गृहको गये। उधर इन्द्रकी आज्ञासे कामके स्त्रीको प्रेरित किया। तब वह कामके वशीभूत हो पूजा छोड़कर इन्द्रके पास गई। फिर अपने २ वृत्तान्तको एक दूसरेने सुनाया। तिसपर इन्द्रने कहा कि हमको भजो तुम्हारे विना हमको आनन्द नहीं। इन्द्र उसको मन्दराचल पर्वतकी कन्दरामें लेगये वहां अच्छे प्रकार विहार किया। जब कुवेरको यह समाचार मिले कि उनकी स्त्री चित्रसेनाको कोई चुराकर लेगया तब वह आत्मघात करनेपर उतारू होगये उस पर मन्त्रीने नाड़ीजङ्घा नाम राक्षसीको उसके खोजके लिये भेजा जो अत्यन्त सुन्दररूप धारणकर इन्द्रके स्थानको गई जिसको देख इन्द्र वशीभूत होगये और उसको विमानमें बिठला गुप्त स्त्रीको दिखलाने के लिये चले। मार्गमें नारद महाराज मिले उस समय इन्द्रसे कुशल क्षेम पूछनेके पीछे नाड़ीजङ्घासे पूछा कि राक्षसोंके यहां आनन्द है। तेरे भाई विभीषण प्रसन्न हैं। उस समय इन्द्रने बहुत विस्मित हो कहा कि इस दुष्टाने हमको खूब छला अन्तको उसके मारनेका विचार कर महात्मा तृणविन्दुके आश्रमपर उसके केश पकड़कर खैंचा वह रोदनकर पुकारने लगी इतनेमें महात्मा भी आगये जिन्होंने कहा कि रोदन करती हुई स्त्रीको छोड़ दे परन्तु इन्द्रने कोपके कारण कुछ न सुना और उसको मारडाला। उस समय मुनिने कोपकर इन्द्रसे कहा कि हे दुष्ट! तूने हमारे तपोवनमें ऐसा कार्य्य किया इस कारण तुम मेरे शापसे स्त्री होजाओ। तुरन्त इन्द्र स्त्री होगये।

इन्द्र महाराज की और लीलाओंको सुनिये जब अदितिके इन्द्र उत्पन्न हो गये उसके बहुत काल व्यतीत होने पीछे दितिने कश्यपसे कहा कि इन्द्रके समान हमारे भी पुत्र हो तब मुनिने कहा कि पयोव्रत करो तो वैसा ही पुत्र होगा। दितिने स्वीकार कर गर्भ धारणके पीछे पयोव्रतमें स्थित हो गई। गर्भ बढ़ चला थोड़े ही दिन प्रसूतिके

शेष रह गये तब अदितिजीने अपने पुत्र इन्द्रसे कहा कि जिस प्रकार से हो सके दितिका गर्भ गिरा दो नहीं तो तुमसे भी अधिक प्रतापी पुत्र उत्पन्न होगा और राज्य छीन लेगा। यह सुन इन्द्र दितिजीके निकट जा उनकी सेवामें लग गया एक दिन वह दिनमें सो गई इन्द्र पैर दाब रहे थे अन्तको वह सूक्ष्म रूपको धारण कर दितिके गुप्त स्थानमें प्रवेश कर गये और गर्भके वज्रसे सात खंड कर दिये जब वह रोने लगे तो फिर एक २ के सात २ खण्ड कर दिये जो ४९ पवन हो गये इसी भांति वृत्रासुर से मित्रता कर विश्वासघात किया।

पद्मपुराण सृष्टिखंड अध्याय १२ में लिखा है कि पुरूरवा और इन्द्रमें बड़ा प्रेम था एक दिन इन्द्रके आगे उर्वशी नाच रही थी राजा पुरूरवा भी वहां बैठे थे जिनके रूपको देख वह सब भूल गई इन्द्रने उसको शापदिया कि आजसे ५५ दिन तक तू लता हो कर रहेगी और राजा प्रेत हो कर तेरे साथ भोग करेंगे।

पञ्चपञ्चाशदब्दानि लताभूता भविष्यसि।

अध्याय १७ में लिखा है कि जब ब्रह्माजीने यज्ञ करनेका आरम्भ किया और सावित्रीजीके आनेमें देर हुई तब इन्द्रने एक गोपकन्या को लाकर खड़ा कर दिया जिसके साथ विष्णुकी सम्मतिसे गान्धर्व विवाह कर यज्ञ करनेमें लगगये इतनेमें सावित्री देवी आईं और वृतान्तको जान इन्द्रसे कहा कि तुमने यह अनुचित कार्य्यवाही की है इससे इन्द्र तुम कभी संग्राममें न जीतोगे पुत्र भी तुम्हारा नष्ट हो जायगा।

यस्मात्ते क्षुद्रकं कर्म तस्मात्त्वं लप्स्यते फलम्।
यदा संग्राममध्ये त्वं स्थाता शक्र भविष्यसि॥
तदा त्वं शत्रुभिर्बद्धो नीतः परमिकां दशाम्।
पराभव महत्प्राप्य न चिरादेव मोक्ष्यसे॥ १५०॥

मार्कण्डेयपुराण जिल्द नम्बर १ अध्याय ३ में एक कथा है कि इन्द्र बूढ़े पक्षीका रूप धारण कर एक मुनिके पास गये और कहा कि मुझको भोजन दो मुनिने कहाकि जो भोजनकी इच्छा हो सो लो। तब इन्द्रने मनुष्यमांसकी इच्छाकी। मुनिने अपने पुत्रोंसे कहा जिन्होंने अपना मांस देनेसे इन्कार किया तब पिताने पुत्रोंको शाप दिया कि तुम सब पक्षी होजाओ और इन्द्रसे कहा कि अब तुम मेरे शरीरका मांस भक्षण करो।

भक्षयस्वसुविश्रब्धो मामत्र द्विजसत्तम!।
आहारीकृतमेतत्ते मया देहमिहात्मनः ॥ ४६ ॥

क्योंकि जो अपने वचनपर रहता है वही ब्राह्मण है। तब इन्द्रने कहा कि मैं योगाभ्यास करके अपने शरीरको छोड़ दूंगा और इस समय किसी जीवके मांसको भक्षण न करूंगा। यह सुन मुनिने ध्यानसे देखा और इन्द्र पक्षीका रूप छोड़ अपने रूपमें हो गये तब इन्द्रने कहाकि आप पापरहित हैं आपकी परीक्षाके लिये मैं आया था।

भो भो विप्रेन्द्र बुध्यस्व बुध्याबोध्यं बुधात्मक।
जिज्ञासार्थं मयाऽपन्ते अपराधः कृतोऽनघ ॥ ५२ ॥

चन्द्रलीला।

देवीभागवत स्कंद १ अध्याय ९ में लिखा है बृहस्पतिकी स्त्री तारा बड़ी सुन्दरी थी एक दिन अपने यजमानके गृह गई। उसको देख चन्द्रमा और तारा चन्द्रमाको कामातुर हुई। फिर कई दिन तक दोनोंने विहार किया।

दिनानि कतिचित्तत्र जातानि रममाणयोः १ ११ ९॥

फिर बृहस्पतिने अपने शिष्यको भेजबुलाया पर वह नगई तब बृहस्पतिजी आप गये और कहाकि हम सब देवताओंके गुरु हैं तुम

हमारे यजमान हो जो मूर्ख गुरुकी स्त्रीसे भोग करता है वह महा पातकी होता है। चन्द्रमाने कहा कि हमने नहीं बुलाया वह आप अपनी इच्छासे आई है। वह अपने घरको चलेगये फिर थोड़े दिनोंके पीछे कहा कि तुम शिष्य हो गुरुपत्नी माताके समान होती है इसपर चन्द्रमाने कुछ न सुना तब वह इन्द्रके पास गये और सब वृत्तान्त कहा। तब इन्द्रने चन्द्रमाके पास दूत भेजा जिसने जाकर सब वृत्तांत कहा और यहभी निवेदन किया कि आपके यहां २८ स्त्रियां हैं और इसके उपरांत रम्भा आदि भी विहारके लिये मौजूद हैं तब चन्द्रमाने कहा कि इन्द्र और बृहस्पति दोनों बड़े ज्ञानी हैं जो अपनी सुधि नहीं लेते देखो बृहस्पतिने अपने बड़े भाईकी स्त्री ममताको ग्रहण कर लिया उसी दिनसे तारा अप्रसन्न होगई।

इससे तुम कहदो हम नहीं देंगे उसने वैसा ही कह दिया। फिर क्या युद्धकी तय्यारी होने लगी उधर शुक्रने चन्द्रमासे कहा कि तुम कदापि न देना हम तुम्हारी सहायता करेंगे। अंतको बहुत दिनों तक युद्ध हुआ तब ब्रह्माजी ने समझाकर ताराको चन्द्रमासे दिलादिया परन्तु चन्द्रमाने उसको गर्भिणी कर दिया। जब पुत्र हुआ तब चन्द्रमानें कहा कि हमारे सादृश्य पुत्र है हमको दे दो। इसपर फिर संग्रामकी ठहरी। तब ब्रह्माने एकांतमें तारासे पूछा कि किसका पुत्र है उसने धीरे से कहा कि चन्द्रमाका। तब उन्होंने चन्द्रमाको दिलादिया जिसका नाम बुध रक्खा।

तारापप्रच्छ धर्मात्मा कस्यायं तनयः शुभे।
सत्यं वद वरारोह यथा क्लेशः प्रशाम्यति ॥ ८२ ॥
तमुवाचाऽसितापांगी लज्जमानाप्यधोमुखी।
चन्द्रस्येति शनैरंतर्जगाम वरवर्णिनी ॥ ८३ ॥
जग्राह तं सुतं सोमः प्रहृष्टेनांतरात्मना।
नामचक्रे बुध इति जगाम स्वगृहं पुनः ॥ ८४ ॥

यही कथा ब्रह्मवैवर्त्तपुराण प्रकृतिखंड अध्याय ५८ में भी लिखी है

सूर्यलीला ।

देवीभागवत स्कंद २ अध्याय ६ में लिखा है कि शूरसेन राजाकी कन्या कुन्ती जिसको कुन्तिभोज नाम राजा कन्यापनमें मांगले गये थे एक दिन राजाने कुन्तीको अग्निहोत्रकी अग्निकी रक्षाके लिये नियत किया। उसी समय दुर्वासा ऋषि आये और राजाने उनको चातुर्मास्यके निमित्त टिकाया जिनकी कुन्तीने बड़ी सेवा की जिससे प्रसन्न हो उन्होंने उसको एक मंत्र बताया कि इससे तुम जिस देवता का ध्यान करोगी वह आकर तुम्हारी मनोकामना सिद्ध करेगा। इतना कह मुनि तो चले गये उसने मंत्रकी परीक्षा लेनेके लिये मंत्र पढ़के सूर्य्यकाआह्वान किया। वह मनुष्यका रूप धर वहां आये जिसके भयसे वह रजोवती होगई और कहा कि मैं आपके दर्शनसे प्रसन्न हुई अब आप अपने मण्डलको चले जाइये।

तब सूर्य्यने कहा कि तुमने हमको क्यों बुलाया था जब कि हमको वैसे ही वापिस करना था।

हम तो तुमको देख कर कामातुर हैं इससे हमको भजो। तब उन्होंने कहा कि हम तो अभी कन्या हैं आप सर्वसाक्षी और धर्मज्ञ हैं हम कुलीनकी कन्या हैं इससे आपको ऐसे वचन न कहने चाहियें।

कुन्त्युवाच—कन्याऽस्म्यहं तु धर्मज्ञ सर्वसाक्षिन्नमाम्यहम्।
तवाऽप्यहं न दुर्वाच्या कुलकन्याऽस्मि सुव्रत ॥

देवीभागवत स्कन्द २ अ० ६। श्लोक २४

तब सूर्य्यनारायणने कहा कि ऐसे जानेसे तो हम को बड़ी लज्जा आवेगी क्योंकि सब देवता हमारी निंदा करेंगे कि ज्यों के त्यों ही लौट आये इससे हमको रति दो नहीं तो जिसने तुमको मंत्र बताया है उसको और तुम्हें दोनोंको हम शाप देंगे। तुम्हारा कन्यात्व भंग न होगा यह कह सविताजी कुंती में गर्भधारणकर अपने मंडलको चले गये ॥

इत्युक्त्वा तरणिः कुन्तीं तन्मस्कां सुलज्जिताम् ।
मुक्त्वा जगामन्दवेशो वरंदत्वाऽतिवाञ्छितम् ॥२८॥
गर्भं दधार सुश्रोणी सुगुप्ते मंदिरेस्थिता ॥ २९ ॥

वह गर्भधारण कर गुप्तस्थान में रहने लगी जिसके भेदको एक दासीके उपरांत माता पिता आदि किसी ने न जाना जब सूर्य्य के समान पुत्र हुआ तब दासीके हाथ एक मंजूषा में बन्दकर गंगामें छुड़वादिया जिसको अधिरथने पाया और पुत्रको लेकर अपनी अपुत्रा स्त्रीको दिया जिसका राधानाम था इस लिये वह राधा-पुत्र कहलाया ॥

पद्मपुराण—सृष्टिखंड अध्याय आठमें लिखा है कि विश्व-कर्मा की कन्या संज्ञा जो सूर्य्य को ब्याहीगई थी जब वह अपने पति का तेज न सह सकी तब उसने अपने शरीरसे अपने समान एक स्त्री रुपजकी जिसका नाम छाया था उसको वह अपनी सन्तान सौंपकर चलीगई । छाया रहगई जो सूर्य्यनारायण की सेवा करने लगी । जिससे सन्तान हुई फिर वह अपनी सन्तान पर अधिक प्रेम करने लगी । जिसका वृतांत जब सूर्य्यको मालूम हुआ तब सूर्य्य भगवान् संज्ञाके पिताके समीप गये और उनको पुत्रीका सब वृतांत कहा । उस समय विश्वकर्माने कहा कि आपका तेज न सहकर वह संज्ञा घोड़ी का रूप धारण कर हमारे निकट चली आई जब हमने उससे कहा कि तूने अपने पतिके प्रतिकूल काम किया है तुम हमारे यहां न आओ इसपर वह उसी रूपमें मरुदेशमें चली गई और वहां ही है इसलिये आप हमसे प्रसन्न हो और आप कहें तो हम आपको यन्त्रपर चढ़ाकर कुछ छीलडालें जिसमें तेज कम होजाय ।

तो आपका तेज संज्ञा सह सकेगी ऐसा आपका रूप बनादें जो लोगोंको आनन्द करेगा तब सूर्य्यने कहा कि अच्छा । इस पर वि-

विश्वकर्माने सूर्य्यको यन्त्रपर चढ़ाकर उनका तेज छील डाला उसीसे विष्णु भगवान्‌का सुदर्शनचक्र बना, महादेवका त्रिशूल भी उसीसे बनाया व इन्द्रका वज्र भी उसीसे निर्माण किया गया।

तस्मात्प्रसादं कुरु मे यद्यनुग्रह भागहम् ।
अपनेष्यामि ते तेजः कृत्वा यंत्रे दिवाकरम् ॥
रूपं तव करिष्यामि लोकानंदकरं प्रभो ।
तथेत्युक्तः सरविणाभ्रमे कृत्वा दिवाकरम् ॥
पृथक् चकार तेजश्च चक्रं विष्णोः प्रकल्पयत् ।
त्रिशूलं चापि रुद्रस्य वज्रमिंद्रस्य चापरे ॥

इस प्रकार जब सूर्य्यका अद्भुतरूप विश्वकर्माने बना दिया उसमें भी चरण बहुत उत्तम बनाये पर उन सूर्य्यके चरणोंको वे मारे तेजके न देखसके तब उन्होंने बहुत कम तेजके पाद उनके करडाले।

नशशाक च तद्द्रष्टुं पादं रूपं रवेः पुनः ।
अद्यापि च ततः पादौ न कश्चित्कारयेत्क्वचित् ॥

इसके पीछे सूर्य्यनारायण भूलोकपर आये व घोड़ेका रूप धारण कर उस घोड़ीके रूपको प्राप्त संज्ञाके संग विहार करने लगे।

पर तो भी तेज विशेष था संज्ञाने जाना कि और कोई है इस कारण उसको और भी विह्वलता हुई और बहुत ही व्याकुल हुई व दूसरा पति जानकर नाकसे सूंघ उसने सूर्य्यका वीर्य अलग कर दिया उसीसे अश्विनीकुमार नाम देवताओंके वैद्य उत्पन्न हुए।

ततः सभगवान् गत्वा भूर्लोकममराधिपः ।
कामयामास कामार्तो मुखदिवाकरः ॥
अश्वरूपेण महता तेजसा च समन्वितः ।
संज्ञा च मनसा क्षोभमगमद्भयं विह्वला ॥

नासापुटाभ्यामुत्सृष्टं परोयमिति शंकया ।
तस्याथ रेतसो जातावश्विना विलिमा श्रुतम् ॥

फिर जब संज्ञाने यह जाना कि हमारे स्वामी सूर्य्य ही अश्वका रूप धारण कर आये हैं तब बहुत प्रसन्न हुई और अपना पूर्वरूप धारणकर अपने पतिके साथ विमानपर चढ़कर देवलोकको चली गई।

ज्ञात्वा चिराश्वतं देवं सन्तोषमगमत्परं ।
विमाने नागमत्स्वर्गं पत्न्यासह मुदान्वितः ॥

वशिष्ठ और विश्वामित्रलीला ।

मार्कण्डेयपुराण अध्याय ७ से प्रकट होता है कि त्रेतायुगमें राजा हरिश्चन्द्र धर्मात्मा राजा हुए जब वशिष्ठजीने विश्वामित्रका सब वृत्तान्त और राजा हरिश्चन्द्रकी दशाको सुना तो क्रोधमें आकर उनको शाप दिया कि तुम बगुला होजाओ ।

तस्माद्दुरात्मा ब्रह्मद्विट् यज्वनामवरो पिताः ।
मच्छापोपहतो मूढः सवकत्वमवाप्स्यति ॥

जब इस शापको विश्वामित्रने सुना तब वशिष्ठकी तरफ़ क्रोध करके विश्वामित्रने शाप दिया कि तू भी मेरे शापसे सूती अर्थात् सारस पक्षीका शरीर धारण कर ।

श्रुत्वा शाप महातेजा वशिष्ठं प्रति कौशिकः ।
त्वमप्याडिर्भवत्सूती प्रतिशापमयच्छत ॥

जब दोनों पक्षी होगये तब क्रोधसे दोनों आपसमें लड़ने लगे और उससे बड़ा हाहाकार मचगया तब देवताओंको साथ लेकर ब्रह्माजी वहां गये और कहा अब न लड़ो परन्तु इस पर भी उन्होंने न माना तब ब्रह्माजी संसारका नाश होते हुए देखकर और उन दोनों

महात्माओंकी भलाई चित्तसे विचारकर तिर्य्यग्भाव उनका हर लिया जब वह तामसी भावको छोड़कर अपने शरीर अर्थात् वशिष्ठ और विश्वामित्र होगये तब ब्रह्माजीने कहा कि तुम दोनोंने अपनी २ बड़ाईको छोड़कर तामसीभावको प्राप्त होकर ऐसा युद्ध किया देखो काम, क्रोध यह दोनों तपस्यामें विघ्न डालने वाले हैं जिनके वश होकर तुमने अपनी तपस्यामें हानि की अब इस पापको छोड़दो तब ही कल्याण होगा। ब्राह्मणके वास्ते तपस्या ही बड़ा बल है।

तपोविघ्नस्य कर्त्तारौ कामक्रोधवशं गतौ।
परित्यज्ञ भद्रं वो ब्रह्म हि प्रचुरं बलम्॥

यह सुनकर दोनों महात्मा लज्जित हो अपना २ क्रोध छोड़कर आपसमें मिलगये। ब्रह्माजी अपने लोकको चलेगये।

बृहस्पतिजी

यह महाविद्वान् देवताओं के गुरु थे इनके विषयमें लिखाहै कि इन्होंने अपने बड़े भाई उतथ्यकी स्त्री को अपनी स्त्री बनाया था देवताओं की जीत के लिये शुक्रका रूप धारण कर सौ वर्षतक दैत्यों के गुरु बन उनको धर्मच्युत करदिया था जिससे देवतोंने उनको फिर परास्त करदिया परन्तु फिर शुक्रके प्रतापसे विजय पाई॥

शुक्रजी

यह दैत्योंके गुरु थे और सदा धर्मसे उनकी विजय चाहते थे एक वार जब दैत्य बहुत निर्बल होगये तो आपने महादेवजीकी तपस्या कर वर पालिया फिर दैत्योंकी रक्षामें लगे रहे-इसीबीच इन्द्रजीने अपनी पुत्री जयन्ती को शुक्रके प्रसन्न करने के लिये या कहिये तप भ्रष्ट करनेको उनके पास भेजाया इन्होंने सौ वर्ष तक अदृश्य हो जयन्ती से भोगकिया और अपनी पुत्री देवयानीके कहने से मृतक कचको कईवार जीवित करदिया था॥

अगस्त्यमुनि के विषयमें यह प्रसिद्ध चला आता है कि आपने समुद्रके सब जलको पान कर लिया था विंध्याचल पर्वत जब सूर्यके मार्गको रोकना चाहता था तब आपने उससे कहा कि अभी न बढ़ो जब हम दक्षिण से लौट आवें तब बढ़ना उसने ऐसा ही किया आज तक पृथ्वीपर पड़ा हुआ है अगस्त्य आज तक आते हैं अर्थात् उससे मिथ्या बोले। एक बार अगस्त्यमुनिको स्त्रीकी इच्छा पूर्ण करनेके लिये धनकी चाहना हुई तब वह इल्वल नाम राक्षसके पास गये जिसने अपने भाई वातापीको काट अगस्त्य मुनिको भोजन कराये वह उसको पूरी आसन पर बैठ कर सब मांस खागये जब इल्वलने वातापीको पुकारा तब अगस्त्यजीने कहा कि वह पच गया अब नहीं निकल सकता देखो वनपर्व अध्याय ९९।

वातापे निष्क्रमस्वेति पुनः पुनरुवाचह ।
तं प्रहस्याब्रवीद्राजन्नागस्त्यो मुनिसत्तमः ॥
कुतो निष्क्रामितुं शक्तो मया जीर्णस्तु सोसुरः ।

कश्यप मुनि ।

देवीभागवत—स्कंद ४ अध्याय ३ में लिखा है कि—

एक समयकी बात है कि कश्यपमुनि यज्ञ करनेके निमित्त वरुण की गायें चुरा लाये और मांगने पर भी नहीं दीं तब वरुणजीने ब्रह्मा जी के पास जा प्रणाम कर कहा कि कश्यप हमारी धेनु चुरा लेगये और मांगने पर भी नहीं देते इससे हमने उन्हें शाप दिया है कि मनुष्य लोकमें गोपाल और तुम्हारी दोनों स्त्रियां भी गोपी होकर जिस प्रकार हमारी गायें बिना बछड़ोंके रोती हैं उसी भांति तुम बन्दी गृहमें पड़कर रुदन करोगे। इतना कह ब्रह्माजीने कश्यपजीको बुलाया और कहा कि आप ज्ञाता हो अन्यायसे इनकी गायें क्यों लीं और मांगने पर भी नहीं दीं इसलिये तुम्हारे पुत्र होते ही मरते जायंगे।

मृतवत्सादितिस्तस्माद्भविष्यति धरातले ।

भृगुजी—महाराजने महादेवजीको शाप दिया कि स्त्रीके संग-रत होकर मेरा निरादर किया इसलिये योनिलिंगका स्वरूप तुम्हारे होजाय । जैसा—

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अ० २५५ में लिखा है ।

नारीसंगमसक्तोसौ यस्मान्मामवमन्यते ।
योनिलिङ्गस्वरूपं वै तस्मात्तस्य भविष्यति ॥

और विष्णुमहाराजको भी शाप दिया कि आपने विना अपराधके मेरी माताका सिर काट डाला इसलिये पृथ्वी पर सात जन्म तक मनुष्योंके बीचमें उत्पन्न होगे ।

यत्त्वया जानता धर्ममवध्यास्त्रीनिषूदिता ।
तस्मात्त्वं सप्तकृत्वो हि मानुषेषूपयास्यसि ॥

इसके उपरांत इन्होंने मरी हुई अपनी माताको तपोबलके प्रतापसे जीवितकर लिया था । देखिये कैसा अनोखा तपोबल है ।

देवी भागवत अध्याय ४ । १३ में राजा जन्मेजयने कहा है कि देवताओं के गुरु अंगिराके पुत्र धर्मशास्त्र, पुराण, वेद के वक्ता होकर मिथ्या बोलें तो फिर अन्य मनुष्य क्या मिथ्याभाषण न करेंगे—हरि, ब्रह्मा, इन्द्र, और अन्य देवता छल करने में बड़े दक्ष हैं तो अन्य मनुष्यों की क्या कथा । वशिष्ठ, वामदेव, विश्वामित्र, बृहस्पति जब यही लोग पाप करने लगे तो धर्म की कहां गति और इन्द्र, अग्नि, चन्द्रमा और ब्रह्मा यही लोग पर-दारा गमन करते हैं तो अब सत्व त्रिलोकी में किनमें स्थित होगा किनके वचन उपदेशके विषयमें माने जायंगे। क्योंकि बृहस्पति आदि

की तो यह दशा ठहरी कि देवताओंके कहनेसे शुक्र का रूप दैत्यों से छल करनेके निमित्त धारण करलिया फिर संसारमें छल कौन न करेगा ॥

गुरुःसुराणामनिशं सर्वविद्यानिधिस्तथा ।
सुतोऽङ्गिरस एवाऽसौ सकथं छलकृन्मुनि ॥
धर्मशास्त्रेषुसर्वेषु सत्यं धर्मस्य कारणम् ।
कथं मुनिभिर्येन परमात्माऽपि लभ्यते ॥
वाचस्पतिस्तथामिथ्या वक्ताश्चेद्दानवान्प्रति ।
कःसत्यवक्ता संसारे भविष्यति गृहाश्रमी ॥ ४ ॥
अमराणां गुरुः साक्षान्मिथ्यावादीस्वयंयदि ।
तदाकःसत्यवक्तास्याद्राजसस्तामसः पुनः ॥८॥
कास्थितिस्तस्यधर्मस्य संदेहो यं ममात्मनः ।
का गतिः सर्वजन्तूनांमिथ्याभूतेजगत्त्रये ॥९॥
हरिर्ब्रह्माशचीकांतस्तथान्ये सुरसत्तमा ।
सर्वेछलविधौदक्षा मनुष्याणां च का कथा ॥१०॥
कामक्रोधाभिसंतप्ता लोभोपहतचेतसः ।
छलेदक्षाः सुराः सर्वे मुनयश्च तपोधनाः ॥ ११ ॥
वसिष्ठो वामदेवश्च विश्वामित्रो गुरुस्तथा ।
एते पापरतः वात्र गतिर्धर्मस्य मानदा ॥१२॥
इन्द्रोग्निश्चन्द्रमावेधाः परदाराभिलंपटाः ।
आयर्यत्वं भुवनेष्वेषुस्थितं कुत्र मुने वद ॥१३॥
वचनं कस्य मन्तव्यमुपदेशाधियाऽनघ ।
सर्वे लोभाऽभिभूतास्ते देवाश्च मुनयस्तदा ॥ १४॥

तब व्यासजी ने कहा कि ब्रह्मा क्या अन्य सब देव रागी हैं क्योंकि जो देहको धारण करैगा उसमें विकार अवश्य होंगे हां यह चतुर हैं इससे इनका रागी होना सर्वथा विदित नहीं होता समय समय पर यह भी मरते और जन्म लेते हैं। फिर इनके मिथ्या बोलने छल करने में शंका क्या हुई।

यह संसार इसी प्रकार का है भला देह धारण करके कौन पाप नहीं करता देखो बृहस्पति की भार्य्या चन्द्रमाने लेली थी बृहस्पति ने अपने भाईकी स्त्री को ग्रहण करलिया था।

व्यासउवाच।

किं विष्णुः किं शिवो ब्रह्मामघवा किं बृहस्पतिः।
देहवान्प्रभवत्येव विकारैःसंयुतस्तदा ॥ १५ ॥
रागीविष्णुः शिवो रागी ब्रह्माऽपि रागसंयुतः।
" रागवान्किमकृत्यं वै न करोति नराधिप। "
रागवानपि चातुर्याद्विदेह इव लक्ष्यते ॥ १६ ॥
म्रियते नात्र संदेहो नृपकिंचित्कदाऽपि च।
स्वायुषाऽन्ते पद्मजाद्याः क्षयमृच्छंति पार्थिव ॥२९॥
प्रभवन्ति पुनर्विष्णुहरशक्रादयः सुराः।
तस्मात्कामादिकान्भावान्देहवान्प्रतिपद्यते ॥३०॥
नाऽत्र ते विस्मयः कार्यः कदाचिदपि पार्थिव।
यो बिभेतीह संसारे सदाराश्च करोत्यपि ॥
विमुक्तः सर्वसंगेभ्यो विचरत्यविशंकितः।
तस्माद्बृहस्पतेर्भार्या शशिनालंभिता पुनः ॥३३॥
गुरुणा लंभिता भार्या भ्रथाभ्रातुर्यवीयसः।
एवं संसारचक्रेऽस्मिन्रागलोभादिभिर्वृतः ॥३४॥

चन्द्रका ४९ पवनोंको और सूर्य्य महाराजका घोड़ा बन सज्ञा घोड़ीके साथ समागम कर अश्विनीकुमारका उत्पन्न करना। शुक्र महाराजका मृतक कचका जीवित करना आश्चर्य्यजनक और सृष्टिक्रम के विपरीत है। तदन्तर बृहस्पतिजीका मिथ्या बोलना। वसिष्ठ और विश्वामित्रजीका क्रोधी होना। कश्यपका चोरी और अगस्तजी का मनुष्यमांस भक्षण करना। पढ़कर रोना आता है क्योंकि हम सब ऋषियोंकी सन्तान होते हुए अपने प्राचीन पुरुषाओंकी निन्दाको पढ़ते सुनते चले जाते हैं और कुछ विचार नहीं करते क्या पण्डितजी ऋषियोंका रक्त शरीरमें शेष नहीं रहा। तब ही तो इन निन्दायुक्त पुराणोंके न मानने वाले आर्य्योंको आप निन्दक कहते हैं। अब मेरी आप सबसे यही प्रार्थना है कि आप विचारकर सत्यका ग्रहण करें।

सेठजी—पण्डितजी अब मैं इस विषयको समाप्त करता हूं। श्रीमान् कहिये जहां उपरोक्त कार्य्य देवतोंके हों वहांकी मनुष्यलीला का क्या ठीक। फिर भी आप यह कहते ही चले जाते हैं कि सत्युग, द्वापर, त्रेतायुगोंमें पाप कम था, कलियुग पापका मूल है देखिये तो इन्द्र, चन्द्र, सूर्य्य और बृहस्पतिका व्यभिचारी होना, और जिससे अन्य जातियोंके सन्मुख नीचा शिर न करना पड़े॥ ओ३म् शम्॥

श्रीमान् पण्डितजी—सेठजी यह बातें सुनकर तो हमारी समझमें भी नहीं आता कि यह पुराण व्यास महाराजने लिखे हों।

पण्डितजी व अन्य सज्जन पुरुषोंने चलनेकी तय्यारीकर चलदिये।

आर्य्यसेठने पण्डितजीको नमस्ते और सज्जनोंको यथायोग्य कहा।

पंडितजी—ने आशीर्वाद और अन्य महाशयोंने यथायोग्य की सब चलदिये।

सेठजी—अपने आवश्यक कार्य्यके लिये घरको गये।

॥ नवम परिच्छेद समाप्तः ॥

दशमपरिच्छेद ।

श्रीमान् पंडितजी नियत समयपर आकर सुशोभित हुए और कई एक मान्यगण भी आगये परन्तु सेठजी अदालतमें जानेके कारण उपस्थित न थे ।

अन्य महाशयगणों से यथायोग्यकी पश्चात् श्रीमहाराजके नामके आनन्द समाचार सुने इतनेमें सेठजी आगये ।

सेठजी हाथ जोड़कर श्रीमान् पंडितजीको नमस्ते और अन्य महाशयगणोंको यथायोग्य कहा ।

पंडितजीने आशीर्वाद और अन्योंने यथायोग्य कहा ।

इसी बीच लाला हरदेवप्रसादजी वा बाबूपन्नालालजी वा लाला गणेशीलालजी वा लाला भगवानदास अत्तार व बाबू छीतरमल वा बाबू तोताराम वा लाला डूंगरमलजी जो कासगंजसे सेठजीके यहां पधारे थ आकर विराजमान हुए और सब सज्जनोंको नमस्ते की ।

पंडितजी—सेठजी अब आप त्रिदेवलीलाको संक्षेपसे वर्णन कीजिये ।

आर्य्यसेठ—बहुत अच्छा आज मैं आपको संक्षेपके साथ त्रिदेवलीला को सुनाता हूं पंडितजी ध्यानपूर्वक सुन विचार कीजिये ।

त्रिदेवलीला ।

ब्रह्मलीला ।

श्रीमद्भागवतस्कन्द ३ अध्याय १२ में लिखा है सरस्वती अपनी पुत्रीको जो मनको हरती थी जिसकी कुछ इच्छा न थी हे विदुर उसकी इच्छा करते हुए ।

वाचं दुहितरं तन्वीं स्वयंभूर्हरती मनः ।
अकामां चकमेक्षत्तः सकाम इतिनः श्रुतम् ॥

अधर्ममें पिताकी बुद्धिको देखकर उनके पुत्र मरीचादिने उपदेश कर कहा

तमधर्मे कृतमतिं विलोक्य पितरं सुताः ।
मरीचि मुख्या मुनयो विश्रम्भात् प्रत्यबोधयन् ॥

कि हे पिता यह काम पहिले किसीने नहीं किया और न अन्य करेंगे आप कामको वशमें न कर बेटीके साथ प्रसंग करना चाहते हो।

नैतत् पूर्वैः कृतं त्वद्य न करिष्यंति चापरे ।
यत् त्वं दुहितरं गच्छेरनिह्यांगजं प्रभुः ।

मत्स्यपुराण अध्याय २ में लिखा है कि ब्रह्माजीने अपनी पुत्री पर मोहित होकर उसकों अपनी स्त्री बना देवताओंके सहस्र वर्ष प्रसङ्ग किया जिसके कारण उनके ऊपरकी ओर पांचवां शिर उत्पन्न होगया जिसको उन्होंने जटाओंसे ढंक सृष्टि रचनेको कहा जैसा कि-

तत्सर्वनाशमगमत् स्वसुतोपगमेच्छया ।
तेनोर्ध्ववक्त्रमभवत्पञ्चमं तस्य धीमतः ॥
आविर्भवज्जटाभिश्च तद्वक्त्रञ्चावृणत्प्रभुः ।

वामनपुराण अध्याय ४९में लिखा है कि यज्ञसे उत्पन्न कन्या को बहुत सुन्दरी देख ब्रह्माजी उसको मैथुनके लिये बुलाते हुए। और जिस महापापसे ही उनका शिर कटगया ।

तां दृष्ट्वाभिमतां ब्रह्मा मैथुनाया जुहावताम् ।
तेन पापेन महता शिरोशीर्यत वेधसः ॥

शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय ४९में लिखा है।

पुरा ब्रह्माविमोहेन सरस्वत्या रूपमद्भुतम् ।
दृष्टाजगामतांपश्चात्तिष्ठेति विह्वलः स्वयम् ॥
तद्वचनं तदा पुत्री श्रुत्वा कोपसमन्विता ।
उवाच किं ब्रवीषित्वं मुखेनाऽशुभभाषिणा ॥
ब्रवीषिचेदीदृशं वै विनाशी भव सर्वदा ।
तद्दिनां हि समारभ्य पंचमेन मुखेन च ॥

ब्रह्मवैवर्त—पुराण कृष्णखंड अध्याय ३५में लिखाहै जब ब्रह्मा ने ऐसा पाप विचारा तब ऋषिने ब्रह्मासे कहा कि ऐसे पापी नरक को जाते हैं जिसको सुन उन्हों ने योगद्वारा प्राण छोड़दिये जिसको सुन पुत्री ने भी प्राणों को त्याग दिया इस पर नारायण आये और दोनों को जीवित करदिया ॥

पश्यन्ते नरकंते च यावद्वै ब्रह्मणो वयः ।
ब्रह्माशरीरं संत्यक्तुं व्रीड़या च समुद्यतः ॥
योगेन भित्वा षट्चक्रं सर्वान्प्राणान्निरुध्य च ।
बभूव हृदि कृत्वैकं ब्रह्मालीनश्च ब्रह्मणि ॥
कन्या तातं मृतं दृष्ट्वा विलप्य च भृशं मुहुः ।
योगेन देहन्तत्याज सा प्रलीना च ब्रह्मणि ॥
नारायणो मदंशश्च कृपयागत्य सत्वरम् ।
ब्रह्माणं जीवयामास ब्रह्मज्ञानात्सुताश्चताम् ॥

विष्णुपुराण धर्मसंहिता—अध्याय १०में लिखा है कि ब्रह्मा पार्वतीके विवाहमें उनके चरणोंको देखकर स्खलित होगये जिससे बालखिल्य ब्रह्मचारी उत्पन्न हुए।

चतुर्वक्त्रश्च रक्तांगो गुरूणां सद्गुरु महान् ।
दीर्घायुर्जनकः प्राज्ञो वेदवेदांगपारगः ॥
गौर्यविवाहतैत्यादौ दृष्ट्वा प्रस्खलितोऽभवत् ।
यत्र ते बालखिल्यास्तु जाताः सद्ब्रह्मचारिणः ॥

ऐसाही गणेशपुराण—अध्याय ३३में लिखा है ।

श्रीमद्भागवत में लिखा है कि जब श्रीकृष्ण महाराज बनमें गाय चराने जाते थे तो एक दिन ब्रह्मा गायोंको चुरा कर ले गये।

पद्मपुराण पातालखंड अध्याय २० में लिखा है कि ब्रह्माजीने प्रजाओंको नाशयुक्त देखा इससे उनके तारनेके लिये अपने गण्ड-स्थलसे अनेक जल उत्पन्न करके पापनाशिनी गण्डकी नदीको बनाया । १४ ॥

पुरा दृष्ट्वा प्रजानाथः प्रजाः सर्वाणि पावनीः ।
स्वगण्डाविप्रुषोनेक पापघ्नीं सृष्टवानिमाम् ॥

और सृष्टिखण्ड अ० १७ से प्रकट होता है कि ब्रह्माजीने पुष्करमें यज्ञ किया उस समय सावित्रीजीके आनेमें देर हुई तब इन्द्र ने एक गोपकन्याको ला गान्धर्व विवाह कर यज्ञमें बिठलाकर कार्य्य किया। तिसके पश्चात् सावित्री देवी देवताओंकी देवियोंके साथ यज्ञ स्थलमें आई और उपरोक्त कार्य्यको देखकर उन्होंने कहा कि तुमने कामके वशीभूत होकर गोपकन्याको बिठलाकर हमको लज्जित किया भला अबमें किस भांति सखियोंको मुंह दिखलाऊंगी । तब ब्रह्माजीने कहा कि काल बीता जाता था और तुम्हारे आनेमें देर हुई तब इन्द्रने यह स्त्री लादी । विष्णु भगवान्‌ने अनुमोदन किया जिसके कारण हमने इसको ग्रहण किया । अब हमारे अपराधको क्षमा करो। अब हम तुम्हारा कोई अपराध न करेंगे तुम्हारे चरणों पड़ते हैं तब

उन्होंने ब्रह्माजीको शाप दिया कि जाओ आजसे तुम्हारी पूजा कार्तिककी पूर्णमासीके अतिरिक्त न होगी ।

नैवते ब्राह्मणः पूजां करिष्यंति कदाचन ।
ऋत तु कार्तिकीमेकां पूजां सांवत्सरीं तव ॥
करिष्यंति द्विजाः सर्वे मर्त्यानान्यत्र भूतले ॥
एतद्ब्रह्माण मुक्त्वाह शतक्रतुमुपस्थितम् ।

शिवपुराण विद्येश्वरीसंहिता अध्याय ६में लिखा है एकबार विष्णुसे अपने २ महत्वपर झगड़ा हुआ अर्थात् ब्रह्मा कहते थे हम सबसे प्रधान हैं । इसपर उन दोनोंमें घोरयुद्ध हुआ तब देवता महादेवजीके पास गये, तब शिवजी आकर दोनोंके बीचमें एक स्तम्भको इतना बढ़ाया जो आकाश और पातालमें पूर्ण होगया । इसके अनन्तर शिवने कहा कि तुम दोनोंमेंसे जो इसका अन्त देख आवेगा वही जगत्में सब देवोंमें बड़ा अर्थात् पूज्य समझा जावेगा । यह सुन ब्रह्मा ऊपरको विष्णु नीचेको गये जब सैकड़ों वर्ष जाते २ भी उनको पता न मिला तब विष्णुने आकर सत्य कह दिया कि मुझको इसका पता नहीं मिला और ब्रह्माजीने आकर झूठ बोला कि अन्ततक पहुंच गया । देखो फूल केतकीका उसके ऊपर रक्खा था तब महादेवजीने विष्णुजीसे कहा कि मैं तुमसे प्रसन्न हूं क्योंकि ईश्वरत्वकी इच्छा होनेपर भी तुमने झूठ नहीं बोला इसलिये आजसे तुम्हारी मूर्त्ति की पूजा जगत्में होगी ।

इतः परं ते पृथगात्मनश्च क्षेत्रप्रतिष्ठोत्सव पूजनं च ।

और ब्रह्माजीसे कहा कि तुमने मिथ्या बोला इस कारण तुम्हारी पूजा नहीं होगी ।

अथाह देवः कितवीविधि विगतर्कं धरम् ।
ब्रह्मस्त्वमर्हणाकांक्षीशठमी शत्वमास्थितः ॥

नातस्ते सत्कृतिर्लोके भूयात्स्थानोत्सवादिकम् ।

ब्रह्मवैवर्त्त—पुराण कृष्णजन्मखंड अध्याय ३२ में लिखा है कि मोहिनी कामातुर हो ब्रह्माके समीप गई ब्रह्माने इस कारण निषेध किया कि तू विष्णुकी प्रिया है ।

तब मोहिनीने ब्रह्माजीको शाप दिया कि जाओ तुम्हारी पूजा न होगी तब ब्रह्माजीने वैकुण्ठमें नारायणके पास जाकर सब वृत्तांत कह सुनाया तब नारायणजीने ब्रह्मासे कहा कि तुम गंगास्नान करो शाप दूर होजायगा आगे तुम्हारी पृथक् पूजा न होगी किन्तु अन्य देवताओंकी पूजाके साथ तुम्हारी पूजा होगी ॥

यद्वन्यदेवपूजायां तवपूजा भविष्यति ।

वाराहपुराण—अध्याय ११३ में लिखा है एक समय ब्रह्माजीने जंभाई लेते थे उस हयग्रीव नामक दैत्य ब्रह्माके मुखमें से वेदोंको निकालकर रसातलको लेगया ।

वेदेषु चैव नेष्टेषु मत्स्यो भूत्वा रसातलम् ।
प्रविश्यतान थोत्कृष्य ब्रह्मणे दत्तवानसि ॥

विष्णुलीला ।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तर खंड—अध्याय १५ में लिखा है विष्णु महाराज जालंधरकी स्त्रीके समीप उसका रूपबनाकर गये और उससे प्रसंगकर लक्ष्मीके प्रेमरससे अधिक सुखमाना और वृन्दाने वियोगका सब दुःख माधवसे दूर किया ।

ताम्बूलैश्च विनोदैश्च वस्त्रालंकरणैः शुभैः
अथ वृंदारिकादेवी सर्वभोगसमन्विता ॥

प्रियंगाढं समालिंग्य चुचुम्बरति लोलुपा ।
मोक्षादप्यधिकं सौख्यं वृंदामोहनसंभवम् ॥
येननारायणो देवो लक्ष्मीप्रेमरसाधिकम् ।
वृंदावियोगजं दुःखं विनोदयति माधवे ॥

जब वृन्दाको उनका कपट मालूम हुआ तब उसने शाप दिया कि जिस भांति मायाके रूपसे मैं मोहित हुई हूं उसी प्रकार आपकी स्त्रीको कोई मायासे तपस्वीरूप होकर हरेगा ।

अहं मोहं यथा नीता त्वया माया तपस्विना ।
तथा तव बधूं माया तपस्वी कोपिनेष्यति ॥

अध्याय १०३ । जब वृन्दा अग्निमें जल गई तो भगवान् बार-बार स्मरण कर चिताकी भस्मको रजके निकट ही स्थित होगये मुनि और सिद्धोंके समूहके समझाने पर भी शांतिको प्राप्त न हुए ।

ततो हरिस्तामनु संस्मरन्मुहुर्वृन्दाचिताभस्मरजोव-गुंठितः । तत्रैवतस्थौमुनिसिद्धसंघैः प्रबोध्यमानोपि ययौ न शान्तिम् ॥

सृष्टिखंड अध्याय ४ में लिखा है कि जब भगवान्ने समुद्र-मथन किया और अमृत निकला और उसको जब दैत्योंने लेलिया तब भगवान्ने एक स्वरूपा स्त्रीका रूप धारण कर दैत्योंको लुभाया जब वह मोहित होगये तो उस स्त्रीने कहा कि कमण्डलु हमको देदो मैं सदा तुम्हारे घरहीमें रहा करूंगी तब दैत्योंने उस रूपवती पर मोहित होकर उस अमृतके पात्रको देदिया तब वह स्त्री अमृतका पात्र देवताओंको देकर अंतर्द्धान होगई ।

मायया लोभयित्वा तु विष्णुः स्त्रीरूपसंश्रयः ।
अगत्य दानवान्प्राह दीयतां मे कमंडलुः ॥

युष्माकं वशगा भूत्वा स्थास्याभिभवता गृहे ।
तां दृष्ट्वा रूपसम्पन्नां नारीं त्रैलोक्यसुन्दरीम् ॥
प्रार्थयानास्सुनपुषं लोभोपहतचेतसः ।
दत्वा मृतं तदा तस्यै ततोपश्यन्त तेऽग्रतः ॥
ततः पपुः सुर गणाः शक्राद्यास्तत्तदामृतम् ।
उद्यतायुधनिस्त्रिंशा दैत्यास्तांस्ते समभ्ययु ॥

यही मत्स्यपुराण अध्याय २४९ में लिखा है ।

पाताखखंड—अध्याय ७५ में लिखा है कि एक समय ब्रह्मा नारदमुनिके साथ विष्णु के समीपगये और उनसे नारदके प्रश्नको कहा तब विष्णु महाराज ने ब्राह्मणसे कहाकि तुम इनको अमृतसर में स्नान कराओ ब्रह्माने ऐसाही किया वह स्नान करतेही अपूर्व स्त्रीरूप होगये ।

तत्क्षणात्तत्सरःपारे योषितांसविधेऽभवम् ॥
सर्वलक्षणसम्पन्ना योषिद्रूपातिविस्मिता ॥ ३१ ॥

जिनको देखकर बहुधा स्त्रियां वहां आकर पूछने लगीं कि तुम कौनहो? कहांसे आईहो? यह सुन वह विस्मित होगये। इतनेमें ललिता सखी आई और उसने चौदह अक्षर का मंत्र दिया । जिसको ग्रहण करतेही हम वहां पहुंचे जहां सनातन कृष्णचन्द्र थे । जिन्होंने मुझको देखकर कहा कि हे प्रिये ! यहां आओ व भक्ति से हमारे साथ आलिंगन करो । ऐसा कहेएक वर्षतक रात दिन क्रीड़ा करते रहे। उसके पीछे उन्होंने राधिका से कहा यह तुम्हारी प्रकृति है जो नारद रूपिणीस्त्री होकर आई है सो इसको अमृतसर में स्नान कराओ स्नान करतेही हम फिर नारद होगये और स्त्रीका रूप जातारहा और कृष्णके गुण गाने लगे ।

ततो निमज्जनादेव नारदोहमुपागतः ।
वीणाहस्तो गानपरस्तद्रहस्यंमुहुर्मुदा ॥

और अध्याय ७४ में विष्णु भगवान्‌के अवतार श्रीकृष्ण महाराज ने अर्जुनको स्त्री बना उनके साथ विहार कर फिर उनको अपने रूप में कर दिया।

राजा अम्बरीषकी पुत्री श्रीमतीके स्वयंवरमें नारद और पर्वत मुनिको धोखा देकर आप लजाना।

लिङ्गपुराण—अध्याय ५ में लिखा है कि राजा त्रिशङ्कुकी सती बड़ी पतिव्रता थी जिसको दशहज़ार वर्ष तक विष्णुकी सेवा करते व्यतीत होगये एक दिन एकादशीका व्रत और नारायण द्वादशीके दिन भगवान्‌के मन्दिरमें दोनोंने शयन किया। उससे नारायणने स्वप्नमें कहा कि तू क्या चाहती है उसने कहा कि मैं ऐसा पुत्र चाहती हूं कि जो आपका परमभक्त हो यह सुन एक फल उसको दिया रानी ने प्रातःकाल उठ सब वृत्तान्त राजासे कहा। फिर पतिकी आज्ञा पा फलको भक्षण करलिया और समय पूरा होनेपर पुत्र उत्पन्न हुआ। जिसका संस्कार प्रसन्नताके साथकर उसका नाम अम्बरीष रक्खा जो बड़ा विष्णुभक्त हुआ पिता त्रिशङ्कु अम्बरीषको राज्य दे परलोक सिधारा। अम्बरीष राज्यका भार मन्त्रियोंको दे तप करने गया एक २ हज़ार वर्ष तक ब्रह्मा, विष्णु, शिव स्वरूपसे तप करता रहा। इस बीच नारायणने इन्द्रका रूप धर ऐरावतपर चढ़ अम्बरीषके निकट आ कहा कि मैं इन्द्र हूं। वर मांग। राजाने कहा कि मैंने तेरी प्रसन्नताके लिये तप नहीं किया न तुझसे वर चाहता हूं मेरे स्वामी नारायण हैं जब उनकी कृपा होगी तब वर मांगूंगा तो हँसकर भगवान्‌ने अपना रूप प्रकट किया तब तो अम्बरीष भक्तिसे प्रणाम कर स्तुति करने लगा। जिसको सुन भगवान्‌ने कहा कि तेरी इच्छा हो सो वर मांग। तब राजाने कहा कि जैसे आप शिवभक्त हैं वैसा मैं आपका रहूं। सब जगत्‌को वैष्णव बनाऊं। राज्य और यज्ञ करूं।

तब भगवान्ने कहा कि ऐसा ही होगा। यह सुदर्शन, चक्र तेरे राज्यकी प्रत्येक प्रकारसे रक्षा करेगा यह कह भगवान् अन्तर्द्धान होगये। राजा अम्बरीष भी प्रसन्न हो भगवान्को प्रणामकर अपनी राजधानी अयोध्यामें आ धर्मराज करने लगा। घर २ भगवान्की पूजा वेदध्वनिसे होने लगी यज्ञोंकी धूम मच गई। आनन्दसे राज्य करते हुए कुछ काल व्यतीत होगया तब राजाके शुभलक्षणोंसे युक्त एक कन्या उत्पन्नहुई जिसके जन्मके समय राजाने बड़ा उत्सव मनाया और उसका नाम श्रीमती रक्खा। जब वह वरने योग्य हुई तो राजाको उसके विवाहकी चिन्ता हुई इतनेमें नारद और पर्वतमुनि आये जिनका राजाने बड़ा आदर और सत्कारकर आसनपर बिठाया। उन्होंने भी श्रीमतीको देखा तो मोहित हो राजासे पूछा कि यह किसकी कन्या है राजाने सब हाल कहा तब नारद और पर्वत मुनिने अपने २ मनमें मिलनेकी इच्छाकी फिर नारदजीने राजाको पृथक् लेजाकर कहा कि हमारे साथ इसका विवाह करदो इसी भांति पर्वत मुनिने अपना अभिप्राय प्रकट किया तब राजाने दोनों मुनियोंसे कहा कि श्रीमती तो एक है आप दोनों इसकी इच्छा प्रकट करते हैं फिर भला मैं किसके साथ विवाह करूं इसलिये अब मेरी यह इच्छा है कि पुत्री तुम दोनोंमेंसे जिसके साथ चाहे विवाह करले जिसको दोनोंने स्वीकार किया और कहा कि कल जब हम आवेंगे तब ऐसाही करना। इतना कह दोनों चलेगये। परन्तु थोड़ी दूर जाकर नारदने पर्वत मुनिका साथ छोड़दिया और विष्णुलोकको गये जहां विष्णुको प्रणाम कर कहा कि आपसे एकान्तमें मुझको कुछ कहना है, वह उठकर अलग होगये तब उन्होंने कहा कि अम्बरीषके श्रीमती नामी एक रूपवती कन्या है जिसको मैंने और पर्वतमुनि दोनोंने मांगा राजाने कहा कि पुत्री जिसको स्वीकार करे उसेही मैं देदूंगा कल स्वयंवर होगा इसलिये पर्वतका स्वरूप बन्दरकासा करदीजिये। हम आपके भक्त हैं भगवान्ने कहा कि ऐसा ही होगा। आप जाइये। नारदमुनि भगवान्को प्रणाम कर अयोध्या गये। इसी अवसरमें

पर्वतमुनि भी वहां पहुंचे और भगवान्से एकान्तमें प्रार्थनाकी कि नारदका मुख लंगूरकासा दीख पड़े क्योंकि हम आपके भक्त हैं भगवान्ने पर्वतमुनिकी प्रार्थना सुनकर कहा कि ऐसा ही होगा तुम भी अयोध्याको जाओ परन्तु यह समाचार नारदजीसे न कहना। पर्वतमुनि अयोध्यामें आये जहां उत्तम प्रकारसे सभामण्डप बनाया था कन्या भी सब प्रकारसे शृंगार किये युवतियोंके संग स्वयंवर सभामें आई जहां दोनों मुनि भी आये। उनको आसन दिया। फिर श्रीमतीसे कहा कि इन दोनोंमेंसे जिसकी इच्छा हो उसके गलेमें जयमाल डालदे। राजाकी आज्ञा पाय दोनों मुनियोंके समीप जाकर देखा तो एकका मुख बन्दर और दूसरेका लंगूरसा दीख पड़ा। तब उसने जानाकि यह दोनों वे मुनि नहीं हैं। हां तीसरा आदमी १६ वर्षकी अवस्थाका जो श्यामवर्ण सब भूषणधारण किये, दीर्घ भुजा, ऊंची छाती, कमलके से नेत्र अति सुन्दर दीख पड़ा। तब उन दोनोंसे पूछने पर जान पड़ा कोई मायावी पुरुष है हमारी जानमें वह बड़ा तस्कर विष्णु इस उत्तम कन्याको हरने तो नहीं आया। जो उसके मनमें कपट न होता तो हम दोनोंके मुख बन्दर और लंगूरके क्यों बनाता। इतनेमें राजाने कहा कि महाराज आपके मुख देख कन्या भयभीत होती है तब दोनोंने कहा कि तेरा ही सब प्रपंच है इसलिये तू कहदे कि एकके गलेमें माला डाल दे। राजाने कहा श्रीमती फिर उठी उसको फिर वही तीसरी मूर्त्ति सुन्दर दीख पड़ी और यह दोनों वैसे ही दीखे। तब श्रीमतीने निर्भय हो उस तीसरेके कंठमें माला डालदी और वह दिव्य पुरुष कन्याको अपने संग ले अंतर्धान होगया। तब तो सभाके लोग कहने लगे कि श्रीमतीने भगवान्का आराधन बहुत किया इसलिये विष्णु भगवान् उसके पति हुये। फिर दोनों मुनि अपना तिरस्कार देख, विष्णुलोकको गये। मुनियोंको आता जान श्रीमतीसे कहा कि तुम गुप्त होजाओ। तब वह छिपगई। दोनों मुनि वहां पहुंचे प्रणाम किया। भगवान्ने आदरपूर्वक आसन दिया। फिर नारदजीने कहा कि आपने हमारे साथ कपट किया और उस कन्याको आपने

हरलिया भगवान्‌ने कानोंपर हाथधरे और कहा कि हे मुनीश्वरो! मुझको इस वृत्तान्तकी ख़बर भी नहीं कि आप दोनों क्या करते फिरते हैं। यह सुन नारदजीने भगवान्‌के कानमें कहा कि हमारे कहनेसे आपने पर्वतका मुख तो बन्दरकासा बनादिया परन्तु हमारा मुख लंगूरकासा क्यों बनादिया। तब उन्होंने नारदके कानमें कहा कि तुम्हारे पीछे पर्वत मुनि आये और तुम्हारे समान उन्होंने हमसे प्रार्थनाकी तब हमने आपका लंगूरकासा बना दिया इतना कह भगवान् बोलेकि हेमुनीश्वरो हमको आप दोनों तुल्य ही हैं इसलिये दोनोंका वचन मानना पड़ा इसमें हमारा कौन अपराध है। यह सुन नारदने कहा कि जो आप ऐसा कहते हैं तो वह दोनों भुजाओंमें धनुष बाण धारे पुरुष कौन था जो दोनोंके बीचमें श्रीमतीको दीख पड़ा और उसको उड़ालाया। तब भगवान्‌ने कहाकि महाराज अनेक मायावी पुरुष जगत्‌में फिरते हैं क्या जाने श्रीमतीको कौन हरलाया हमतो शपथ खाकर कहते हैं कि आप दोनोंकी आज्ञासे दोनोंके मुख बनाये और हमारी चार भुजा हैं शंख, चक्र, गदा, पद्मधारते हैं, यह भी आप जानते हैं। कि हमारी कुछ इच्छा उस कन्याके लिये नहीं थी। इस भांति भगवान्‌के वचन सुन दोनों मुनि बोले कि ठीक है इसमें आपका कुछ दोष नहीं यह सब उस दुष्ट राजाकी माया है। इतना कह दोनों भगवान्‌को प्रणाम कर वहांसे चलदिये। फिर राजाके समीप आये क्रोधसे कहने लगे तू बड़ा दुष्ट है तैंने हम दोनोंको बुलाया और कन्या किसी तीसरेको देदी इसलिये तमोगुण तेरी बुद्धिको ढाक लेगा जिससे तू अपनी आत्माको न जानेगा। इतना कहते ही एक अंधकारका पुंज वहां उत्पन्न हुआ और राजाकी ओरचला तब सुदर्शन चक्रने प्रकट हो उस अंधकारको हटाया और वह अन्धकार नारद और पर्वतकी ओर चला और सुदर्शनचक्र भी दोनों मुनियोंके पीछे लगा मुनि भयभीत हो वहांसे भागे लोकालोक पर्वत पर्यन्त भागते फिरे परन्तु सुदर्शन चक्र और उस अन्धकारने उनका पीछा न छोड़ातब तो अतिव्याकुल हो भगवान्‌की शरणमें गये और कहा कि हे

प्रभो ! हमारी रक्षा करो। राजकन्याके निमित्त हमारी यह दुर्दशा हुई। तब भगवान्‌ने विचारा कि यह दोनों हमारे भक्त हैं और अम्बरीष भी हमारा ही भक्त है इसलिये इनकी तीनोंकी रक्षा उचित है यह विचार सुदर्शनचक्र और अन्धकारको निवारण किया और अन्धकारसे कहा कि सुदर्शनचक्र हमारी आज्ञासे राजाकी रक्षा करता है इसलिये यह निष्फल नहीं होसक्ता और ऋषि शाप भी वृथा न होना चाहिये इसकारण अम्बरीषके वंशमें बड़ा धर्मात्मा राजा दशरथ होगा उसके पुत्र हम होंगे और हमारा नाम राम होगा और हमारी दक्षिण भुजा भरत, वाम भुजा शत्रुघ्न, और शेषका अवतार लक्ष्मण, ये तीन हमारे भ्राता होंगे तब हमारी भार्य्या सीताको रावण हरेगा उससमय तू हमारे समीप आजाना हम तुझको ग्रहण करेंगे। अब मुनियोंका पीछा छोड़दे इतना भगवान्‌का वचन सुन अन्धकार नाश को प्राप्त भया और सुदर्शनचक्र अपने स्थानको गया दोनों मुनि भी बड़े भयसे छूटे। भगवान्‌को प्रणामकर वहांसे चले और परस्पर कहने लगे कि अब हम जन्मपर्य्यन्त किसी कन्यासे विवाहकी इच्छा न करेंगे। कुछ कालके पीछे नारद पर्वतपर विष्णु भगवान्‌की सब माया जान गये। भगवान्‌से विमुख हो शिवभक्त होगये।

नारदः पर्व्वतश्चैव चिरं ज्ञात्वा विचेष्टितम्।
मायां विष्णोर्विनिन्द्यैव रुद्रभक्तौ बभूवतुः ॥१५६॥

ब्रह्मवैवर्तपुराण—प्रकृतिखण्डमें लिखा है कि विष्णुमहाराज की लक्ष्मी, गङ्गा और सरस्वती यह तीन स्त्रियां थीं। एकवार गङ्गा क्षणमात्र विष्णुको देखकर हँसी और कटाक्ष किये जिसको देख सरस्वतीने गंगाको शाप दिया कि तू नदीरूप होजा। इसीप्रकार गंगाने सरस्वतीको शाप दिया कि कलियुगमें तू नदीरूप होजा। इतनेमें विष्णुजी जो प्रथम वहांसे उठकर चलेगये थे। आये और सबसे कहा कि बहुतसी स्त्रियोंसे संसारमें निन्दा होती है और वह नरकको जाता है। इसलिये अब एक सुशीला लक्ष्मी ही को अपने पास रहने

दूंगा। गंगा तू महादेव और सरस्वती तुम ब्रह्माके पास जाओ। तब गंगाने विष्णुसे कहा कि आपने बिना अपराधके ही मुझको त्यागन किया इसलिये मैं अपने शरीरको त्याग दूंगी और तुम निर्दोषीके मारनेवाले कहलाओगे और जो मनुष्य निर्दोषी स्त्रीको त्यागता है वह कल्पभर नरकमें रहता है।

निर्दोषकामिनी त्यागं करोति यो जनाभवे।
सयाति नरकं कल्पं किं ते सर्वेश्वरस्य वा ॥७३॥
ब्र० अ० ६॥

देवीभागवत—स्कन्द ९ अध्याय २३ में लिखा है कि महादेव जी का शङ्खचूड़ दैत्यसे संग्राम होरहा था और दोनों सौ वर्षतक संग्राम करते रहे परन्तु एक भी न हारा उससमय विष्णु वृद्ध ब्राह्मण का रूप धरकर शङ्खचूड़के पास गये और कहा कि आप सब सम्प्रदायोंके दाता हैं। मुझको एक वस्तुकी इच्छा है तुम प्रथम देनेकी प्रतिज्ञा करलो। दैत्यने करली। तब वृद्ध ब्राह्मणने कहा हम कवच चाहते हैं उसने देदिया। फिर विष्णुमहाराजने शङ्खचूड़का स्वरूप बना उसकी स्त्री तुलसीके निकट जा प्रसङ्ग किया।

शंखचूडस्य रूपेण जगाम तुलसींप्रति।
गत्वा तस्यां मायया च वीर्याधानं चकारसः॥

श्रीमान् और भी सुनिये मुर नाम दैत्यसे जब आप संग्रामसे हार पहाड़की एक गुफा मे छिपकर सो रहे तिसपर दैत्य पहुंचा इनकी खोजमें था इतनेमें विष्णु महाराजके शरीरसे एक कन्या उत्पन्न होगई और उसने मुरको मारडाला। इतनेमें इनकी नींद गई जागे। मुरको मरा देख पूछने लगे इसको किसने मारा। कन्याने कहा मैंने तब उसको प्रसन्न हो वरदान दिये॥ कहिये यही सर्वशक्तिमानता के कर्तव्य हैं तिसपर इनके कानके मैलसे मधुकैटभ नाम दो दैत्य भी उत्पन्न हुये ये क्या यह हँसी नहीं है।

श्रीमान् पंडितजी पुराणों में लिखा है कि समुद्र मथनके समय असुरोंसे अमृत देनेकी प्रतिज्ञाकी और असुरको अमृत पीते देखा तो चक्रसे उसका सिर काटडाला। वामनरूप धारण कर राजा बलिसे यज्ञ करने के लिये अग्नि की रक्षाके अर्थ तीन पैर पृथ्वी कुटिया बनाने को मांग सब पृथ्वी लेली।

श्रीमद्भागवत स्कंद १० उत्तरार्द्ध अध्याय ८८ में लिखा है कि एक बकासुर दैत्यने शिवजी की आराधना कर शिवको प्रसन्न कर यह वर पालिया कि मैं जिसके शिर पर हाथ धरूं वह तुरंत भस्म हो जाय। दैत्यने पार्वती के लेनेकी इच्छा कर शिवजी के शिर पर हाथ धरना विचारा यह जान वह सब ओर भागेपर कहीं किसी ने रक्षा नकी तब वैकुंठनाथ के पास गये तब वह उठ दैत्य के पास गये और कहा कि यदि शिव ऐसा वर देने वाला सच्चा है तो दक्षसे शापित क्यों हुए हमतो यह बात झूठी समझते हैं यदि सच्ची है तो प्रथम अपने शिर पर हाथ रख कर देखो यहसुन ज्योंही उसने अपने सिर पर हाथ धरा त्यों ही वह भस्म हो गया कहिये यह काम साक्षात् परमेश्वर को करना चाहिये जो शिवके लिये झूठ बोला और उससे विश्वासघात किया॥

लिङ्गपुराण—अध्याय ९६में लिखा है कि प्रह्लादकी रक्षाके लिये जब विष्णु भगवानने नृसिंहावतार धारणकर हिरण्यकश्यपको मारा उससमय उनको बड़ा ही क्रोध था इसकी शान्तिके लिये देवतोंने स्तुतिकी परन्तु शान्ति न हुई तब वीरभद्रने आकर बहुत कुछ स्तुति की तब शान्ति न हुई वरन् वीरभद्रको मारनेके लिये उठे उसीसमय शिव महाराजने शरभपक्षीका रूपधारणकर अपने पञ्जे और चोंच और पङ्खोंसे नृसिंहको आकाशमें उठाकर लेगया खूब पटक २ मारा तब देवतोंने बहुत स्तुतिकर कहा कि आज छोड़दो जैसा कि—

उत्क्षिप्योत्क्षिप्य संगृह्य निपात्य स निपात्य च।
उड्डीयोड्डीय भगवान् पक्षाघातविमोहितम्॥

हरिं हरन्तवृषभं विश्वेसानंतमशिवरम् ।
अनुयान्ति सुरः सर्वे नमो वाक्येन तुष्टुवुः ॥

महादेवलीला ।

श्रीमहाराज महादेवकी लीलाका वर्णन करना भी कठिन है देखिये पद्मपुराण सृष्टिखण्ड अ० १७ में लिखा है कि ब्रह्माजीका यज्ञ होरहा था तो महादेवजी यज्ञशालामें भिक्षा मांगनेके लिये यज्ञसूत्र धारण किये वा एक बड़ीभारी खोपड़ी हाथमें लिये ऋत्विज्के समीप आकर बैठगये। तब वेदवादी ब्राह्मणोंने उनसे कहा कि तुम ऐसा निन्दित भेष बनाये यहां यज्ञशालामें कैसे चले आये तब उनको बहुत धुधकारा वा निन्दा की, और खेदा भी पर वे वहांसे न उठे। तब हँसकर महादेवजी उन ब्राह्मणोंसे बोले कि हे ब्राह्मणो ! सबको संतुष्ट करते ब्रह्माजीके यज्ञमें हमको छोड़ और कोई नहीं निकाला जाता हम कैसे निकाले जाते हैं तब ब्राह्मणोंने कहा कि अच्छा भोजन करलो तब चले जाना उन्होंने कहा अच्छा तब लाकर अन्न दिया। उन्होंने कमलमें धरकर भोजनकर ब्राह्मणोंसे कहा कि हम अब स्नान के लिये पुष्करको जाते हैं वह चले गये। तब ब्राह्मणोंने कहा कि कपाल यहां ही धरा है। हमलोग क्योंकर कार्य्य करें क्योंकि इसके रहनेसे अपवित्रता होती है। तब उन ब्राह्मणोंमेंसे एकने उठाकर बाहर फेंकदिया तब उसको दूसरा और दिखलाई दिया था फिर तीसरा दिखलाई दिया उसको फेंका इसी प्रकार हजारतक फेंके। जब अन्त न मिला तब सब पुष्करमें स्तुति करनेके लिये गये देखा कि महादेवजी स्नानकर कुछ मन्त्र जपरहे थे। सबने महादेवजीकी स्तुति की तब प्रसन्न होकर कहा। कि जाओ यज्ञ करो हमने कपाल उठालिया और ब्रह्मासे कहा कि तुमभी कुछ वर मांगो। तब ब्रह्माने कहा कि हम यज्ञमें दीक्षित हैं हमी सबको देते हैं चाहे सो आपही मांगलीजे। तब महादेवजीने कहा कि अच्छा किसी समय हमी आ-

पसे मांगलेंगे। इतना कह सब चलेगये। जब मन्वन्तर बीतगया और महादेवजी घूमते २ दूसरे मन्वन्तरमें वहां पहुंचे तो ब्रह्मा यज्ञ कररहे थे तब फिर उसी भेषमें नग्न अपने गुप्त स्थानको बायें हाथसे थामे ब्रह्माजीकी सभामें आये तब सब उनको देखकर हंसने लगे कोई उन्मत्त समझ मिट्टी धूल फैंकने लगे। किसीने पकड़ा किसीने जटा पकड़कर घसीटा। किसीने कहाकि यह व्रत तुमको किसने सिखलाया है। देखो यहां सुन्दर स्त्रियां बैठी हैं तिसपर तुम इस भांति चले आये हो। तब महादेवजीने कहा कि हमारा शिश्न तो ब्रह्माका रूप है, और स्त्रियोंके गुप्तस्थान सब जनार्दनके रूप हैं। तुमलोग हमारा वीर्य्य हो, फिर हमको वृथा क्यों क्लेश देते हो हमीने पुत्र उत्पन्न किया है व उस पुत्रमें हमी भी उत्पन्न हैं। ६३। ६४।

शिश्नंमे ब्रह्मणो रूपं भगं चापि जनार्दनः।
उप्यमानामिदं वीजं लोकः क्लिश्नाति चान्यथा॥
मयायं जनितः पुत्रो जनितोनेन चाप्यहम्।
महादेवकृते सृष्टिः सृष्टाभार्या हिमालयं॥

इसीसे हमारी की हुई सृष्टि है व हमीने भार्य्या हिमालयके यहां उत्पन्नकी उसमें उमा रुद्रोंको दी। बताओ वह किसकी कन्या है। तुम सब इसबातको भी जानलो कि हमारी स्त्रीको ब्रह्माने नहीं उत्पन्न किया न विष्णु भगवान्‌ने यह भी जानलोकि हमीने ब्रह्माका शिर काटडाला था फिर तुमलोग ब्रह्माकी उपासना कैसे करते हो और हमको मारते हो। इतना कहनेपर भी ब्राह्मणोंने शिवका मारना बन्द नहीं किया। तब शंकरने फिर कहा तिस पर और भी तंग किया जिसपर शिवजीने उनको शापदिया कि कलियुगमें वेदवर्जित होजाओगे बड़ी २ जटा रखाओगे यज्ञ कर्मसे भ्रष्ट होजाओगे। व पर स्त्रियोंके संग भोग करोगे अग्र माता पितासे रहित होजाओगे तो वेश्याओंकी दूतता करोगे! किसी पुत्रको अपने पिताका धन न मिलेगा और न किसीका पुत्र पण्डित होगा। रुद्रके शिवालयकी भिक्षा

लेंगे शूद्रोंके श्राद्धमें भोजन करेंगे। परस्पर विरोध रहेगा बहुधा धर्म रहित होजायंगे और जिन ब्राह्मणोंने इनको दुःखी नहीं किया उनके घरोंमें धन, धान्य पूर्ण रहेगा। घरकी स्त्रियां सुशीलादि गुणोंसे युक्त होंगी ऐसा कह वह अंतर्द्धान होगये।

दण्डैश्चापि च कीलैश्च उन्मत्तवेषधारिणम्।
पीड्यमानस्ततस्तैस्तु द्विजैः कोपमथागमत्॥
ततो देवेनते सप्ता यूयं वेदविवर्जिताः।
ऊर्ध्वजटाः क्रतुर्भ्रष्टाः परदारोपसेविनः॥
वेश्यायां तु रता द्यूते पितृमातृविवर्जिताः।
न पुत्रः पैतृकं वित्तं विद्यांवापि गमिष्यति॥
सर्वे च मोहिताः सन्तु सर्वेन्द्रिय विवर्जिताः।
रौद्रीभिक्षां समश्नंतु परपिंडोपजीविनः॥
आत्मानं वर्तयंतश्च निर्ममा धर्मवर्जिताः।
कृपार्यितातुर्येर्विप्रैरुन्मत्ते मयि सांप्रतम्॥
तेषां धनं च पुत्राश्च दासीदासमजाविकम्।
कुलोत्पन्नाश्च वै नार्यो मयि तुष्टे भवन्विह॥
एवंशापं वरं चैव दत्वां तर्द्धानमीश्वरः।

पद्मपुराण सृष्टिखण्ड अ० ५ में दक्षने पार्वतीसे कहा है कि जिस कारण तुम्हारे पतिका निमन्त्रण हमने नहीं किया।

सुनो एक तो वे मनुष्यकी खोपड़ी हीको पात्र बनाये लिये रहते हैं, गजचर्मसे ओढ़ते, चिताकी भस्म लगाते, त्रिशूल धारण करते, दण्ड लिये रहते, नङ्गे सदा रहते, श्मशानभूमिमें निवास करते, अङ्गोंमें विभूति लगाते कि कोई भी अङ्ग बाक़ी न रखते। व्याघ्रका चर्मसे ओढ़ते हैं। हाथीका भी ऐसा चर्मसे ओढ़ते हैं, जिससे रक्त

बिन्दु टपकते रहते हैं मरे हुए मनुष्योंकी कपालोंकी माला तो गलेमें धारण किये ही रहते हैं।

हाथमें एक मनुष्यकी मांजर बिना मांसकी रहती है। एक कन्था ऊपरसे और ओढ़े रहते जिसमें धधका अग्नि प्रज्वलित रहता है। सर्पका लँगोट बनाय अपना आच्छादित करते। सर्पोंके राजा वासुकीजीको ही यज्ञोपवीत बनाये रहते। फिर ऐसा रूप अमंगल बनाये पृथिवीपर घूमा करते यह भी नहीं कि कहीं छिपकर बैठें आप तो आप। अपने संग हज़ारों भूत, प्रेत, पिशाच, डाकिनी, ब्रह्म राक्षसादि भी सब नङ्ग धड़ङ्ग व त्रिशूल धारण किये तीन नेत्रधारी सदा गाते बजाते और नाचते रहते हैं। ऐसे ही और भी सब ख़राब ही वेश तुम्हारे पतिजी किये रहते हैं। उनको देखकर हमको लज्जा होती है। कि लोग कहेंगे इनके ऐसे ही दामाद हैं फिर वे यहां सब देवताओंके निकट कैसे बैठ सके हैं इसप्रकार वेष बनाये वे किसी ऐसे स्थानपर बैठनेके योग्य कब हैं वत्से! इन्हीं सब दोषोंके कारण व सब लोगोंकी लज्जासे तुम्हारे पतिको निमंत्रण नहीं दिया।

येनाद्यकारणेनेह पतिस्तेन निमंत्रिता।
कपालपात्र धृकवर्मी भस्मावृततनुस्तथा॥
शूलीमुण्डी च नग्नश्च श्मशने रमते सदा।
विभूत्यांगानि सर्वाणि परिमार्ष्टि च नित्यशः॥
व्याघ्रचर्मपराधीनो हस्तिचर्मपरिच्छदः।
कपालमालां शिरसि खट्वांगं च करेस्थितं॥
कट्यांवैगोनसंवध्वा लिंगेऽस्थांवलयं तथा।
पन्नगानां तु राजानमुपवीतं च वासुकिम्॥

दक्षके यज्ञको शिवका विध्वंस करना।

दक्षके यज्ञमें जो देवता और मुनि थे सबको शिवजीने दग्धकिया सतीके वियोगसे खिन्न होय दक्षका यज्ञ नाश करनेकी आज्ञा शिवजीने वीरभद्रको दी वह शिवजीकी आज्ञा पाय अपने रोमोंसे करोड़ों गण उत्पन्न कर सबको साथ ले, रथपर बैठ ब्रह्माजीको सारथी बनाया दक्षके यज्ञको जाते भये, कनकखल में दक्षका यज्ञ होरहा वहां जाकर कहा देवता मुनियों सहित तेरे नाशको मुझे शिवजीने भेजा है। इतना कह यज्ञशालामें आग लगवादी सब गण क्रोधकर यज्ञस्तंभोंको उखाड़ने लगे। इन्द्रकी भुजाका स्तंभ चन्द्रमाको मारगिराया फिर वीरभद्रने इन्द्रका शिर काट लिया अग्निके दोनों हाथ छेदन कर जिह्वा भी खैंचली यमका दंड छीन माथेमें लात मारी विष्णु और वीरभद्रका युद्ध हुआ तब उन्होंने हज़ारों नारायण उत्पन्न किये वे सब वीरभद्रके साथ युद्ध करनेलगे। वीरभद्रने भी उन सब नारायणोंको शस्त्रोंसे हटाय एक गदाका प्रहार विष्णु भगवान्की छातीमें ऐसा किया कि मूर्च्छित हो भूमि पर गिरे और थोड़े ही कालमें सम्भलकर उठे और अति क्रोधकर वीरभद्रके मारनेके अर्थ सुदर्शन चक्र उठाया परन्तु वीरभद्रने चक्र सहित उनको स्तंभन कर दिया और अति तीक्ष्ण बाणसे विष्णुभगवान्का मस्तक छेदन करदिया और उस मस्तकको अपने पवनसे उठाकर आहूनीय नाम अग्निके कुंडमें गिरादिया। इस भांति क्षणमात्रमें यज्ञशाला दग्ध करदी। कलश फोड़ दिये स्तूप उखाड़ डाले और यज्ञके सभासद् मार दिये तब यज्ञ भी भयभीत हो मृगका रूप धारणकर आकाशकी ओर भागा परन्तु वीर भद्रने एक बाणसे उसका भी शिर उड़ादिया। धर्म, प्रजापति, कश्यप बहुत पुत्रों करके युक्त अरिष्टनेमि और अंगिरा मुनि कृशाश्व और जो २ इधर उधर भागते हुये देख पड़े सबके मस्तकोंको पादसे ताड़न कर गिराया। सरस्वती और देवमाताकी नासिका अपने तीक्ष्ण नखोंसे उखाड़ली दक्ष प्रजापतिका शिर काटकर अग्निमें दग्ध करदिया। इस प्रकार क्षण भरमें उस दक्षके

यज्ञ वाटको श्मशानके तुल्य करदिया और अति क्रोधसे गरजने लगे। तब हाथजोड़ ब्रह्माजी प्रार्थना करने लगे। कि हे वीरभद्रजी आपने अपने यज्ञका नाश किया। देवता और मुनि मार दिये। अब आप क्रोधको शांत करें अपने गणोंको भी रोकें। यह ब्रह्माजीका वचन सुन वीरभद्र शांत भये और अपने सब गणोंको भी चारों ओरसे बुलालिया इस अवसरपरमें नन्दी आदि गणोंको साथ ले श्रीमहाराज शिवजी भी वहां आये। उनको देख ब्रह्माजीने बहुतसी स्तुतिकी और शिवजीको प्रसन्न भयेजान यज्ञमें मारे गये देवता और मुनियोंको जीवदान मिलनेके लिये प्रार्थनाकी। श्रीमहादेवजीने जो २ यज्ञमें मारे गये और जिनके अंग भंग होगये थे सबको पहिलेकी भांति करदिया और जीवदान दिया। सरस्वती और देवमाताकी नासिका ठीक करदी। इन्द्र, वरुण, विष्णु और दक्षका शिर लगादिया। परन्तु दक्षका पूर्व शिर अग्निमें दग्ध होगया था। इसकारण यज्ञके पशुका मस्तक काट दक्षके लगाया दक्ष भी फिर जीवदान पाय हाथजोड़ शिवजीकी स्तुति करने लगे उसकी स्तुतिसे प्रसन्नहो शिवजीने दक्षको अपना गण बनाया और भांति २ के वर दिये। नारायण, ब्रह्मा, इन्द्र आदि सब देवता मुनि परमेश्वरकी स्तुति करने लगे शिवजी भी प्रसन्न हो उनको अभीष्ट वरदे अंतर्द्धान होगये और देवता भी चलेगये।

शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय ११ में लिखा है कि जब पार्वती हिमालयपर महादेवजीकी सेवा करती थीं उसी समय तारकासुर ब्रह्माजीसे वर पाकर राजा हुआ जिससे सम्पूर्ण देवताओंको क्लेश हुआ तब वह ब्रह्माजीके समीप गये और वृत्तांत कह सुनाया उन्होंने कहा कि इसने मेरी तपस्या की है। मैंने इसको वर कि जब तक तू नहीं तरेगा तब तक महादेवजीके वीर्य्यसे पुत्र उत्पन्न न होगा। इसलिये तुम सब इसी उपायको करो तब इन्द्रने कामदेवको बुलाकर सब वृत्तांत कहा जिसने हिमालय पर जाकर सबको पुकार कार्य्य किया। जब पार्वती इनकी पूजाके लिये गई तो कामसे पीड़ित म-

हादेवजीने अपने हाथको उसके वस्त्रांचल धारण करनेको बढ़ाया तब तक वह दूर चलीगई ।

इत्येवं वर्णयित्वातु तपसो विरणमह ।
हस्तं वस्त्रांचले यावत्तावच्च दूरतो गता ॥

स्त्रियोंके स्वभावसे वह सुन्दरी लज्जित होकर अपने अंगोंको देखती और प्रकाश करती चली। इस प्रकार पार्वतीकी चेष्टा देखकर शिवजी मोहको प्राप्त हो गये और कहने लगे जो मैं इसका आलिंगन करूं तो कैसा सुख होगा ।

एवं चेष्टांत दृष्ट्वा शंभुर्मोहमुपागमत् ।
यद्यालिंगनमेतस्याः करोमि किं पुनः सुखम् ॥

फिर क्षणमात्र विचार कर कहा कि मैं किसप्रकार मोहको प्राप्त होगया जो मैं ईश्वर होकर पराये अङ्गका स्पर्श करना चाहता हूं फिर दूसरा क्षुद्रपुरुष क्या करेगा ऐसे ज्ञानको प्राप्त हो दृढ़ कटिबन्धनको शिवजी रचते हुए कि कहीं ईश्वर भ्रष्ट होते हैं क्या ? ॥ १४ ॥ १५ ॥

क्षणमात्रं विचार्यैव किमहंमोहमागता ।
ईश्वरोऽहं यदीच्छेयं परांगस्पर्शनंमुदा ॥
तर्हि कोऽन्यतमः क्षुद्रः किं किं नैवकरिष्यति ।
एवं विवेकमासाद्य पर्यंकबंधनं दृढ़म् ॥
रचयामास सर्वात्मा ईश्वरः किंपतेदिह ।

और अध्याय १४में लिखा है कि शिवजी महाराज पार्वतीके अन्तर्भावकी परीक्षा लेनेके लिये वहां गये जहां पार्वतीजी तपस्या कररही थीं शिवजीने एक वृद्ध स्वामीका रूपधारण करलिया था। जब यह वहां पहुंचे पार्वतीने अतिथिका बड़ा सत्कार किया तब इन्होंने पूछा कि ऐसा घोर तप किस लिये करती हो तब पार्वतीजी

ने सखी द्वारा कहा कि शिवको पति बनानेके लिये, तब अतिथिने शिवकी सबप्रकारसे बुराई की। जिसको सुन पार्वतीने उसको बहुत बुरा भला कहकर अनेक प्रकारसे शिवकी प्रशंसा की। जिसको सुन अतिथिने शिवरूपमें होकर कहा कि मैं तुमसे प्रसन्न हूं जो चाहो सो मैं करनेको उपस्थित हूं चलो घर चलो। पार्वतीने कहा कि मैं पिता के घर जाती हूं और वहांसे विवाह कर आपकी सेवा करूंगी तब शङ्करने कहा जैसी तुम्हारी इच्छा हो। वैसा ही होगा। इतना कह अन्तर्धान हो काशीमें जाकर विचार करने लगे और पार्वतीके विरह में उत्कण्ठित हो सप्तऋषियोंका स्मरण किया ॥ १० ॥

इत्येवं वचनं श्रुत्वा शिवोऽपि च शिवां तदा ।
उवाच वचनं त्वं च यदिच्छसि तथेति तत् ॥
इत्युक्त्वां तद्देशं सुगत्वा काशीं विचारयन् ।
सस्मर च ऋषीं सप्त विरहाविष्ट मानसः ॥

लिङ्गपुराण—अध्याय २९में शिवका अतिथि बन सुदर्शन नाम महात्माकी स्त्रीके साथ एक घृणित व्यवहारसे उसकी परीक्षा करना लिखा है।

महाभारत सौप्तिक पर्वमें लिखा है कि कुरुक्षेत्रकी लड़ाईके पश्चात् जब युधिष्ठिर और उसके संगी जो रणमेंसे बच निकले थे अपने डेरे पर आये जहां रातभर रखवारी करनेकी प्रतिज्ञा कर रक्षाके वास्ते रहे पर जब अश्वत्थामा जो उनका शत्रु था रातको गया और महादेवजीकी विनतीकी तो उन्होंने उसको अपना खड्ग दिया जिससे उसने द्रौपदीके पुत्रोंको मारडाला।

महादेवजीकी माया।

देवी भागवत प्रथम स्कंद अध्याय १८ में लिखा है। एक बार सनकादि ऋषि महादेवके दर्शनोंके लिये वहां गये जहां शिवजी

सदा रहते थे। पहुंच कर देखा तो महादेव और पार्वती क्रीड़ा करनेमें आसक्त हैं। उन्हें देख पार्वतीजीने लज्जित हो चट पट अपने पट धारण किये। ऋषि लोग यह दशा देख कर बदरिकाश्रममें श्रीनारायणके दर्शनको चले गये तब अति लज्जित पार्वतीको देख महादेवजी ने शाप दिया कि तू क्यों लज्जित होती है आगेसे हमको छोड़ जो कोई जावेगा वह तुरंत स्त्री हो जावेगा।

अद्य प्रभृति यो मोहात्पुमान्कोपि वरानने।
वनं च प्रविशेदेतत्सवैयोषिद्भविष्यति ॥ २२ ॥

इसके अनुकूल वैवस्वत मनुका पुत्र सुद्युम्न नाम राजा बिना जाने, एक दिन शिकार खेलनेको गया वहां जाते राजा स्त्री और घोड़ा घोड़ी हो गया।

सुद्युम्नस्तु तदज्ञानात्प्रविष्टः सचिवैः सह।
तथैवस्त्रीत्वमापन्नस्तैः सहेति न संशयः ॥ २४ ॥

फिर वह लज्जाके कारण अपने राज्यको वापिस नहीं गया और स्त्री हो जाने पर उसका नाम इला हुआ। एक दिन चन्द्रमा और बुद्ध वहां पहुंचे। तब बुद्धने उस रूपवती स्त्रीको देख उसकी इच्छा की इसी प्रकार इलाने भी चाहा कि यह हमारे पति हों निदान दोनोंका समागम हुआ जिससे पुरूरवा नाम पुत्र उत्पन्न हुआ॥

संयोगस्तत्र संजातस्तयोः प्रेम्णा परस्परम्।
सतस्यां जनयामास पुरूरवसमात्मजम्॥

जब पुत्र हुआ तो बड़े सोचमें हो वशिष्ठजीका स्मरण किया जिन्होंने आकर महादेवजीकी बड़ी प्रार्थना करने पर प्रसन्न किया और वर मांगा कि यह राजा फिर पुरुष हो जाय जिस पर महादेवजीने कहा कि हमारा वाक्य कभी मिथ्या नहीं हो सकता हां हम तुमसे प्रसन्न हुए इससे राजा एक मास पुरुष और एक मास स्त्री रहेगा॥

मासं पुमांस्तु भविता मासं स्त्री भूपतिः किल ॥३३॥

श्रीमद्भागवत अष्टम स्कंद अध्याय १२ में लिखा है कि देव और दानवोंमें घोरसंग्राम हुआ तब विष्णुजीने मोहिनी स्त्रीका रूप बना दानवोंको मदिरा और देवताओंको अमृतपान कराया। जब यह वृत्तांत महादेवजीने सुना तब उमा सहित बैलपर चढ़ गणों सहित वहां पहुंचे जहां विष्णु भगवान् थे। उससमय उन्होंने विष्णुमहाराजकी स्तुति कर कहा।

अवतारा मया दृष्टा रममाणस्य ते गुणैः।
सोहन्तद्द्रष्टुमिच्छामि यत्ते योषिद्वपुर्धृतम् ॥

तुम्हारे अनेक अवतार मैंने देखे अब मैं उस नारीरूपको देखना चाहता हूं जिससे तुमने दैत्योंको मोहित किया है और देवतोंको अमृत पिलाया है।

कौतूहलाय दैत्यानाम् योषिद्वेषो मया कृतः।
पश्यतां देवकार्याणि गते पीयूषभाजने ॥
तत्तेहं दर्शयिष्यामि दिदृक्षोः सुरसत्तम।

इस प्रकारसे महादेवको सुनके भगवान् विष्णु बोले कि जब अमृतका पात्र देवतोंसे दैत्योंके पास चला गया तब मैंने दैत्योंको मोहित करनेके निमित्त जो स्त्रीका रूप धारण कियाथा वह तुमको दिखलाऊंगा वह मेरा रूप कामियोंको अत्यन्त प्यारा है परन्तु वह केवल सङ्कल्पमात्र ही है। ऐसा कहके भगवान् विष्णु वहीं अन्तर्द्धान होगये। जहां उमाके सहित महादेव विराजमान थे, और चारोंओरको देखरहे थे। इसके अनन्तर समीपवर्त्ती बागमें जिसमें लाल २ और कोमल पत्ते तथा पुष्पभिदे हुए थे। गेंदको उछालती हुई एक कन्या अत्यंत सुन्दरीको देखा और मन्द मुसकानवाली स्त्रीको गेंद उछालते देखकर महादेव ऐसे कामसे व्याकुल हुए उनके पास बैठी पार्वती

और गणोंकी भी लज्जा जाती रही। जब उस स्त्रीके हाथसे गेंद बहुत दूर चली गई और वह उसको पकड़नेके लिये झपटी और वायुने उसके बारीक वस्त्रको उड़ाया महादेव उस स्त्रीपर ऐसे मोहित हुए कि पार्वतीके सामने ही उसके पीछे भागे। वह वस्त्र हीना महादेवको अपने पीछे आता देखकर बहुत लज्जित हुई और वृक्षोंमें छिपगई महादेव भी वृक्षोंमें उसके साथ चलेगये और उसका जूडा पकड़के (गोद) भरके आलिङ्गन किया। वह स्त्री इधरको तड़पकर महादेवकी भुजाओंसे छूटी और भागी इस आलिङ्गनसे जहां जहां महादेवका ....पतन हुआ वहीं वहीं सोनेकी खानें होगई।

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखंड अध्याय १४४ में लिखा है। कि एकबार गाय और बैल आपसमें क्रीड़ा कररहे थे बैलने विष्ठा और मूत्रको छोड़ा तो वह महादेवके माथे पर गिरपड़ा। १४॥

पुरा वृषेण गोलोके क्रीडता सह्मातृभिः।
मुक्तं तथाशकृन्मूत्रं पतितं हरमूर्द्धनि॥

तब उन्होंने गौवोंको शाप दिया। गौवोंने उनसे प्रार्थनाकी तब आपने उनसे कहा कि जब तुम साभ्रमती तीर्थमें ब्रह्मवल्लीके समीप खंडसंज्ञक हृदमें स्नान करो तब तुम स्वर्गको जाओगी फिर गौवोंने ऐसा ही किया।

गावः शापाभगवता संप्रसाद्यपुनर्हरम्।
प्राप्स्यामहे पुनर्लोकं इतिदेवं यमाचिरे॥
यदा साभ्रमतीतीर्थे ब्रह्मवल्ली समीपतः।
खंडसंज्ञहृदे स्नात्वा स्वर्गं वैप्राप्स्यथध्रुवम्॥

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय १५४ में लिखा है कि एकबार महातेजस्वी विश्वामित्रजी खड्गधार तीर्थपर गये और साभ्रमतीमें स्नानकर महादेवजीके स्नान किये और प्रतिदिन पूजा करने लगे,

उस स्थानपर कोई दुष्ट कौलिकने आकर महादेवजीके ऊपर मांस चढ़ाया ॥ १ ॥

तत्र कोपि महादुष्टः कौलिकः पापरूपधृक् ।
मांसं दत्तं तदातेन शिवस्योपरि भामिनि ॥

जब विश्वामित्रने देखा तो कहा कि इस पापीको दण्ड नहीं दिया इसलिये मैं उनको शाप दूंगा ॥ ६३ ॥

न दत्तस्तस्य दण्डोहि शर्वेण परमात्मनः ।
तस्मादहं हि निश्चित्य शापं दास्येन संशयः ॥

यह विचार उसीसमय महादेवजीको शाप दिया कि इसघोर कलियुगमें तुम सर्वथा गुप्त रहो इसप्रकार शाप देकर श्रेष्ठमुनि चले गये ॥ ६५ ॥

अस्मिन्कलियुग घोरे गुप्तस्त्वं भव सर्वथा ।
इति दत्वाथवै शापं गतवान्मुनिसत्तमः ॥

एकबार शिवजीने विष्णुभगवान्से भिक्षा मांगी । विष्णुने अपना दाहिना हाथ समर्पण किया शिवने त्रिशूल मारा और रुधिरकी धारा कपालमें गिरने लगी शिवने उसको मथा उसमेंसे एक पुरुष उत्पन्न हुआ ॥

और भी सुनिये कि जब दक्ष महाराजने अपने यज्ञमें पार्वतीके पति महादेवको नहीं बुलाया तो पार्वतीजी वहां ही भस्म होगई । जिनके शोकमें महादेवजी हरद्वारमें आये और शोकमें डूबगये । उस समय नारदमुनिने आकर सब वृत्तान्त कहा जिसको ध्यानसे उन्होंने ज्ञान शोक दूर किया । सृष्टिखण्ड अध्याय ५में ।

शिवजीने अंजनीके साथ छल किया और उसे अपने पास बुला के मन्त्र देनेके धोखेसे अपना वीर्य्य उसके कानमें डालदिया जिससे हनूमान् उत्पन्न हुए ।

ब्रह्मवैवर्त्तपुराण गणेशखण्ड अध्याय ३में लिखा है कि एक समय शिवजीने क्रोधकर शूलसे सूर्य्यको मारा जब वह मृतक होगये तो कश्यपजी महाराज विलाप करने लगे और सब तरफ़ अन्धकार हो गया कश्यपजीने शापदिया जैसे मेरे पुत्रको तूने मारा है ऐसे ही तेरे पुत्र गणेशका शिर निश्चय कट जायगा।

मत्पुत्रस्य यथा वक्षश्छिन्नं शूलेन तेऽद्यवै ।
त्वत्पुत्रस्य शिरश्छिन्नं भविष्यति न संशयः ॥

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय १२२में लिखा है पार्वती जीने दीपमालिकाके दिन जुआमें महादेवजीको जीतकर नग्न छोड़दिया था इससे महादेवजी दुःखी और पार्वती सुखी रहती हैं।

गौर्या जित्वा पुरा शंभुर्नग्नो द्यूतविसर्जितः ।
अतोयं शंकरो दुःखी गौरी नित्यं सुखेस्थितः ॥२६॥

कहिये श्रीमान् जुआ खेलना भी धर्मकार्य्य होगया क्योंकि महादेव और पार्वतीजीने खेला, इतना ही नहीं बरन् सालभरकी हारजीत मालूम होती है यानी उस रात्रिमें जो जीते उसकी सालभरतक जीत और जो हारे उसकी सालभरतक हार होती रही है।

श्रीमान् इस हारजीतको जाननेके बहानेसे भारतवर्षमें प्रतिवर्ष जुआका सर्वत्र प्रचार होगया। धर्मशास्त्र जिसको बुरा बताते हैं पुराण उससे वर्षभरकी हारजीत सुख दुःखकी कल कहते हैं तिसपर तुर्रा यह कि पार्वतीसी पतिव्रता स्त्रीने महादेवको इतना हराया कि धोतीतक जीतली और नग्न उनको छोड़दिया। जिससे वह दुःखी रहते हैं। कहिये जो आप दुःखी रहते हैं फिर औरोंको क्योंकर सुखी करते हैं क्या पतिव्रताओंका यही धर्म्म है।

पद्मपुराण चतुर्थ पातलखंड अध्याय १११ से कि जब सब देवता स्नान करके चले तब तुम्बरू नाम गान्धर्व आकर गानेलगा उसी समय हनूमान भी गानेलगे जिसको सुन सब प्रसन्न हुए और सबने

अपना २ गाना बन्द कर हनूमानजीका गाना सुनना पसंद किया वह गाने लगे जब भोजनोंका समय हुआ सब भोजनोंको चले महादेव अपने बैलपर चढकर चले तब हनूमानजीसे कहा कि तुम भी चढलो और गाना सुनाते चलो तब हनूमानजीने कहा कि आपके सिवाय कोई नहीं चढ़सक्ता हां आप हमारे ऊपर सवार होलें हम आपके मुखकी ओर मुख किये गाना सुनाते हुए चलेंगे तब महादेवजी उनकी पीठपर सवार होलिये महादेवके सवार होते ही हनूमानने अपना रशि काटडाला व घुमाकर कांधेपर जोड़दिया । १०६ ॥

महादेवजीकी ओर मुख करके गाते हुए चले इस प्रकार शिवजीको गीत सुनाते हुए गौतमजीके घर गये । १७७ ॥

और भोजनके पश्चात् हनूमानजीने फिर गान किया जिसको सुन जितने काष्ठ गौतमके गृहमें लगे थे व जितने आसन पत्रादिक काष्ठ थे, वे सब गीले होगये और सबोंमें नवीन पल्लव निकल आये । १७९ ॥

और उस गानमें सबका चित्त लगगया उससमय हनूमानूजी महादेवके चरणोंपर हाथ धरे हुए शिरपर शिवजीको सवार कराये प्रसन्न चित्त स्तुति कररहे थे तब महादेवजीने हनूमानूजीका शिर दोनों हाथोंसे पकड़कर जैसा प्रथम था वैसा ही करदिया । १८२ ॥

शिव, ब्रह्मा और विष्णुकी दशा ।

पद्मपुराण षष्ठी उत्तर खंड अध्याय १११ में लिखा है एकबार सब देवगण समूहके साथ हरी महादेव सह्य पर्वतकी चोटीपर यज्ञ करनेके लिये एकत्र हुए । जब मुहूर्तका समय आया तबतक स्वरा नहीं आई तब विष्णुने कहा कि यदि स्वरा नहीं आई तो गायत्रीसे कार्य्य लो जिसको महादेवजीने भी पसन्द किया तब भृगुजीने ब्रह्माके दक्षिण भागमें गायत्रीको बिठाकर दीक्षाविधि आरम्भकी इतनेमें स्वरा भी आगई और कहा कि पूजने योग्यकी पूजा नहीं होती और

अपूज्यकी पूजा होती है वहां दुर्भिक्ष मरण और भय यह तीन होते हैं हमारे स्थानपर आपने इस छोटीको बिठाला है इसलिये सब जड़ और नाना प्रकारके रूपवाले होवो । १५ ॥

ममासनेकनिष्ठेयं भवद्भिः सन्निवेशिता ॥
तस्मात्सर्वे जडीभूता नानारूपाभविष्यथ ॥

स्वराके शापको सुन गायत्री उठी और देवताओंके रोकने पर भी स्वराको शाप दिया । १७ ॥

ततस्तंच्छापमाकर्ण्य गायत्री कंपिता तदा ।
समुत्थायाशपद्दैवैर्वार्यमाणापितां स्वराम् ॥

कि तुम्हारे स्वामी हमारे भी स्वामी हैं इस लिये तुमने वृथा शाप दिया इससे तुमभी नदी हो ॥ १८ ॥

तवभर्ता यथा ब्रह्मा ममाप्येष तथा खलु ।
वृथाशापस्त्वंयस्मान्मांभव त्वमापिनिम्नगा ॥

तब शिव, विष्णु इत्यादि देवता हाहाकर करते पृथ्वीपर गिर दण्डवत प्रणाम कर स्वरासे कहने लगे । १९ ॥

ततो हाहाकृताः सर्वेशिवविष्णुमुखाः सुराः ।
प्रणम्य दण्डवद्भूमौ स्वरां तत्र व्यजिज्ञपन् ॥

कि हे देवि तुमने इस समय सब ब्रह्मादि देवताओंको शाप दिया है जो वे सब जड़ होकर नदी हो जावेंगे, तीन लोक नाश हो जावेंगे । तुमने यह अज्ञानसे किया इससे इस शापको निवृत्त करो । २१ ॥

तदा लोकत्रयं ह्येतद्विनाशं यास्यति ध्रुवम् ।
अविवेकः कृतस्तस्माच्छापोयं विनिवर्त्यताम् ॥

तब स्वराने कहा कि यज्ञकी आदिमें तुमने गणेशको नहीं पूजा जिससे विघ्न उत्पन्न हुआ हमारे वचन झूठे न होंगे जिससे अपने२ अंशसे नदी होकर बहो हम दोनों भी अपने २ अंशसे नदी हो कर पश्चिम मुख हो कर बहेंगी ॥ २४ ॥

आवामपि सपत्न्यौ च स्वांशाभ्यामपि निम्नगे ।
भविष्ययोऽवै देवाः पश्चिमाभिमुखावहे ॥

इस प्रकार स्वराके वचन सुन ब्रह्मा, विष्णु और महादेव तिसी समयमें अपने २ अंशोंसे जड़ होकर नदी होते हुए ॥ २५ ॥

इति तद्वचनं श्रुत्वा ब्रह्माविष्णुमहेश्वराः ।
जड़ीभूता भवन्नद्यः स्वांशैरेव तदा नृप ॥

विष्णुजी कृष्णा, महादेवजी वेण्या और ब्रह्माजी ककुद्मिनी गङ्गा ये अलग २ इसी समय होगये ॥ २६ ॥

तत्र विष्णुरभूत्कृष्णा वेण्या देवो महेश्वरः ।
ब्रह्मा ककुद्मिनीगङ्गा पृथगेवाभवत्तदा ॥

और चतुर्थ देवता भी सह्य पर्वतपर अपने २ अंशको जड़ करके नदियां होते हुए ॥ २७ ॥

देवास्वानपितानंशान् जड़ी कृत्वा विचक्षणः ।
सह्याद्रि शिखरेभ्यस्ताः पृथगासन् सुनिम्नगाः ॥

गायत्री और स्वरा भी तिसी समयमें पश्चिम बहनेवाली नदियां हुई ॥ २८ ॥

गायत्री च स्वरा चैव पश्चिमाभिमुखे तदा ॥

पद्मपुराण षष्ठी उत्तर खण्ड अध्याय ११५ में लिखा है कि पीपल भगवान् विष्णुका रूप है, बरगद महादेव और ढाक ब्रह्माजीका रूप है ॥ २२ ॥

अश्वत्थरूपी भगवान् विष्णुरेव न संशयः ।
रुद्ररूपी वटस्तद्वत् पालाशो ब्रह्मरूप धृक् ॥

इन सबका दर्शन पूजन और सेवा पापनाश करनेवाली है ॥२३॥

दर्शनं पूजनं सेवा तेषां पापहरास्मृता ।
दुःखापद्व्याधिदुष्टानां विनाशकरषी ध्रुवम् ॥

इनके वृक्ष होनेका कारण यह है कि एकवार महादेवजी पार्वतीजीसे भोग करते समय देवताओंने अग्निको भेजकर विघ्न किया था उस समय उस सुखके भ्रंश होनेसे क्रोधमें आकर शाप दिया था ॥२६॥

ततः सा पर्वती क्रुद्धा शशाप त्रिदिवौकसः ।
रतोत्सवसुखभ्रंशात्कंपमाना रुषा तदा ॥

कि कृमि और कीट आदि भी रतिके सुखको जानते हैं उसके विघ्न करनेसे देवता वृक्ष होजाओ ॥ २७ ॥

कृमिकीटादयोप्येते जानन्ति सुरतं सुखम् ।
तद्विघ्नकरणाद्देवा ह्युद्भिज्जत्वमवाप्स्यथ ॥

इस प्रकार क्रोधयुक्त पार्वतीजीने देवताओंको शाप दिया तो सब देवसमूह निश्चयकर वृक्ष होगये ॥ २८ ॥

तिसी शापसे विष्णुजी पीपल और महादेवजी बरगदहुए ॥ २९ ॥

तस्मादिमौ विष्णुमहेश्वरा वुभौ ।
बभूवतुर्बोधिवटौ मुनीश्वराः ॥

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय १५८ में लिखा है कि पूर्वसमयमें कोलाहलके युद्धमें दानवोंने देवताओंको जीत लिया तो देवता प्राण बचानेकी इच्छासे सूक्ष्म होकर वृक्षोंमें प्रवेश कर जाते भये ॥३०॥

पुरा कोलाहले युद्धे दानवैर्निर्जिताः सुराः ।
वृक्षेषु विविशुस्तत्र सूक्ष्माः प्राणपरीप्सया ॥ २ ॥

तहां बेलके पेड़में महादेवजी, पीपलमें नाशरहित हरिजी, सेरसामें इन्द्र और नींबमें सूर्य्यनारायण स्थित होगये ॥ ३ ॥

तत्र बिल्वे स्थितः शंभुरश्वत्थे हरिरव्ययः ।
शिरीषे भूत्सहस्राक्षो निंबे देवः प्रभाकरः ॥

पंडितजी—सेठजी अब इसविषयको समाप्त कीजिये ।

सेठजी—मेरी तो यह इच्छा थी आपको दो, तीन दिन त्रिदेवलीला ही सुनाता क्योंकि इन तीनों देवोंके वृत्तसे पुराण भरे पड़े हैं ।

पंडितजी—हम देव और मुनिलीला ही को सुनकर पुराणों का तत्व जान चुके थे परन्तु त्रिदेवलीलाने तो रहे सहे भ्रमको मेट दिया क्या कहूं सेठजी मुझसे आज आपकी प्रशंसा नहीं होती । यदि स्वामी दयानन्द जीवित होते तो मैं उनके चरणोंको पकड़कर कृतार्थ होता, जिन्होंने भारतके रहे सहे महत्वको बचा लिया ।

इसविषयमें आपके नोटोंकी आवश्यकता नहीं क्योंकि ब्रह्मा, विष्णु और शिवजीके नामसे जो कार्य्य पुराणोंमें लिखे हैं जिनको आपने सुनाया है वह स्वयं ही उनके महत्वको प्रकाश कररहे हैं न मालूम सनातनधर्मसभाके लीडर पण्डित आदि क्यों प्राण देते हैं और इन निन्दित कर्म्मोंको स्तुति कहते हैं सच तो यह है कि यह पुराण व्यास महाराजके कदापि लिखित नहीं हैं कहां ब्रह्मा, विष्णु, शिव, भगवानूके रूप कहां उनके यह अनोखे कर्त्तव्य अब तो मुझको भी रोना आता है । सत्य कहा है कि जब नाश होनेवाला होता है तब बुद्धि प्रथम बिगड़ जाती है यही दशा भारतवासियोंकी होरही है । कि हम सब अपने मुंह अपनी निन्दाको स्तुति कहकर अन्योंसे

कहलाना चाहते हैं। धन्य है स्वामीजीको जिन्होंने लाखों आदमी एक ओर होते हुए सत्यके बलको संसारमें प्रकाश करदिया इसकारण सेठजी मैं तो इसविषयमें आपका आजसे सहमत हूं पुराण स्वार्थियोंने हमारी अवनतिके लिये बनाकर प्रकाश और प्रचार करदिये। बस और मुझसे कुछ कहा नहीं जाता।

अन्य महाशयोंमें से कितने एक महाशयोंने कहा कि महाराज पुराणोंकी लीला सुनकर तो हमारे छक्के छूटगये यह कैसे धर्मपुस्तक हैं इनमें यह क्या लिखा है।

सेठजी—श्रीमहाराज और अन्य महाशयोंको धन्यवाद देता हूं क्योंकि आपने सत्यको प्रकट करदिया आपसे प्रार्थना यही है आप भलेप्रकार अपने मित्रोंके साथ विचार करें और संसारमें सत्यका प्रकाश करें जिससे भारतके धर्मसम्बन्धी विचारोंकी जगत्में बड़ाई हो और हम सब देव, पितर, ऋषि ऋणसे उद्धार हो परमात्माकी आज्ञापालन करते हुए सुखोंको भोगें॥ ओ३म् शम्॥ सब चलदिये।

सेठजी—ने पण्डितजीको नमस्ते अन्योंको यथायोग्य कहा।

पंडितजी—ने आशीर्वाद दिया अन्य सभ्यगणों ने यथायोग्य कहा।

सेठजी अपने गृह मेंपधारे।

॥ इति दशम परिच्छेदः ॥

एकादशपरिच्छेदः।

आर्यसेठ—श्रीमान् पं० जी नमस्ते।

पंडितजी आयुष्मान्।

अन्य सज्जन महाशय आने लगे और यथा योग्य कर विराजमान होते गये।

सेठजी—कहिये श्रीमान् अब आप क्या सुनना चाहते हैं?

पण्डितजी—सेठजी व्रत और तीर्थ माहात्म्यके विषयमें जो आपकी सम्मति हो उसको अच्छे प्रकार वर्णन कीजिये।

सेठजी—बहुत अच्छा।

श्रीमान् पण्डितजी पुराणोंमें अनेकान् व्रत लिखे हैं जिनके बड़े २ माहात्म्य सुन २ कर संसारी जन उनका पालन करना अपना परम धर्म समझते हैं यदि मैं उन सबका वृत्तांत सुनाऊं तो बहुत काल चाहिये इस लिये संक्षेपके साथ उनके नाम और माहात्म्य सुनाता हूं। आप दया पूर्वक सुन विचारकर सारको ग्रहण कर कार्य्य कीजिये जिसका प्रभाव पबलिक पर उत्तम हो॥

भविष्यपुराण पूर्वार्द्धमें

कृष्णाष्टमी, अनद्याष्टमी, सोमाष्टमी, ध्वजनवमी, उल्कानवमी, दशावतारव्रत, रोहिणीव्रत, अवियोगव्रत, गोविन्दशयनव्रत, भीष्मपंचक, मल्लाद्वादशी, अखण्डद्वादशीव्रत, मनोर्थद्वादशी, धरणीद्वादशीव्रत अकंपादव्रत, दुर्गन्धिनाशनव्रत, यमादर्शनव्रत, अनंगत्रयोदशीव्रत, पालीव्रत, रंभाव्रत, शिवचतुर्दशी, श्रावणिकाव्रत, नक्तव्रत, सर्वफलत्यागव्रत, युद्धविजयपूर्णिमाव्रत, सावित्रीव्रत, कृत्तिकाव्रत, अनन्तव्रत, नक्षत्रव्रत वैष्णवनक्षत्र पुरुषव्रत, शैवनक्षत्र पुरुषव्रत, सम्पूर्णव्रत, वेश्याओंकोकल्याणदेनेहारेकामव्रत, शनैश्चरव्रत, संक्रांतिव्रत, पंचाशीतिव्रत, इत्यादि।

उत्तरार्द्धमें शकटव्रत, तिलकव्रत, अशोकव्रत, करवीर, कोकिल, बृहद्व्रत, भद्रव्रत, अशून्यशयनव्रत, गोत्रिरात्रव्रत, हरकालव्रत ललिता तृतीयाव्रत अवियोगव्रत उमामहेश्वरव्रत सौभाग्य शयनव्रत अनन्त फलदा तृतीया, रसकल्याणी तृतीया, आर्द्रानन्दकरी तृतीया चैत्र भाद्र और माघशुक्ल तृतीया, अनन्तादि तृतीया, अक्षय तृतीया, अंगारक चतुर्थी, विघ्नविनाशक चतुर्थी, शान्तिव्रत, सरस्वतीव्रत,

नागपंचमीकाव्रत, भीपंचमीव्रत, विशोक षष्ठीव्रत, कमलषष्ठी, मन्दारषष्ठी, ललिताषष्ठी, विजयसप्तमी, कुक्कुटीव्रत, अचलासप्तमी, बुधाष्टमी श्रीकृष्णजन्माष्टमीव्रत, दुर्गाष्टमीव्रत, प्रतिमास, पुष्पद्वितीयव्रत, गौरीतृतीयाव्रत, विधान चतुर्थीव्रत, सप्तमीव्रत, रथसप्तमीव्रत, फलसप्तमीव्रत, जयासप्तमीव्रत, जयन्ती, महाजयन्ती, नन्दासप्तमी, फाल्गुन, शुक्लसप्तमी, पद्मद्वयव्रत, दोला, दमनक, शयन आदि—

मत्स्यपुराणमें कृष्णाष्टमी, कुलवृद्धव्रत, सौभाग्यशयनव्रत, पुरुषस्त्रीका वियोग न होनेवाला, अन्धव्रत. संसारके उद्धार होनेका व्रत, विशोकसप्तमी, पापनोचनसप्तमी, शर्करासप्तमी, कमलसप्तमी, मन्दारसप्तमी, शुभसप्तमी, प्रियजनका वियोग न होनेवाला व्रत, अनन्त फलदायीव्रत, विष्णुभगवान्के उत्तम व्रत, इत्यादि व्रतोंका वर्णन है।

वाराहपुराणमें लिखा है कि पौष, माघ, फाल्गुण, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ श्रावण, भाद्र, आश्विन, कार्तिक, एकादशी, व द्वादशी व्रत, विधान, अभीष्टफलिलाभव्रत, मुक्तिप्राप्तव्रत, धन्यव्रत, कांतिव्रत, सौभाग्यप्राप्तिव्रत, अविघ्नव्रत, शांतिव्रत, पुत्रप्राप्तव्रत शौर्य्यव्रत, सार्वभौमव्रत, पृथ्वीकृतव्रत, अगस्तशरीरव्रत, कापालिकव्रत, ।

पद्मपुराण प्रथम सृष्टिखंडमें लिखा है, भीमनिर्जला वेश्यानंगकव्रत, रोहिणीचन्द्रशयनव्रत, अशून्यशयनव्रत, सौभाग्यव्रत, सावित्रीव्रत, ...

और षष्ठ उत्तरखंडमें लिखा है। तुलसीजीका त्रिरात्रव्रत, जन्माष्टमीव्रत, त्रिस्पृशाव्रत, उन्मीलिनीव्रत, पक्षवर्द्धिनी एकादशी बारहमासकी एकादशीकेव्रत, श्रवणद्वादशीव्रत, कार्तिक माहात्म्यकी अनेकान प्रकारसे उत्तमता दिखलाई है फिर उसके महीने भरके व्रतका वर्णन, भीष्म पंचकव्रत, दीपव्रत, चातुर्मास्यव्रत, वैतरणीव्रत ऋषिपंचमीव्रत, यमद्वितीया, गोवर्द्धनपूजा, राधाअष्टमी, बृहस्पति आदि व्रतोंका वर्णन है।

अग्निपुराणमें लिखा है कि प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, श्रावण द्वादशीव्रत, अखण्ड द्वादशीव्रत, त्रयोदशीव्रत, चतुर्दशी शिवरात्रिव्रत, अशोक पूर्णिमाव्रत, वारव्रत, नक्षत्रव्रत, दिवसव्रत, मासव्रत नानाव्रत, दीपदानव्रत, मासोपवासव्रत, भीष्मपंचकव्रत कौमुद व्रत हैं।

शिवपुराणमें लिखा है शिवरात्रि व्रतविधि उसका माहात्म्य लक्षणाष्टमीव्रत, नामाष्टमीव्रत, पाशुपतव्रत।

ब्रह्मवैवर्त्तपुराण—हरिव्रत, व्रतमाहात्म्य, त्रिमासिकव्रत, द्वादशी जयदुर्गाव्रत, जन्माष्टमीव्रत आदि—

इसके अतिरिक्त आदित्य पुराणके अनुसार रविवार, शिवपुराणसे सोमवार और तेरस चन्द्रखण्डके कथनानुसार मङ्गल, बुद्ध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चरको व्रत रखनेकी आवश्यकता है यही सप्ताहके सात दिन होते हैं। और भी सुनिये विष्णु भगवान्‌की एकादशी, वामनकी द्वादशी, नृसिंह भगवान्‌की अनन्त चौदश, चन्द्रमाकी पौर्णमासी, दिक्‌पालकी दशमी, दुर्गाकी नवमी, वसुओंकी अष्टमी, मुनियोंकी सप्तमी, कार्त्तिक स्वामीकी छट, नागोंकी पञ्चमी, गणेशकी चौथ, गौरीकी तीज, अश्विनीकुमारकी दुइज आद्यादेवीकी प्रतिपदा, भैरवकी अमावस। और २४ एकादशियोंके व्रतोंके रहनेकी आज्ञा है जिनमें व्रतके दिनोंमें यम और नियम धारण करनेका भी आदेश है और बहुधा व्रतोंमें अन्न खानेका निषेध ही नहीं वरन् महापाप बतलाया है इन उपरोक्त व्रतोंकी महिमाको सुन २ कर स्त्री, पुरुष लट्टू होजाते हैं क्योंकि लिखा है कि इनके करनेसे मानधातादि राजा स्वर्गको गये, महादेव बाबा कपालसे छूटे। श्रीरामचन्द्रजी दुःखोंसे बचे, भीमसेनजीका कल्याण होगया, सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्रके पाप क्षणमें कट गये योगीजन इन व्रतोंको कर मोक्ष पागये इसके उपरान्त यज्ञदान, तीर्थ भी व्रतोंकी समानता नहीं कर सकते तदनन्तर काशी ग्रहण स्नान,

गयापिण्ड, गोमती स्नान, कुम्भमें केदारदर्शन, बदरीनारायण यात्रा, कुरुक्षेत्रमें सूर्य्यग्रहण स्नान इत्यादि भी व्रतोंके फलके समान फल नहीं देते और न हज़ार अश्वमेध न सौ राजसूययज्ञ उनकी बराबरी कर सकते हैं इसके उपरान्त व्रत करनेवालोंकी सौ सौ पीढ़ी तरजाती हैं १८ प्रकारके कोढ़की यही दवा है प्रथमके हज़ारजन्मके पाप दूर हो जाते हैं। ८८ हज़ार विप्रके भोजनका फल मिलता है। काशी, प्रयाग, द्वारिका, बदरीनाथ आदि तीर्थोंकी कौन कहे त्रिलोकीके तीर्थोंका फल इन व्रतोंके करनेसे मिलता है, मन, वाणीके पाप जागरणसे जाते रहते हैं वर्षा करानेकी यही औषधि है, इससे ब्राह्मणका मारनेवाला, सोना चुरानेवाला, मदिरापीनेवाला, गुरुपत्नीसे गमन करनेवाला, वेश्यागामी, ज्वारी, गोत्रनाशक, झूंठ बोलनेवाला, गुरुनिन्दक, युद्धसे भागने आदिके पाप हो नहीं वरन् मेरुके समान हत्या सब दूर होजाती है और पुत्र सन्तान, धन, ऐश्वर्य्य, सम्पदा, बुद्धि, राजसुख, मोक्ष मिलती है विधवापन जाता रहता है, कुलका विरोध मिट जाता है इत्यादि फल प्राप्त होते हैं जिसके कारण भारतवासी स्त्री, पुरुष विना विचार किये इधरका झुकते चले जाते हैं जिससे भारतका स्वरूप ही पलट गया।

अब प्रथम मैं एकादशी तिथिकी महिमा पश्चात् विष्णु महाराजका एकादशी होना और उनके शरीरसे एक कन्याका उत्पन्न होना और तत्पश्चात् २४ एकादशियोंकी कथा इसके अनन्तर अन्य व्रतोंकी महिमा वर्णन करूंगा आप कृपापूर्वक श्रवण कीजिये देखिये—

पद्मपुराण सप्तमक्रिया योगसार अध्याय २२ में लिखा है कि जिस प्रकार सब देवताओंमें विष्णुश्रेष्ठ हैं। आदित्योंमें सूर्य्य, नक्षत्रोंमें चन्द्रमा, वृक्षोंमें पीपल, वेदोंमें सामवेद, कवियों में शुक्र वर्णोंमें ब्राह्मण, मुनियोंमें व्यास, देवर्षियोंमें नारद, दानोंमें अन्नदान इन्द्रियोंमें मन, महीनोंमें कार्तिक, पाण्डवोंमें अर्जुन, शास्त्रोंमें वेद श्रेष्ठ, है उसी भांति सब व्रतों में एकादशीव्रत श्रेष्ठ है क्योंकि विष्णुभगवान् स्वयं एकादशी तिथि हो गये। देखिये पद्मपुराणक्रिया योगसार अध्याय २२ में लिखा है। कि प्रथम

भगवान्ने स्थावर जंगम संसारको रच सबके दमनके लिये पाप पुरुषको रचा ॥

स्रष्ट्वा द्वौ पुरुषश्रेष्ठः संसार सचराचरम् ।
सर्वेषां दमनार्थाय सृष्टवान् पापपूरुषम् ॥ ७ ॥

जिसका ब्राह्मणोंकी हत्या मस्तक, मदिराका पीना नेत्र, सोनेका चुराना मुख, गुरुकी शय्यामें जाना कान, स्त्रीहत्या नाक, गऊकी हत्याका दोष भुजा, न्यासका चुराना गर्दन, गर्भहत्या गला, पराई स्त्रीसे भोग मित्र, मनुष्योंका मारना पेट, शरणागतकी हत्यादिक नाभिके छिद्रकी अवधि, करिहांव गुरुकी निन्दा सक्थिभाग, कन्याका बेचना विश्वास वाक्यका कहना गुदाइन्द्रिय, प्रीतिका मारना चरण, उपपातक रोयें जिसके ये इस प्रकार बड़ी देह वाले भयंकर कालेवर्ण पीले नेत्र अपने आश्रयोंके अत्यंत दुःख देने वाले अत्यंत उग्र पुरुषोंमें उत्तम पापपुरुषको देखकर दया समेत प्रजाओंके नाश करने वाले प्रभुजी चिन्तना करते हुए ।

तं दृष्ट्वा पापपुरुषमत्युग्रं पुरुषोत्तमम् ।
सदयश्चिन्तयामास प्रजाक्लेशहरः प्रभुः ॥ १३ ॥

कि यह दुर्जन, क्रूर अपने आश्रयोंके क्लेश देनेवालेको प्रजाओंके दमनके लिये तो मैंने रचा अब इसके कारणको रचता हूं ॥ १४ ॥

स्रष्टोऽयंदुर्जनः क्रूरः स्वाश्रयक्लेशदायकः ।
प्रजानां दमनार्थाय सृजाम्येतस्य कारणम् ॥ १४ ॥

तदनन्तर भगवान् विष्णुजी आप ही यमराज होगये और पापियोंके दुःख देनेवाले रौरवनरकोंको रचते हुए ॥ १५ ॥

अथा सौभगवान्विष्णुर्बभूव स्वयमन्तकः ।
ससर्जरौरवादींश्च निरयान्यापि दुःखदान् ॥१५॥

जो मूर्ख पापका सेवन करता है वह परमपदको नहीं जाता और यमराजकी आज्ञासे रौरवनरकमें जाता है ॥ १६ ॥

पापं यः सेवतो मूढ़ो न याति परमं पदम् ।
यमाज्ञया व्रजेत्तत्र नरकं रौरवादिकम् ॥ १६ ॥

एक समय विष्णु महाराज गरुड़पर चढ़ यमराजके मन्दिरको गये जहां यमराजने उनकी अनेकान प्रकारसे पूजा की फिर उन्होंने दक्षिण दिशामें रोनेका शब्द सुन विस्मययुक्त हो यमराजसे बोले कि यह रोनेका शब्द कहांसे आता है ॥ २० ॥ २१ ॥

तत्रोपविष्टो भगवान्यमेन सह दैत्यहा ।
शुश्राव क्रन्दनं ध्यानं दक्षिणस्यां दिशि प्रभो ॥२०॥
अथासौ कमलाकान्तो विस्मया विष्टमानसः ।
उवाचेति यमं तेषां कुतोऽयं क्रन्दनध्वनि ॥ २१ ॥

तब यमराजने कहा कि पापी मनुष्य नरकोंमें अपने हाथसे किये हुए दोषोंसे कष्ट पाते हैं। उसीसे दुःखित होकर वह चिल्ला रहे हैं तब भगवान् वहां गये और उन रौरवनरकादिकोंमें पापी पुरुषोंको देखकर दयावान् हो प्रभु चिन्तना करते हुए ॥ २४ ॥ २५ ॥

कि मैंने प्रजाओंको रचा है मेरे स्थित होनेमें अपने कामोंके दोषोंसे वे एकान्त दुःख देनेवाले नरकमें क्लेश पाते हैं। हे ब्राह्मण इस प्रकार तथा और भी करुणानिधान भगवान् चिन्तनाकर सहसासे वहां ही आप ही एकादशी तिथि होजाते हुए ॥ २६ ॥ २७ ॥

एतच्चान्यच्च विप्रेन्द्र विचिन्त्य करुणामयः ।
बभूव सहसा तत्र स्वयमेकादशी तिथि : ॥२७॥

तदनन्तर तिन सब पापियोंको सुनाते हुए तब वे सब पापरहित होकर परमधामको जाते हुए। तिससे एकादशीको परमात्मा विष्णुकी मूर्त्ति जानिये। यह सब दुष्कृतियोंमें श्रेष्ठ औरव्रतोंमें उत्तम व्रत है॥२८॥

तस्मादेकादशीं विष्णो मूर्त्तिविद्धि परमात्मनः ।
समस्तदुष्कृति श्रेष्ठं व्रतमुत्तमम् ॥ २९ ॥

तीनों लोकोंके पवित्र करनेवाली एकादशी तिथिको कर, शङ्का-युक्त पापपुरुष होकर विष्णुकी स्तुति करनेको प्राप्त होता हुआ ॥३०॥

एकादशीं तिथिं कृत्वापावयन्तीं जगत्त्रयम् ।
शङ्कितः पापपुरुषोः विष्णुस्तोतु मुपायमौ ॥ ३० ॥

तदनन्तर पाप पुरुष भक्तिसे हाथ जोड़कर लक्ष्मीपति भगवान्‌की स्तुति करता हुआ ॥ ३१ ॥

उसकी स्तुतिको सुनकर परमेश्वर प्रसन्न होकर उससे बोले मैं तुमसे प्रसन्न हूं, क्या तुम्हारा अभिमत है उसको कहिये । ३२ ॥

तब पापपुरुष बोला हे विष्णुजी भगवान्‌ने मुझे रचा है अपनी अनुग्रहमें दुःख देनेवाला मैं हूं, सो एकादशीके प्रभावसे इस समयमें नाशको प्राप्त होता हूं । ३३ ॥

इस संसारमें मेरे मरनेसे सब देहधारी संसारके बन्धनोंसे छूट-जावेंगे । ३४ ॥

मृते मयि जगत्यस्मिन्सर्वे ते च शरीरिणः ।
भविष्यंति विनिर्मुक्ता भव बंधैः शरीरिणः ॥ ३४ ॥

हे प्रभु ! सब देहधारियोंमें श्रेष्ठोंके मुक्ति होजानेमें आप संसार-रूपी कौतुकके मन्दिरमें किनके साथ क्रीड़ा करेंगे । ३५ ॥

सर्वेषु च विमुक्तेषु देहि श्रेष्ठेषु पूरुषम् ।
संसारकौतुकागारे कैस्त्वं क्रीडिष्यसे प्रभो ! ॥३५॥

हे केशवजी ! यदि संसार रूपी कौतुकके मन्दिरमें क्रीड़ा करनेको आपकी वांछा होतो एकादशी तिथिके डरसे मेरी रक्षा कीजिये ।३६॥

क्रीडितुं यदि ते वांछा जगत्कौतुकमन्दिरे ।
एकादशीतिथिभयात्तदा मां त्राहि केशव ॥ ३६ ॥

हज़ारों पुण्य मेरे मारनेमें समर्थ नहीं हैं, पुण्यकारी एकादशी मेरे मारनेमें समर्थ है इससे वर देनेवाले हूजिये । ३७ ॥

अन्यैः पुण्य सहस्रैस्तु मां हंतु नहि शक्यते ।
शक्नोत्येकादशीपुण्या मां हंतु वर दो भव ॥ ३७ ॥

मनुष्य-पशु-कीड़े तथा और जंतुओंमें पर्वत वृक्ष और जलके स्थानोंमें नदी समुद्र और वनके प्रान्तोंमें स्वर्ग, मनुष्यलोक, पाताल-लोक, देवता, गंधर्व, और पक्षियोंमें एकादशी तिथिके डरसे भागता फिरता हूं मुझको कहीं निर्भयस्थान नहीं मिलता । मैं करोड़ों ब्रह्माण्डके बीच एकादशी तिथिमें स्थित होनेको स्थान नहीं पाता फिर वह पृथ्वी पर गिर रोनेलगा उस समय भगवान्‌ने कहा उठो, शोक मतकरो एकादशी तिथिमें तुम्हारे स्थानको कहता हूं । ३८ । ३९ ४० । ४१ । ४२ । ४३ । ४४ । ४५ ।

तीनों लोकोंको पवित्र करनेवाली एकादशीके आनेमें अन्नमें स्थित होना । अन्नमें आश्रित होकर स्थित हुए तुमको मेरी मूर्त्ति यह एकादशी तिथि नहीं मारेगी । ४६ । ४७ ।

इतना कह भगवान् अन्तर्द्धान होगये । और पापपुरुष कृतार्थ होकर जैसे आया था वैसाही चलागया ।

श्रीमान् विष्णु महाराजका एकादशी तिथि होना । देखिये क्या अच्छी गढ़ंत है-प्रथम पापोंको रचना फिर पापियोंको देख कर दुःखी होना-तिस पर स्वयं एकादशी हो जाना-परन्तु पंडितजी जब हम पद्मपुराणके षष्ठ उत्तर खण्ड अध्याय ३८ को देखते हैं तो वहां यह लिखा मिलता है एक समय युधिष्ठिर महाराजने कृष्ण म-हाराजसे पूछा कि पुण्यकारी एकादशी तिथि किस प्रकारसे उत्पन्न

हुई और वह क्योंकर देवताओंकी प्यारी हुई यह सुनकर श्रीकृष्ण महाराजने कहा कि सत्युगमें मुर नामी दैत्यने इन्द्र आदि सब देवताओंको जीत स्वर्गसे निकाल दिया उन्होंने घूमते हुये महादेव के पास जाय सब वृन्तात कहा उनके कहनेसे सब क्षीरसागरमें गये और प्रार्थनाकी। तब विष्णुजी बोले कि हे इन्द्र वह दैत्य कैसा है कैसारूप बल है और उसका स्थान कहां है। वीर्य्य और पराक्रम क्या है। कुछ उसको वर भी मिला है यह सब हमसे कहो।

तब इन्द्रने सब वृतान्त कहा जिसको सुनकर चन्द्रावती नगरी को उस राक्षसको मारनेके लिये गये उसने पहिले देवताओंको जीता वह सब दिशाओंको भाग गये।

फिर भगवान्ने बाणोंको छोड़ा और चक्रसे लाखों शिर काट लिये फिर भगवान्से बाहुयुद्ध देवताओंके हज़ार वर्ष तक वह राक्षस करता रहा तब भगवान् बड़ी चिन्ताको प्राप्त भये देवता सब नष्ट हो गये आप हार कर बदरिकाश्रमको चले गये॥ ८७॥

विष्णुश्चिंतां प्रपन्नश्च नष्टाः सर्वाश्च देवताः।
विष्णुश्च निर्जितस्तेन गतो वदरिकाश्रमम्॥ ८०॥

वहां सिंहवती नाम बारहयोजनकी गुफामें जाकर सोये पीछे दानव भी घुस कहने लगा कि मैं निस्संदेह मारूंगा तब तो विष्णु की देहसे एक रूपवती कन्या अस्त्र, शस्त्र सहित उत्पन्न हुई।

निर्गता कन्यका तत्र विष्णुदेहाद्युधिष्ठिर।
रूपवती सुसौभाग्य दिव्यप्रहरणायुधा॥८५॥

और उसको मुरनाम दैत्यने देखा और युद्ध होने लगा और उस की हुंकारसे वह भस्म होगया जब वह दैत्य मरगया तब विष्णु भी जग उठे॥८८॥

हुंकारैर्भस्मसाञ्जातो मुरनामा महासुरः।
निहते दानवे तस्मिंस्तत्रदेवस्त्ववुध्यत॥८८॥

और कहने लगे इसको किसने मारा तब कन्याने कहा कि इसने देवता, गन्धर्व इत्यादिको स्वर्गसे निकाल दिया था और आप सोते थे मैंने सोचा कि यह तीनों लोकोंको नाश करदेगा। यह सुन विष्णु जी बोले कि जिसने इनको जीत लिया उसको तुमने कैसे जीतलिया तब कन्यारूपी एकादशी बोली कि मैंने तुम्हारे प्रसादसे इसको मारडाला ॥ ९३ ॥

त्वत्प्रसादाच्च भोस्वामिन्महादैत्यो मया हतः ॥९३॥

तब भगवान्‌ने कहा कि तुमने तीनों लोकोंमें मुनि देवताओंको आनन्द दिया इसलिये जो कुछ मांगो मैं निस्सन्देह दूंगा जो देवताओंको दुर्लभ हो। तब एकादशी बोली कि मुझको तीन बरदान दीजिये। विष्णुने कहा बहुत अच्छा। तब एकादशीने कहा कि तीनों लोकों और चारों युगोंमें सब तीर्थोंसे प्रधान सब विघ्नोंके नाश करनेवाली सिद्धि देनेवाली देवी होजाऊं ॥ ९९ ॥

सर्वतीर्थप्रधानं हि सर्वविघ्नविनाशनी ।
सर्वसिद्धिकरी देवी त्वत्प्रसादाद्भवाम्यहम् ॥ ९९ ॥

जो मनुष्य आपकी भक्तिसे हमारा व्रत करै वह आपकी कृपासे सब सिद्धिको प्राप्त होजावे ॥ १०० ॥

मामुपोष्यंति ये भक्त्या तव भक्त्या जनार्दन ।
सर्वसिद्धिर्भवेत्तेषां यदि तुष्टोऽसि मे प्रभो ॥ १०० ॥

जो व्रतकर रात्रिमें एकबार भोजन करैं उनको हे माधव जी! द्रव्य धर्ममोक्ष दीजिये ॥ १०१ ॥

उपवासं च नक्तं च एकभक्तं करोति च ।
तस्य वित्तं च धर्मं च मोक्षं वै देहि माधव ॥१०१॥

विष्णुने कहा कि जो तुम कहती हो वह सब होगा। हे भद्रे! सब मनोरथोंको तुम देवोगी और कोई नहीं देवेगा ॥ १०२ ॥

यत्वं वदसि कल्याणि तत्सर्वं च भविष्यति ।
सर्वान्मनोरथान्मेदे दास्यसित्वं च नान्यथा ॥१०२॥

जो संसारमें हमारे भक्त हैं चारों युगों, तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध हैं तुमको मैं शक्ति मानता हूं निस्सन्देह तुम्हारे व्रतमें स्थित जो हमारी पूजा करेंगे वे मोक्षको प्राप्त होंगे। तीज, अष्टमी, नवमी, चतुर्दशी इन सबमें विशेषकर एकादशी अत्यन्त प्रिया है इससे सब तीर्थों से पुण्य अधिक सत्य २ होगा यह तीन वाणीसे वरदिया तब तो एकादशी बड़ी हृष्ट-पुष्ट होगई ॥ १०६ ॥

इदं दत्वा वरं तस्यै तिस्रोवाचो न संशयः।
हृष्टापुष्टा च संजाता एकादशी महाव्रता ॥१०६॥

फिर भगवान्ने कहा कि तुम शत्रुको मारोगी, सब विघ्नोंको नाश करोगी, सिद्धि और वरको देवोगी ॥ १०७ ॥

शत्रुं हंसि परां तस्य ददासि परमां गतिम् ।
त्वं हंसि सर्वविघ्नानि सर्वसिद्धिवरप्रदा ॥१०७॥

जो मनुष्य एकादशीमें उपवास करते हैं उन्हें निस्सन्देह वैष्णव स्थान जहां भगवान् रहते हैं प्राप्त होता है ॥ १९५ ॥

एकादश्यां प्रकुर्वीत ह्युपवासं न संशयः।
ते यांति वैष्णवं स्थानं यत्रास्ते गरुड़ध्वजः ॥१५५॥

पंडितजी—इन दोनों बातोंमें कौनसी बात सची है परन्तु सनातनधर्मके मन्तव्यके अनुसार पुराणोंको व्यास महाराजने बनाया है। क्या व्यासजीकी ऐसी ही बुद्धि थी। नहीं! नहीं!! नहीं नहीं!!! वह बड़े ज्ञानी महात्मा थे इसीलिये तो हम कहते हैं कि यह पुराण महर्षिकृत नहीं हैं अब हम आपको २४ एकादशियोंके माहात्म्य संक्षेप के साथ पद्मपुराणसे सुनाते हैं।

मोक्ष ।

अ० ३९

अगहनके शुक्लपक्षकी एकादशी यह सब पापोंकी हरनेवाली मोक्ष नामकी है इसकी पूजाके लिये तुलसीकी मंजरी धूप, दीप, नाच, गीतसे रात्रिमें जागरण करै । पुराणोंको सुने तो जिसके पापसे पितृ नरकोंमें हों वह एकादशीके पुण्यभावसे मोक्ष पाते हैं ॥ १३ ॥

अधोयोनि गताश्चैव पितरो यस्य पापतः ।
अस्याश्च पुण्यदानेन मोक्षं यान्ति न संशयः ॥१३॥

चम्पकनगरमें वैषानस नाम एक राजा था जो प्रजाको पुत्रोंकी भांति पालता था जिसके यहां वेदके जाननेवाले ब्राह्मण भी रहते थे एक दिन रात्रिमें राजाने स्वप्न देखा कि हमारे पितृ नरकमें हैं ।

एवं राज्यं प्रकुर्वाणो रात्री स्वप्नस्य मध्यतः ।
स्वकीय पितरो दृष्ट्वा अधोयोनिगता नृप ॥ १६ ॥

राजा देखकर बड़े विस्मयको प्राप्त हो सब हाल स्वप्नका ब्राह्मणोंसे कहा कि मेरे पितृ नरकमें हैं बारम्बार रोते हैं उन्होंने हमसे कहा कि हमको नरकसे निकालो इसलिये वह व्रत बतलाइये कि जिससे पितृ मोक्षगामी हों ।

तब ब्राह्मणोंने कहा कि यहांसे थोड़ी दूरपर पर्वतमुनि चारों वेदोंके जाननेवाले बसते हैं । वहां जाओ । राजा गया और मुनिको दण्डवतकर बैठ गया । मुनिने कुशल पूछी राजाने कहा कि हमारे सातों अङ्गोंमें कुशल है परन्तु मैंने स्वप्नमें अपने पितरोंको नरकमें देखा है यही दुःख है इनके मोक्षका उपाय बतलाइये इसीके लिये मैं आपके पास आया हूं । मुनिने एक मुहूर्त्त ध्यानकर कहा कि तुम्हारे पिता राज्यके अभिमानसे राज्यधर्ममें प्रवृत्त हो स्त्रीके ऋतुकालमें किसी गांवको चलेगये और स्त्रीको ऋतुदान नहीं किया उसीके पापसे तुम्हारे पिता पितरों समेत घोरनरकमें डालेगये ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

इसलिये अब तुम अगहनकी मोक्षा नाम एकादशीका व्रत जो भ. वको करना चाहिये आप कर पिताको पुण्य दीजिये तिसके पुण्य प्रभावसे मोक्ष होगा। राजाने घर आकर उपरोक्त व्रत किया और व्रतका पुण्य राजाको देदिया जिसके देते ही आकाशमें फूलोंकी वर्षा हुई और राजा वैखानशके पिता और पितरों समेत मोक्षको गये॥४३॥

दत्ते पुण्यक्षणे नैव पुष्पवृष्टिरभूद्दिवि ।
वैखानसस्यता तो वै पितृभि मोक्षमाविशत् ॥४३॥

और वह आकाशसे पुण्यकारी वाणी बोले कि हे पुत्र तुम्हारा कल्याण हो ऐसा कह स्वर्गको चलेगये ॥ ४४ ॥

राजानं चान्तरिक्षे सगिरं पुण्यामुवाचह ।
स्वस्ति स्वस्तीति ते पुत्र प्रोच्य चैवं दिवं गतः ॥४४॥

इससे बढ़कर मोक्ष देनेवाली कोई एकादशी नहीं है इसके पुण्य की गिनतीको मैं नहीं जानता यह व्रत हमको बड़ा प्रिय है ॥ ४६ ॥

नातः परतराकाचित्मोक्षदैकादशी भवेत् ।
पुण्यसंख्यां न जानामि राजन्मे प्रियकृत्तमम् ॥४६॥

नोट—अब यहां पर यह विचारना चाहिये कि यदि यह पद्मपुराण महात्मा कृष्णके समयमें होता कृष्ण भगवद्गीतामें यह न लिखते कि अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् परन्तु पद्मपुराणी यह लिखते हैं कि इस एकादशीके करनेसे न केवल अपने ही पाप दूर होते हैं किन्तु पितृगणों तकको भी नरकसे स्वर्गमें पहुंचा देती है। कहिये पण्डितजी अब क्या और चाहिये लीजिये एकादशीका व्रत पितृगणोंको नरकसे स्वर्गमें भी पहुंचा देता है अर्थात् पुत्रादिके कर्म जन्मोंको भी लाभ पहुंचाते हैं। इसके उपरांत जब उपरोक्त एकादशी व्रतसे पितृ स्वर्गको चले जाते हैं फिर गया श्राद्धादिकी क्या आवश्यकता रही। सब मिल पितरोंके स्वर्गवासके लिये इसी व्रतकी ओर सनातनी भाइयोंको ध्यान करना चाहिये इसमें धन भी न्यून व्यय होगा समय कम खर्च तिस पर गया आदिके आने जानेकी हैरानी, मार्गकी थकावटकी बचत, फिर क्यों उधर ध्यान दिया जाता है—पण्डितजी पुराणोंकी अपार लीला है।

चिंतामणिके समान यह मनुष्योंको मोक्ष देने वाली है इससे पढ़ने और सुननेसे वाजपेय यज्ञका फलहोता है।

सफला।

पौषके कृष्ण पक्षमें सफला नाम एकादशी होती है सर्पोंमें जैसे शेषजी, पक्षियोंमें गरुड़, देताओंमें विष्णु, दो पांववालोंमें ब्राह्मण, ऐसे ही व्रतोंमें एकादशी श्रेष्ठ है। हेराजन्! वे मनुष्य सदैव हमारे पूज्य हैं जो एकादशी व्रत करते हैं वे इस लोकमें धनवान् होते हैं जब मरते हैं तो उनको मोक्ष मिलती है॥ ८॥

हरिवासरसंलीनाः कुर्वंत्येकादशीव्रतम्।
इहैव धनसंयुक्ता मृता मोक्षं वभंति ते॥ ८॥

महिष्पति नाम राजाकी चंपावती नगरीमें पांच पुत्र थे उनमेंसे बड़ा पुत्र सदैव भारी पापोंको करता रहता था। दूसरोंकी स्त्रियोंको भोगता और मदिरा पीता॥ १७॥

तेषां मध्य तु ज्येष्ठोत्र महापापरतः सदा।
परदाराभिचारी च वेश्यासक्तश्च मद्यपः॥१७॥

उसने पिताके द्रव्यको पाप कर्मोंमें ख़र्च किया नित्य ही असत व्रतोंमें रहता ब्राह्मणोंकी निन्दा करता॥ १८॥

पितुर्द्रव्यं तु ते नैव गामितं पापकर्मणा।
असद्वृत्ति रतो नित्यं भूसुराणां तु निंदकः॥ १८॥

राजाने अपने ऐसे लुम्पकथा नाम पुत्रको देख उसके भाइयोंसे सम्मति कर राज्यसे निकाल दिया जो सघन वनमें पहुंचा जहां वह जीवोंको मार कर निर्वाह करता। उसी वनमें एक पुराना पीपलका वृक्ष था उसीके समीप लुम्पकया रहता था बहुत काल बीतने पर पौषकी कृष्ण पक्षकी दशमीमें वृक्षोंके फल भोजन कर रात्रिमें वस्त्र

हीन जाड़ेके कारण प्राणहीनसा हो गया। और सूर्य्योदय तक वह को चेत न हुआ वरन सफला एकादशीके दो पहर दिनमें चेता और पांवोंसे पीड़ाके कारण चल भी न सका भूखसे अत्यंत पीड़ित हुआ और जीवोंके मारनेकी शक्ति भी न रही ॥ ३६ ॥

वनमध्ये गतस्तत्र क्षुत्क्षामः पीडितोऽभवत् ।
न शक्तिर्जीवघाते तु लुंपकस्य दुरात्मनः ॥३६॥

तब वह फल तोड़कर अपने आश्रमको लौटआया इतनेमें सूर्य्यनारायण अस्त होगये। फलोंको वृक्षकी जड़में धर हे तात क्या होगा ऐसा कह रोने लगा और यह कहा कि इन फलोंसे लक्ष्मीके पति भगवान् प्रसन्न होवें ऐसा कह उसको नींद न आई।

तबतो भगवान्‌ने उस दुरात्माका रात्रिमें जागरण और फलोंसे उसका सफला एकादशीका पूजन माना ॥४०॥

रात्रौ जागरणं मेने विष्णुस्तस्य दुरात्मनः ।
फलैस्तु पूजनं मेने सफलायास्तथानघ ॥४०॥

अकस्मात् लुम्पकयाने इस व्रतको किया तो अकंटक राज्य मिला ॥४१॥

अकस्माद् तमेवैतत्कृतवान्वै सलुंपकः ।
तेन पुण्यप्रभावेन प्राप्तं राज्यमकंटकम् ॥४१॥

कि जब तक सूर्य्योदय और विष्णुजी प्राप्त रहें तबतक वह राज्य भोगे तिसी समयमें आकाशवाणी हुई ॥४२॥

सूर्यस्योदयनं यावत्तावद्विष्णुर्जगामह ।
दिवि तत्कालमुत्पन्ना वागुवाचाशरीरिणा ॥

कि हे पुत्र तुम सफला एकादशीके प्रभावसे राज्यको प्राप्त होगे ऐसा वचन कहते ही वह लुम्पकया सुन्दररूप धारता हुआ ॥४३॥

राज्यप्राप्स्यसि पुत्रत्वं सफलायाः प्रसादतः ।
तथेत्युक्त तु वचसि दिव्यरूपधरोऽभवत् ॥४३॥

उसकी बुद्धि श्रेष्ठ वैष्णवी होगई और शोभायुक्त अकंटक राज्यको प्राप्त हुआ ॥४४॥

मतिरासीत्ततस्य परमवैष्णवी नृप ।
दिव्याभरणशोभाढ्यो लेभे राज्यमकण्टकम् ॥४४॥

उसने ५१० वर्ष राज्य किया उसके पुत्र स्त्रियां सुन्दर कृष्णके प्रसादसे हुई ॥४५॥

कृतं राज्यं तु तेनैवं वर्षाणि दशपंच च ।
मनोज्ञास्तस्य पुत्रास्तु दारा कृष्णप्रसादतः ॥४५॥

तब उसने शीघ्र राजको छोड़, पुत्रको दे, कृष्णके समीप प्राप्त हुआ कि जहां पर जाकर मनुष्य शोच नहीं करते ॥४६॥

अथ राज्यं परित्यज्य पुत्रे चैव समर्प्य च ।
ततः कृष्णस्य सां निध्यं च गत्वा न शोचति ॥४६॥

हे राजन् ! जो इस प्रकार सफला एकादशीका पूजन करता है, वह इसलोकमें सुख भोगता और मरकर मोक्षको प्राप्त होता है ।

एवं यः कुरुते राजन् सफला व्रतमुत्तमम् ।
इह लोके सुखं प्राप्य मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥४७॥

नोट—पण्डितजी राजाके पुत्रने श्रद्धासे व्रत नहीं किया इसपर विष्णुभगवान्‌ने इतना फल देदिया, परन्तु वर्त्तमान समयमें हमारे बहुधा सनातनी भाई बड़ी श्रद्धासे व्रत और जागरण करते हैं, फिर भी दीनदशामें ग्रसित हैं क्या विष्णुमहाराज इस समयमें किसी और कार्य्यमें लिप्त हैं जो अपने ऐसे श्रद्धालु भक्तोंके दरिद्रका भी नाश नहीं करते।

पुत्रदा ।

अ० ४१

पौष शुक्ला एकादशीका नाम पुत्रदा है जो तीनों लोकोंमें सबसे श्रेष्ठ है भद्रावती पुरीमें सुकेत नाम राजा जिनकी रानीका नाम चंपका था, पुत्रके न होनेसे दोनों क्लेशमें रहते थे, एक दिन राजा घोड़े पर सवार होकर सघन वनको गये जहां नाना प्रकारके पशु पक्षी और वृक्ष तालाब आदि थे, क्षुधा और जलसे पीड़ित तालाबके किनारे जहां मुनि लोग वेदका जप कररहे थे, पहुंचा और दंडवत कर उनसे पूछा कि आप लोग यहां किस लिये एकत्रित हैं मुनियोंने कहा कि आजसे पांचवे दिन माघका स्नान होगा इसके स्नानके लिये यहां एकत्रित हुये हैं। हे राजन् ! इस समय पुत्रदा नाम एकादशी है इसमें व्रत करने वालोंको भगवान् पुत्र देते हैं ॥ ४५॥

अद्य चैकादशी राजन् पुत्रदानामनागतः ।
पुत्रं ददात्यसौ विष्णुः पुत्रदा कारिणं नृणाम् ॥४५॥

इसप्रकारके वचन सुन एकादशी पुत्रदाका व्रत विधानसे किया और द्वादशी परायणकर मुनियोंके बारम्बार नमस्कारकर घर आये रानीने गर्भ धारण किया नवें मास तेजस्वी पुत्र हुआ जो कुछ काल के पीछे राजा हो प्रजाकी रक्षा करने लगा हे राजा एकान्तचित्त होकर जो व्रत करते हैं वे लोकमें पुत्रवान् होते हैं और परलोकमें सुख प्राप्त करते हैं इसके सुननेसे पढ़नेसे अग्निष्टोमका फल होगा है ॥५३॥

एकचित्तास्तु ये मर्त्याः कुर्वन्ति पुत्रदा व्रतम् ।
पुत्रान्प्राप्येह लोकेतु मृतास्ते स्वर्गगामिनः ॥
पठनाच्छ्रवणाद्राजन्नग्निष्टोमफलं लभेत् ।

नोट—श्रीमान् पण्डितजी; राजा दशरथजीने पुत्रोंके अर्थ ऋषियोंकी सम्मतिसे यज्ञकर पुत्र लाभ किया था परन्तु यहां एक एका-

दशी व्रतके करनेसे ही पुत्रकी प्राप्त होगई कहिये श्रीमान् क्या एका. दशीके व्रती पुत्रहीन नहीं हैं यदि हैं तो फिर क्यों क्या राजा दशरथ जीके समय यह पुराण न थे जिससे उनको अन्य उपाय करना पड़ा।

षट्तिला।

अ० ४२

माघ कृष्णमें जो एकादशी होती है उसको षट्तिला कहते हैं जिसको पुलस्त्यने दालभ्यसे कहा है।

एक समय दालभ्य ऋषि पुलस्त्यमुनिके पास गये और कहा महाराज मनुष्य ब्रह्महत्यादि अनेक पापोंसे युक्त हैं। पराया द्रव्य चुराते हैं। व्यसनमें मोहित होते हैं। वह नरकसे क्योंकर बिना परिश्रम किये थोड़े दानसे किस प्रकारसे बचें सो आप कहिये। पुलस्त्य ने कहा कि माघके कृष्णपक्षमें षट्तिला नाम एकादशीका व्रत करे। भगवान्का पूजन, कृष्णका नाम कीर्त्तन, जागरण, परमात्मासे प्रार्थना, जितेन्द्रिय रह, काम, क्रोध, ईर्षाको छोड़। अर्घ्यदे। ब्राह्मणको छतुरी दे। जूता कपड़े, श्यामा गाय, काले तिलके पात्रका दान करें क्योंकि जितनी संख्या तिल हैं व उतने हज़ार वर्ष स्वर्गमें बसता है तिलसे स्नान, उबटना, होम, जल, तिल, भोजन यह छः तिल भोजन पापके नाशने वाले हैं॥ २०, २१, २२॥

तान्प्रदद्यात्प्रयत्नेन यथाशक्ति द्विजोत्तमे।
तिलप्ररोहजाः क्षेत्रे यावत्संख्यास्तिलाद्विजः॥
तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते।
तिलस्नायी तिलोद्वर्ती तिलहोमी तिलोदकी॥
तिलदाता च भोक्ता च षट्तिला पापनाशना॥२२॥

पहिले मनुष्य लोकमें एक ब्राह्मणी हुई जो व्रतचर्य्या और देवपूजामें रत रहकर सदा हमारी पूजाकर व्रतोंसे शरीरको क्षेशित का-

रती रहती थी परन्तु भिक्षुकको भिक्षा और ब्राह्मणोंको तृप्त नहीं करती थी तब मैं कपालरूप धारणकर भिक्षाका पात्रले मनुष्यलोकमें जा उससे भिक्षा मांगी तब उसने बड़ा क्रोधकर मिट्टीका पिण्ड तांबे के वर्तनमें छोड़दिया तब भगवान् उसको लेकर स्वर्गको गये ॥ ३२ ॥

तया कोपेन महता मृत्पिण्डस्ताम्रभाजने ।
क्षिप्तोयावदहं ब्रह्मन् ! पुनः स्वर्गगतोद्विजा ॥३२॥

कुछ कालके पीछे वह स्त्री देहको त्याग स्वर्गको गई जहां मिट्टी के पिण्ड देनेके कारण सुन्दर घर मिला परन्तु उसमें अन्नादि कुछ भी न था तब वह भगवान्के पासगई और कहा मैंने बहुत व्रत उपवास किये हैं परन्तु मेरे घरमें कुछ दिखलाई नहीं देता उन्होंने कहा तुम विस्मय मत करो देवोंकी स्त्रियां तुम्हारे देखनेको आवेंगी उन्हींके उपदेशसे उसने षट्तिलाका व्रत किया कि जिससे उसके घर में धन, धान्य सोना चांदी भी भरगया । क्षणमात्रमें रूप और कांति को प्राप्त हुई । इसलिये जो मनुष्य जन्म २ में आरोग्य और दरिद्र का नाश करना चाहे वह षट्तिलाके व्रतको विधिपूर्वक तिलदान दे तो वह मनुष्य विना परिश्रम ही सब पापोंसे छूट जावे इसमें विधिपूर्वक सुपात्रको दान देदेसे सब पाप नाश होजाते हैं । कोई अनर्थ शरीरमें परिश्रम नहीं होता । ४९, ५०, ५१, ५२ ॥

अतितृष्णा न कर्त्तव्या वित्तशाठ्यं विवर्जयेत् ।
आत्मवित्तानुसारेण तिलान्वस्त्राणि दापयेत् ॥४९॥
लभते चैवमारोग्यं नरो जन्मनि जन्मनि ।
न दारिद्र्यं न कष्टत्वं न च दौर्भाग्यमेव च ॥५०॥
सम्भवेद्वै द्विजश्रेष्ठ षट्तिला समुपोषणात् ।
अनेन विधिना भूप तिलदाता न संशयः ॥ ५१ ॥
मुच्यते पातकैः सर्वैरनायासेन मानवः ।
दानं च विधिवत्पात्रे सर्वपातकनाशनम् ॥५२॥

नोट—तिलोंके दानसे एक हज़ार वर्ष स्वर्ग मिलता है क्या इससे भी सहज कोई और उपाय स्वर्गकी प्राप्तिका होसकता है फिर मैं पूछता हूं कि व्रतादिसे शरीर सुखाना अथवा कष्ट उठाना और विष्णुकी पूजा करनेसे क्या प्रयोजन है हां इस कथासे सुपात्रको दान देनेकी आज्ञा मिलती है अफ़सोस है कि हमारे सनातनी भाई इस पर दृष्टि डालकर दान नहीं करते ।

जया ।

अ० ४३

युधिष्ठिरके पूछनेपर कृष्णने कहा कि माघके शुक्लपक्षमें जया नाम एकादशी होती है इसके व्रत करनेसे मनुष्य प्रेत नहीं होता इससे श्रेष्ठ कोई पापनाशिनी और मोक्षदायक नहीं है ॥ ५, ६ ॥

पवित्रा पापहंत्री च काममोक्षदा नृणाम् ।
ब्रह्महत्यापहंत्री च पिशाचत्वविनाशनी ॥
नैव तस्याव्रतेचीर्णे प्रेतत्वं जायते नृणाम् ।
नातः परतराकाचित्पापघ्नी मोक्षदायिनी ॥

इससे यत्नसे इसको करना चाहिये । एक समयमें स्वर्गमें इन्द्र राज करते थे जहां कल्पवृक्षयुक्त नन्दनवनमें देवता लोग सुखपूर्वक रहते थे एकबार इन्द्र इच्छापूर्वक आनन्दसे पचास करोड़ स्त्रियों समेत नाचने लगे और गन्धर्वोंकी स्त्रियां गाने लगीं जिनमें बहुत चित्रसेनकी मालिनी स्त्रीकी कन्या पुष्पदन्ती और पुष्पदन्तका पुत्र माल्यवान् जो पुष्पदन्तीके रूपसे अत्यन्त मोहित था इससे वह शुद्ध गान करसकी तब इन्द्रने अपना अपमान समझ क्रोधित हो दोनोंको शाप दे बोले कि हे पतित मूर्ख तुम दोनोंको धिक्कार है हमारी आज्ञाको तुमने भङ्ग किया इससे स्त्रीभाव धारण करनेवाले पिशाच हो मनुष्यलोक प्राप्त होकर कर्मके फल भोग करो ।

युवां पिशाचौ भवतां दम्पती भावधारिणौ ।
मर्त्यलोकमनुप्राप्तौ भुञ्जानौ कर्मणः फलम् ॥२६॥

इन्द्रके शापसे वह दोनों पिशाच हो हिमवान् पर्वतपर प्राप्त हुए और मारे जाड़ेके व्याकुल पिशाचने पिशाचनीसे कहा कि क्या रोम-हर्षन हमने अधिक पाप किया जिससे अपने ही दुष्कर्मसे पिशाचता प्राप्त हुई जो घोरनरकसे भी अधिक दुःख देनेवाली है इसलिये सब प्रकारसे पाप न करने चाहियें । इसी चिन्तामें दोनों दुःखित होरहे थे इतनेमें माघकी जया एकादशी प्राप्त हुई तो उस दिन आहार, जल पान न किया । न किसी जीवको मारा, न फल खाये, केवल पीपलके वृक्षके समीप दुःखयुक्त स्थिर रहे । सूर्य्यनारायण अस्त होगये इसी दुःखमें रात व्यतीत हुई । द्वादशीके सूर्य्य उदय हुए । इसी व्रतके प्रभावसे दोनों पूर्वके समान रूपयुक्त हो विमानपर चढ़ स्वर्गको जा इन्द्रके आगे प्रणाम किया । तब इन्द्र विस्मय हो बोले कि मेरे शापको किसने छुड़ाया तब माल्यवान्ने कहा कि भगवान्के प्रसाद, जया एकादशीके व्रत और हे स्वामिन् ! आपकी भक्तिसे पिशाचपन गया ॥ ४८ ॥

वासुदेवप्रसादेन जयायास्तु व्रतेन च ।
पिशाचत्वं गतं स्वामिंस्तवभक्तिप्रभावतः ॥

इन्द्र यह सुनकर बोले कि तुम दोनों भगवान्की भक्ति एकादशीके करनेवाले हो इसलिये हमको भी पूज्य हो तुम निस्सन्देह पुष्पदन्तीके संग विहार करो । तब कृष्णने कहा कि जिसने जयाका व्रत किया उसने सब दान, यज्ञ किये ॥ ५, ३ ॥

सर्वदानानि ते नैव सर्वयज्ञा अशेषतः ।
दत्तानिकारताश्चैव जयायास्तु व्रतं कृतम् ॥

वह मनुष्य करोड़ कल्प तक वैकुण्ठमें निश्चय आनन्द करता है हे राजन् पढ़ने, सुननेसे अग्निष्टोमका फल पाता है ॥ ५४ ॥

कल्पकोटिभिर्वेत्तावद्वैकुण्ठे मोदते ध्रुवम् ॥ ५४ ॥

नोट—पण्डितजी इस कथामें बहिनपर भाईका आसक्त होना लिखा है। तिसपर भी भगवान्ने विमानपर चढ़ा स्वर्गमें पहुंचा दिया और इन्द्र महाराजने स्वयं आज्ञा देदी कि तुम अपनी बहिनके साथ विहार करो क्यों न हो जब इन्द्र महाराज स्वयं ही ५० करोड़ स्त्रियों के साथ नाच रहे थे प्यारे पण्डितजी आप स्वयं तो विचार करें। क्या हमारे प्राचीन पुरुष और देवता ऐसे ही थे जो उपरोक्त कर्म करने वालोंको स्वर्गमें रहनेकी स्पष्ट आज्ञा देदी। फिर भला पापों की वृद्धि क्यों न हो।

विजया।

अ० ४४

फागुनके कृष्णपक्षकी एकादशीको विजया कहते हैं। पूर्व समयमें जब रामचन्द्र १४ वर्षके लिये वनमें गये और पञ्चवटीपर सीताने लक्ष्मण समेत निवास किया जहांसे यशस्विनी सीताको रावण हर ले गया। जिसके दुःखसे रामचन्द्रजी मोहको प्राप्त हो सीताको ढूंढ़ते हुये मरे जटायूके पास आये और कबन्धको मार सुग्रीवके साथ मित्रताकी और वानर सीताको ढूंढ़नेको गये तब हनूमानने सीताकी लङ्कामें होनेकी ख़बर दी तब सुग्रीवकी सम्मतिसे लङ्कापर चढ़ाई की तब रास्तेमें समुद्र मिला।

सौमित्रे केन पुण्येन तीर्यते वरुणालयः ॥१२॥

तब रामजीने लक्ष्मणसे कहा कि हे लक्ष्मण किस पुण्यसे इस समुद्रसे पार हों क्योंकि यह सदैव अगाध और जलके जन्तुओंसे भरा है कोई उपाय नहीं दीखता जिससे इसको पार होजावें।

उपायं नैव पश्यामि येनासौ सुतरो भवेत् ॥१२॥

तब लक्ष्मणने कहा कि आप आदिदेव हैं यहांसे दो कोसपर बकदाल्भ्य मुनि और बहुतसे ब्राह्मण रहते हैं उनसे चलकर कोई

उपाय पूछिये यह सुन रामजी वहां पहुंच मुनिको मस्तकसे प्रणाम कर बोले कि हे मुनिजी आपकी कृपासे जिसप्रकार इस समुद्र उतर जावें उस उपायको प्रसन्न होकर इसी समय कहिये ।

भवश्चानुकूलत्वात्तीर्यतेब्धिर्यथा मया ।
तमुपायं वद मुने प्रसादं कुरु साम्प्रतम् ॥२०॥

यह सुन वकदालभ्य मुनिने कहा कि हे राम आज तुम व्रतोंमें जो व्रत उत्तम है उसको कीजिये जिसके करनेसे सहसा तुम्हारी जीत होगी लङ्काको राक्षसों समेत जीत निर्मल कीर्त्ति होगी ॥२३॥

कृतेन येन सहसा विजयस्ते भविष्यति ।
लंकां जित्वा राक्षसंश्च स्वच्छांकीर्तिमवाप्स्यसि ॥२३॥

एकाग्र मन होकर इस व्रतको करो जो फागुनके कृष्णपक्षमें विजया एकादशी होती है ॥ २४ ॥

एकाग्रमानसो भूत्वा व्रतमेतत्समाचर ।
फाल्गुनस्यासिते पक्षे विजयैकादशी भवेत् ॥२४॥

तिसके व्रतसे आपकी जीत होगी वानरों समेत समुद्रको तर जाओगे अब हे राजन् इसकी विधि सुनो ॥ २५ ॥

तस्या व्रतेन हेराम ! विजयस्ते भविष्यति ।
निःसंशयं समुद्रं त्वं तरिष्य सवानराः ॥ २५ ॥

दशमीके दिन एक घड़ा सोने, चांदी, तांबे या मिट्टीका स्थापन करे और उसमें जल पत्ते छोड़देवे । सप्तधान्य नीचे यवोंको ऊपर रक्खे तिसके ऊपर सोनेके प्रभु नारायणको स्थापन करे एकादशीके दिन सवेरे स्नान करे फिर कलशको रख कण्ठमें माला पहिरावे सुपारी, नारियल, चन्दन, धूप दीप अनेक प्रकारकी नैवेद्य लगावे

कलशके आगे अच्छी २ कथाओंसे दिन रात्रि व्यतीत करें अखंड व्रतके हेतु घीके दीपसे प्रकाश करे जब द्वादशीके सूर्योदय हों तब कलशको नदी झरना तालावमें विधिपूर्वक पूजन कर स्थापन करे सोनेकी भगवान्‌की मूर्तिको वेदके पारगामी ब्राह्मणको देवे हेराम यूथों समेत इस व्रतको यत्नपूर्वक करो तुम्हारी जय होगी ॥३५॥

इति श्रुत्वा ततो रामो यथोक्तमकरोत्तदा ।
कृते व्रते सविजयी बभूव रघुनन्दनः ॥३६॥

ऐसा सुनकर उसी समय में रामजीने यथोचित व्रत किया व्रतके करनेसे ही रामकी जीत हुई ।

प्राप्ता सीता जिता लंका पौलस्त्यो निहतो रणे ।
अनेन विधिना पुत्र ये कुर्वंति नराव्रतम् ॥

लंकाको जीता, रावणको मारा, सीताको पाया इस विधिसे हे पुत्र जो व्रत करते हैं ॥३७॥

इहलोके जयप्राप्तिः परलोकस्तथा क्षयः ।
एतस्मात्कारणात्पुत्र कर्तव्यं विजयाव्रतम् ॥३८॥

तिनकी इसलोकमें जीत होती है, मरने पर नाश रहित स्वर्ग मिलता है इस कारण हे पुत्र विजयका व्रत करना चाहिये ।

विजयायाश्चमाहात्म्यं सर्वकिल्विषनाशनम् ।
पठनाच्छ्रवणाच्चैव वाजपेयफलं लभेत् ॥३९॥

विजयाके माहात्म्यसे सब पाप नाश होते हैं । पढ़ने सुननेसे वाजपेय यज्ञका फल होता है ।

नोट—प्यारे भाइयो क्या अब भी इसमें कुछ सन्देह रहा कि ऋषि श्रीरामचन्द्रजी को ईश्वर बताते थे ।

१-दुःख मोहका होना, सीताका ढूंढ़ना क्या यही सर्वज्ञताके लक्षण हैं।

२-जिनको यह भी ज्ञात नहीं कि किस पुण्यसे समुद्र पार हों, और क्या उपाय करें।

३-भला जो अपने आप तरनेके लिये तो साधारण मुनिसे उपाय पूंछे तब दूसरोंको क्या तार सकते हैं, दाशरथी रामके जपने वाले अब भी इस श्लोक पर दृष्टि डाल अपने आपको सम्हालो और वैदिक शरणमें आओ।

४-रामचन्द्र उपास्य थे, वा उपासक यदि उपास्य थे, तब तो यह कथा झूंठी और यदि वे उपासक थे, तो उनकी उपासना करना वृथा है।

आमला।

अ० ४५

फागुनके शुक्ल पक्षमें आमला एकादशी होती है जो विष्णुलोक को देनेवाली है। पूर्व समयमें जबकि सब जीव नष्ट होगये और एक जल ही जल होगया और परमात्मा सनातन पुरुष अपने नाशरहित श्रेष्ठ ब्रह्मपदको प्राप्त भये, अनन्तर जागते हुये ब्रह्मके मुखसे चन्द्रमाके समान दीप्तिवाला थूकनेसे विन्दु उत्पन्न हुआ वह पृथिवी पर गिर-पड़ा ॥१०॥

ततोस्य जाग्रततो ब्रह्म मुखाच्छशिसम प्रभुः।
ष्ठीवनाद्विंदुरुत्पन्नः सभूमौ निपपातह ॥१०॥

तो उस विन्दुसे भारी आंवलेका वृक्ष उत्पन्न हुआ, उसकी शाखा प्रशाखा बहुत फैलीं और वह फलके भारसे नवगया ॥११॥

तस्माद्विंदोः समुत्पन्नः स्वयं धात्री नगोमहान्।
शाखाप्रशाखाबहुलः फलभारेण नामित ॥११॥

इसके पीछे ब्रह्माने अन्नदेवता राक्षसआदिको रचा देवता लोग आंवलेके पास पहुंचे और देखकर चिन्ता कर पानेलगे कि हम नहीं जानते। तब आकाशवाणी हुई कि यह आंवलेका वृक्ष श्रेष्ठ वैष्णव है इसके स्मरणसे गोदानका फल होता है ॥१६॥

आमलकीन गोह्येष प्रवरो वैष्णवो मतः।
अस्यसंस्मरणाद्देव लभेद्गोदानजं फलम् ॥१६॥

छूनेसे दूना खानेसे तिगुना फल होता है तिससे सब यत्नसे आंवला सदा सेवने योग्य है ॥ १७ ॥

यह सब पाप नाशने वाली वैष्णवी है इसको जड़से विष्णु ऊपरसे ब्रह्मा ॥ १८ ॥

सर्वपापहरा प्रोक्ता वैष्णवीपापनाशिनी।
तस्या मूलेस्थितो विष्णुस्तदूर्ध्वे च पितामहः ॥१८॥

स्कंदमें परमेश्वर, महादेव शाखाओंमें, सब मुनि प्रशाखाओंमें देवता ॥ १९ ॥

स्कंधे च भगवान् रुद्रः संस्थितः परमेश्वरः।
शाखा सुमुनयः सर्वे प्रशाखासु च देवताः ॥१९॥

पत्तोंमें देवता पुष्पोंमें पवन फलोंमें सब प्रजापति स्थित हैं ॥२०॥

पर्णेषुचास्ते देवाः पुष्पेषु मरुतस्तथा।
प्रजानां पतयः सर्वे फलेष्वेव व्यवस्थिताः ॥

मैंने सर्वमयी, देवमयी इस आमलको कहा तिससे विष्णुकी भक्तिमें परायणों करके यह पूजने योग्य है ॥ २१ ॥

सर्वदेवमयी ह्येषा धात्री च कथिता मया।
तस्मात्पूज्यतमा ह्येषा विष्णुभक्तिपरायणैः ॥ २१ ॥

तब देवता बोले आप कौन हैं तब वाणीने कहा कि जो सब प्राणियोंके भुवनोंका कर्त्ता है वही मैं विस्मित विद्वानोंको देख सनातन विष्णुको प्राप्त हुआ हूं ॥ २३ ॥

यः कर्त्ता सर्वभूतानां भुवनानां च सर्वशः ।
विविस्मतान् विदुषःप्रेक्ष्यसोऽहंविष्णु सनातनः ॥२३॥

तब सब उनकी स्तुति करने लगे । तब भगवान्ने कहा कि क्या चाहिये तब देवताओंने कहा कि थोड़े परिश्रमसे बहुत फल देने वाले व्रतोंमें उत्तम व्रत कहिये । जिससे विष्णुलोक भी प्राप्त हो। तब भगवान्ने फागुनकी शुक्ल पक्ष आमला एकादशीका व्रत बतलाया और कहा कि एकादशीके दिन प्रथम उठ दातौन कर पतित लोगोंके दर्शन न करें । फिर तीसरें पहरको नदी तालाबमें स्नान करे । फिर मासे या आधे मासेकी परशुरामकी सोनेकी मूर्त्ति बनावे फिर घर आकर पूजा होम करे । फिर सामग्री समेत आमलेके नीचे जावे फिर वहां जाकर चारों ओर मन्त्रपूर्वक शुद्ध कलशको स्थापन करे । पंचरत्न छोड़े । छतुरी, खड़ाऊं, रख सफेद चन्दनसे पूजा करें । फिर कलशमें माला डाल धूपदीप देवे और उसके ऊपर रख लाईसे भर परशुरामकी मूर्त्तिको स्थापन करे फिर भक्तिसे रात्रिमें जागरण कर धर्मके आख्यान स्तोत नाच गीतमें वितावे फिर आंवलेकी विष्णुके १०८ या २८ नामोंसे प्रदक्षिणा करे फिर ब्राह्मणकी पूजाकर परशुराम की छतुरी खड़ाऊं सब ब्राह्मणोंको देदेवे फिर भगवान्से प्रार्थना करे कि आप हमारे ऊपर प्रसन्न हों और आंवलेकी प्रदक्षिणा कर विधिसे स्नान कर ब्राह्मणोंको भोजन करा कुटुम्ब सहित आप भी खावे इस प्रकार करनेसे जो पुण्य होता है वह सब मैं तुमसे कहता हूं सब तीर्थ सब दानोंमें जो फल है सब यज्ञोंसे अधिक फल होता है यह व्रतोंमें उत्तम व्रत तुमसे कहा इतना कह भगवान् अंतर्द्धान हो गये और ऋषियोंने संपूर्ण व्रत किया ।

सर्वयज्ञाधिकं चैव लभते नात्र संशयः ।
एतद्वः सर्वमाख्यातं व्रतानामुत्तमं व्रतम् ॥ ६१ ॥
एतावदुक्त्वादेवेशस्तत्रैवां तरधीयत ।
तच्चापि ऋषियः सर्वे चक्रुः सर्वमशेषतः ॥ ६२ ॥
तथात्वमपि राजेन्द्र कर्तुं मर्हसि सत्तम ।
व्रतमेतद्दुराधर्षं सर्वपापप्रमोचनम् ॥ ६३ ॥

१२१ अ० में आमलेका माहात्म्य है जो कोई आमलेसे भूषित मस्तक हाथ मुंह देहमें आमलोंको धारण करता और उन्हींको खाता है वह नारायण होता है ।

धात्रीफलकृताहारो नरो नारायणो भवेत् ॥१२।१२॥

जो आंवलोंको वैष्णव धारण करता है देवताओंका प्रिय होता है मनुष्योंकी क्या कथा और तुलसी आंवलेको विशेषकर न त्यागें जबतक कण्ठमें माला स्थित रहेगी तबतक भगवान् उसके पास रहते हैं आमला, द्वारिकाकी मिट्टी, तुलसी जिसके घरमें रहती है उसका जीवन सफल है जितने दिन मनुष्य कलियुगमें आंवलेकी माला धारण करता है उतने ही हज़ार वर्ष वैकुण्ठमें निवास होता है जो आंवले, तुलसीकी दो मालाओंको धारण करता है वह करोड़ कल्प स्वर्गमें वास करता है ।

नोट—भूगर्भ पदार्थविद्याके ज्ञाता इस कहानीपर विशेष ध्यान दें कि विष्णुके थूकसे आमलेका वृक्ष उत्पन्न हुआ शोक कि ऐसी गढ़ना और व्यासजी निर्माता । ज्ञात होता है कि पुस्तक निर्माताने दर्शन शास्त्रोंका स्वप्नमें भी दर्शन नहीं किया था यदि विष्णुके थूकसे आमलेका वृक्ष उत्पन्न हुआ तो उस वृक्षमें भी विष्णु कैसे ही गुण होने चाहियें क्योंकि "कारणगुणपूर्वकः कार्य्यगुणोदयः" अर्थात् जो कारणमें गुण होते हैं वही कार्य्यमें भी आते हैं ।

कविता भी हो तो ऐसी कि आंवलेके वृक्षको साक्षात् विष्णु ही बना दिया। इस जगहपर उन उपमा देनेवालोंको भी शिर झुकाना पड़ा कि जिन्होंने कमरको बालसे भी पतली लिखा है।

प्रायः देखते हैं कि ग्रीष्मऋतुमें प्रत्येक जातिके प्रत्येक जन आंवलेका येनकेनप्रकारेण सेवन करते हैं तब तो न मालूम कितने नारायण बनगये होंगे और यदि यह नारायण बनगये तो हमारे सनातनधर्मी भाइयोंके सब ही पूज्य होंगे आंवलेका फल क्याहै मानों नारायण बनानेकी गोली है सनातनधर्मी भाइयो! फिर ऐसे अवसरको क्यों खोते हो एक २ फल खाकर साक्षात् नारायण बनजाओ।

२-क्या सनातनधर्मी भगवान् एकदेशी हैं तब तो यदि सौ दो सौ आदमी काला ही माला धारण करलें तब भगवान् किस २ के पास रहेंगे। यदि तुलसी और आंवलेकी मालासे करोड़ कल्प तक स्वर्ग मिलता तो पूर्व ऋषि, मुनि और महात्मा तपस्याकर नानाप्रकारके कष्ट क्यों उठाते। सच तो यह है कि इन्हीं असरुभय और आपान तुरुकोंने सनातनधर्मी द्विजातियोंको सन्ध्या, अग्निहोत्रादिसे छुड़ा शूद्रत्वको प्राप्त करा दिया शोक फिर भी विचार नहीं करते।

पापमोचनी।

अ० ४६

लोमशने मानधातासे कहा कि चैतके कृष्णपक्षमें पिशाच नाशने वाली पापमोचनी एकादशी कहलाती है॥ ४॥

चैत्रमास्यसिते पक्षे नाम्ना वै पापमोचनी।
एकादशी समाख्याता पिशाचत्वविनाशिनी॥

उसी कामना, सिद्धि कल्याणको, देनेवाली कथाको कहता हूं। सुनो, पूर्व समयमें चैत्ररथ वनमें वसन्त समयमें गान्धर्वोंकी कन्या किन्नरोंके साथ रमण कररहीं थी इन्द्रादि देवता भी क्रीड़ामें लगरहे

थे वही मेधानाम ब्रह्मचारी ऋषि थे उनके मोहनेके लिये युक्तियां कररही थी उनमेंसे मंजुघोषा नाम उनके स्थानके पास मीठे स्वरोंसे गाती और कामके बाणोंको चलाने लगी और मेधावी मुनिको देख कामके वशीभूत होगई और मुनि भी उसपर मोहित होगये तब मंजुघोषा वीणाको नीचे धर मुनिको लिपट गई। मुनीश्वरने वृक्षमें लताकी नाईं लिपटा जानकर रत किया ॥ २१ ॥

वल्लितेव लता वृक्ष वातवेगेन कम्पितम्।
सोपिरमेतया सार्द्धं मेधावीमुनिपुंगवः ॥ २१ ॥

उसके उत्तमरूपको देखकर शिवतत्व चला गया कामतत्वके वशमें प्राप्त होगये ॥ २२ ॥

तस्मिन्नेव ततो दृष्ट्वा तस्यास्तं देहमुत्तमम्।
शिवतत्वं गतं तस्य कामतत्ववशं गतः ॥ २२ ॥

उन कामीने रमण करते हुए रात्रि, दिन भी नहीं जाना, इस प्रकार मुनिका आचार तो लोप होगया और बहुत समय व्यतीत होगया ॥ २३ ॥

न निशां न दिनं सोपि रमन् जानाति कामुकः।
बहुवर्षगतः कालो मुनेराचारलोपतः ॥२३॥

मंजुघोषामुनिसे बोली कि मैं देवलोकको जाना चाहतीहूं मुनिने कहा कि इस समय प्रदोशव समयमें जाना चाहती हो प्रातःकालको संध्या तक हमारे समीप रहो मारे डरके ५५ वर्ष ९ महीने ३ दिन मुनिके साथ रमण कर कहने लगी कि मैं अपने घरको जाऊगी ! मेधावी बोले इस समय प्रभाती है जबतक हम संध्या करें तबतक यहीं स्थित रहो तब वह मुस्कराकर कहने लगी कि आप बीते हुये समय को तो विचार कीजिये तबतो मुनि ५७ वर्ष उसके साथ रमण करते हुये विचार क्रोध कर तपस्याका नाश होते हुये देख उससे बोले कि

तू पिशाची हो इस प्रकार उसको शाप दिया कि हे पापे हे दुराचारे तुझको धिक्कार है। ३३ ॥

समाश्च सप्तपंचाशद्गतास्य तया सह ।
चक्रोध सततस्तस्यैज्वालामाली बभूवह ॥३३॥
नेत्राभ्यां विस्फुलिंगान्समुंचमानोति कोपनः ।
कालरूपां तु तां दृष्ट्वा तापसः क्षयकारिणीम् ॥३४॥
दुःखार्जितं क्षयं नीतं तपोदृष्ट्वातयां सह ।
स कंपोष्ठो मुनिस्तत्र प्रत्युवाचाकुलेंद्रियः ॥३५॥
तां शशापथ मेधावी त्वं पिशाची भवेति च ।
धिक् त्वां पापे दुराचारे कुलटे पातकप्रिये ॥२६॥

मुनिके शापसे जलती हुई नम्रतासे उनकी प्रसन्नताके लिये शाप के अनुग्रह के लिये कहने लगी कि सज्जनोंका संगवचनों से होता है आपके साथ मुझे बहुत वर्ष बीतगये इस कारण आप मुझसे प्रसन्न हूजिये तब मुनि बोले कि हे भद्रे शापके अनुग्रह करने करने वाला वचन सुनिये मैं क्याकरूं हे पापे तूने मेरा तप नाश कर दिया। ३८॥

शृणु मे वचनं भद्रे शापानुग्रहकारकम् ।
किं करोमि त्वया पापे क्षयं नीतं महत्तपः ॥३९॥
चैत्रस्य कृष्णपक्षे तु भवेदेकादशी शुभा ।
पापमोचनिकानाम सर्वपापक्षयंकरी ॥४०॥

चैतके कृष्ण पक्षमें पापमोचन नाम एकादशी होती है वह सब पापोंको नाशती है। उसके व्रत करने से पिशाचत्व जाता रहता है। ऐसा कह मेधावी पिताके आश्रम को चले गये। पिता च्यवन पुत्रको देखकर बोले पुत्र तूने पुण्यतो सब नाश करडाला मेधावीने कहा कि मैंने अप्सराके साथ रमणकर पापकिया अब हे तात! प्रायश्चित्त

कहिये जिससे पापनाश होजावे। तब च्यवन बोले कि चैत्र कृष्ण पक्षमें पापमोचनी एकादशी होती है जिसके व्रत करने से पापकी राशि भी नाश होती है। ४४ ॥

चैत्रस्य चासिते पक्षे नाम्ना वै पापमोचनी।
अस्याव्रते कृत पुत्र पापराशिः क्षयं व्रजेत् ॥

पिताके वचन सुन उन्होंने यह व्रत किया जिससे पाप नाशहोगये और तपस्यायुक्त होगया। ४५ ॥

इति श्रुत्वा पितुर्वाक्यं कृतं तेन व्रतोत्तमम्।
गतं पापं क्षयं तस्य तपोयुक्तो बभूवसः ॥४५॥

उस मंजुघोषाने भी उत्तम व्रत किया वह भी पापमोचन के व्रतसे पिशाचत्वसे छूट गई और सुन्दर रूप धारण कर वह अप्सरा स्वर्ग में चली गई। ४६ ॥

साप्येवं मंजुघोषा च कृत्वैतद्व्रतमुत्तमम्।
पिशाचत्वाद्विनिर्मुक्ता पापमोचनिकाव्रतात् ॥
दिव्यरूपधरा सा वै गतान्तकेवराप्सराः ॥४६॥

लोमश मुनि बोले कि हे मान्धाता मनुष्यमें श्रेष्ठ जो पापमोचन व्रत करते हैं उनके सब पाप नाश होजाते हैं॥ ४७ ॥

पापमोचानिकां राजन् ये कुर्वन्ति नरोत्तमाः।
तेषां पापं च यत्किञ्चित्तत्सर्वं च क्षयं व्रजेत् ॥४७॥

हे राजन् ! पढ़ने, सुननेसे हज़ार गौओंका फल प्राप्त होता है ब्राह्मणका मारनेवाला, सोनेका चुरानेवाला, मदिरा पीनेवाला, गुरुपत्नीसे गमन करनेवाला ॥ ४८ ॥

पठनाच्छ्रवणाद्राजन् ! गोसहस्रफलं लभेत् ।
ब्रह्महाहेमहारी च सुरापो गुरुतल्पगः ॥ ४८ ॥

यह सब इस व्रतके करनेसे पापरहित होजाते हैं और यह व्रत बहुत पुण्य देनेवाला और व्रतोंमें उत्तम है।

व्रतस्य चास्य करणात्पापमुक्ता भवन्ति ते ।
बहुपुण्यप्रदं ह्येतत् कारणाद्व्रतमुत्तमम् ॥४९॥

नोट—कहिये सनातनधर्मी भाइयो अब भी आपको कुछ शङ्का शेष रहगई कि प्राचीन समयमें आपके पौराणिकी मनुष्य प्रायश्चित्तके द्वारा शुद्ध होते थे। पौराणिक भाइयो यदि यह कथा सत्य है तो कृपाकर अपने पतित भाइयोंको क्यों नहीं व्रत कराकर शुद्ध करते।

धर्मशास्त्रमें परस्त्री गमनका महापाप लिखा है जो कि ऐसे साधारण व्रतोंसे शुद्ध नहीं होसकता किन्तु कर्मानुकूल अवश्य फल भोगने पड़ेंगे। इसी प्रकार ब्रह्महत्या, गुरुपत्नीगमन जो कि महापातकोंमें गिनाये गये हैं एकादशीके व्रतसे छूटने लिखे हैं। ऐसी शिक्षा घोरपापमें प्रवृत्त करानेवाली और मनुष्योंको दुष्कर्मसे निर्भय प्रदान करनेवाली नहीं तो क्या ?।

कामदा।

अ० ४७

चैत्र शुक्लपक्षमें कामदा एकादशी होती है। पूर्व समयमें नागपुर नाम नगरीमें पुण्डरीक इत्यादि नाग रहते थे वहांका पुण्डरीक राजा था जिसकी गन्धर्व, किन्नर, अप्सरा सेवा करती थीं जिनमें से ललिता, ललित एक दूसरेसे प्रसन्न धन, धान्यसे युक्त रहते थे एक दिन ललितने गीत गाते हुए ललिताका स्मरण किया जिसके कारण गानमें आनन्द न आता था जिसको कर्कोटने जानकर पुण्डरीकसे कहा। सर्पोंके राजा पुण्डरीकने क्रोधमें आ शाप दिया कि रे दुर्बुद्धे तू पुरु-

षोंका खानेवाला राक्षस होजा। तब वह राक्षस होगया ललिताने उसकी बुरी सूरतको देख दुःखित हो पतिके साथ वनमें घूमने लगी और वह वनमें पुरुषोंको खाने लगा, ललिता एक सुन्दर स्थानको देख जहां शांति देह मुनि रहते थे नमस्कारकर उनके आगे खड़ी होगई। मुनिने उसको दुःखित देख वृत्तान्त पूछा तब उसने सब वृत्तान्त कहते हुए कहा कि कि मेरा स्वामी राक्षस होगया है जिससे मुझको बड़ा क्लेश रहता है मुझको कोई ऐसा व्रत बतलाइये कि जिससे वह राक्षसपनेसे छूट जाय। तब ऋषिने कहा कि तुम चैत्रमास शुक्लपक्षकी कामदा एकादशीका व्रत विधिपूर्वक करो वह पुण्य स्वामीको दो उसने वैसा ही किया द्वादशीके दिन ब्राह्मणके समीप भगवानके आगे अपने पतिके तारनेके लिये कि मैंने कामदा एकादशीका व्रत किया है उसके पुण्यके प्रभावसे मेरे पतिको पिशाचता दूर होजाय॥ ३४॥

चैत्रमासस्यरम्भोरु शुक्लपक्षोस्ति सांप्रतम्।
कामदैकादशीनाम पापघ्नी ललिते परा॥ २९॥
कुरुष्व तद्व्रतं भद्रे विधिपूर्वं मयोदितम्।
अस्य व्रतस्य यत्पुण्यं तत्स्वभर्त्रे प्रदीयताम्॥३०॥
दत्ते पुण्ये क्षणात्तस्य शापदोषः प्रयास्यति।
इति श्रुत्वा मुनेर्वाक्यं ललिता हर्षिताभवत्॥३१॥
उपोष्यैकादशीं राजन् द्वादशी दिवसे तथा।
विप्रस्यैव समीपेतद्वासुदेवस्य चाग्रतः॥ ३२॥
वाक्यमुवाच ललिता स्वपत्युस्तारणाय वै।
मया तु तद्व्रतं चीर्णं कामदाया उपोषणम्॥३३॥
तस्य पुण्यप्रभावेन गच्छ त्वस्य पिशाचता।
ललितावचनादेव वर्त्तमानोपि तत्क्षणे॥ ३३॥

ललिताका पाप जाता रहा सुन्दर देहरूप होगया। राक्षसता जाकर गन्धर्वता प्राप्त होगई ॥ ३५ ॥

गत पापः सललितो दिव्यदेहो बभूवह ।
राक्षसत्वं तस्य प्राप्ता गन्धर्वता पुनः क्रमात् ॥३५॥

सोना और रत्नोंसे युक्त होकर ललिताके साथ रमण करने लगा फिर पहिले रूपसे अधिक दोनों श्रेष्ठ विमानपर चढ़कर ॥३६॥

हेमरत्नसमाकीर्णो रेमे ललितया सह ।
विमानवरमारूढौ पूर्वरूपाधिकौ चतौ ॥३६॥

कामदाके प्रतापसे अत्यन्त शोभित हुये ऐसा जानकर हे नृप श्रेष्ठ यह व्रत नियमसे करना चाहिये ॥ ३७ ॥

दम्पती तस्य शोभेतां कामदायाः प्रभावतः ।
इति ज्ञात्वा नृपश्रेष्ठ कर्तव्यैषा प्रयत्नतः ॥३७॥

लोकोंके हितके लिये तुम्हारे आगे हमने कहा यह ब्रह्महत्यादि पापोंको नाशने वाली पिशाचता नष्ट करनेवाली है ॥ ३८ ॥

लोकानां तु हितार्थाय तवाग्रे कथिता मया ।
ब्रह्महत्यादि पापघ्नी पिशाचत्व विनाशनी ॥३८॥

चराचर तीनों लोकोंमें इससे श्रेष्ठ कोई नहीं है। पढ़ने सुननेसे वाजपेय यज्ञका फल प्राप्त होता है ॥३९॥

नातः परतराकाचित्त्रैलोक्ये स चराचरे ।
पठनाच्छ्रवणाद्राजन् वाजपेय फलं लभेत् ॥३९॥

नोट-यद्यपि लोकमें भी यही देखा जाता है कि कर्मका फल करने वालेको ही मिलता है और यह वेदकी भी आज्ञा है परन्तु

इस कहानीमें भी औरोंकी भांति एकका किया पुण्य दूसरेको देना लिखा है जो कि वेदविरुद्ध है।

वरूथिनी ।

अ० ४८

वैशाख कृष्णपक्षमें वरूथिनी एकादशी होती है सर्वदा इसके व्रत करनेसे पापकी हानि, सौभाग्यकी प्राप्ति, गर्भके वासकी छुड़ानेवाली मानधाता आदि इसीके प्रतापसे स्वर्गको गये। भगवान् महादेव भी ब्रह्मकपालसे छूटगये जो मनुष्य दश हजार वर्षतक तप और जो सूर्य्य ग्रहणके समय कुरुक्षेत्रमें एक भार सोनेके पुण्यका फल पाता है। सब दानोंमें विद्यादान श्रेष्ठ है। वरूथनी एकादशीका करनेवाला समान फलको पाता है। जो कन्याको गहनोंसे दुष्कर पुण्य करता है वह उसी फलको इस व्रतका करनेवाला पाता है। व्रत रखनेवाला कांसा, मांस, मसूर, चना, कोदों, साग, मधु, पराया अन्न, दूसरीवार भोजन, मैथुन दशमीको छोड़दे। जुआ, पान, दातौन, पराया अपवाद, चुगली, चोरी, जीव मारना, रति, क्रोध, झूंठ यह एकादशीमें छोड़दे। कांस, मांस, मदिरा, शहद, तेल, पतितसे बोलना, कसरत, प्रवास, दूसरी वार भोजन, बनवाना, पराया अन्न यह द्वादशीमें छोड़ देवे। इस विधिसे जो विरूथनीका व्रत करताहै उसके सब पाप नाश कर अन्तमें भगवान् नाशरहित गति देते हैं जो रात्रिमें जागरणकर भगवान्को पूजते हैं उनके सब पाप छूट जाते हैं तिससे पापोंसे डरे हुये को सब प्रकारसे करना चाहिये और पढ़ने सुननेसे हजार गौदान का पुण्य होता है और सब पापोंसे छूटकर विष्णुलोकको जाता है।

सर्वपापविनिर्मुक्तास्ते यांति परमां गतिम्।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कर्तव्या पापभीरुभिः ॥२४॥
क्षपारि तनयाद्भीरो नरः कुर्याद्वरूथिनीम्।

पठनाच्छ्रवणाद्राजन् गोसहस्रफलं लभेत् ॥
सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोके महीयते ॥ २५ ॥

नोट—इस कथाके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि मांस, मदिरा एकादशीके दिन एवं द्वादशीके दिनसे छोड़देवे तो क्या शेष दिनोंमें सेवन रहे, यदि १ महीनेमें २ दिन मांस मदिरा छोड़ भी दें तो क्या केवल दो ही दिनके छोड़ने और इस व्रतके करनेसे ऐसे कर्मोंसे जिनसे कि द्विजत्वसे शूद्रत्वको प्राप्त होजाता है निवृत्त हो विष्णुलोकको प्राप्त होसक्ता है । सत्य तो यह है कि ऐसी लालची शिक्षाओंने ही मनुष्यों को इन दुष्ट कर्मोंकी ओर प्रवृत्त करदिया ।

हमने प्रायः पौराणिक भाइयोंको यह कहते सुना है कि "समरथको नहिं दोष गुसाईं, रवि पावक सुरसरिकी नाईं" परन्तु इस कथामें विचित्रता और इसके विपरीत यह कि महादेवजी भी ब्रह्मकपालीके शापसे शापित हो इस उपरोक्त एकादशीके व्रतसे मुक्त हुये। विचारशील पुरुषो ! विचारो तो सही कि जिनको आप साक्षात् भगवान् मानते हैं वह भी इससे शुद्ध हुये तब वे अपने उपासकोंको कैसे शुद्ध वा मुक्त करसक्ते हैं । क्या यह महादेवकी महिमा के परस्पर विरुद्ध नहीं है इसीसे तो हम कहते हैं कि पुराण एक दूसरेके विरुद्ध होने एवं आपके देवताओंको लांच्छन लगानेसे किसी विरोधीके बनाये जान पड़ते हैं नकि व्यासकृत ।

मोहिनी ।

अ० ४९

रामचन्द्रके पूंछने पर वशिष्ठने कहा कि वैशाखके शुक्लपक्षकी मोहिनी एकादशी सब पापके नाश करनेवाली होती है।

वैशाखस्य सिते पक्षे रामचैकादशी भवेत् ।
मोहिनीनाम सा प्रोक्ता सर्वपापहरापरा ॥ ७ ॥

इसके व्रतके प्रभावसे मनुष्य मोहके जाल पापोंके समूहोंसे छूट जाते हैं। मैं सत्य २ कहता हूं ॥ ८ ॥

मोहजालात्प्रमुच्यन्ते पातकानां समूहतः ।
अस्या व्रतप्रभावेन सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ ८ ॥

इस कारणसे हे राम पापोंको नाशने वाली यह एकादशी करने योग्य है। हे राम, सरस्वतीके किनारे भद्रावती नाम नगरमें द्युतिमान् राजा हुआ वहां धनपाल नाम एक बनिया रहता था, जो विष्णुका भक्त मन्दिर तालाबका बनवाने वाला पुण्यात्मा था जिसके पांच पुत्र थे, जिनमें पांचवा धृष्टबुद्धि था, जो पराई स्त्रियोंसे रतिकी लालसा करनेवाले, जुआ खेलनेवाला, अन्यायमें पिताके द्रव्यका नाश करनेवाला, मदिरा पीनेवाला, वेश्यासे प्रीति करनेवाला इत्यादि दुष्ट स्वभावी था, जिसको पिता और बांधवोंने निकाल दिया, तब वह नगरमें चोरी करनेलगा पकड़े जानेपर कई बार राजाने छोड़ भी दिया तिसपर भी चोरीको न छोड़ा फिर पकड़े जानेपर राजाने उसको देशसे निकाल दिया। यह भूख प्याससे व्याकुल हो जंगली जानवरोंको मार २ कर अपना निर्वाह करने लगा। किसी पुण्यके प्रभावसे कौडिन्यजीके आश्रम पर पहुंच गया महात्मा वैशाखमें गंगास्नान कर आये थे, उनके कपड़ेकी बूंद उसके ऊपर गिरी उसीसे उसके पाप अशुभ नष्ट होगा ये तब तो हाथ जोड़कर कौडिन्यसे बोला ॥ ३१ ॥

माधवे मासि जाह्नव्याः कृतस्नानं तपोधनम् ।
आससाद धृष्टबुद्धिः शोकभारेण पीडितः ॥३०॥
तद्वस्त्र बिंदुस्पर्शे नगत पापोहता शुभः ।
कौडिन्य स्याग्रतः स्थित्वा प्रत्युवाच कृतांजलि ॥३१॥

कि हे ब्रह्मन् हमारे ऊपर दया करके कहो कि जिस पुण्यके प्रभावसे युक्त होवे। महात्माने कहा तुम सुनो वैशाखके शुक्ल पक्षमें मोहिनी एकादशी होतीहै तुम उसका व्रतकरो। इसव्रतके करनेसे देह-

धारियोंके बहुत जन्मोंके इकट्ठे पाप मेरुके समान भी नष्ट होजाते हैं इस प्रकारके वचन सुन प्रसन्नचित्त विधिपूर्वक व्रत कर पापरहित हो सुन्दर देह धारण कर गरुड़पर चढ़ सब उपद्रवोंसे रहित विष्णु-लोकको चलागया ३४, ३५, ३६, ३७, ।

एकादशी व्रतं तस्याः कुरु मद्वाक्य नोदितः ।
मेरुतुल्यानि पापानि क्षयं गच्छंति देहिनाम् ॥३४॥
वहुजन्मार्जितान्येषा मोहिनी समुपोषिता ।
इति वाक्यं मुनेः श्रुत्वा धृष्टबुद्धिः प्रसन्नधी ॥३५॥
व्रतं चकार विधिवत्कौण्डिन्यस्योपदेशतः ।
कृते व्रते नृपश्रेष्ठ गतपापो वभूवसः ॥३६॥
दिव्यदेहस्ततो भूत्वा गरुडोपरिसंस्थितः ।
जगाम वैष्णवं लोकं सर्वोपद्रव वर्जितम् ॥३७॥

हे रामचन्द्र इस प्रकार उत्तम मोहिनी व्रत है चराचर त्रिलोकीमें इससे बढ़कर कोई नहीं। यज्ञादिक तीर्थदान इसकी सोलहवीं कलाको भी नहीं प्राप्त होते पढ़ने सुननेसे हज़ार गौओंका फल होता है।

इती दृशं रामचन्द्र उत्तमं मोहिनी व्रतम् ।
नातः परतरं किंचित्त्रैलोक्ये सचराचरे ॥३८॥
यज्ञादितीर्थदानानि कलांनर्हंति षोडशीम् ।
पठनाच्छ्रवणाद्राजन् गोसहस्रफलं लभेत् ॥ ३९ ॥

नोट—इस कथाके पढ़नेसे स्पष्ट प्रकट होता है कि गुरु वशिष्ट की आज्ञानुसार श्रीरामचन्द्रजीने भी सीताके वियोगसे भयभीत हो कर यही व्रत किया है सभ्य विचारशील सुजान जन विचार सकते हैं उस पहिली कथामें तो महादेव शापसे छूटे और इसमें रामचन्द्र दुःखसे छूटे तब भी कोई संशय शेष रहा कि यह ईश्वर थे प्यारे

भाइयो कुछ बुद्धिसे काम लीजिये और फिर देखिये कि वेद आपको क्या बता रहा है ।

अपरा ।

अ० ५७

ज्येष्ठ कृष्णा पक्षकी एकादशीका नाम अपरा है जो अपार फलको देती है । ब्रह्महत्या करने वाला, गोत्रका नाश करने वाला, गर्भका गिराने वाला, पराई स्त्रीमें रसिक ॥ ४ ॥

अपरानाम राजेंद्र अपरापुत्रदायिनी ।
लोकप्रसिद्धितां याति अपरां यस्तु सेवते ॥ ३ ॥
ब्रह्महत्याभिभूतोपि गोत्रहा भ्रूणहा तथा ।
परापवादवादी च परस्त्री रसिकोपि च ॥ ४ ॥

यह सब अपराके सेवनसे पापहीन निश्चय हो जाते हैं झूंठी गवाही देने वाला झूंठा मान करने वाला झूठ तोलने वाला ॥ ५ ॥

अपरासेवनाद्राजन् विपाप्माभवति ध्रुवम् ।
कूटसाक्ष्यं कूटमानं तुलाकूटं करोति यः ॥

झूंठ वेद शास्त्रका पढ़ने हारा, झूंठा ज्योतिषी वैद्य ॥ ६ ॥

कूटवेदं पठेद्यस्तु कूटशास्त्रं तथैव च ।
ज्योतिषीगणकः कूटः कूटायुर्वैदिकोभिषक् ॥ ६ ॥

झूंठी गवाहीसे युक्त यह सब नरकको जाते हैं परन्तु अपराके सेवनसे उनके पापोंका नाश हो जाता है॥ ७ ॥

कूट साक्ष्यसमायुक्तो विज्ञेया नरकौकसः ।
अपरासेवनाद्राजन् पापैर्मुक्ता भवंति ते ॥ ७ ॥

क्षत्री धर्मको छोड़ युद्धसे भागने वाला, पापी अपराके सेवनसे पापोंसे छूट स्वर्गको जाता है और जो विद्यावान् शिष्य अपने गुरु की निंदा करता है वह भी अपराके व्रतसे सद्गतिको पाता है। ८,९,१० ॥

क्षत्रियः क्षात्रधर्मं यस्त्यक्त्वा युद्धात्पलायते।
स याति नरकं घोरं स्वीय धर्मबहिष्कृतः ॥ ८ ॥
अपरासेवनात्सोपि पापं त्यक्त्वा दिवं व्रजेत्।
विद्यावान्यः स्वयं शिष्यो गुरुनिन्दां करोति च ॥९॥
समहापातकैर्युक्तो निरयं याति दारुणम्।
अपरासेवनात्सोपि सद्गतिंप्राप्नुयान्नरः ॥१०॥

मकरके सूर्य्ये, माघस्नान प्रयागसे जो फल होता है, काशी ग्रहणसे जो पुण्य होता है, गयामें पिण्ड देनेसे, गोमती स्नानसे सिंह कन्याकी वृहस्पतिमें कृष्णावेणीके स्नान करनेसे, कुम्भमें केदारके दर्शनसे, बदरीनारायणकी यात्रा और सेवनसे जो फल मिलता है, कुरुक्षेत्रमें सूर्य्यग्रहणसे जो फल मिलता है, हाथी, घोड़ा, सोनेके दान से, दक्षिणा समेत यज्ञ करनेसे, जो फल मिलता है वैसाही फल अपराके व्रत से प्राप्त होता है। आधी व्याई हुई गौके देने सोना पृथिवीके देने से जोफल मिलता है वही अपरा से होता है यह अपरा पापरूपी वृक्ष काटनेके लिये कुल्हाड़ी है। पापरूपी ईंधन जलानेमें अग्निरूप है। पापरूप अंधेरा दूर करनेके लिये सूर्य्यरूपी है। पापरूपी सारङ्गोंको सिंहरूपी है। जलमें बुलबुला जंतुओंसे पुत्तकी नाईं ॥ ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८ ॥

महिमानमपरायाः शृणु राजन्वदाम्यहम्।
मकरस्थेरवौ माघे प्रयागे यत्फलं नृणाम् ॥११॥
काश्यां यत्प्राप्यते पुण्यमुपरागे निमज्जनात्।
गयायां पिण्डदानेन पितृणां तृप्तिदो यथा ॥१२॥

सिंहस्थिते देवगुरौ गौतम्यां स्नातको नरः ।
कन्यागते गुरौ राजन्कृष्णवेणी निमज्जनात् ॥१३॥
यत्फलं समवाप्नोति कुम्भकेदारदर्शनात् ।
बदर्याश्रमयात्रायां तत्तीर्थ सेवनादपि ॥ १४ ॥
यत्फलं समवाप्नोति कुरुक्षेत्रे रविग्रहे ।
गजाश्वहेमदानेन यज्ञं कृत्वासदक्षिणम् ॥१५॥
तादृशं फलमाप्नोति अपराव्रतसेवनात् ।
अर्धप्रसूतां गां दत्वा सुवर्णवसुधां तथा ॥ १६ ॥
नरो यत्फलमाप्नोति अपराया व्रतेन तत् ।
पापद्रुमकुठारीयं पापेंधन वानलः ॥ १७ ॥
पापांधकार तरणिः पापसारङ्ग केसरी ।
बुदबुदा इव तोयेषु पुत्तिका इव जंतुषु ॥ १८ ॥

एकादशीके व्रतके विना फिर जन्म, मरण होता रहता है अपराका वृतकर भगवान्की पूजा करनेसे सब पापोंसे छूट विष्णुलोकको जाता है

जायन्ते मरणं यैव एकादश्या व्रतं विना ।
अपरां समुपोष्यैव पूजयित्वा त्रिविक्रमम् ॥१९॥
सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोके महीयते ॥ २० ॥

नोट-प्यारे भाइयो यदि इस व्रतका इतना प्रभाव था तो महाभारतके समय श्रीकृष्णचन्द्र महाराजने क्यों अर्जुनको यह उपदेश दिया कि रणसे भागनेवाले क्षत्रीकी मुक्ति नहीं होती अब इसकी सत्यता आप सज्जन लोग स्वयं ही विचारलें एवं महापातकोंकी भी जिसके लिये कि महात्मा तुलसीदास तक लिख रहे हैं कि "जो जस कीन्ह सो तस फल चाखा" परन्तु इसमें सबके विपरीत लिखा है।

निर्जला ।

अ० ५१

व्यासजी युधिष्ठिरसे कहते हैं, मानवधर्म, वैदिकधर्म तुमने सुना, कलियुगमें इनके करनेकी सामर्थ्य नहीं। इसलिये सुखपूर्वक थोड़ा उपाय, थोड़े धन, थोड़ेक्लेशमें महाफल देनेवाला सब पुराणोंका सारभूत यह है कि पक्षोंकी एकादशीमें भोजन न करे। द्वादशीमें पवित्र फूलोंसे भगवान्को पूजे, ब्राह्मणोंको भोजन करा पीछे आप भी भोजन करे। सूतक और अशौचमें भोजन करना न चाहिये, जिनको स्वर्गकी इच्छा हो वह जब तक जियें इसको करें, चाहे पापी, दुराचारी, धर्मसे हीन हो परन्तु एकादशीमें भोजन न करे तो वह यमराजके पास नहीं जाते ॥ ९ ॥

अपि पापा दुराचाराः पापिष्ठा धर्मवर्जिताः ।
एकादश्यां न भुंजानाम ते यान्ति यमान्तिकम् ॥९॥

यह सुन भीमसेनने कहा कि हमसे सब भाई कहते हैं। परन्तु हमसे भूख नहीं सधती और स्वर्गजानेकी इच्छा भी है। इसलिये आप निश्चय करके ऐसा कोई कार्य्य बतलाइये जिससे मेरा भी कल्याण हो। तब व्यासने कहा कि वृष मिथुनके सूर्य्यमें जब ज्येष्ठ मासमें एकादशी हो तो बिना जलके व्रत करे और आचमन भी न ले। नहीं तो व्रत नष्ट होजाता है, उदय पर्य्यंत जो मनुष्य जलको छोड़ देता है वह बारह द्वादशियोंके फलको पाता है ॥२१॥

उदयादुदयं यावद्वर्जयित्वोदकं नरः ।
श्रूयतां समवाप्नोति द्वादशद्वादशी फलम् ॥ २१ ॥

जो मनुष्य विना जलके एकादशी व्रत करता है वह सब पापोंसे छूट जाता है। जो उस दिन स्नान दान करता है वह नाश रहित है, जो एकादशीको अन्न २ भोजन करता है वह पाप भोगता है ॥४३॥

एकादश्यां दिने योऽन्नं भुंक्ते पापं भुनक्ति सः ।४३।
इहलोके सचाण्डालो मृतः प्राप्नोति दुर्गतिम् ।

इस लोकमें चांडाल मर कर दुर्गतिको प्राप्त होता है जो ज्येष्ठ मासके शुक्लपक्ष द्वादशीमें व्रत कर दान देते हैं वह परम पद पाते हैं। ब्राह्मणको मारने वाला, मदिरा पीने वाला, चोर, गुरुसे वैर करने वाला यह सब निर्जला व्रतसे पापोंसे छूट जाते हैं। जिन्होंने इस का व्रत नहीं किया उन्होंने आत्मासे वैर किया वेही पापी चोरहैं॥५७॥

ये च दास्यंति दानानि द्वादश्यां समुपोषिताः ।
जेष्ठमासेसितेपक्षे प्राप्स्यंति परमं पदम् ॥ ४४ ॥
ब्रह्महा मद्यपः स्तेनो गुरुद्वेषी सदानृती ॥ ४५ ॥
मुच्यंते पातकैः सर्वै निर्जलायैरुपोषिता ।
विशेषं शृणु कौंतेयनिर्जलैकादशी दिने ॥४६॥

जो शांत, दांत, दानमें परायण, रात्रिमें जागरण कर भगवान्को पूजते हैं। वह सौ आने वाली सौ बीती हुई पीढ़ियोंको और अपने को वासुदेवके मंदिरमें प्राप्त करता है।

ऐसा ही बाराह पुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ३५ में लिखा है॥

नोट—कलियुगमें यदि वैदिक धर्म करनेकी सामर्थ्य नहीं तो शंखासुरसे वेदोंके बचानेके प्रयत्नके लिये आपके पौराणिकी ईश्वर को वाराहका अवतार क्यों लेना पड़ा। मित्रवर्य्य क्या इससे यह स्पष्ट प्रकट नहीं होता है कि वेदोंकी महिमा गिराने और नवीन मत चलानेको यह विरोधियों एव आलसियोंने बातें प्रकट करदीं वरन् सनातन वेद क्या किसी जाति व कालविशेषके लिये हो सक्ते हैं कदापि नहीं।

३—इससे स्पष्ट प्रकट है कि यह किसी ऐसे पुरुषकी रचना है कि जो पुनर्जन्मको नहीं मानता वरन् सौ पीढ़ी आगे व पीछेकी न लिखता वाहरी बुद्धि ॥

योगिनी ।

अ० ५२

अषाढ़के कृष्णपक्षमें योगिनी नाम एकादशी पापोंको नाशने वाली होती है। यह संसाररूपी समुद्रमें डूबे हुओंको नौका, सनातनी व्रत करने वालोंको त्रिलोकीमें सारभूत है। अलकामें कुवेरजी महाराज महादेवको पूजते थे। हेममाली फूलोंको लाया करता था। एक दिन वह रूपवती विशालाक्षी स्त्रीके प्रेममें डूब कर मध्याह्न समय तक नहीं लेगया तब कुवेरने यक्षको भेजा कि हेममाली कहां है यक्षने घर आकर जाना कि वह स्त्री पर मोहित होनेके कारण घर ही में पड़ा है। कुवेरने यह सुनकर फिर यक्षसे उसको बुलाया। वह डरता हुआ उनके सामने गया। कुवेरने क्रोधित हो कर कहा कि हे दुष्ट! तूने देवोंकी निंदा की। इस लिये स्त्रीवियोग हो कर तेरे अठारह कोढ़ हो जावे तू इस स्थानसे चला जा। कुवेरके ऐसे वचन कहते ही वह उस स्थानसे गिर गया और भारी दुःखों अर्थात् कोढ़से पीड़ित हो दुःखी होने लगा॥ १५ व १६॥

अष्टादशकुष्ठवृत्तौ वियुक्तः कांतया तया।
अस्मात्स्थानादपध्वस्तो गच्छस्वप्रमथाधम॥ १५॥
इत्युक्ते वचने तस्य तस्मात्स्थानात्पपातसः।
महादुःखाभिभूतश्च कुष्ठैः पीडितविग्रह॥ १६॥

वह इस दुःखसे दुःखी घूमता हुआ हिमालयपर गया और वहां मार्कण्डेय महर्षिको देखा। उन्होंने पूछा कि क्या दशा है? तब उसने सब वृत्तान्त कहा। मार्कण्डेय बोले कि तूने सत्य ही कह दिया इसलिये कल्याण देनेवाले व्रतका उपदेश करता हूं। उन्होंने कहा आषाढ़कृष्णपक्षकी योगिनी एकादशीका व्रतकर मार्कण्डेयजीके उपदेशसे उसने यथोचित व्रत किया तो १८ कोढ़ जाते रहे॥ ३१॥

मार्कण्डेयोपदेशेन व्रतं तेन कृतं यथा ।
अष्टादशैव कुष्ठानि गतानि तस्य सर्वशः ॥३१॥

वह जन ८८ हज़ार विप्रोंको भोजन कराता है जो योगिनी व्रत करता है उनका फल समान होता है ॥ ३३ ॥

अष्टाशीति सहस्राणि द्विजान्भोजयते तु यः ।
तत्समं फलमाप्नोति योगिनीव्रतकृन्नरः ॥ ३३ ॥

नोट–सनातनधर्मी भाइयोंको चाहिये कि इस कोढ़की दवाको पेटेएट कराकर सनातनधर्म गज़टसे विज्ञापन निकालदें क्योंकि सम्भव है कि सिविलसरजन और वैद्य लोगोंने इस दवाको न जाना हो हरिद्वार और हृषीकेशके मध्यमें बहुतसे कुष्टी हैं क्या कोई पद्मपुराणी एकादशीका व्रत करनेवाला वहां नहीं रहता वा जाता है? कृपा करके कोढ़ियोंको यह दवा बतादें ।

बहुधा सनातनी ब्राह्मण देवता यह कहते हैं कि आर्य्यसमाजियोंने न्यौते बन्द करदिये हमारी समझमें न्यौते बन्द करानेवाली यह एकादशी है जिसके व्रत रहनेसे ८८ हज़ार विप्रभोजका फल मिलता है।

देवशयनी ।

अ० ५३

आषाढ़ शुक्लपक्षकी एकादशीका नाम देवशयनी है यह पापोंके नाशनेके लिये ब्रह्माने इसको सबसे उत्तम रचा है इससे श्रेष्ठ मोक्षदायक कोई नहीं है ॥ ४ ॥

पापिनां पापनाशाय स्रष्टाधात्रा महोत्तमा ।
अतःपरा न राजेन्द्र वर्त्तते मोक्षदायिनी ॥ ४ ॥

इस लिये वैष्णवको चाहिये कि आषाढ़के शुक्ल पक्षमें एकादशीका अच्छे प्रकार व्रत करें क्योंकि इसके पुण्यकी गणनामें ब्रह्मा भी असमर्थ हैं ।

नास्याः पुण्यस्य संख्यानं कर्तुंशक्तश्चतुर्मुखः ।
एवं यः कुरुते राजन्नेकादश्यां व्रतोत्तमम् ॥३०॥
सर्वपापहरं चैव भुक्तिमुक्ति प्रदायकम् ।
स च लोके मम सदाश्च पश्चापि प्रियंकरः ॥३१॥

नोट—इससे श्रेष्ठ मोक्षदायक कोई नहीं तो क्या और सब उपरोक्त झूंठी हैं ब्रह्मा जिन्होंने कि जगत् रचा वह भी उसके गुण गिननेमें असमर्थ । महिमा हो सो यहांतक ।

कामिका ।

अ० ५४

श्रावण कृष्ण पक्षकी एकादशीका नाम कामिका है उस दिन गङ्गा काशी, नैमिषारण्य, पुष्कर इत्यादिमें जो फल होता है वह कृष्णके पूजनसे होता है जो मनुष्य पापरूपी कीचड़से व्याकुल, संसाररूपी समुद्रमें डूबे हुए हैं तिनके उद्धारके लिये कामिका व्रत उत्तम है ॥१४॥

ये संसारार्णवे मग्नाः पापपंकसमाकुले ।
तेषामुद्धरणार्थाय कामिका व्रतमुत्तमम् ॥१४॥

इससे बढ़कर कोई पवित्र और पापनाशिनी नहीं है नारद यह जानो इस भगवान्ने अपने आप कहा ॥ १५ ॥

नातः परतरकाचित्पवित्रापापहारिणी ।
एवं नारद जानीहि स्वयमाह परोहरि ॥ १५ ॥

आध्यात्मिक विद्यामें विरक्त मनुष्योंको जो फल मिलता है उससे अधिक कामिका व्रत करने वालोंको मिलता है ॥ १६ ॥

अध्यात्मविद्या निरतैर्यत्फलं प्राप्यते नरैः ।
ततो बहुतरं विद्धि कामिका व्रतसेवनात् ॥ १६ ॥

कामिका व्रत वाला रात्रिमें जागरण करनेसे यमराजको नहीं देखता दुर्गतिका पता नहीं सुदला जो एक भार सोना और चौगुनी चांदी देनेसे फल मिलता है वह तुलसीदलके पूजनेसे मिलता है ॥ २१ ॥

तत्फलं समवाप्नोति तुलसीदलपूजनात् ।
रत्नमौक्तिक वैडूर्य प्रवालादिभिरर्चितः ॥२१॥

जो मनुष्य एकादशीमें दिन रात्रि दीप जलाता है उसका पुण्य अनगणित है। जो कृष्णके आगे आजके दिन दीप जलाता है उसके स्वर्गमें पितृ अमृतसे तृप्त होते हैं जो घी या तिलके तेलसे दीपक जलाता है वह सौ करोड़ दीपोंसे पूजित सूर्य्यलोकको प्राप्त नहीं होता ॥ १७ ॥

रात्रौ जागरणं कृत्वा कामिकाव्रतकृन्नरः ।
न पश्यति यमं रौद्रं नैव गच्छति दुर्गतिम् ॥१७॥

इस व्रतसे बुरी योनियोंको नहीं देखता योगी लोग इसका व्रत करनेसे मोक्षको प्राप्त हुये हैं ॥ १८ ॥

न पश्यति कुयोनिं च कामिकाव्रतसेविनाम् ।
कामिकाया व्रतैश्चीर्णै कैवल्यं योगिनो गताः ॥१८॥

तिससे नियतात्माओं करके सब यत्नोंसे करने योग्य है और तुलसीपत्तोंसे जो भगवानको पूजता है वह पापसे लिप्त नहीं होता जैसे जलसे कमलको जाता है ॥

पुत्रदा ।

अध्याय ५५

श्रावणके शुक्लपक्षमें पवित्ररूपिणी पुत्रदा एकादशी होती है ।

नोट—यदि कामका ऐसा माहात्म्य था तो श्रीकृष्ण महाराजने इसका अर्जुन को उपदेश न कर योगाभ्यास की शिक्षा क्यों दी ? ॥

जिसके सुनने से वाजपेय यज्ञ का फल होता है पूर्व समयमें द्वापर युग के आदिमें महिष्मती पुरमें महीजित नाम राजा था। पुत्रहीन होनेसे चिंता युक्त रहता था। एक दिन प्रजा पुरुषोंसे उसने कहा, कि इस जन्ममें अन्यायसे धन नहीं लिया। प्रजाका पुत्रोंके बराबर पालन किया, धर्मसे पृथिवी को जीता, सज्जनों की सेवा, शत्रुओंको दण्ड दिया, परन्तु हमको किस कारण से पुत्र नहीं मिला सोतो कहिये, यह सुन प्रजा और पुरोहितों ने सम्मति कर गहन वनको गये वहां ऋषियों के आश्रमों देख रहे थे, इतने में धर्मतत्वके जानने वाले महात्मा लोमश जिनको सबने वंदना की तब उन्होंने कहाकि अपना कारण कहिये तो उन्होंने उपरोक्त सब वृत्तान्त कह कर प्रार्थना की कि अब जिस प्रकार से राजाके पुत्र हो उसको आप कहिये। महात्मा लोमश मुहूर्तमात्र ध्यानकर राजाके पूर्वजन्मका हाल जान बोले कि यह पूर्वजन्ममें क्रूर धनहीन बनिया था वाणिज्यके अर्थ एक गांवसे दूसरे गांवको जाताथा। ज्येष्ठ मासके शुक्लपक्षकी दशमी को दोपहरके समय प्याससे व्याकुल था जल पीने को तालाब पर गया, उसी समय एक बछड़ा सहित एक गाय पानी पीनेको आई जो प्यास घामसे व्याकुल थी उस जल पीती हुई को खेद कर आप जल पीने लगा, उसी कर्मसे यह पुत्रहीन राजा है ॥ २९ व ३० ॥

तृषातुरा निदाघार्ता तस्यमम्बु पपै तु सा।
पिबंतीं वारयित्वातामसौ तोयं पपौ स्वयम् ॥२९॥
कर्मणा तेन पापेन पुत्रहीनो नृपोऽभवत्।
कस्यापिजन्मनः पुण्यात्प्राप्तं राज्यमकंटकम् ॥

तब सबने कहा पुण्यसे पाप नाश होजाते हैं इसी लिये आपके उपदेशके प्रसाद से राजा के पुत्र हो। तब लोमश बोले कि श्रावणके शुक्लपक्षमें पुत्रदा एकादशी वांछित फल को देने वाली सुनी जाती है उसका व्रत सब लोग कीजिये ॥ ३२ ॥

श्रावणे शुक्लपक्षे तु पुत्रदानाम विश्रुता ।
एकादशी वांच्छितदा कुरुध्वं तद्व्रतं जनाः ॥

यह सुन सब मनुष्य दण्डवत कर नगरमें आये और विधिपूर्वक सब लोगोंने व्रत किया ॥ ३३ ॥

इति श्रुत्वा नमस्स्कृत्य मुनिमेत्य पुरं व्रतम् ।
यथाविधि यथान्यायं कृतं तैर्जागणान्वितम् ॥३३॥

व्रतकी पुण्य सब मनुष्योंने राजाको देदी । तब रानीने सुन्दर गर्भको धारण किया । ३४ ॥

तस्य पुण्यं सुविमलं दत्तं नृपतये जनैः ।
दत्ते पुण्येऽथसाराक्षी गर्भमाधत्त शोभनम् ॥३४॥

और तेजस्वी पुत्रको उत्पन्न किया । ३५ ॥

प्राप्त प्रसवकाले सा सुषुवे पुत्रमूर्जितम् ॥३५॥

द्वादशी में भगवान का पवित्रारोपण करावे जो मनुष्य निश्चिये यह व्रत नहीं करता उसकी वैष्णवी पूजा वर्षभरकी निष्फल हो जाती है जो इसका महात्म्य सुनता है वह पापोंसे छूट जाता है इस लोकमें पुत्र सुख पाकर परलोकमें प्राप्त होता है ॥

तस्य सांवत्सरी पूजा निष्फला वैष्णवस्य तु ।
श्रुत्वामाहात्म्यमेतस्यानरः पापात्प्रमुच्यते ।
इहपुत्रसुखं प्राप्यपरश्च स्वर्गतिर्भवेत् ॥ ४४ ॥

नोट—नजाने महर्षि वशिष्ठ और शृंगी ऋषिने क्यों महाराज दशरथको वृथा कष्ट दे पुत्रेष्टि यज्ञ कराया । क्या उस समय में व्यासकृत पुराण उपस्थित न थे परंतु जो कुछ हो अबतो उपस्थित हैं सनातन धर्म्मी भाइयों के लिये यह- एकादशी पुत्रोंकी देने वाली है इस लिये जिन सनातनधर्मी भाइयोंको पुत्रकी इच्छा हो इसी से पुत्र प्राप्त करलें ॥ फिर न जाने यहाँ की दुकान क्यों खोलते हैं क़बरों और मदार इत्यादिको क्यों पूजने जाते हैं ।

अजा।

अ० ५६

भादौंकी कृष्णपक्षकी एकादशीको अजा कहते हैं। पूर्व समयमें सब पृथिवीका राजा हरिश्चन्द्र हुआ जो सत्यप्रतिज्ञा करने वाला था किसी कर्म्मसे राज्यसे भ्रष्ट होगया तो उसने अपनेको एवं स्त्री और पुत्रको चाण्डालके हाथ बेच डाला। जहां वह मुर्दोंके कपड़े लेता था परन्तु सत्यको वहां भी नहीं छोड़ा। इस कामको करते हुये वर्ष व्यतीत होगये। एक दिन दुःखी हो कहने लगा कि क्या करूं? इतनेमें गौतम ऋषि वहां आगये और हाल सुनकर महात्माने कहा कि भादौंके कृष्ण पक्षमें अजा एकादशी आनेवाली है हे राजन्! इसका व्रत करो जो तुम्हारे पापोंका अंत होजावेगा तुम्हारी भाग्यके वश सातवें दिन प्राप्त होगी॥ १५॥

उसका व्रतकर रात्रिमें जागरण करो इस प्रकार व्रत करनेसे तुम्हारा पाप निश्चय नाश होजावेगा॥ १६॥

उपवासपरा भूत्वा रात्रौ जागरणं कुरु।
एवमस्या व्रते जीर्णे तवपापक्षयो ध्रुवम्॥१६॥

हे राजाओंमें उत्तम तुम्हारे पुण्यके प्रभावसे मैं प्राप्त हुआ हूं। ऐसा कह वे अंतर्धान होगये॥ १७॥

तव पुण्यप्रभावेण चागतोहं नृपोत्तम।
इत्येवं कथयित्वा च मुनिरंतरधीयत॥१७॥

राजाने मुनिके वचन सुन उत्तम व्रत किया व्रत करनेसे क्षणमात्रमें राजाके पापका नाश होगया॥ १८॥

मुनिवाक्यं नृपः श्रुत्वा चकार व्रतमुत्तमम्।
कृते तस्मिन्व्रतेराज्ञः पापस्यांतोभवत्क्षणात्॥१८॥

राजाका दुःख जाता रहा। स्त्री मिलगई, पुत्र जीगया। आका-शमें नगाड़े बजे। फूलोंकी वर्षा हुई और अकंटक राज्य राजाने पाया और पुर परिवार समेत स्वर्ग भी मिला। जो मनुष्य इसका व्रत करते हैं स्वर्गको जाते हैं। इसके पढ़ने सुननेसे अश्वमेधका फल होता है।

सर्वपापविनिर्मुक्ता स्त्रिदिवं यांति ते नृप।
पठनाच्छ्रवणाद्वापि अश्वमेधफलं लभेत् ॥२३॥

पद्मा।

अ० ५१

भाद्रपद शुक्लपक्षकी एकादशीको पद्मा कहते हैं ब्रह्माने नारदसे कहा कि सूर्य्यवंशमें मानधाता नाम राजा हुये जो धर्मसे प्रजाका पालन करते थे बहुत काल बीतने पर ३ वर्ष तक उसके राज्यमें वर्षा नहीं हुई जिससे प्रजा अति दुःखित हो राजासे प्रार्थना करने लगी कि महाराज आपसे धर्मात्मा राजा होने पर नमालूम वर्षा क्यों नहीं होती आप उपाय सोचिये तब राजा गहन वनको गया मुनियोंको आश्रमोंमें घूमता हुआ अंगिराऋषिके समीप पहुंचा नमस्कारादि कर अपना सब वृत्तान्त कहा तब ऋषि बोले कि यह युगोंमें उत्तम सत्युग है इसमें मनुष्य धर्ममें परायण हैं धर्म चारपावोंका है ॥ २९ ॥

एतत्कृतयुगं राजन् युगानामुत्तमं मतम्।
अत्रब्रह्म परालोका धर्मश्चात्र चतुष्पद ॥२९॥

इसलिये ब्राह्मण ही तपस्यायुक्त होने चाहियें अन्य नहीं, सो हे राजेन्द्र! तुम्हारे राज्यमें शूद्र तपस्या कररहा है ॥ ३० ॥

नोट—क्या राजा हरिश्चन्द्रने पापोंके फलसे दुःख पाया अथवा विश्वामित्रको दान दे वचन न लौटनेसे प्रकट होता है कि एकादशी का माहात्म्य बढ़ानेको यह कथा लिख दी है वास्तविक कर्म्मोंका फल तो अवश्य ही भोगना पड़ता वरन् एकादशीके व्रती सब सुखीही देखे जाते।

अस्मिन् युगे तपोयुक्ता ब्राह्मणानेतराजनाः।
विषये तत्र राजेन्द्र वृषलोयं तपस्यति ॥३०॥

इसीकारण मेघ नहीं बर्षते इसके मारनेमें यत्न कीजिये तो दोष निवृत्त हो ॥ ३१ ॥

एतस्मात्कारणाच्चैव न वर्षति बलाहकः।
कुरु तस्य वधे यत्नं येन दोषः प्रशाम्यति ॥३१॥

तब राजा बोले कि इस निरपराधी तपस्वीको मैं नहीं मारूंगा आप धर्मका उपदेश दीजिये जिससे दोष नाश हो ॥ ३२ ॥

नाहमेनं वधिष्यामि तपस्यंतमनागसम्।
धर्मोपदेशं कथय उपसर्गविनाशनम् ॥३२॥

फिर ऋषि बोले कि हे राजन् जो ऐसा ही है तो भादोंके शुक्लपक्षकी एकादशी पद्माका व्रत कीजिये ॥ ३३ ॥

यद्येवं तर्हि नृपते कुरुष्वैकादशी व्रतम्।
नभस्यस्य सिते पक्षे पद्मानोमेति विश्रुता ॥३३॥

इस व्रतके प्रभावसे अच्छी वर्षा होगी यह सर्वसिद्धियोंको देनेवाली उपद्रवनाशिनी है ॥ ३४ ॥

तस्या व्रतप्रभावेन सुवृष्टिर्भविता ध्रुवम्।
सर्वसिद्धिप्रदा ह्येषा सर्वोपद्रवनाशिनी ॥३४॥

राजाने यह सुन घर जाकर चारों वर्णों और प्रजा समेत इस व्रतको किया ॥ ३६ ॥

भाद्रमासे सिते पक्षे पद्माव्रतमथाकरोत्।
प्रजाभिः सहसर्वाभिश्चातुर्वर्ण्यसमन्वितः ॥३६॥

जिससे मेघ बर्षे अन्न अच्छा उत्पन्न हुआ ॥ ३१ ॥

एवं वृते कृते राजन् प्रववर्ष बलाहकः ।
जलेन प्लाविता भूमिरभवत्सस्यशालिनी ॥ ३७ ॥

इसलिये उत्तम व्रत करना चाहिये। दही, भात, जलसे भरा कलश, छाता, जूते, ब्राह्मणको दे प्रार्थना करे कि हे गोविन्द आप सुख दीजिये ।

इन्द्रा ।

अ० ५८

क्वारकृष्णपक्षमें इन्द्रा नाम एकादशी होती है जिससे भारी पाप नाश होजाते हैं। जो पितृ नरकमें हैं उनको गति देती है ॥ २। ३॥

आश्विने कृष्णपक्षे तु इन्द्रानाम्न नामतः ।
तस्याव्रतप्रभावेन महापापं प्रणश्यति ॥ २ ॥
अधोनिगतानां च पितॄणां गतिदायिनी ।
शृणुष्वावहितो राजन्कथां पापहरां पराम् ॥ ३ ॥

सतयुगमें महिष्मतीपुरमें चन्द्रसेन राजा हुआ जो धर्मात्मा था एक दिन नारद आये और कुशल पूछनेके पीछे राजाने आनेका कारण पूछा उन्होंने कहा कि मैं ब्रह्मलोकसे यमलोकको गया तो वहां मैंने तुम्हारे पिताको देखा उन्होंने कहा कि उसको किसी पूर्वजन्मके

नोट—वाहरे फिलासफ़ी शूद्र तो तप करके परमात्माका स्मरण करे और पौराणिकी अंगिरा ऋषि उसके मारनेका राजाको उपदेश दें विचारशीलो आप विचार सक्ते हैं कि शूद्रकी तपस्यासे मेघबन्द हो सदुपदेष्टा ऋषि तपस्वीको मारनेकी आज्ञा दें यदि ऐसा ही था तो वाल्मीकादि कौन थे। हमारे ब्राह्मण भाईयोंको उचित है कि जहां २ पानीकी वर्षा न हो वहीं इस व्रत के प्रभावसे पानी वर्षा देवें क्योंकि भारतवर्षके मनुष्य अकालोंमें स्वयं पीड़ित रहते हैं जब कि इनके पास पानी वर्षानेकी एकादशीरूपी कल मौजूद है तो फिर समस्त देशमें दुर्भिक्ष क्यों पड़ते हैं।

विघ्नसे यमराजके पास आना पड़ा है इसलिये पुत्रसे कहदेना कि तुम इन्द्रा एकादशीका व्रतकर स्वर्ग पहुंचाओ इसलिये आपके पास आये हैं नारदने सब विधि बताई उसने वैसा ही किया अर्थात् स्त्री, पुत्रों, नौकरों समेत राजाने उत्तम व्रत किया ॥ ३२ ॥

यथोक्तविधिना राजा चकार व्रतमुत्तमम् ।
अतः पुरेण सहितः पुत्रभृत्यसमन्वितः ॥ ३२ ॥

व्रत करनेपर ही हे युधिष्ठिर आकाशसे फूलोंकी वर्षा हुई राजाके पिता गरुड़पर चढ़ स्वर्गको गये ॥ ३३ ॥

कृते व्रते तु कौन्तेय पुष्पवृष्टिरभूद्दिवः ।
तत्पिता गरुडारूढ़ो जगाम हरिमन्दिरम् ॥ ३३

इन्द्रसेनने अकण्टक राज्य किया और आप भी स्वर्गको चलेगये ।

इन्द्रसेनोपि राजर्षिः कृत्वा राज्यमकण्टकम् ।
राज्ये निवेश्य तनयं जगामत्रि दिवं स्वयम् ॥३४॥

पापकुशा ।

अ० ५९

क्वारकी शुक्लपक्षकी एकादशीको पापकुशा कहते हैं यह पापनाशिनी है। इसमें पद्मनाभ नाम अभीष्ट फलकी प्राप्तिके लिये इनको पूजे जो स्वर्ग मोक्षकी देनेवाली है फिर बहुत काल तीव्र तपस्या कर जो फल मिलता है वह भगवान्के नमस्कार करनेसे मिलता है मोह-

---

नोट—यह स्पष्ट प्रकट है कि प्राणान्त होने पर यह शरीर मृतवत् पड़ा रहता है और कर्मानुकूल जीवात्मा दूसरा शरीर धारण करता है यथा महात्मा कृष्ण कहते हैं कि (वासांसि जीर्णानि यथा विहाय) परन्तु इस कथा में यह विचित्रता है कि स्वर्गमें उसके पिताको देखा फिर दूसरे यह पिता पुत्रका शारीरिक सम्बन्ध न कि आत्मिक ?

दुष्ट मनुष्य बहुत पाप करके भी सब पाप नाश करनेवाले भगवान्को नमस्कारकर नरकको नहीं जाता। पृथिवी, तीर्थ, पवित्र स्थान जितने हैं वे विष्णुके नामसे प्राप्त होते हैं उनको यमलोककी यातना भी नहीं होती। मनुष्य घोरपाप करनेपर भी एक एकादशी व्रत करनेसे यम यातनाको नहीं प्राप्त होते जैसे पाप नाशनेवाला पद्मनाभ व्रत है वैसा तीनों लोकोंको पवित्र नहीं है तब ही तक पाप रहते हैं जब तक पद्मनाभका व्रत नहीं करता हजार अश्वमेधयज्ञ, सौ राजसूययज्ञ एक एकादशीके सोलहवीं कलाको नहीं प्राप्त होते इसके बराबर कोई व्रत संसारमें नहीं जो लोग बहानेसे भी करते हैं वे यमलोकको नहीं जाते।

अश्वमेध सहस्राणि राजसूयशतानि च ।
एकादश्युपवासस्य कलां नार्हन्तिषोडशीम्॥१३॥
एकादशीसमं किञ्चिद् व्रतं लोके न विद्यते ।
व्याजेनापि कृतायैश्च न ते यान्ति हि भास्करिम्॥१४॥

यह एकादशी स्वर्ग, मोक्ष, आरोग्यता, स्त्री, पुत्र, धन, मित्रकी देनेवाली। गंगा, गया, काशी, पुष्कर, कुरुक्षेत्र भी एकादशी व्रतके पुण्यको प्राप्त नहीं होते ॥ १५ । १६ ॥

स्वर्गमोक्षप्रदह्येषा शरीरारोग्यदायिनी ।
कलत्रसुतदा ह्येषा धनमित्रप्रदायिनी ॥१५॥
न गंगा न गया राजन्न च काशी च पुष्करम् ।
न चापि कौरवं क्षेत्र पुण्यं भूपहरेर्दिनात् ॥१६॥

हे राजन् रात्रिमें जागरणकर एकादशीके दिनका व्रतकर मनुष्य वैष्णवपद प्राप्तकरता है ॥ १७ ॥

रात्रौ जागरणं कृत्वा समुपोष्य हरेर्दिनम् ।
अनायासेन भूपाल प्राप्यते वैष्णवं पदम् ॥१७॥

दश माता, दश पिता दश स्त्रीकी पीढ़ियोंको उद्धार करता है ॥ १८॥

दशैवमातृके पक्षे राजेंद्र दशपैतृके ।
प्रियाया दशपक्षे तु पुरुषानुद्धरेन्नरः ॥ १८ ॥

व्रत करने वाले चार भुजा वे, सुंदर स्वरूपको धारण कर गरुड़ पर चढ़ माला पहन पीताम्बर पहन भगवान्के मन्दिर को जाते हैं ॥

चतुर्भुजा दिव्यरूपा नागारिकृतकेतनाः ।
स्राग्विण : पीतवस्त्राश्चप्रयोति हरि मंदिरम ॥ १९ ॥

बाल, युवा, वृद्धावस्थामें भी एकादशीका व्रत कर दुर्गतिको प्राप्त नहीं होता ।

बालत्वे यौवनत्वे च वृद्धत्वे नृपोत्तम ।
उपोष्यैकादशी नूनं नैव प्राप्नोति दुर्मतिम् ॥ ५० ॥

रमा ।

अध्याय ६०

कार्तिक कृष्णपक्षकी एकादशीको रमा कहते हैं पूर्व समयमें मचकुन्द नाम राजा विष्णुका भक्त और सत्यवादी था जिसकी इन्द्र कुवेर, यमसे मित्रता थी उसने अपनी लड़की चन्द्रभागाको राजा चन्द्रसेनके पुत्र शोभनके साथ विवाह कर दिया इसी समयमें शोभन श्वसुरके घर आया वह दिन एकादशीके व्रतका था राजाके राज्यमें

नोट—क्या यह यजमानोंके लूश करने और वैदिकधर्मसे विमुख करने वाली शिक्षा नहीं है कि जो बहाने से भी करते हैं वे यमराजके यहां नहीं जाते शोक ऐसी शिक्षा पर !

हमको बड़ा आश्चर्य्य ऐसी कथाओं पर होता है कि एक ओर तो यह महात्मा कृष्णजी का वचन "अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म्म शुभाशुभम्" एक ओर इसमें लिखा है कि माता की दश पीढ़ी एवं पिताकी दश पीढ़ी केवल एक एकादशीके व्रतसे तर जाती हैं । पाठकगण क्या न्याय इसीका नाम है ? ।

इसका बड़ा नियम था नगारा बजते ही इसने चन्द्रभागासे कहा कि अब मैं क्या करूं तब उसने कहा यदि भोजन करो तो घरसे निकल जाओ उसने कहा मैं भी व्रत करूंगा जब भूख लगी और रात्रि आई शोभनकी सूर्य्योदयमें मृत्यु हो गई तब तो राजाने राजाओंके योग्य काष्ठसे जलवा दिया चन्द्रभागाने अपने देहको अपने पतिके साथ नहीं जलाया ॥ ३० ॥

दाहयामास राजांत राजयोग्यैश्च दारुभिः ।
चंद्रभागानात्मदेहं ददाह पतिना सह ॥ ३० ॥

शोभन रमा एकादशीके प्रभावसे मन्दाचलके कंगूरे पर देवलोक में प्राप्त हुआ जहां वह सुन्दर महलोंमें सिंहासन पर बैठा हुआ अप्सराओंसे सेवित था वहां कोई मुचकुन्दके पुरमें बसने वाला सोम शर्मा ब्राह्मण तीर्थयात्रा करता हुआ राजाके दामादके पास गया शोभनने सोम शर्माको उठ कर प्रणाम किया और श्वशुर आदिकी कुशल पूंछी उसने कहकर कहा कि आप इस नगरमें कैसे आये शोभनने कहा कार्तिकके कृष्णपक्षमें रमा एकादशीके व्रतके प्रभावसे मैंने अनिश्चय पुर तो प्राप्त किये अब आप यह कीजिये जिससे निश्चय हो जावे ॥ ३१ ॥

कार्तिकस्य सिते पक्षे यानामैकादशी रमा ॥ ३१ ॥
तामुपोष्यमयाप्राप्त द्विजेंद्रपुरमध्रुवम् ।
ध्रुवं भवति येनैव तत्कुरुष्व द्विजोत्तमः ॥ ३२ ॥

तब ब्राह्मणने कहा इसको यह निश्चय कैसे हो उसने कहा मुचकुन्दकी कन्या चन्द्रभागासे कहना वहां निश्चय हो जावेगा वह मुचकुन्दपुरमें आया और सब वृतान्त चन्द्रभागासे कहा कि हे शुभे मैंने तुम्हारे पतिको प्रत्यक्ष देखा जो इन्द्रके समान हैं जिनको वह पुर अनिश्चित प्राप्त हुआ है इस लिये तुम मुझको भी लेचलो आपका

नोट—भगवद्गीताके पाठी इस कथा पर सम्यक्रीत्या विचार करें।

बहुत पुण्य होगा यह सुनकर वह दोनों वहां गये पतिको देखकर बहुत प्रसन्न हुई इसी प्रकार पति स्त्रीको देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और आनन्द मङ्गलसे आयु व्यतीत करने लगे यह रमा एकादशी का माहात्म्य है ॥

प्रबोधनी ।

अध्याय ६१

कार्तिक शुक्लपक्षकी एकादशी प्रबोधनी होती है तभीतक तीर्थ समुद्र, तालाब, भागीरथीकी गंगा पृथ्वीपर गरजती है जब तक कार्तिककी शुक्लपक्ष की विष्णु की प्रबोधनी एकादशी नहीं आती५।६।

तावद्गर्जंति तीर्थानि आसमुद्रसरांसि च यावत्प्रबोधिनी विष्णोस्तिथिर्नायाति कार्तिके ॥ ५ ॥

तावद्गर्जंति विप्रेंद्र गंगाभागीरथी क्षितौ ।
यावन्नायाति पापघ्नी कार्तिके हरिबोधिनी ॥ ६ ॥

हज़ार अश्वमेध, सौ राजसूययज्ञ का फल एक प्रबोधिनी एकादशीके व्रत करने से मिलता है ७

अश्वमेधसहस्राणि राजसूयंशतानि च ।
एकेनैवोपवासेन प्रबोधिन्या लभेन्नरः ॥ ७ ॥

जोतीनों लोकों में दुर्लभ नहीं दिखाने वाली वस्तु प्रबोधिनी देती है । ८ ।

ऐश्वर्य्य, सम्पदा, बुद्धि, राज, सुख यह सब भक्ति से व्रत करने वालों को प्रबोधिनी देती है । ९ ।

यद्दुर्लभं यदप्राप्यं त्रैलोक्यस्य न गोचरम् ।
तदप्य प्रार्थितं पुत्र ददाति हरिबोधिनी ॥ ८ ॥

ऐश्वर्यं संपद प्रज्ञां राज्यं च सुखसंपदः ।
ददात्युपोषिता भक्त्यां जनेभ्यो हरिबोधनी ॥ ९ ॥

मेरुमन्दराचलके समान जो पाप कहे हुये हैं उनको भी नाश करने वाली है ॥ १० ॥

मेरुमंदरमात्राणि पापन्युक्तानि यानि च ।
एके नैवोपवासेन दहते पापनाशिनी ॥ १०

पहिले हज़ार जन्मों में जो पाप इकट्ठा किया हो उसको भी रुई की नाई जला देती है । ११ ॥

पूर्वजन्मसहस्रेषु यत्पापमुपार्जितम् ।
निशिजागरणं चास्या दहते तूलराशिवत् ॥ ११ ॥

जो मनुष्य ब्रह्महत्यादिक घोर पापकर श्रेष्ठ विष्णु के पदों को प्राप्त होते हैं ।१६

विमुक्तां नारकैर्दुःखैर्याति विष्णुः परंपदम् ।
कृत्वा तु पातकं घोरं ब्रह्महत्यादिकं नरः ॥१६॥

विष्णु का जागरण कर मनुष्य पापहीन हो जाता है जो फल अश्वमेध आदि यज्ञों से भी नहीं मिलता । १७ ॥

कृत्वा तु जागरणं विष्णोर्धौतपापो भवेन्नरः ।
दुष्प्राप्यंयत्फलं विप्रअश्वमेधादिकैर्मखैः ॥ १७ ॥

वह इसके जागरणमें सुखसे मिलता है सब तीर्थोंमें स्नान कर सोना पृथिवी देनेसे जो फल मिलता है । १८ ॥

प्राप्यते तत्सुखे नैव प्रबोधिन्यस्तु जागरे ।
आप्लुत्यसर्वतीर्थेषु प्रदत्वा कांचनं महीम् ॥ १८ ॥

वह भगवान्‌की जागरण से मिलता है वही सुकृती और कुल पवित्र उसीने किया जिसने कार्तिक में प्रबोधनी का व्रत किया जैसे मनुष्यों को मृत्यु निश्चय है तैसे धन देह भी है। २० ॥

तत्फलं समवाप्नोति यत्कृत्वा जागरं हरेः ।
जातः एव सुकृती कुलं तेनैव पावितम् ॥ १९ ॥
कार्तिके मुनिशार्दूलकृता येन प्रबोधिनी ।
यथा ध्रुवं नृणां मृत्युर्धनं गात्रं तथा ध्रुवम् ॥२०॥

ऐसा जानकर एकादशी व्रत करने योग्य है जितने त्रिलोकी में तीर्थ हैं २१

इति ज्ञात्वा मुनिश्रेष्ठ कर्तव्यं वैष्णवं दिनम् ।
यानि कानि च तीर्थानि त्रैलोक्ये संभवंति च ।२१।

उसके घरमें सब समझो जो अच्छे प्रकार प्रबोधनी व्रत करते हैं और जो प्रबोधनीको जिसने यह व्रत किया उसको बहुत पापोंसे क्या है २२

तानि तस्य गृहे सम्यग्यः करोति प्रबोधिनीम् ।
किं तस्य बहुभिः पुण्यैः कृता येन प्रबोधिनीम् ॥

कार्तिक में प्रबोधनी पुत्र, पौत्र की देने वाली है वही ज्ञानी योगी, तपस्वी, जितेंद्रिय है। २३ ॥

पुत्रपौत्रप्रदाह्येषा कार्तिकंहरिबोधिनी ।
सज्ञानी च सयोगी च सतपस्वी जितेंद्रियः ॥२३॥

भोग मोक्ष उसीके हैं जो प्रबोधनी का व्रत करता है यह विष्णु को बहुत प्रिय है धर्मसार को सहायता देती है। २४ ॥

भोगोमोक्षश्चतस्यास्ति उपास्ते हरिबोधिनीम् ।
विष्णोः प्रियतराह्येषा धर्मसारसहायिनी ॥ २४ ॥

जो मनुष्य व्रत भक्तिसे करता है वह मुक्तिको पाता है और गर्भमें फिर नहीं आता ॥ २५ ॥

यः करोति नरो भक्त्या मुक्तिभाक्तमवेन्नरः ।
प्रबोधिनीमुपोषित्वा गर्भेन विशते नरः ॥२५॥

हे नारद इस व्रतको करो कर्म, मन, वाणीसे जो पाप है ॥२६॥

सर्वधर्मान्परित्यज्य तस्मात्कुर्वीत नारद ।
कर्मणा मनसा वाचा पापं यत्समुपार्जितम् ॥२६॥

उनको प्रबोधनीके जागरण नाश करते हैं स्नान, दान, तप, पूजा को भगवान्का उद्देश्यकर जो प्रबोधनीमें करता है वह अक्षय होता है जो भक्तिसे पूजा और व्रत करते हैं सैकड़ों जन्मके पापोंसे छूट जाते हैं हे पुत्र नारद यह महाव्रत बड़े पापोंको नाशने वाला है ॥२९॥

समुपोष्य प्रमुच्यन्ते पापैस्तैः शतजन्मजैः ।
महाव्रतमिदं पुत्र महापापौघनाशनम् ॥२९॥

बाल्य, युवा, वृद्धावस्थामें जो सौ जन्मतक पाप किये हों उनको इनको इसमें जपे भगवान् नाशते हैं क्योंकि यह एकादशी धन धान्य देनेवाली पुण्य करनेवाली और सब पापोंको नाशनेवाली है ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

बाल्ये यत्संचितं पापं यौवने वार्द्धके तथा ।
शतजन्मकृतं पापं स्वल्पं वा यदि वा बहु ॥३२॥
तत्क्षालयति गोविन्दश्चास्यामभ्यर्चितो नृणाम् ।
धनधान्यवहा पुण्या सर्वपापहरा परा ॥३३॥

जो भक्तिसे व्रत करता है उसको कुछ भी कठिन नहीं है चन्द्र, सूर्य्य, ग्रहणमें जो पुण्य है उसका हजार गुणा गुण प्रबोधनीके जागरणमें है स्नान, जप, तप, भोजन, दान, होम, पढ़ना इस प्रबोधनीमें

करनेसे करोड़ गुणा देते हैं और जन्मभरमें जो पुण्य इकट्ठा किया हो परन्तु कार्तिकमें व्रत न किया हो तो सब पुण्य नाश होजाते हैं ॥३७॥

वृथा भवति तत्सर्वमकृत्वा कार्तिके व्रतम् ॥३७॥

यज्ञ, दान जपादिकों ऐसे सो भगवान् प्रसन्न नहीं होते जैसा कार्तिकमें शास्त्रकी कथाओंसे होते हैं जो मनुष्य विष्णुकी कथाका आधा या चौथाई श्लोक पढ़ते या सुनते हैं उनको सौ गौका फल होता है इससे सब धर्मोंको छोड़कर विष्णुके आगे शास्त्र पढ़े या सुने जो मनुष्य कल्याणकी इच्छा वा लोभसे करता है वह सौ पीढ़ियोंको तार देता है जो नियमसे सुनता है उसको सातो द्वीप युक्त पृथ्वीके दान करनेका फल मिलता है जो बांचने वालेको दान देता है उसको नाशरहित लोक मिलता है और जो शंखमें जल लेकर अर्घ्य देता है तो सब तीर्थोंमें सब दानोंके करनेसे जो फल मिलता है तिसका करोड़ गुणा फल एकादशीको अर्घ्य देनेसे मिलता है। गुरुको भोजन कपड़ा दे दक्षिणासे एक वर्ष भगवान् सहस्र वर्षतक अगस्त्यके फूलोंसे पूजन करनेवालोंको नरककी अग्नि नाश होजाती है मुनिके फूलोंसे मनोकांक्षा, तुलसीदलसे दशहजार वर्षके पाप नाश होजाते हैं और जो मनुष्य देखे छुवे ध्यान लगावे नाम स्तुति करे सींचे और पूजन करे तो करोड़हजारयुग उसकी सुकृति बढ़ती है जिसप्रकार तुलसी के डाले बीज तुलसी पृथ्वीपर बढ़ती हैं वे लगानेवालेके वंशमें जो उत्पन्न हुये होंगे, होनेवाले हैं वे सब हजार वर्ष भगवान्के घरमें वास करते हैं।

नोट—क्या राजा दिलीप एवं श्रीरामचन्द्रादिके समयमें ऐसे पुराण प्रसिद्ध न थे जो केवल एकदिनके व्रत और जागरण करनेसे मुक्ति प्राप्त कर लेते। इसके उपरांत इस व्रतके न करनेसे भगवान् जन्मभरके पुण्योंका नाश करदेते हैं। कहिये यह न्याय है या पक्षपात। यथार्थमें ग्रन्थकर्त्ताने वा किसी निकालनेवाले पुरुषने धर्मशास्त्रकी महिमा बढ़ानेके लिये इतना भ्रम दिया और तुलसी और अगस्त्यादिके फूलोंके स्पर्श और सींचने करनेसे हजार वर्षों भी अधिक सुकृति बढ़ती है तो हम सबसे माली अधिक महिमाके योग्य हैं और वही हमसे अधिकारी होंगे। सज्जन गण! इसको विचार कीजिये

कमला।

अ० ६२

मल मासकी कृष्णपक्षकी एकादशीको कमला कहते हैं अन्तिपुरीमें शिवशर्म्मा नाम एक ब्राह्मण हुये हैं जिनके ५० पुत्र थे, जिसमें छोटा कुकर्मी था इस लिये सबने छोड़ दिया वह चलता हुआ प्रयाग पहुंचा त्रिवेणीमें स्नान किया भूखसे व्याकुल हुआ हरिमित्र मुनिके स्थान पर पहुंचा वहां मलमासकी एकादशी कमलाकी कथा होरही थी,जहां बहुत मनुष्य सुन रहे थे उसने सुना सबके साथ शून्य स्थानमें व्रत भी किया उसके प्रतापसे आधीरातको लक्ष्मी आई और बोली कि मैं तुझको वर दूंगी तब जयशर्म्माने कहा कि हे रम्भे आप कौनहैं इन्द्रकी इन्द्राणी महादेवकी पार्वती या गंधर्वी या किन्नरी या चन्द्रमा सूर्य्यकी स्त्री हो मैंने आपके समान किसीको नहीं देखा तब लक्ष्मी बोली कि मैं वैकुंठसे आई हूं और कमलाके प्रभावसे भगवान्‌ने भेजा है मैं बहुत प्रसन्न हूं तुमने एकादशीका मुनियोंके साथ प्रयागमें व्रत किया है इसलिये तुम्हारे वंशमें सब मनुष्य लक्ष्मीसे युक्त होंगे यह महीनोंमें श्रेष्ठ महीना है जैसे पक्षियोंमें गरुड़ नदियोंमें गंगा इत्यादि हैं इसमें निराहार रहकर दूसरे दिन प्रातः उठ स्नानकर इन्द्रियोंको वशकर विष्णुका पूजन कर भगवान्‌से प्रार्थना करे फिर आप भोजन करे लक्ष्मीजी यह वर देकर अंतर्धान होगईं तब ब्राह्मण धनाढ्य होकर पिताके घर गया।

इत्युक्त्वा कमला तस्मै वरं दत्वा तिरोदधे।
सोऽपि विप्रोधनी भूत्वा पितुर्गेहं समागतः ॥४२॥

नोट—कहिये पापियोंको अब कौन भय रहा जो वह पापसे डरें चाहें जितनी चोरी, रिश्वत जारी इत्यादि नीचसे नीच कर्म कर केवल एक दिन आकर स्वयं या वेवशीसे व्रत करके सारे पाप छूटकर लक्ष्मीजी तक प्राप्त होगी परन्तु न जाने आज कल लक्ष्मीजी सोगई हैं या विष्णु की आज्ञाकारिणी नहीं रहीं जो आज कल प्रायः एकादशीके व्रती बहुत कम धनवान् दिखाई देते हैं।

कामदा।

अ० ६३

मधुमासके शुक्ल पक्षकी एकादशीको कामदा कहते हैं कलियुगमें एकादशी संसारके बंधनको छुड़ाने वाली है। ४

एकादशी कलौ राजन् भवबंधनविमोचनी।
कामदा सर्वकामानां पापानां पापहा भुवि ॥४॥

रतवार, मंगल, संक्रान्तिमें सदा एकादशी व्रत करने योग्य है क्योंकि पुत्र, पौत्रकी बढ़ाने वाली है ॥ ५ ॥

रविवारेथ मांगल्ये संक्रमे वा नृपोत्तम।
एकादशी सदोपाष्या पुत्रपुत्रौ विवर्द्धनी ॥

इसका व्रत विष्णुके प्यारे भक्तको कभी त्यागने योग्य नहीं है क्योंकि यह नित्यही आयु, यश, पुत्र, आरोग्य, द्रव्य, मोक्ष राज्यको देती है हे राजन्! जो नित्य श्रेष्ठ श्रद्धासे युक्त एकादशी व्रतको करते हैं वे मनुष्य जीवन मुक्त और विष्णुरूप, निस्संदेह दिखलाई देते हैं ॥ ६। ७ व ८ ॥

एकादशी व्रतं क्वापि न त्याज्यं विष्णु वल्लभैः।
आयुः कीर्तिप्रदं नित्यं संतानारोग्य वित्तदम् ॥६॥
मोक्षदं रूपदं राज्यं नित्यमेकादशी व्रतम्।
ये कुर्वंति महीपाल श्रद्धया परमायुतः ॥७॥
यथोक्त विधिना लोके ते नराः विष्णुरूपिणः।
जीवन्मुक्तास्तु भूपाल दृश्यंते नात्र संशयः ॥८॥

सब मनुष्योंको सब कामनाओंकी देने वाली है क्योंकि एकादशी पवित्र पावन है व्रत रखने वाला दशमीके दिन कांस, मांस, मसूर

अना कोदों साग मधु पराया अन्न दूसरी बार भोजन मैथुन यह अ-स्तुएँ छोड़ देवे जुआ खेलना, क्रीड़ा, नींद, पान, दतून, पराया कलंक चुगली चोरी, जीवमारना मैथुन क्रोध झूंठ वचन यह सब एकादशी में त्यागदेवे कांसा मांस, मसूर तेल झूंठ बोलना, कसरत परदेश जाना दूसरी बार भोजन मैथुन, बैलकी पीठ पराया अन्न साग यह द्वाद-शीको छोड़ देवे हे राजन् इस विधिसे जो श्रद्धासे व्रतको करते हैं और रात्रिमें जागरण कर विष्णुको पूजते हैं वे परमगतिको प्राप्त होते हैं ।

एकादशी जागरण माहात्म्य ।

अध्याय ३७

जो मनुष्य आनन्द समेत निद्रारहित सदा जागरण करता है उसके सब पाप छूट जाते हैं ॥

यो न नृत्यति मूढात्मा पुरतो जागरे हरेः ।
पंगुत्वं तस्य जानीयात् सप्तजन्मानि बाडव ॥ ४० ॥

जो मूर्ख भगवान्के जागरणमें उनके आगे नाचता नहीं वह सात जन्मपर्य्यंत लंगड़ा होता है ॥

यः पुनः कुरुते गीतं नृत्यं जागरणं हरेः ।
ब्राह्मं पदं मदीयं च सत्यं वै तस्य दैवतम् ॥ ४१ ॥

जो गीत नाच जागरण करता वह ब्रह्माका पद और हमारे (विष्णुके) पदको सत्य ही पाता है ॥ ४१ ॥

जिन मनुष्योंने करोड़ जन्ममें पाप किये हैं सब एकादशीके जागरण की रात्रिमें नष्ट हो जाते हैं ॥ ४४ ॥

नोट—क्या एकादशी द्वादशीके अतिरिक्त चोरी आदि दुष्ट कर्म करने चाहियें । यदि जीवन-मुक्ति ऐसे एक दिनके व्रतसे मिले तो तो यमनियमादिकी आज्ञाकी क्या आवश्यकता ।

यत्किंचित्क्रियते पापं कोटिजन्मानि मानवैः ॥
श्रीकृष्ण जागरे सर्वं रात्रौ नश्यति बाडव ॥

काम अर्थ, सम्पदा, पुत्र यश, शाश्वत लोक यह द्वादशीके जागरणके विना दशहजार यज्ञोंसे भी नहीं मिलते ॥ ४७ ॥

कामार्थौ संपदः पुत्राः कीर्तिर्लोकाश्च शाश्वताः ।
यज्ञायुतैर्न लभ्यन्ते द्वादशीजागरं विना ॥ ४७ ॥

जागरणके लिये भगवान्‌के मन्दिरमें जाते हुये पुरुषके जितने पग होते हैं उतने ही अश्वमेधके समान फल उसका होता है ॥ ४९ ॥

यावत्पदानि चलति केशवायतनं प्रति ।
अश्वमेधसमानि स्युः जागरार्थं प्रगच्छतः ॥ ४९ ॥

चलते हुएकी पृथ्वीमें जो धूलिकण गिरती है उतने ही में हज़ार वर्ष जागरण करने वाला स्वर्गमें बसता है ॥ ५० ॥

पादयोः पतितं यावद्धरण्यां पांशु गच्छताम् ।
तावद्वर्षसहस्राणि जागरी वसते दिवि ॥ ५० ॥

जो कुछ ब्रह्महत्याके बराबर पाप किये हैं वह सब एकादशीके जागरणसे नाश हो जाते हैं ॥ ७१ ॥

यानिकानि च पापानि ब्रह्महत्या समानि च ।
कृष्णाह जागरात्तानि विलयं यांति खंडशः ॥ ७१ ॥

एक ओर श्रेष्ठ दक्षिणाओंसे समाप्त हुये सब यज्ञ और एक ओर भगवान्‌का प्यारा उन्हींका जागरण, काशी, पुष्कर, प्रयाग, नैमिषारण्य, गया, शालिग्रामका महाक्षेत्र, अर्वदारण्य पुष्कर, मथुरा सब तीर्थ, यज्ञ, चारों वेद, यह सब भगवान्‌के जागरणमें प्राप्त होते हैं।

गंगा, सरस्वती, ताप्ती यमुना शतद्रुकी, चन्द्रभागा विशसता यह सब नदियां भी जागरणमें पहुंचती हैं। तालाब कुंड सब समुद्र भी एकादशीमें कृष्णके जागरणमें नाचते गीत गाते वीणा बजाते हुये प्रसन्न करते हैं उनकी देवता लोग वांछा करते हैं।

विष्णुके बराबर कोई देवता नहीं द्वादशीके बराबर कोई तिथि नहीं इसके व्रत करनेसे अक्षय फल होता है।

अब कुछ अन्य व्रत माहात्म्य भी सुन लीजिये।

त्रिस्पृशाव्रत।

३४ अध्याय

नारदजीने महादेवजीसे कहा कि आप त्रिस्पृशा नाम व्रतको कहिये। जिसके सुननेसे मनुष्य कर्मबंधनसे क्षणमात्रमें छूट जाता है, यह सुन महादेवजीने कहा कि सब पापोंके समूह महादुःखोंके नाश करने वाला त्रिस्पृशा नाम व्रत सुनो। शास्त्र, पुराणादिक, यज्ञ कोटियों तीर्थ, अनेक व्रतोंके समय और देवताओंके पूजनसे मोक्ष नहीं होती। इस लिये देव देवने यह वैष्णवी तिथी मोक्ष ही के लिये दिखलाई है।

मोक्षार्थे देवदेवन दृष्टा वै वैष्णवी तिथि ॥७॥

कलियुगमें ब्राह्मण सांख्यको कठिनतासे जानते और इन्द्रियोंका वशमें करना और मनको जीतना महाकठिन है। इसलिये कामी ध्यानकी धारणासे वर्जित मनुष्य त्रिस्पृशाके व्रत करनेसे ही मोक्षको पाते हैं।

कामभोगप्रसक्तानां त्रिस्पृशा मोक्षदायिनी ॥१२॥

नोट—इससे प्रथम तो यह कहा था कि एकादशीके समान कोई व्रत नहीं। अब यह कहा कि द्वादशीके समान कोई तिथि नहीं इसमें भगवान्के पूजनकी विधिमें नाचनेसे साक्षात् ब्रह्मा, विष्णुका पद प्राप्त होता है और यदि न नाचे तो सातजन्म लँगड़ा होता है क्या इससे बढ़कर और भी कोई अचम्भेकी बात है।

इसको सबसे पहिले मत्स्य भगवान्‌ने जीवोंके उद्धारके लिये कहा था । कि विषयोंसे संयुक्त जो मनुष्य होंगे उनको भी हम इस व्रतके करनेसे मोक्ष देंगे ।

कार्तिकके शुक्लपक्ष में सोमवार या बुधवार के दिन जो त्रिस्पृशा होतो करोड़पापोंका नाश करने वाली होती है ॥ १३ ॥

कार्तिके शुक्लपक्षे तु त्रिस्पृशा जायते यदि ॥
सोमेन सोमजेनापि पापकोटिविनाशिनी ॥ १३ ॥

जिसके व्रत करनेसे हत्यायुक्त महादेवके हाथसे कपाल गिरगया, कलियुगके करोड़ों पापसमूहोंसे गङ्गादेवी छूटगई ।

हस्ताद्ब्रह्मकपालं तु तत्क्षणात्पतितं भुवि ॥ १४ ॥
कलिकल्मषकोट्यौघैर्मुक्ता देवी त्रिमार्गगा ॥ १५ ॥

वाहुवीर्य्यकी आठ हत्या, शतायुधने वनमें एक ब्राह्मणको माराथा इसकी हत्या और इन्द्रकी नमुचिसे उत्पन्न हत्या इस व्रतके प्रताप से जाती रही ।

हत्याष्टौ वाहुवीर्यस्य पूर्वंजाता महामुने ।
गताभृगूपदेशेन त्रिस्पृशासमुपोषणात् ॥ १६ ॥

जो जन इस व्रतको नहीं करते वह प्रयाग, काशी,गोमती,कृष्णा जीके समीपमें मरनेसे भी मोक्षको नहीं पाते क्योंकि इनमें स्नान करनेसे शाश्वती मुक्ति होती है और त्रिस्पृशा व्रतके करनेसे कामभोग से युक्त भी मनुष्य घर ही में मुक्ति पाता है।

न प्रयागे न काश्यां तु गोमत्यां कृष्णसन्निधौ ।
मोक्षो भवति विप्रेन्द्र त्रिस्पृशा यदिनो कृता ॥ २० ॥
गृहेऽपि जायते मुक्तिस्त्रिस्पृशां मोक्षदायिनीम् ॥२१॥

यह सुन नारदजीने कहा कि उस व्रतको वर्णन कीजिये। तब महादेवजीने कहा कि प्राची सरस्वतीके तट गंगाने श्रीकृष्ण महाराज से कहा कि कलियुगके करोड़ों ब्रह्महत्यादिक पापोंसे युक्त मनुष्य हमारे जलमें स्नान करते हैं उनके सैकड़ों पाप दोषोंसे हमारी देह कलुषीकृत है वह पाप किस प्रकारसे जायँ।

तब श्रीकृष्णजीने कहा कि तुम रोदन न करो हमारे सम्मुख प्राची देवी है और सरस्वतीजी बह रही हैं। इसमें नित्य स्नान करने से पवित्र हो जाओगी, क्योंकि मैं यहां निस्सन्देह सैकड़ों तीर्थों और देवताओंसे युक्त बसता हूं यह स्थान मेरे प्रिय पवित्र और करोड़ हत्याका नाश करनेवाला है इसको मैं तुमको देता हूं क्योंकि तुम मेरे प्राणोंसे अधिक प्यारी हो।

ब्राह्मणका मारना, मदिरा पीना, गौ और शूद्रकी स्त्रीका बध करना, ब्राह्मणका द्रव्य छीन लेना, माता पिताका सत्कार करना, कुम्हारके चाकको छूना। गुरुजीसे वैर करना। अभक्ष भोजन करना इन सब पापोंके करनेसे प्राची सरस्वतीमें हमारे आगे एकवार तुम स्नान करो पापसे हीन हो जाओगे।

चक्रियानाद्गुरुद्रोहादभक्ष्यस्य च भक्षणात्।
सर्वपापस्य करणात् प्राचीब्रह्म सुतासुतो ॥३४॥
व्यपोहयति पापानि सकृत्स्नानेन मेग्रतः।
कुरुस्नानं सरिच्छ्रेष्ठे विपापात्वं भविष्यसि ॥३५॥

यह सुन गंगाने कहा कि मैं नित्य आनेमें असमर्थ हूं अब मेरे पाप कैसे नाश होंगे इसको आप कहिये। अच्छा तो मैं और उपाय कहता हूं। क्योंकि तुम मेरे चरणसे उत्पन्न हो सरस्वतीसे अधिक सौ करोड़ तीर्थोंसे अधिक करोड़ यज्ञ, व्रत, दान, जप, होमसे अधिक धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष फलको देनेवाली सांख्ययोगसे भी अधिक कल्याणयुक्त त्रिस्पृशाको करो ॥ ३८ ॥

सरस्वत्यधिकाया च तीर्थकोटिशताधिका ।
मखकोट्यधिकावापि व्रतदानाधिकाचया ॥३८॥
जपहोमाधिकायाच चतुर्वर्गफलप्रदा ।
साङ्ख्ययोगाधिकायाच त्रिस्पृशा कथितां शुभा ॥३९॥

तब कृष्ण महाराजने कहा कि एकादशी द्वादशी वेधी हो और कुछ रात्रि रहे जो त्रयोदशी भी होजावे वह त्रिस्पृशा जानने योग्य है और दशमी युक्त एकादशीको करनेसे करोड़ जन्मका किया हुआ पुण्य और पुत्र नाश होजाते हैं और अपने पुरुषोंको स्वर्गसे नरक रौरव आदिमें डालदेता है । ऐसे अपराधको मैं नहीं क्षमा करता हूं । तब गंगाजी बोली कि हे जगन्नाथ आपके वचनसे त्रिस्पृशाको मैं करूंगी और आप ही की आज्ञासे सब पापोंसे छूट जाऊंगी ॥५५॥

करिष्येऽहं जगन्नाथ त्रिस्पृशां वचनात्तव ।
सर्वपापविनिर्मुक्ता भविष्यामि तवाज्ञया ॥५५॥

इसलिये करोड़ों तीर्थ करनेसे जो फल है वह त्रिस्पृशाके व्रत करनेसे मिलता है ।

तीर्थकोटिषु यत्पुण्यं क्षेत्रकोटिषुयत्फलम् ।
तत्फलं समवाप्नोति त्रिस्पृशा समुपोषणात् ॥८१॥

जो मनुष्य भक्तिसे इसको करता है उसको हज़ार मन्वन्तर काशीजीमें गंगाके स्नान करनेसे जो फल होता है वह इस त्रिस्पृशा के करने वालेको होता है । करोड़ वर्षप्राची सरस्वती और यमुनाके स्नानसे जो फल मिलता है वह इस व्रतके करनेवालेको मिलता है जो कुरुक्षेत्रमें करोड़ सूर्य्यग्रहणमें स्नान सोनेके सौ भार दान करनेसे जो फल है वह त्रिस्पृशाके करनेसे भी है । करोड़ हज़ार पाप, करोड़ ब्रह्म हत्या एक ही व्रतसे शीघ्र नष्ट होजाती हैं यह त्रिस्पृशाका व्रत नहीं गति होनेवालोंको गति देनेवाला है । जिन्होंने सैकड़ों भारी

पाप किये हैं वह भी गतिकी इच्छा करते हैं कलियुगमें त्रिस्पृशाको प्राप्त होकर जो अधम मनुष्य नहीं करते हैं उनके जन्मका फल और जीना निष्फल होता है ।

यः करोति नरो भक्त्या शृणु वक्ष्यामि तत्फलम् ।
गंगावगाहने ब्रह्मन् वाराणस्यां तु यत्फलम् ॥
मन्वंतर सहस्रैस्तु त्रिस्पृशा कारको हि तत् ।
प्राची च यमुनास्नाने वर्षैर्यत्कोटिभिः फलम् ॥
तत्फलं समवाप्नोति त्रिस्पृशाव्रतकृन्नरः ।
तत्फलं तु कुरुक्षेत्रे सूर्यग्रहणकोटिभिः ॥
हेमभारशतैर्दानैस्त्रिस्पृशा करणेन तत् ।
पापकोटिसहस्राणि हत्याकोटिशतानि च ॥
एके नैवोपवासेन क्रियते भस्मसाद्द्रुतम् ।
त्रिस्पृशाया व्रतं यत्तु अगतीनां गतिप्रदम् ॥
गतिमिच्छंति विप्रर्षे महत्पापशतानि च ।
स्वयं कृष्णेन कथितं पाराशरयस्य चाग्रतः ॥
कलौ ये त्रिस्पृशां लब्ध्वा न कुर्वंति नराधमाः ।
तेषां जन्मफलं चैव जीवितं विफलं भवेत् ॥
८६ । ८७ । ८९ । ९० । ९४ ॥

नोट—पण्डितजन ही हमारे इस विचार से सहमत होसकेंगे क्योंकि दुराग्रहियों से तो कुछ आशा नहीं ।

१—आपका यह अटल सिद्धान्त है कि "नहिपङ्केन पङ्काभः,, अर्थात् कीचड़से कीचड़ नहीं धुलती तब यह किस प्रकार होसक्ता है कि जो गंगा स्वयं अपने पाप छुड़ाने का यत्न ढूंढ़ती फिरे वह दूसरों को निष्पाप करे ।

२—यह कि जल जड़ है न कि चैतन्य और प्रवाहशालिनी होनेसे इसका नाम गंगा है तब किस प्रकार जलने ऐसी बातें कीं जोकि सर्वथा असम्भव हैं ।

उन्मीलिनी व्रत ।

अध्याय ३५

महादेवने नारद से कहाकि जब दिन रात एकादशी हो और सवेरे एक घड़ी हो (द्वादशी भेजी) वह उन्मालिनी व्रत जानना चाहिये यह विशेष कर भगवान्को प्रिय है ।

एकादशी अहोरात्रं प्रभाते घटिका भवेत् ।
उन्मीलनी तु सा ज्ञेया विशेषेण हरिप्रिया ॥३३॥

तीनों लोकमें जो तीर्थ, पवित्रस्थान, यह यज्ञ वेद तपस्या है वे उन्मालिनी के करोड़वें भागके बराबर नहीं ।

त्रैलोक्ययानि तीर्थानि पुण्यान्या यतनानि च ।
कोट्यंशे नैव तुल्यानि मखा वेदास्तपांसि च ॥३४॥

इसके समान कोई न हुआ है न होगा प्रयाग, कुरुक्षेत्र, काशी, पुष्कर हिमांचल पर्वत मेरु, गंधमादन, नील, निषध, विन्ध्याचल पर्वत, नैमिषारण्य, गोदावरी, कावेरी, चन्द्रभागा, वेदिका, तापी पयोष्णी, क्षिप्रा, चदना, चर्मरवती, सरयू, गण्डक, गोमती, विपाशा महानद, शोण यह सब उन्मालनीके बराबर नहीं हैं ।

३—पाप, पुण्य बुरे और अच्छे कर्म्मोंका फल है और इनकी निवृत्ति भोगसे ही होसकी है परन्तु पुस्तकनिर्माताने अपने विचारमें पाप पुण्यको द्रव्य मान दर्शनशास्त्रोंके विरुद्ध न जाने किस प्रकार यह असम्भव लेख लिख दिया कि गंगा कहती है कि जो पापी मुझमें आकर स्नान करते उनसे मैं भी दूषित हूं यदि यह बात सत्य है तब तो इस प्रकार आपके सब उपास्य देव दूषित हो गये ।

४—जब गंगाको पापनिवारणार्थ त्रिस्पृशाका व्रत बताया तो हमारे सनातनी भाइयोंको चाहिये कि आज से गंगास्नान छोड़ त्रिस्पृशाका ही व्रत करें क्यों विचारी गंगाको पापिनी बना इसको दुःख देते हैं परन्तु जब त्रिस्पृशामें बहुतसे पाप इकट्ठे होगये तो न जाने वह विचारी किसका व्रत ढूढती और करती फिरेगी इससे भी बढ़कर विष्णु महाराजका गंगाके लिये असम्भव और बालबुद्धिसा यह उपाय कि हे गंगे तू सरस्वतीमें स्नान कर जिससे तू अवश्य पवित्र हो जावेगी बुद्धिमान् सज्जन जन ध्यानपूर्वक विचारें !

उन्मीलनीसमं किंचित् न भूतं न भविष्यति ।
प्रयागेन कुरुक्षेत्रं न काशी न च पुष्करः ॥३५॥
शैले हिमाचलो नैव न मेरुर्गंधमर्दनः ।
शैलो न नील निषधो न विंध्यो नैव नैमिषम् ॥३६॥
गोदावरी न कावेरी चन्द्रभागा न वेदिका ।
न तापी न पयोष्णी च न क्षिप्रा नैव चंदना ॥३७॥
चर्मण्वती च सरयूश्चंद्रभागा न गंडिका ।
गोमती च विपाशा च शोणश्चपश्च महानदः ॥३८॥

हे राजन् बार बार बहुत कहने से क्या है उन्मीलिनीके बराबर कोई नहीं है भगवान् से श्रेष्ठ कोई देवता नहीं है ।

किमत्र बहुनोक्तेन भूयो भूयो नराधिप ।
उन्मीलनी समं किंचिन्न देवः केशवात्परः ॥

इस व्रतके करनेसे पापसमूहका क्षणमात्रमें नाश हो जाता है जिस मासमें उन्मीलिनीव्रततिथि हो उसी महीनेके नामसे गोविन्दजीकी यत्नपूर्वक पूजा करे और मासके नामसे भगवान्‌की सोनेकी मूर्ति बनावे और पवित्र जल, पंचरत्न, चंदन, फूल, अक्षत, और मालाओंसे युक्त कलशको स्थापन करे और चंदन, जल, गेहूं, बर्तन अनेक रत्नोंसे संयुक्त मल्लिका और बेलीके फूलोंसे पूजन करे । दो कपड़े, जनेऊ, दुपट्टा, जूता इत्यादि सब निवेदन करे और सोनेसे सींग मढ़ी चांदीके खुर तांबेसे पीठ कांसेकी दोहनी रत्नकी पूंछवाली बछड़ा और गहनोंसे युक्त गऊ गुरुजीको देवे धूप दीप नैवेद्य फल इत्यादिको मन्त्रों सहित देवे । फिर विष्णु भगवान्‌के चरण गुह्यगति, गुह्यइन्द्रिय इत्यादि सर्वमूर्त्तिका सब अंग पूजन करे और फिर विधिपूर्वक अर्घ देवे और कहे कि हे सुब्रह्मण्य ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है मुझको शोक है, मोह, महापाप सागरसे उद्धार कीजिये और इ-

मारे पुरुष कुयोनिमें प्राप्त या पापसे मृत्युके वशमें प्राप्त हैं उनको प्रेत-लोकसे उद्धार कीजिये मैं आपके आधीन हूं मेरी भक्ति अचल हो और फिर आर्त्ती करे, कपड़े गोदान गुरुजीको दे और दिन कर्म्मे करके ब्राह्मणोंके साथ भोजन करे इसी विधिसे जो इस व्रतको करता है वह करोड़ हज़ार कल्प श्रीविष्णुजीके समीप वसता है॥

अनेन विधिनायस्तु कुर्यादुन्मीलिनी व्रतम् ।
कल्पकोटिसहस्राणि वसते विष्णुसन्निधौ ॥ ५८ ॥

जयन्ती व्रत ।

पद्मपुराण चतुर्थ ब्रह्मखण्ड अध्याय ४ में लिखा है कि जयन्ती व्रतसे जो विमुख रहता है वह सब धर्मोंसे छूट कर निश्चय नरकको जाता है ॥ ३८ ॥

जयन्त्युपवासेन योनरात्रपराङ्मुखः ।
सर्वधर्मविनिर्मुक्तो यात्यसौ नरकं ध्रुवम् ॥ ३८ ॥

उसके घरमें भाग्यहीनता, विधवापन, लड़ाई और सन्तानका विरोध और धनका नाश नहीं होता ॥ ४१ ॥

नदौर्भाग्यं न वैधव्यं न भवेत्कलहोगृहे ।
सततेर्न विरोधं च न पश्यति धनक्षयम् ॥ ४१ ॥

जितने तीर्थ व्रत और नियम हैं वे जयन्तीके व्रतकी सोलहवीं कलाको भी नहीं पाते ॥ ४४ ॥

नोट—प्यारे भाइयो विचारो और सोचो तो सही कि अब भी आपको कुछ इसमें संदेह रहा कि पुराणोंमें एकको दूसरा छोटा बना रहा है यथा तीनों लोकमें जो तीर्थ, पवित्र स्थान यज्ञ, वेद हैं वह उन्मीलिनीके करोड़वें भागके बराबर नहीं कि जिसके करनेसे करोड़हज़ार कल्प श्रीविष्णुजीके समीप बस सारे पापोंसे छूट जाता है।

यानि कानि च तीर्थानि व्रतानि नियमानि च ।
जयंती वासरस्यैव कलां मांहति षोडशीम् ॥ ४४ ॥

भगवानूकी प्यारी जयन्ती आचारहीनता कुलभ्रष्टता यश हीनता और बुरी योनिमें उत्पन्न हुए पापको शीघ्र ही नाश कर देती है ॥ ४१ ॥

आचारहीनं कुलभ्रष्टं कीर्तिहीनं कुयोनिजम् ॥
नाशयत्याशु पापं च जयंती हरिवल्लभा ॥४९॥

जयन्तीमें व्रत करनेवाला मेरुपर्वतके बराबर ब्रह्महत्यादिक सब पापोंको जला देता है ॥ ४८ ॥

मेरुतुल्यानि पापानि ब्रह्महत्यादिकानि च ।
सनिर्दहति सर्वाणि जयन्त्यां समुपोषकः ॥४८॥

जयन्तीमें व्रत करनेद्वारा, पुत्रकी इच्छावाला, पुत्रको धनकी कामनावाला, धन और मोक्षवाला मोक्षको पाता है ॥ ४९ ॥

पुत्रार्थी लभते पुत्रं धनार्थी लभते धनम् ।
मोक्षार्थी लभते मोक्षं जयन्त्यां समुपोषकः ॥४९॥

जयन्तीके स्मरण और कीर्त्तन करनेसे सात जन्मके इकट्ठे किये पापोंको जला देती है फिर व्रत करनेवालोंके पुण्यका क्या कहना है ॥ ५० ॥

स्मरणात्कीर्त्तनात्पापं सप्तजन्मार्जितं मुने ।
जयन्ती दहते तच्च किं पुनः सोपवासकृत ॥५०॥

भादोंमें जन्माष्टमी, चैत्रमें शुक्लपक्षमें शुभकारिणी नवमी, फाल्गुणमें कृष्णपक्षकी चतुर्दशी, वैशाखमें शुक्लपक्ष चतुर्दशी कुवारमें दुर्गाष्टमी और शुक्लपक्षकी श्रवणयुक्त द्वादशी यह ६ महापुण्यकारिणी शुभ देनेवाली जयन्ती कहाती हैं ।

जयन्ती व्रत करनेवालेको दिन २ में हजार गौवोंके देनेके फलको प्राप्त होता है जो कुरुक्षेत्रमें सूर्य्यग्रहणमें हजार भार सोना देने, हजार करोड़ कन्याओंके दान, समुद्र पर्य्यन्त इस पृथ्वीके देनेसे और जो माता, पिता और गुरुओंकी भक्ति और तीर्थसेवा और सत्यव्रत वालोंको और गङ्गा, यमुना और सरस्वतीके जलस्नान करनेसे जो पुण्य है। जिसको सहस्रबाहु, कर्ण, बुद्धिमान् कुमार, सगर, दिलीप, रामचन्द्र, गौतम, गार्ग्य, पराशर, वाल्मीक और साधु द्रौपदीके पुत्रने पूर्व समयमें किया था।

कर्त्तां गवां सहस्रं तु यो ददाति दिने दिने।
तत्फलं समवाप्नोति जयन्त्यां समुपोषणे ॥ ९ ॥
हेमभारसहस्रं तु कुरुक्षेत्रे रविग्रहे।
तत्फलं समवाप्नोति जयन्त्यां समुपोषणे ॥१०॥
कन्याकोटि सहस्राणां दाने भवति यत्फलम्।
तत्फलं समवाप्नोति जयन्त्यां समुपोषणे ॥१२॥
ससागरामिमां पृथ्वीं दत्वा यल्लभते फलम्।
तत्फलं समवाप्नोति जयन्त्यां समुपोषणे ॥१३॥
मातापित्रोर्गुरूणां च भक्तिं युक्तः करोति यः।
तत्फलं समवाप्नोति जयन्त्यां समुपोषणे ॥ १५ ॥
अपदाहरणार्थाय तीर्थसेवा कृतात्मनाम्।
सत्यव्रतानां यत्पुण्यं सारस्वते जले।
स्नात्वा पुण्यमवाप्नोति जयन्त्यां समुपोषणे ॥१७॥

जन्माष्टमी।

पद्मपुराण चतुर्थ ब्रह्मखण्ड अध्याय १३ में लिखा है जो मनुष्य भक्ति से कृष्ण जन्माष्टमी के व्रतको करता है वह करोड़ कुलसे युक्त होकर अन्तमें विष्णुजीके पुरको प्राप्त होता है।

कृष्णजन्माष्टमी ब्रह्मन्भक्त्या करोति या नरः ।
अंते विष्णुपुरं याति कुलकोटियुतो द्विज ॥ २ ॥

बुधवार वा सोमवार में रोहिणीनक्षत्रयुक्त होकर अष्टमी क-रोड़ कुलके मुक्ति देने वाली है । ३ ।

अष्टमी बुधवारे च सोमे चैव द्विजोत्तम ।
रोहिणी ऋक्षसंयुक्ता कुलकोटिविमुक्तिदा ॥३॥

जो महापापोंसे युक्त होकरभी उत्तम व्रतको करता है वह सब पापोंसे छूटकर अन्तमें हरिजी के स्थानको जाता है । ४ ।

महापातकसंयुक्ता करोति व्रतमुत्तमम् ।
सर्वपापविनिर्मुक्तश्चांते याति हरेर्गृहम् ॥४॥

जो अधम मनुष्य कृष्णा जन्माष्टमी को नहीं करता वह इस लोकमें दुःखको प्राप्त होकर मर कर नरक को जाता है । ५ ।

कृष्णा जन्माष्टमी ब्रह्मन्नकरोति नराधमः ।
इहदुःखमवाप्नोति स प्रेत्य नरकं व्रजेत् ॥५॥

जो मूर्खा स्त्री कृष्णा जन्माष्टमी व्रत को वर्ष २ नहीं करती वह भयङ्कर नरकमें जाती है । ६ ।

न करोति च या नारी कृष्णाजन्माष्टमी व्रतम् ।
वर्षे वर्षे तु सा मूढ़ा नरकं याति दारुणम् ॥६॥

जो मूढ़बुद्धि मनुष्य जन्माष्टमी को दिनमें भोजन करता है वह महा नरकको जाता है मैं सत्य २ कहता हूं । ७ ।

जन्माष्टमी दिने या वै नरोऽश्नाति विमूढधीः ।
महानरकमश्नाति सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ ७ ॥

पूर्व समय में दलीप राजाने श्रीमान् वाशिष्ठजीसे सर्वपाप व्रतको पूछा था। तब उन्होंने कहा कि एक समय में पृथिवीके कंसादिक राजाओंसे पीड़ित होकर महादेवजीके पास रोतीहुई गई जिसको देख महादेव देवतोंके साथ ब्रह्माके समीप गये और वहां जाकर कंसके मारने के कारणको कहते हुए तब ब्रह्मा समेत सब विष्णुजीके पास गये और सबने स्तुतिकी तब विष्णुजीने कारण पूछा तब ब्रह्माजीने कहा कि, महादेवजीके वरसे कंससे पृथ्वी पीड़ित होकर दुःखी होरही है और महादेवजीसे कंसने यह वर मांग लिया है भानजेके विना मेरी मृत्यु न हो इसलिये आप गोकुल जाकर कंसके मारनेके लिये देवकीके पेटमें जन्म लीजिये तब विष्णुने महादेवजीसे कहा कि पार्वतीको दीजिये, यह एक साल रहकर चली आवेगी तब महादेवजीने पार्वतीजीने मथुराको यात्राकी और भगवानूने देवकी, पार्वतीजीने यशोदाके पेटमें नव मास नवदिन रहकर भादोंकी कृष्ण पक्षकी अष्टमी तिथि रोहिणीनक्षत्रयुक्त वासदेवजीके आप पुत्र और नन्दजीकी श्री वैराटी यशोदाजी कन्याको उत्पन्न करती हुई उस समय वसुदेवको आनन्द हुआ तब देवकीने कहा कि आप यशोदाजीके समीप जाकर पुत्रको देकर कन्या ले आओ उन्होंने ऐसा ही किया फिर कंसको यह खबर, मिली कि देवकीजीके कुछ उत्पन्न हुआ है दूत आये और छलसे कन्याको कंसको देते हुए तब उसने राक्षसोंसे कहा कि इसको शिलापर पटक दो उन्होंने ऐसा ही किया तब वह गौरी रूप कन्याने महादेवके समान चलकर कहा कि कंसका मारने वाला नन्दके यहां छिपा हुआ है तब कंसने पूतनासे कहा कि तुम नन्दके यहां जाओ और कपटसे पुत्रको मारकर चली आओ वह गई दूध पर विष लगाकर पिला आप यमपुरको चली गई। श्रीकृष्णजी शकटासुर तृणावर्त्त आदिको मार कालीको दमन कर मथुराको चले गये वहां जाकर कंसादिको मारा। यह कृष्णके जन्मके दिनका व्रत कहा इसके सुननेसे पाप नाश होजाते हैं जो स्त्री पुरुष इस व्रतको करता है यथेष्ट अतुल फलको पाता है धर्म, काम और अर्थकी वांछा

वालोंको तृतीया छठ अष्टमी एकादशी और चतुर्दशी पूर्वविद्धा न करनी चाहिये । प्रथम महाराजा चित्रसेन नाम हुए जो महापाप परायण महान् अगम्या गमन कर ब्रह्मणके सोनेको चुराने वाला मदिरा सदैव तृप्त और वृथा मांसमें रत इस प्रकार पापमें युक्त होकर नित्य ही प्राणियोंके मारनेमें रत होकर चांडाल और पतितोंके साथ सदैव वार्तालाप करते थे । वह शिकारको गये और व्याधको देख फौजसे कहा कि मैं ही इसको मारूंगा राजा पीछे पड़ा वह भागा राजा भूंख प्याससे व्याकुल जमुनाके किनारे जाता हुआ उस दिन कृष्णकी जन्माष्टमी रोहिणीयुक्त थी ।

क्षुत्पिपासाकुल क्लेशः संध्यायां यमुनातटे ।
अष्टमीरोहिणीयुक्ता तद्दिनं जन्मवासरम् ॥

प्रातः युमनाजीमें कन्याये व्रत करती भई अनेक प्रकारकी भेट द्रव्य आदिसे पूजन करती हुई बहुत गुण वाले अन्नको देखकर राजाका मन भोजन करनेको हुआ और स्त्रियोंसे कहा अन्नके बिना मेरे प्राण निकले जाते हैं तब स्त्रियां बोलीं कि हे पापरहित राजा जन्माष्टमीमें आपको भोजन न करने चाहियें जो कृष्णजीके जन्ममें अन्नका भोजन करता है वह गीध, गधा, कौवा और गऊके मांसको निस्सन्देह भोजन करता है ॥ ७९ ॥

जन्माष्टम्यां हरेराजन्नभोक्तव्यं त्वया न च ॥७८॥
गृध्रमांसं खरं काकं गोमांसमन्नमेव च ॥७९॥

संसारमें उत्पन्न होनेवालोंके अनेक छिद्र होते हैं जिन्होंने जयन्तीका व्रत नहीं किया उनको यमराजके यहां दण्ड मिलता है और उसके दिये हुएको पितर ग्रहण नहीं करते जयन्तीमें भोजन करनेसे सब पितर गिरा दिये जाते हैं यह सुन राजाने व्रत किया कुछ फूल चन्दन कपड़ा लेकर प्रसन्न होकर इस व्रतमें युक्त होता भया और तिथि और नक्षत्रके अन्तमें पारायण करता तो चित्रसेन राजा इस

व्रतके प्रभावसे पितरों समेत सुन्दर विमानपर चढ़कर भगवान्के स्थान को जाता भया जो फल मथुराजीमें जाकर कृष्णजीके मुखरूपी कमल के दर्शन करनेसे मिलता है वह फल कृष्णजीकी जन्माष्टमीके व्रतसे पुरुषको प्राप्त होता है और द्वारका जाकर संसारके ईश्वर भगवान्के दर्शन करनेसे जो फल मिलता है वह फल दीनोंको कृष्ण जन्माष्टमी व्रत करनेसे मिलता है ।

यत्फलं द्वारकां गत्वा दृष्टे विश्वेश्वरे हरौ ।
तत्फलं प्राप्यते दीनैः कृत्वा जन्माष्टमी व्रतम् ॥८५॥

शिवरात्रि व्रत ।

(शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय ७२)

विष्णुजी महाराजने शिवजीसे पूछा कि आप कौनसे व्रतसे संतुष्ट होते हैं तब शिवजीने कहा कि सबसे श्रेष्ठ शिवरात्रि व्रत है जिस का फल दशसहस्र वर्षमें भी पूर्ण नहीं कह सक्ते ।

फलं वक्तुं न शक्येत वर्षाणामयुतैरपि॥१०८॥

इसे जो अनादरसे भी करता है उनको निस्सन्देह मुक्ति प्राप्त होती है ॥ ९ ॥

अनादरतया चेद्वै कृतं व्रतमनुत्तमं ।
तस्यैव मुक्तिवीजं च जातं नात्र विचारणा ॥१०९॥

इतिहास ।

अध्याय ७५ में लिखा है कि उज्जैन नगरीमें वेदका जाननेवाला एक ब्राह्मण जिसकी पतिव्रता स्त्री थी । जिसके दो पुत्र थे । एक धर्मात्मा और दूसरा दुष्टव्यसनमें लगा हुआ था । पिताको एक अंगूठी राजाके यहांसे मिली जिसको उसने स्त्रीको देदी उसने घरमें रखदी

दुष्टात्मा पुत्र उसको चुराकर लेगया जो वेश्याको जाकर देआया जिस को धारणकर वह राजसभामें नाचनेको गई राजाने अपनी अंगूठी देखकर सब वृत्तान्त जान पण्डितजीसे कहा उन्होंने घर जाकर कहा लाचार होकर वेदनिधिको घरसे निकाल दिया, उसने इधर उधर बहुत दिन व्यतीत किये एकदिन उसको शामतक भोजन नहीं मिला उसदिन लोकपालनी शिवरात्रि थी कोई अनेक प्रकारकी सामग्री लिये शीघ्रताके साथ शिवमन्दिरमें जारहा था वेदनिधि उसको देख भोजनों की इच्छासे उसके पीछे २ गया तहां मन्दिरमें और लोग भी पूजा कर रहे थे वह भोजनोंकी इच्छासे रात्रिमें जागरण करता रहा। इधर उन सबने पूजाकर नृत्य आदिसे निवृत्त हो सोरहे। वेदनिधि उनको सोता देख भोजनोंकी इच्छासे धीरे २ शिवजीके निकट आया जहां दीपकों का प्रकाश मन्द २ होरहा था जिससे वह अन्नादि अच्छेप्रकार दृष्टि नहीं आता था इसलिये उसने अपनी पगड़ी फाड़कर बत्ती बना अन्न के लिये बत्तीको प्रज्वलित किया इससे अन्धकार दूर होगया तब अन्नको ग्रहणकर वह हौले २ वहांसे चला तो सोते हुए पुरुषोंके पैरों पर पैर पड़गया जिससे वह जाग गये और कहने लगे यह कौन चोर है तब मारें डरके यह भागा राजाके सेवक चौकीदार उसके पीछे दौड़े वह दौड़ा तब उन्होंने बाण छोड़े जिससे वह गिर पड़ा और मृतक होगया परन्तु अज्ञानसे उसको व्रत और रात्रिमें जागरण भी होगया ॥ ३१ ॥

पतितश्च मृतः सोवै श्रूयतामृषिसत्तमः ।
अज्ञानतो व्रतं जातं रात्रौ जागरणं तथा ॥३७॥

शिवशङ्करकी कृपासे यमराजके दूत आगये और शिवके गण भी आये दोनोंमें झगड़ा हुआ शिव गणोंने कहा कि तुम किस प्रकारसे आये इसको दण्ड क्योंकर होसकता है। उन गणोंने कहा शिव भगवान्के भक्त तुम यहां कैसे आये यमके गण बोले जन्म प्रभृति इसने पाप ही किया है पूजन तो बहुत थोड़ा है ॥ ४१ ॥

जन्मप्रभृति पापं च पुण्यं तु ह्यणुमात्रकम् ॥४१॥

शिवगण बोले इसमें पाप तो बहुत था परन्तु वह क्षणमात्रमें भस्म होगया शिवके व्रत और रात्रिके जागरण करनेसे ॥ ४२ ॥

पापं बहुतरं ह्याऽऽसीद्भस्मसाद् भवत्क्षणात् ।
शिवस्यचव्रतेनैव रात्रौ जागरणेन च ॥४२॥

क्या अब भी पातक रह सकता है सब नष्ट होगया ऐसा विवाद करते हुए वे धर्मराजके पास गये ॥ ४३ ॥

इत्येवं विवदंतश्च धर्मराजं गतास्तदा ॥ ४३ ॥

यमराजने उन दोनोंके वचन सुन कर कहा कि अवश्यही उसके पाप भस्म होगये ऐसा कह यमराज ने उन शिवगणोंको नमस्कार कर ब्राह्मण को कलिंग देशका राजा किया । ४४ ॥

यमे नोक्तं च सत्यैव पापं च भस्मतां गतम् ।
नमस्कारं च तान्कृत्वा कलिंगाधिपतिं तदा ॥४४ ॥

और प्रणामकर उस ब्राह्मण से कहा तू भगवान् है । वह कलिंग देशका राजा होकर शिवपूजन में परायण हुवा । ४५ ॥

ब्राह्मणं च चकारासौ प्रणम्य भाग्यवानसि ।
कलिंगाधिपतिर्भूत्वा शिवपूजापरायणः ॥ ४५ ॥

फिर उसने अपने राज्यमें शिवपूजा और शिवरात्री व्रत और शिवस्थानोंमें दीपक जलाने की आज्ञा देदी इस प्रकार करनेसे वह मुक्त हो गया इस व्रतका माहात्म्य तो देखो अनायास ही करनेसे क्या फल मिला । ४७ ॥

कारयित्वा तदा मुक्तिं लेभे च ऋषिसत्तमाः ।
पश्यन्तु व्रतमाहात्म्यमनायासेन वा कृतम् ॥ ४७ ॥

जो परमभक्तिसे इस व्रतको करते हैं वह निस्संदेह परमभक्ति को प्राप्त होते हैं। ४८ ॥

ये पुनः परमाभक्त्या कुर्वन्ति व्रतमुत्तमम्।
ते लभन्ते परां मुक्तिं किं तत्र विस्मनः पुनः ॥ ४८ ॥

उसने कुछ दीपक श्रेष्ठबुद्धिसे नहीं किन्तु चोरी करने को जलाया था तो ऐसा हुआ जो जान कर दीपक बालते हैं वे सुन्दर परम पदको पाते हैं। ४९ ॥

चौर्यार्थे न सुबुद्ध्या च दीपं तु कृतवान्नहि।
ज्ञात्वा दीपं च ये कुर्युर्लभन्ते तच्छुभं पदम् ॥ ४९ ॥

इस कारण इस व्रतके समान दूसरा व्रत नहीं शिवके समान दयालु पवित्र करने वाला कोई नहीं। ५० ॥

चतुर्थी व्रत।

भविष्य पुराण अ० २१ में लिखा है कि जो चतुर्थी के दिन व्रत कर गणेशका पूजन करता है और ब्राह्मणको तिलोंका दान कर आप भी तिलोंका भोजन करे जो दोवर्ष तक धारण करे उससे गणेशजी प्रसन्न होजाते हैं फिर किसी प्रकार का क्लेश नहीं होता वरन् मनो वांछित फल मिलता है असाध्य कार्य्य सिद्ध होते हैं सात जन्म वह राजा होता है। स्वामिकार्तिक स्त्री पुरुषोंका लक्षण बना रहे थे उसने गणेशजीने विघ्न किया उन्होंने क्रोधमें आकर गणेशजीका एक दांत उखाड़ कर फेंक दिया और मारनेको उद्यत हुए तब महादेवजीने उनके कोपको शांतकर पूछा कि तुमको क्योंकर कोप आया तब उन्होंने कहा कि मैं स्त्री पुरुषोंके लक्षण लिख रहा था उस में इन्होंने विघ्न किया तब महादेवजीने कहा कि क्या तुम जानते हो कहो हममें क्या लक्षण तब कार्तिकेयने कहा कि आपमें ऐसा

लक्षण है जिससे आप थोड़े ही दिनोंमें कपाल धारण करेंगे और सं-
सारमें आप कपाली प्रसिद्ध होंगे महादेवजी यह सुन क्रोधमें हो उस
की पुस्तक को समुद्रमें फेंक अन्तर्ध्यान होगये फिर कुछ कालके पीछे
महादेव और ब्रह्माका विवाद हुआ तब महादेवजीने कहा कि हम
बड़े हैं हमारी उत्पत्ति कोई नहीं जानता और तुम्हारा जन्म हम
जानते हैं तब ब्रह्माका पांचवां मुख हँसकर बोला कि तुम्हारी उ-
त्पत्ति हम जानते हैं शिवको क्रोध आया अपने नखसे उनका शिर
काट अपने हाथमें ले जहां विष्णु भगवान् तप करते थे वहां चले
गये; इधर ब्रह्माने क्रोध किया तो उनके उस कटे हुये शिरसे एक
अति क्रूर पुरुष निकला जो श्वेत कुण्डल धार कवच पहिने धनुषबाण
हाथमें लिये ब्रह्माजीसे बोला कि क्या आज्ञा, उन्होंने कहा कि जिस
ने मेरा शिर काटा है उसको मारदे उसको देख शिवजीने विष्णुसे
कहा कि त्रिशूलसे हमारी भुजाको भेदन करो उन्होंने ऐसा ही किया
फिर तो उसमें से रुधिरकी एक धारा निकली और उछलकर कपाल
में गिरी जब वह भरगया उसको शिवजीने तर्जनी अंगुलीसे मथा
तब उसमेंसे रक्तवर्ण कवच पहिने अति भयङ्कर पुरुष निकला और
शिवजीसे कहा कि क्या आज्ञा तब उन्होंने कहा कि ब्रह्माके भेजे
हुये मनुष्यको मार दो निदान दोनोंका युद्ध होने लगा और बहुत
कालतक हुआ परन्तु हारजीत किसीकी नहीं हुई तब आकाशवाणी
हुई कि युद्ध मत करो विष्णु महाराजने दोनोंको समझाकर युद्ध समाप्त
करादिया और कहा कि भूमिका भार उतारनेके लिये तुम दोनों सं-
हित अवतार होगा भगवान्ने श्वेतकुण्डली सूर्यनारायणको और
रक्तकुण्डली चन्द्रको सौंपदिया और विष्णुके कहनेसे कपाल महादेव
जीने धारण किया और कहा कि जो कोई उस कपाल व्रतको धारण
करेगा उसको कोई पदार्थ दुर्लभ न होगा फिर शिवजीकी आज्ञानु-
सार कार्त्तिकेयने वह गणेशका दांत देदिया जिसको धारण करते हैं
और जो स्त्री पुरुषके लक्षण बनाये थे वह समुद्रने देदिये इसीकारण
महादेवके कहनेसे उनका नाम सामुद्रिक हुआ ।

पंडितजी—सेठजी अब हम व्रत माहात्म्य अधिक नहीं सुनना चाहते।

सेठजी—मैं तो अभी आपको अनेकान व्रतोंके महात्म्य सुनाना चाहता हूं अभी आपने इस विषयमें बहुत ही कम सुना है तो भी मैं आपकी आज्ञानुसार किसी व्रतके माहात्म्यको वर्णन करूंगा, देखिये श्रीमान् पण्डितजी यजुर्वेद अध्याय १९ म० ३० में कहा है।

(व्रतेन दी०) जब मनुष्य धर्मको जाननेकी इच्छा करता है तब सत्यको जानता है उसी सत्यमें मनुष्योंको श्रद्धा करनी चाहिये असत्यमें कभी नहीं। (व्रतेन०) जो मनुष्य सत्यके आचरणरूपी व्रतको दृढ़तासे करता है तब वह दीक्षा अर्थात् उत्तम अधिकारके फलको प्राप्त होता है (दीक्षयाप्नोति०) जब मनुष्य उत्तम गुणोंसे युक्त होता है तब सब लोग सबप्रकारसे उनका सत्कार करते हैं क्योंकि धर्म आदि शुभ गुणोंसे ही दक्षिणाको मनुष्य प्राप्त होता है अन्यथा नहीं (दक्षिणा श्र:) जब ब्रह्मचर्य्य आदि व्रतोंसे अपना और दूसरे मनुष्यों का अत्यन्त सत्कार होता है तब उसीमें दृढ़ विश्वास होता है क्योंकि सत्य धर्मका आचरण ही मनुष्योंका सत्कार करानेवाला है (श्रद्धया०) फिर सत्यके आचरणमें जितनी २ श्रद्धा बढ़ती जाती है उतना २ ही मनुष्यलोग व्यवहार और परमार्थके सुखको प्राप्त होते जाते हैं अधर्माचरणसे कभी नहीं।

इसीके अनुकूल पुराण भी कररहे हैं।

श्रीमद्भागवत स्कन्द ११ अध्याय १७ में लिखा है कि जबतक ब्रह्मचारी गुरुकुलमें रहे तबतक विषय भोगसे बच अखण्डव्रतको धारण करे ॥ ३० ॥

पण्डितजी स्वयं विचार कीजिये यहां महादेवका त्रिकालदर्शी होना नष्ट होता है अधिक क्या कहें ब्रह्माने अपने कटे शिरसे विष्णुजीने अपनी भुजामें महादेवसे त्रिशूल लगवाकर एक मनुष्य उत्पन्न किया फिर दोनोंमें लड़ाई हुई कहिये श्रीमान् मनुष्य उत्पन्न करनेके क्या २ ढङ्ग हैं इसके उपरान्त सामुद्रिक माहात्म्य फैलानेके लिये यह कथा बनाई गई।

एवंवृत्तो गुरुकुले वसेद् भोगविवर्जितः ।
विद्यासमाप्यते यावद् बिभ्रद् व्रतमखण्डितम् ॥३०॥

मार्कण्डेयपुराण अध्याय ४१में लिखा है कि ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्य्येमें स्थित रहकर चोरी, लोभ और हिंसा आदिका त्याग करे यह ब्रह्मचारीका व्रत है।

अस्तेयं ब्रह्मचर्यञ्च त्यागोऽलोभस्तथैव च ।
व्रतानियञ्च भिक्षूणामहिंसा परमाणिवै ॥१६॥

ऐसा ही लिङ्गपुराण अध्याय ८९ श्लोक २४में कहा है।

अस्तेयं ब्रह्मचर्यञ्च अलोभस्त्याग एव च ।
व्रतानिपञ्चभिक्षूणां अहिंसापरमा त्विह ॥२४॥

महाभारत उद्योगपर्व अध्याय ४४ में लिखा है कि जो मनुष्य ब्रह्मचर्य्यव्रतको पूर्णरूपसे पालन करता है वह इस लोकमें शास्त्रकार होता है अन्तको मोक्ष पाता है।

महाभारत उद्योगपर्व अध्याय ४४ में सनत्सुजात मुनिका वचन है कि अपने वर्ण और आश्रमके अनुसार कर्म करना, सत्य बोलना, इन्द्रियोंको वशमें रखना, किसीकी उन्नति देखकर न जलना, निन्दा न करना, यज्ञ, दान, अर्थ समेत वेदोंका पढ़ना, क्रोध न करना, तप करना, आपत्तिके समयमें भी सत्यको न त्यागना यही व्रत हैं जो इन व्रतोंको धारण करता है वह सम्पूर्ण पृथ्वीको अपने आधीन कर सकता है॥ भाषा अ० ४३ में है॥

धर्मश्च सत्यञ्च तपोदमश्च अमात्सर्यं ह्रीस्तितिक्षानसूया ।
दानंश्रुतश्चैवधृतिः क्षमा च महाव्रता द्वादश ब्राह्मणस्य ॥५॥

वाल्मीक रामायण आरण्यकाण्ड सर्ग ४७ में लिखा है कि जब रावण संन्यासीका रूप धारणकर सीताके निकट गया और पःनसे वृत्तान्त पूछा तब सीताजीने कहा कि हमारे स्वामी पिताकी आज्ञामें दृढ़व्रत १४ वर्ष तक वनमें रहनेके लिये उद्यत होगये क्योंकि उन्होंने दो बातोंकी प्रतिज्ञा की थी एक यह कि दान दें पर ले न किसीसे। द्वितीय सदा सत्य बोले झूंठ कभी नहीं। हे ब्राह्मण श्रीरा-मजीने यह उत्तमव्रत धारण किये हैं।

पद्मपुराण सृष्टि खण्ड अध्याय १८ में कहा है जो मनुष्य एकान्तमें बैठनेका स्वभाव रखते हैं वह दृढ़ व्रत होते हैं व सब इ-न्द्रियोंकी प्रीतिको उनके विषयोंसे निवृत्त करते हैं तथा योगमें मन लगाते हैं किसी जीवकी हिंसा नहीं करते उनकी मुक्ति होती है सब व्रतोंमें परायण दमही है इससे इन्द्रियोंका दमन अवश्य करना चा-हिये क्योंकि षडंग सहित चारों वेद पढ़नेसे बिना दमके पवित्र नहीं होता ऐसे पुरुषके उत्तम कुल जन्म तीर्थमें स्नान सबही निर-र्थक हैं।

वाराह पुराण के अध्याय ३७ में वाराह जीने धरणीसे कहा है कि अहिंसा, सत्य, स्तेय, और ब्रह्मचर्य्यसे रहकर बिना आज्ञा के किसी दूसरेका पदार्थ नहीं लेते उन्हींका व्रत सफल होता है यह व्रत रहने वालोंके साधारण धर्म हैं।

अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्य्यं अकल्पितम्।
एतानि मानसान्याहुर्व्रतानि तुधराधरे॥
वेदस्याध्ययनं विष्णोः कीर्त्तनं सत्यं भाषणम्।
अपैशुन्यं हितं धर्म्मवाचिकं व्रत मुत्तमम्॥ ५॥

पण्डितजी यदि कोई पुरुष एक दिन जैसा कि पुराणोंकी आज्ञा है नियम करे और शेष १४ दिन धर्मानुकूल न चले तो एक दिनके

कनसे १४ गुणापाप न होगा फिर भला क्योंकर सर्वप्रकारके आनन्द मिल सक्ते हैं।

महाभारत शांतिपर्व अध्याय २२१ में युधिष्ठिर महाराज ने भीष्मपितामहसे प्रश्न किया है कि साधारण लोग जो देह पीड़ाकर उपवासको तपस्या कहा करते हैं क्या यह तपस्या है? उस पर भीष्मजीने उत्तर दिया है कि साधारण लोग जो ऐसा समझते हैं कि एक महीना वा एक पक्ष उपवास करनेसे तपस्या होती है सो यह आत्मा विद्याकी विघ्न स्वरूप तपस्या है। इसलिये यह तपस्या अच्छे पुरुषोंकी सम्मतिके विपरीत है।

मासपक्षोपवासेन मन्यन्ते यत्तपो जनाः।
आत्मतन्त्रो पघातस्तु न तपस्त त्सतांमतम्॥ ४॥

गरुड़पुराण—अध्याय १६ में लिखा है कि एकवार भोजन करने आदि उपवास करके शरीर सुखाने वाले नियमोंको कर मेरी मायासे मोहित मूढ़ परोक्ष जो मोक्ष है उसकी इच्छा करते हैं सो देहीके दंड देने मात्रसे अविवेकियोंकी कभी मुक्ति नहीं होती जैसी बांबीको ताड़ना करनेसे कहीं बड़ा सांप मरता है। पारावत कंकर आहार करता है पपिया भूमिमें गिरे जलको कभी नहीं पीता तो क्या वे व्रती होजाते हैं। कदापि नहीं।

एक भुक्तोपवासाद्यै र्नियमैः कायशोषणैः।
मूढाः परोक्षमिच्छन्ति ममसाया विमोहिताः॥६१॥
देहदण्ड नमात्रेण कामुक्ति रविवेकिनाम्।
वल्मीक ताड़नादेवमृतः कुत्रमहोरगः॥६२॥
पारावताः शिलहरा कदाचिदपि चातकाः।
न पिवन्ति महीतोयं व्रतिनस्ते भवन्तिकिम्॥६९॥

तिसपर भी पुराणोंमें लिखा है कि एकादशीके दिन जो अन्न भोजन करते वह अपवित्र वस्तुको खाते हैं देखो पद्मपुराण ब्रह्मखंड अध्याय १५ में लिखा है।

ये त्वन्नमश्नंति पापिष्ठा श्चैकादश्यांहि विड्भुजः॥१२॥

रोगी, लँगडे खांसीयुक्त पेटसे कोढ़ी उत्पन्न होते हैं अर्थात् संसारमें जितने पाप हैं वह सब भोजनोंमें बसते हैं और एकादशीके दिन जितने अन्नके दाने मनुष्य खाते हैं उनको एक २ दाने में करोड़ ब्रह्म हत्याका पाप होता है।

नरा यावन्तिचान्नानि भुंजते चहरे दिने ॥१८॥
प्रत्यन्नंच ब्रह्महत्याकोटिजं वृजिनंभवेत् ॥१९॥

परन्तु श्रीमान् अद् भक्षण धातुसे अन्न शब्द बनता है अर्थात् जो भक्षण किया जाय वह अन्न चाहे फल हो चाहे दूध चावल ऐसा ही सनातनधर्मसभाके मान्य स्वामि श्रीधरजीने श्रीमद्भागवतकी व्याख्या करते हुए दशम स्कंद पूर्वार्द्ध अध्याय २३ के १९ श्लोककी व्याख्यामें लिखा है।

चतुर्विधं वहुगुणं मन्नमादाय भाजनैः ॥ १९ ॥

अर्थात् भक्ष्य जो खाया जाय जैसे चना चबेना रोटी पूरी भोज्य दाल भात लेह्यं जो चाटा जाय कढी खीर चोस्य जो चूसा जाय जैसा गन्ना और आम आदि फिर श्रीमान् पुराण कहते हैं एकादशी को अन्न मत खाओ फिर भला जो जन एकादशीको दूध, पेड़ा, रबड़ी आम, अंगूर इत्यादि खाते हैं। वह भी अन्न खाने वाले हुए इसके उपरांतपद्मपुराणषष्ठ उत्तरखंड अध्याय ४२ में माघ कृष्णपक्षकी षटतिला एकादशीके दिन ब्राह्मणोंको तिल देना तिलोंसे स्नान करना उबटन कराना तिलों समेत जल देना तिलोंका भोजन करना और हवन करना यह छः तिल पापके नाशने वाले हैं जैसा कि।

स्नानेमाशन केशस्तास्तथा कृष्णातिलामुने ।
तान्प्रदद्यात्प्रयत्नेन यथाशक्ति द्विजोत्तमे ॥
तिलप्ररोहजाः क्षेत्रयावत्सं संख्यास्तिला द्विज ॥२०॥
तावद्वर्ष सहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ।
तिलस्नायी तिलोद्वर्ती तिलहोमी तिलोदकी ॥२१॥
तिलदाता च भोक्ता च षट्तिलाः पापनाशनः ॥२२॥

वाराहपुराण अध्याय ३० में लिखा है कि एकादशीके दिन अग्निका पका हुआ अन्न जो नहीं खाता वह नित्य पवित्र है उसको कुवेर देवता प्रसन्न होकर सब कुछ देते हैं जैसा कि—

तस्यब्रह्मा ददौतुष्टस्तिथिमेकादशींप्रभुः ।
तस्यामनग्नि पक्वाशी योभवेन्नियतं शुचिः ।
तस्यापिधनदो देवस्तुष्टः सर्वं प्रयच्छति ॥६॥

इससे तो यह भी प्रकट होता है कि जो अन्न अग्निसे पका हुआ न हो उसको एकादशीके दिन खाले यदि अग्निसे सूर्य्यका अर्थ लें तो फिर फलादि वस्तु न खानी चाहिये और यदि भौतक अग्निसे प्रयोजन है तो फिर चावल आदि पानीसे भिगोकर एकादशीको चबाकर निर्वाह कर सकते हैं फिर भूखे रहनेकी कोई आवश्यकता नहीं। इसके अतिरिक्त जब एकादशीके दिन ब्राह्मणोंको तिल भोजन कराने की आज्ञा पुराण देते हैं तो फिर अन्नका निषेध कहां रहा क्या यह लेख आपकी समझमें व्यासजीसे योग्य महात्माके हो सकते हैं कदापि नहीं।

इसके उपरान्त भूखे मनुष्यकी बुद्धि ठीक नहीं रहती। फिर वह अपने कार्योंको ठीक नहीं कर सकता इसलिये वैद्यकशास्त्रमें भूखे रहने और अधिक भोजन करनेका निषेध किया पुराणोंमें भी लिखा है कि शक्ति, खड्ग, गदा, चक्र, तोमर, बाणादिकोंसे पीड़ित पुरुषोंकी

पीड़ासे भूखकी पीड़ा अधिक होती है श्वास; कोढ़, क्षयी, ज्वर, मृगी, शूल आदि रोगोंसे पीड़ित पुरुषकी पीड़ासे भूखकी पीड़ा अधिक होती है सुवर्ण कुण्डलादिसे भूषित पुरुष भी जब क्षुधित होते हैं तब शोभित नहीं होते जिसप्रकार पृथ्वीपर सब पानी सूर्य्यनारायण शोष लेते हैं उसीभांति क्षुधासे पीड़ित मनुष्यके शरीरकी सब नसें सूख जाती हैं और जब मूढ़ पुरुष क्षुधासे क्षुधित होते हैं तो तब उनको कुछ नहीं सूझता वह मर्यादासे बाहर होजाते हैं वह लोग माता; पिता, पुत्र, स्त्री, कन्या, भ्राता स्वजन बान्धवको छोड़ देते हैं और वह देवताओं और पितरों गुरु ऋषियों धेनुओंकी पूजा नहीं करसकते हैं और विपरीत इसके जो क्षुधित नहीं होता वह इन सब कामोंको अच्छेप्रकार कर सकता है इसलिये कहा है कि जगत्में अन्नसे श्रेष्ठ कोई पदार्थ नहीं यथार्थमें अन्न ही जगत्का मूल है इस हेतु अन्न दानका बड़ा महात्म्य कहा है सत्य पूछो तो तप, सत्य, जप, होम; ध्यान, भोग, परमगति व स्वर्ग यह सब अन्न ही में निवास करते हैं इस हेतु जो कोई श्रद्धासे भूखोंको अन्न देता है वह जानो सब तीर्थोंमें स्नान और व्रतोंको करता है देखो पद्मपुराण सृष्टि खण्ड अध्याय १९।

इसलिये हमारी समझमें तो प्रत्येक मनुष्यको सदा पथ्यापथ्यका विचारकर मिताहारी हो पञ्चकर्म इन्द्रिय और ग्यारहवें मन अर्थात् इन एकादशको जिनकी एकादश संख्या है सदा नियममें चलानेका नाम एकादशी व्रत है न कि अन्न न खानेका, प्रिय पाठकगण यह उपरोक्त व्रत सनातन व्रत है इसके पालन करनेसे बेड़ापार होजाता है जिसकी सम्पूर्ण ऋषि, मुनि और महात्मा आज्ञा देरहे हैं देखिये।

महाभारत शान्तिपर्व—अध्याय २६८ में लिखा है कि जो मनुष्य बाहु, वाक्य, उदर और उपस्थ इनचारों द्वारोंकी रक्षा करते हैं। वह सर्वप्रकारके सुख भोगते हैं इसलिये जुआ न खेले मांगनेका स्वभाव न बनाये क्रुद्ध होकर किसीपर प्रहार न करे वृथा वचन न कहे जो जन सत्यव्रती और मितभाषी रहते हैं उनका वचनरूपी

द्वार अच्छेप्रकार रक्षित रहता है। अनशन (उपवास) अवलम्बन न करे और अधिक भोजन भी न करे, लोलुपताको छोड़ साधुओंका सत्संग करे। इस लोकमें देहयात्राके लिये थोड़ासा अहार करे जो ऐसा करते हैं उनकी जठर अग्निकी उत्तम प्रकार रक्षा होती है। भार्याव्रतको धारण करे ऐसा करनेसे उपस्थकी रक्षा होती है।

वनपर्व अध्याय २५९ में कहा है कि सत्य, कोमलता, क्रोध न करना दान, दम, शम, किसीके सुखको देखकर दुखी न होना, हिन्सा न करना पवित्रता और इन्द्रियोंको अपने वशमें रखना यही धर्मके दश लक्षण हैं इन्हींसे महात्मा लोग पवित्र होते हैं अधर्मी, पापी और मूर्ख लोग इन दशका आदर नहीं करते इसीसे वे लोग नीच योनियोंमें जन्म लेते हैं और सुखको प्राप्त नहीं होते जो जितेन्द्रिय और शांति हैं उनको क्लेश कभी नहीं होता जिसने अपने मनको वशमें कर लिया है वह कभी दूसरेकी लक्ष्मीको देख कर दुःखी नहीं होता हिन्सा न करने वालेको कभी रोग नहीं होता जो माननीय पुरुषोंका मान करता है वह उत्तम कुलमें जन्म धारण करता है।

इसलिये पंडितजी व्रतोंके मुख्य अभिप्रायको जान यथावत् व्रतोंका प्रचार कीजिये जिससे भारतका कल्याण हो। ओ३म् शम्। श्रीमान् पण्डितजी और अन्य सभ्य गणोंने चलनेकी तय्यारीकी।

सेठजीने दोनों हाथ जोड़ सब सज्जनोंसे नमस्ते की—श्रीमान् पण्डितजी और अन्य महाशयोंने यथायोग्य कहा और चलदिये सेठ अपने मित्रोंसे वार्तालाप करनेमें लगगये।

इति एकादश परिच्छेदः

द्वादश परिच्छेदः।

आर्य्य सेठ—श्रीमान् पण्डितजीको अन्य सभ्य गणोंके सहित आते देख दोनों हाथ जोड़ नमस्ते कह कहा कि आइये पधारिये

श्रीमान् पण्डितजी और अन्य जन यथा योग्य कह विराजमान हुए।

इतनेमें लाला छंगेलाल व ठाकुर नेकरामसिंह व लाला नन्नीलाल बाबू तोताराम, लाला मूलचंदलाल नरायणलाल लाला पीतमराम साहिबान जो बाहरसे आये हुए थे पधारे सब सज्जनोंको यथा-योग कह उचित स्थानों पर सुशोभित हुए।

श्रीमान् पंडितजी ने आशीर्वाद दिया।

सेठजी ने और अन्य महाशयोंने यथा योग्य कह कुशल क्षेम पूछनेके पश्चात सेठजीने कहा कि आजमें तीर्थ विषय सुनताहूं।

पंडितजी—बहुत अच्छा

सेठजी—श्रीमान् पण्डितजी महाराज तीर्थोंकी संख्या **शिवपुराण** सनत्कुमार संहिता अध्याय १४ में छः करोड़ छः हजार लिखी है जैसाकि—

षष्टिकोटि सहस्राणि षष्टिकोटि शतानिचा।
षष्टितीर्थ सहस्राणि परि संख्या प्रकीर्तिता॥ २.॥

जिनमें से अनेकान तीर्थोंके बड़ेर महात्म पुराणोंमें लिखे हैं जिनको सुन और परम कल्याणका कारण जान सहस्रों स्त्री पुरुष उनके दर्शन स्नानादिमें लगे रहते हैं और तन मन धनके उपरांत अपने प्राणोंको भी देदेते हैं परन्तु शोक इतना ही है कि पुराणोंके वचनों पर विचार नहीं करते और न वेदकी आज्ञाको श्रवण करते हैं पण्डितजी तीर्थ शब्द "तृप्लवन सन्तरणयो" इस धातुसे औणादिक थक् प्रत्यय करने पर सिद्ध होता है तरन्तियेन यस्मिन् वा तत्तीर्थम् अर्थात जिससे जन तरते हैं उसको तीर्थ कहते हैं, देखिये यजुर्वेद अध्याय १६ मंत्र ६१ में लिखा है।

ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः तेषां सहस्रयोजने ऽव धन्वानि तन्मसि ॥

अर्थात् तीर्थ दो प्रकारके हैं पहिले तो वह है जो ब्रह्मचर्य्य गुरुकी सेवा, वेदादि शास्त्रोंका पढ़ना, पढ़ाना सतसंग' ईश्वरकी उपासना, सत्य सम्भाषण आदि दुःख सागरसे मनुष्योंको पार करते हैं और दूसरे वह जिनसे समुद्रादि जलाशयोंके पार आने जानेमें समर्थ होते हैं ॥

इस मंत्रकी व्याख्यासे अच्छेप्रकार विदित हो रहा है जिस प्रकार मल्लाह नावके द्वारा समुद्रादि जलाशयोंसे पार कर देता है ठीक उसीभांति अविद्यारूपी भवसागरसे योगी जन योगरूपी नौका पर सवार कराकर पार कर देते हैं ऐसे महान् पुरुषोंको महात्मा, साधु, संत, वैरागी सन्यासी आप्त इत्यादि नामोंसे सूचित करते हैं और उन्हीं सज्जन पुरुषोंके चरणोंको तीर्थ स्वरूप कहा है देखिये।

श्रीमद्भागवत स्कन्द ३ अध्याय १ श्लोकमें विदुरजीके चरणोंको तीर्थ रूप कहा है।

गजाऽह्वयात् तीर्थ पदः पद्मानि । १७ ॥

स्कंद ४ अध्याय १२ में ध्रुवजीके चरणों में तीर्थ बतलाया है।

तीर्थपाद पदाश्रयः ॥ ५० ॥

पद्मपुराण चतुर्थ ब्रह्मखंड अध्याय १४ में लिखा है कि जितने तीर्थ ब्रह्माण्डमें हैं और जितने तीर्थ समुद्रमें स्थित हैं वे सब ब्राह्मणोंके चरणोंमें स्थित हैं ॥

ब्रह्माण्डेयानितीर्थानि तानितीर्थानि सागरे ।
उदधौयानितीर्थानि तिष्ठन्ति द्विजपादयोः ॥ १२ ॥

ब्रह्मवैवर्त्त पुराणके कृष्णजन्म खण्ड अध्याय ३१ में लिखा है कि ब्राह्मणोंके पैरके धोये हुए जलमें सर्व तीर्थ निवास करते हैं।

इसकारण उनके पैरोंके स्पर्श से सम्पूर्ण तीर्थोंके स्नानका फल प्राप्त होता है।

पादोदके च विप्राणां तीर्थतोयानि सन्ति च।
तत्स्पर्शात सर्वतीर्थेषु स्नान जन्मफलंलभेत् ॥६४॥

श्रीमान् इस कथन का तात्पर्य्य यह है कि ज्ञानियों, महात्माओं पण्डितों साधुओं, के सतसंग से ज्ञानकी प्राप्त होती है इसलिये प्राचीन कालमें जहां कहीं ऐसे महात्मा और ऋषि निवास करते थे वही स्थान तीर्थके नाम से प्रसिद्ध हो जाते थे चाहे वह गंगा," यमुना, नर्वदा, कावेरी, व्यास आदि नदियोंके समीप हो अथवा वन जंगल और पहाड़ोंकी चोटियों पर क्यों न हो। जैसा कि,

महाभारत वनपर्व अध्याय १९९ कहा है कि जानने वाले व्रत करने वाले, ज्ञानी, तपस्वी, ब्राह्मण जहां रहते हैं उसीका नाम नगर है। हे राजन! गांवमें अथवा जंगलमें जहां ब्राह्मण रहते हैं उसीको नगर कहते हैं वहीं तीर्थ भी माना जाता है॥

वेदढ्या वृत्तसम्पन्नाज्ञानवन्तस्त पस्विनः।
यत्र तिष्ठन्ति वै विप्रास्तन्नाम नगरं नृप॥
व्रजे वाप्यथ वारण्ये यत्र सन्ति बहुश्रुताः।
तत्तन्नगरमित्याहुः पार्थ तीर्थश्चतद्भवेत्॥

शिवपुराण—धर्मसंहिता अध्याय १० श्लोक ६४ में कहा है कि जिस स्थानपर एक दिन व आधे दिन जहां शिव योगी रहते हैं वही सकल स्थान पवित्र तीर्थ है।

दिवसं दिवसार्धं वायत्रतिष्ठन्ति योगिनः।
तन्मांगल्यं पवित्रचत्तत्तीर्थं तत्तपोवनम् ॥ ६४ ॥

और ऐसे महान् पुरुषोंके सत्सङ्ग करनेकी आज्ञा वेदादि सत्य ग्रन्थोंमें है और पुराणोंमें भी लिखा है देखिये।

शिवपुराण धर्मसंहिता—अध्याय २७ में कहा है कि साधु, महात्मा निश्चय तीर्थरूप हैं तीर्थोंका फल कालान्तरमें होता है और साधु, महात्माओंकी सङ्गतिका फल तुरन्त मिलता है और अनन्त फल देता है इससे साधुओंकी सङ्गति करनी आवश्यक है।

साधूनां दर्शनंपुण्यं तीर्थ भूताहि साधवः।
कालेन फलते तीर्थं सद्यः साधू समागमः ॥

क्योंकि साधुओंके सङ्गसे शास्त्रोंका सुनना होता है जिससे भगवान्की भक्ति उससे ज्ञान और ज्ञानसे गति होती है। जैसा पद्मपुराण चतुर्थ ब्रह्मखण्ड अध्याय १ श्लोक ६ में लिखा है।

साधु संगाद्भवेद्विप्र शास्त्राणां श्रवणं प्रभो।
हरिभक्तिर्भवेत्तस्मात्ततोज्ञानं ततोगतिः ॥ ६ ॥

पञ्चम पातालखण्ड—अध्याय १९ में लिखा है कि परमेश्वर पापवर्जित साधुओंके सत्सङ्गसे जाने जाते हैं उनकी कृपासे मनुष्य दुःखरहित होजाते हैं ॥ १४ ॥ वह साधु काम, लोभ रागादिसे रहित जो कुछ वह कहते हैं वह संसारसे निवृत्त करनेवाला है ॥ १५ ॥ इसलिये संसारसे डरते हुए मनुष्योंको तीर्थोंमें अवश्य जाना चाहिये क्योंकि उन तीर्थोंमें उत्तम जल और वहां साधुओंकी श्रेणी विराजती है।

तस्मात्तीर्थेषु गंतव्यंनरैः संसारभीरुभिः।
पुण्योदकेषु सततं साधुश्रेणि विराजिषु ॥

षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय—१३२ में लिखा है कि जिसप्रकार सूर्य्यनारायणके संयोगसे सूर्य्यकान्तमणिमें अग्नि उत्पन्न होजाती है उसी भांति साधुओंके संयोगसे भगवान्में भक्ति उत्पन्न होती है ॥ १३ ॥

इसी हेतु जब युधिष्ठिर महाराजने तीर्थयात्राका विचार प्रकट किया उससमय नारदमुनिने पाण्डवोंसे कहा है कि तीर्थोंमें जानेसे वाल्मीक, कश्यप, आत्रेय, विश्वामित्र, गौतम, देवल, मार्कण्डेय तपस्वियोंमें श्रेष्ठ शुकदेव, दुर्वासा, जाबाली इत्यादि ऋषियोंके दर्शन होंगे और महात्मा धौम्यजीने कहा है कि तीर्थों वसु, साध्य, सूर्य्य, वायु और अश्विनीकुमार देवोंके समान ऋषि लोग निवास करते हैं देखो महाभारत वनपर्व अध्याय ८५ व ९० ।

मत्स्यपुराण—अध्याय १९८ में लिखा है कि मनु, अत्रि, कश्यप, याज्ञवल्क्य, संवर्त्त, कात्यायन, वृहस्पति, नारद और गौतमादिक धर्मकी इच्छा करनेवाले ऋषि, गङ्गा, कनखल, प्रयाग, पुष्कर और गया इत्यादि तीर्थोंमें निवास करते हैं ॥ ११ ॥

श्रीमान् पण्डितजी प्राचीनकालमें जो गृहस्थ तीर्थयात्राके जानेका विचार करते थे वह विशेषकर नियम और यमके पालन ध्यान बनाये रहते थे क्योंकि—

महाभारत वनपर्व—अध्याय १९९ में कहा है तीन दण्डका धारण करना, जटा बढ़ाना, शिर मुड़वाना, मौनी होना, छाल पहरना, मृगचर्म्म धारण करना, व्रत अर्थात् भूखे रहना, स्नान करना, अग्निहोत्र करना, वनमें रहना, शरीरको सुखाना यदि भाव शुद्ध नहीं तो सब ही मिथ्या है ।

त्रिदण्ड धारणं मौनं जटाभारोऽथ मुण्डनम् ।
वल्कलाजिन सवेष्टं व्रतचर्य्याभिषेचनम् ॥९३॥
अग्निहोत्रं वनेवासः शरीर परिशोषणाम् ।
सर्वाण्येतानि मिथ्यास्युर्यदि भावोन निर्मलः ॥९४॥

हे राजन् अन्न न खाना सहज है परन्तु अन्न खाकर इन नेत्र आदि छः इन्द्रियोंका रोकना कठिन है उससे सबको विकार देनेवाला मन को रोकना बहुत ही कठिन है जो मन बुद्धि और कर्म से पाप नहीं करते वही तपस्वी हैं।

शरीरके सुखानेवाले तपस्वी नहीं, अन्न न खाना तप नहीं कहलाता जो घरमें रहकर पवित्र रहता है वही मुनि है।

न दुष्करं मनाशित्वं सुकरं ह्यशनं विना।
विशुद्धिश्चक्षुरादीनां षणामिन्द्रिय गोमिनाम् ॥९६॥
विकारितेषां राजेन्द्र सुदुष्करतरंमनः।
ये पापानि न कुर्वन्ति मनोवाक् कर्मबुद्धिभिः ॥९७॥
तेतपन्ति महात्मानो न शरीरस्य शोषणम् ॥९८॥

पद्मपुराण षष्ठ—उत्तरखण्ड अध्याय ८० में लिखा है कि चीर वस्तु, धारण करना, जटा रखाना, दण्डका रखना व मूड़ मुड़वाना इत्यादि चिन्ह धर्मके कारण नहीं हैं ॥ १०४ ॥

चीरवासा जटीविप्र दण्डी मुण्डित एववा।
विभूषितोवा विप्रेन्द्र न लिङ्गं धर्म कारणम् ॥

शिवपुराण धर्मसंहिता—अध्याय २९ श्लोक ७ में लिखा है कि रागी पुरुषोंको वनमें दोष होते हैं घरमें पंचेन्द्रिय निग्रह करना तप है अकुत्सित कर्ममें प्रवृत्त होनेसे राग रहित पुरुषको घरही में तपोवन है।

वनेपिदोषाः प्रभवन्ति रागिणां।
गृहेपि पंचेन्द्रिय निग्रहस्तपः ॥
अकुत्सिते कर्मणियः प्रवर्तते।
निवृत्तरागस्य गृहे तपो वनम् ॥ ७ ॥

पण्डितजी जिसप्रकार विना पथ्यके उत्तमसे उत्तम औषधी कुछ लाभ नहीं करती उसीप्रकार वेद व शास्त्रादिके पठनसे मुक्ति नहीं होती वरन् मुक्तिका कारण ज्ञान युक्त कर्म करना ही है इसी हेतु पुराणोंमें भी लिखा है कि जो कर्म ज्ञानपूर्वक किये जाते हैं वह कल्याणके दाता होते हैं अन्यथा नहीं—इसीभांति ऋषि उपदेश भी यथार्थमें मुक्ति देनेवाला है परन्तु जबतक उनकी आज्ञानुसार कार्य्य न किया जावे तबतक लाभदायक नहीं होता इसलिये प्राचीन जन जब तीर्थोंमें जाते थे तब वह गंगा, यमुना, नर्वदा इत्यादि नदियों व अन्य तालाब आदि पवित्र जलोंमें स्नानकर शरीर शुद्धिके पश्चात् आत्म शुद्धिके अर्थ महात्मा जनोंका सत्संग कर आचरण सुधार आनन्द प्राप्त करते क्योंकि मनकी शुद्धिके विना अन्य किसीप्रकारसे भी यथार्थ शुद्धि नहीं होती जैसा कि—

पद्मपुराण—द्वितीय भूमिखंड अध्याय ६६ में कहा है कि चाहे पर्वतके समान मिट्टी मले और गंगाजलके सारे जलसे मृत्यु पर्य्यन्त स्नान करता रहे तो भी दुष्ट स्वभाव और दुष्ट विचार वाला मनुष्य शुद्ध नहीं होता । ८३ । ८४ ।

गंगातोयेन सर्वेणमृद्भारैर्गा त्रलेपनैः ॥८३॥
मर्त्यो दुर्गंध देहो सौभाव दुष्टोन शुध्यति ।
तीर्थ स्नानैस्तपो भिश्च दुष्टात्मान च शुध्यति ॥८४॥

शिवपुराण—वायुसंहिता उत्तरार्द्ध अध्याय ११ में लिखा है कि जिसके अंतःकरणमें अशुद्धि है वह पवित्र भी अपवित्र है ॥५१॥

शिवपुराण—धर्म संहिता अध्याय ४२ में लिखा है कि जीवन पर्य्यन्त शुद्धता करने पर भी दुष्ट स्वभाव वाला मनुष्य तीर्थ स्नान तप करने वाला शुद्ध नहीं होता ॥८२॥

अमृत्योराचरेच्छौचं भावदुष्टो न शुद्ध्यति ।
तीर्थ स्नानैस्तपोभिर्वा दुष्टात्मा नैव शुद्ध्यति ॥८२॥

क्या कुत्ता तीर्थमें स्नान करनेसे शुद्ध होसक्ता है । (कभी नहीं) जो अन्तर्भावसे दुष्ट हो वह चाहे अग्निमें प्रवेशकर जाय तो उसको देह दग्ध करनेसे स्वर्गकी प्राप्ति नहीं होती ॥ ८३ ॥ ॥ ८४ ॥

श्वदृतिः क्षालिता तीर्थो किं शुद्धिमधिगच्छति ।
अंतर्भाव प्रदुष्टस्य विशतोपि हुताशनम् ॥८३॥
न स्वर्गो नापवर्गश्च देहनिर्दहनं परम् ॥८४॥

दुष्टस्वभाव वाला मनुष्य चाहे सब प्रकार गंगाजलसे स्नान करें चाहे मट्टीके पर्वतोंसे हाथ मांज डाले जन्मपर्य्यन्त जो स्नान करें तथापि वह शुद्ध नहीं हो सक्ता ॥ ८५ ॥

सर्वेण गांगेन जलेन सम्यङ् मृत्पर्वते नाप्यथ भावदुष्टः ।
आजन्मनः स्नान परो मनुष्यो न शुद्ध्यतीत्येव वयं वदाम८५

गंगादि तीर्थोंमें नित्य मत्स्यादि निवास करते हैं देवालयोंमें पक्षी रहते हैं भावहीन होनेसे वह फल तीर्थमें अवगाहन करने और दान देनेसे नहीं मिलता है ॥८७॥

गंगादि तीर्थेषु वसंति मत्स्या देवालये पक्षिगणाश्चनित्यम् ।
भावोज्झितास्ते न फलं लभंते तीर्थावगाहाच्च तथैव दानात् ८७

इसलिये शुद्धभाव होना ही सब कर्मोंमें प्रमाण है ।

भाव शुद्धं परं शौचं प्रमाणं सर्व कर्मसु ॥८८॥

भावके शुद्ध होनेसे प्राणी स्वर्ग और मोक्षको पाता है ॥ ९२ ॥

भावतः शुचि शुद्धात्मा स्वर्गं मोक्षं च विंदति ॥९२॥

इस हेतु ज्ञानरूपी जल और वैराग्यरूपी मृत्तिकासे शरीरके अविद्यारूपी रागद्वेष आदि मलोंको धोवे वही शुद्ध होता है।

ज्ञानामलांभसांपुंसां सद्वैराग्यमृदा पुनः।
अविद्यारागविएमूत्रं लेपगन्ध विशोधनम् ॥९४॥

वृहन्नारदीय उपपुराण—अध्याय ३१ में लिखा है कि शुद्धि दो प्रकारकी होती है एक बाह्य और आभ्यन्तर जिसमें मृत्तिका, जलसे बाहर और भावकी शुद्धिसे भीतरकी पवित्रता होती है ऋषियोंने कहा है कि अन्तःकरणकी शुद्धिके बिना जो यज्ञ आरम्भ किये जाते हैं वे फलित नहीं होते जिस प्रकार भस्ममें होम किया निष्फल है इसलिये दुष्टजन हज़ारभार मृत्तिका और करोड़ों कलशोंके जलोंसे शौच करे पर वह चाण्डाल ही कहाता है। जो मनुष्य अन्तःकरणकी शुद्धिके विना बाहरकी शुद्धि करता है वह सजाये हुए मदिराके घड़ेके समान है इसलिये जो कोई विना चित्त शुद्ध किये तीर्थयात्रा करते हैं तो उनको तीर्थ पवित्र नहीं करते जैसे मदिरापात्रको नदियां शुद्ध नहीं कर सकती।

लिंगपुराण—पूर्वार्द्ध अध्याय ८ में लिखा है कि बाहरसे शौच कितना ही करें और मृत्तिकासे देहको लीप २ कर स्नान करें जो अन्तःकरण शुद्ध न होय तो सदा ही मलीन हैं ॥ ३३ ॥

क्योंकि मत्स्य मण्डूक आदि सदा जलमें डूबे रहते हैं वे क्या शुद्ध होजाते हैं इससे अन्तर् शौच ही मुख्य है ॥ ३४ ॥

इसलिये वैराग्यरूपी मृत्तिकासे शरीरको लिप्त करके आत्मज्ञानरूपी जलमें स्नान करे यही शौच मुख्य है क्योंकि शुद्ध पुरुषको ही सिद्धि होती है। अशुद्धको नहीं।

आत्मज्ञानाम्भसि स्नात्वा सकृदालिप्यभावतः।
सुवैराग्यमृदा शुद्धः शौचमेवं प्रकीर्त्तितम् ॥३६॥

शुद्धस्य सिद्धयो दृष्टा नैवाशुद्धस्य सिद्धयः ॥३७॥

अध्याय २५ में लिखा है कि जिसका अन्तःकरण शुद्ध नहीं चाहे वो कितने जलसे स्नान करे परन्तु शुद्ध नहीं होता अर्थात् दुष्ट भाव पुरुषका किसी नदी वा सरोवर में स्नान करने से शुद्ध होना कठिन है मनुष्योंका चित्त कमल अज्ञानरूपीरात्रिसे संकुचित हो रहा है इसको ज्ञानरूपी सूर्य्यकी किरणों से विकसित करना उचित है।

गरुड़पुराण अध्याय १६ श्लोक ६८में लिखा है जन्मसे लेकर अन्त तक गंगा आदि नदियों में जो मेंडक, मछली इत्यादि रहते हैं तो क्या वे योगी होजाते हैं अर्थात् नहीं। ६।

आजन्ममरणान्तं च गङ्गादितटिनीस्थिताः।
मण्डूकमत्स्यप्रमुखा योगिनस्ते भवंति किम् ॥

इसी हेतु पद्मपुराण पातालखण्ड अध्याय ९८ के श्लोक ७८ में लिखा है कि जो मनुष्य गंगादि पुण्यतीर्थों में स्नान करते हैं और वह पुरुष जो महात्माओं का सत्संग करते हैं इन दोनोंसे सत्संग करने वाला ही श्रेष्ठ है॥

गंगादिपुण्यतीर्थेषु यो नरः स्नाति सर्वदा।
यः करोति सतां संगं तयोः सत्संगमोवरः ॥७८॥

मार्कण्डेय पुराण अध्याय १८में दत्तात्रेयजी महाराजने कहा है कि जो मनुष्य सत्संग रूपी पत्थर पर सान रूपी कुल्हाड़ी को तेज करके इस ममता रूपी वृक्षको काट डालते हैं वही मनुष्य मुक्तिके मार्गको प्राप्त होजाते हैं॥

विना कांटे और धूलके ब्रह्मज्ञान रूपी शीतल वनमें प्राप्त होकर परमनिवृत्तिको वह ज्ञानी प्राप्त हो जाते हैं. फिर संसारके आवागमन से रहित होजाते हैं॥

गरुड़पुराण अध्याय १ में स्पष्ट रूपसे कहा है । कि जो मनुष्य पापमें रत दया तथा धर्म रहित दुष्टोंकी संगतमें मस्त उत्तम शास्त्रके जानने वाले सुजनोंके सतसंगसे दूर ।

ये हि पापरतास्तार्क्ष्य दयाधर्मविवर्जिताः ।
दुष्टसंगाश्च सच्छास्त्रसत्संगतिपराङ्मुखाः ॥१४॥

जो अपनेको प्रतिष्ठित जानते हैं और नम्रतारहित धन और मानके घमण्डमें चूर असुरभावयुक्त और दैवी सम्पत्तिसे दूर हैं।

आत्मसम्भाविताः स्तब्धा वृताः ।
आसुरं भावमापन्ना दैवीसम्पद्विवर्जिताः ॥१५॥

जिन मनुष्योंका मन पराई स्त्री और धनमें मोहसे मोहित होकर भ्रम रहा है ऐसे मनुष्य नरकमें जाते हैं ।

अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः ।

इसी कारण जब श्रीमान् युधिष्ठिर इत्यादि पाण्डवोंने तीर्थ-यात्राकी इच्छा की उस समय ऋषियोंने उनसे कहा है जैसा कि महाभारत वनपर्व अध्याय ८१ में लिखा है। कि तीर्थयात्राका फल उन्हीं मनुष्योंको मिलता है जिनके हाथ, पांव, मन, विद्या और कीर्त्ति वशमें होतीहै ।

यस्य हस्तौ च पादौ च मनश्चैव सुसंयतम् ।
विद्या तपश्च कीर्तिश्च स तीर्थफलमश्नुते ॥९॥

जो सब घरोंसे लौट एक किसी स्थानपर सन्तुष्ट होकर रहता है जिसको अहंकार नहीं वही तीर्थके फलको भोगता है ॥ १० ॥

प्रतिग्रहादुपावृत्तः संतुष्टो येन केनचित् ।
अहंकारनिवृत्तश्च स तीर्थफलमश्नुते ॥१०॥

जो छल और कार्योंके आरम्भसे दीन थोड़ा खानेवाला, इन्द्रिय-जित, सब पापोंसे रहित होता है वह तीर्थोंके फलोंको भोगता है ॥११॥

अकल्कको निरारम्भो लघ्वाहारी जितेन्द्रियः।
विमुक्तः सर्वपापेभ्यः च तीर्थफलमश्नुते ॥११॥

जो क्रोधसे रहित सत्य, शीलसे भरा हुआ पक्का व्रतधारी अपने समान सब प्राणियोंको देखनेवाला हो वही तीर्थोंके फलको भोगता है ॥ १२ ॥

अक्रोधनश्च राजेन्द्र सत्यशीली दृढ़व्रतः।
आत्मोपमश्च भूतेषु स तीर्थफलमश्नुते ॥१२॥

और ऐसा ही पद्मपुराण सृष्टिखण्ड अध्याय १९ में लिखा है।

मत्स्यपुराण—अध्याय १११ में कहा है कि जो ब्राह्मण प्रति-ग्रहादिक दानोंसे निवृत्त, सन्तोषवृत्ती, नियमी, पवित्र और अहंका-रसे रहित होता है वह तीर्थके फलको पाता है ॥ १० ॥

प्रतिग्रहादुपावृत्तः सन्तुष्टो नियतः शुचिः।
अहङ्कार निवृत्तश्च सतीर्थफलमश्नुते ॥१०॥

जो क्रोधरहित, सत्यवक्ता, सब जीवोंको अपने समान देखनेवाला होता है वह तीर्थके फलको पाता है।

अकोपनश्च सत्यश्च सत्यवादी दृढ़व्रतः।
आत्मोश्च भूतेषु सतीर्थफलमश्नुते ॥११॥

शिवपुराण—विद्येश्वरी संहिता अध्याय १२ में लिखा है गंगा आदि तीर्थोंमें जानेका फल वही जन पाते है जो सदाचार स-द्भाव और श्रेष्ठ भावनासे बुद्धिमान् दयायुक्त रहते हैं अन्यथा फलकी प्राप्ति नहीं होती ॥३५॥

सदाचारेण सद्बुद्ध्या सदा भावेन चापि च।
वसेद्दयालुः प्राज्ञो वै नान्यथा तत्फलं लभेत् ॥३५॥

इसलिये पवित्र हृदययुक्त मनुष्य शुद्ध मनसे जो स्नान करते हैं वही श्रेष्ठ स्नान कहाता है जैसा पद्मपुराण षष्ठउत्तरखंड अध्याय २७ में कहा है।

अगाधे विपुले सिद्धे सत्तीर्थे च शुचौ हृदि।
स्नातव्यं मनसा युक्तैः स्नानं तत्परमं स्मृतम् ॥

महाभारतवनपर्व—अध्याय १९९ में कहा है कि सज्जनोंके संग और मीठी वाणीसे जिन्होंने अपनी आत्माको पवित्र किया है उन्हींको पवित्र कहते हैं।

महाभारत वनपर्व में महात्मा व्यास, पर्वत और नारद मुनि जब पांडवोंसे मिलने गये तब उन्होंने कहा है कि है। हे युधिष्ठिर आप लोग अपने मनको शान्त कीजिये मनको पवित्र करके शुद्धि होकर तीर्थोंको जाइये-मुनियोंने कहा है कि शरीर शुद्धि होने ही से व्रत होसकता है ब्राह्मणोंने कहा है कि मन पवित्र होनेसे जो बुद्धि शुद्ध होती है मन ही पवित्रताका कारण है आप लोग अपनी बुद्धिको पवित्र और सबको मित्र बना कर तीर्थोंको जाइये जब आप लोग शरीरके नियम और व्रतोंसे शुद्ध होंगे और पूर्वोक्त देवव्रत धारण करेंगे तब तीर्थोंका यथायोग्य फल पावेंगे॥

युधिष्ठिरयमौभीम मनसा कुरुतार्जवम्
मनसा कृत शौचा वै शुद्धास्तीर्थानि यास्यथा।२०।
शरीर नियमं प्राहु ब्राह्मण मानुषं व्रतम्।
मनो विशुद्धां बुद्धश्च दैवमाहुर्व्रतं द्विजाः। २१।
मनो ह्यदुष्टं शौचाय पर्य्याप्तं वै नराधिप।
मैत्रीं बुद्धिं समास्थाम शुद्धास्तीर्थानि॥

ते यूयं मानसैः शुद्धाः शरीरनियमव्रतैः ।
देवं व्रतं समास्थाय यथोक्तं फलमाप्स्यथ ॥२३॥

देवीभागवत स्कन्द ४ अध्याय १८ में प्रह्लादजीने च्यवन ऋषिसे कहा है कि जिनके मन वाणी देह शुद्ध हैं उन्हें तीर्थ पद पद पै हैं। मलिन चित्तोंको गंगाभी अपावनकी कटादि देशोंसे अधिक है जो प्रथम मन शुद्ध है तो जीवात्मा पापरहित होता है उसे सब तीर्थ भी पवित्र करते हैं नहीं तो गंगाके तीर सब कहीं, नगर, व्रज अहीरोंके ग्राम बसते हैं निषादोंके गृह और हूण वंग, खस म्लेच्छादि कोंके स्थान होते हैं और सर्वदा गंगाजलही पान करते हैं स्वच्छता पूर्वक त्रिकाल स्नान करने पर एक भी विशुद्धात्मा नहीं होता जिनका चित्त विषय वासना से हत हो गया है उन्हें तीर्थ क्या करें सबका कारण मनही है इस लिये प्रथम उसको शुद्ध करना चाहिये तीर्थ में वासकरके औरोंको छलातो क्या शुद्ध हो सकता है इसलिये प्रथम मन शुद्ध फिर द्रव्य शुद्ध तदन्तर शौचादि शुद्ध करके तीर्थयात्रा अवश्य करनी चाहिये वरन जाना व्यर्थ है।

प्रथमं मनसः शुद्धिः कर्त्तव्या शुभमिच्छता ।
शुद्धे मनसि द्रव्यस्य शुद्धिर्भवति नान्यथा ॥३७॥

क्योंकि यदि किसी के कहने अथवा देखने से तीर्थयात्रा को गये और राग, द्वेष काम, क्रोध युक्त ही गृहको लौट आये तो बतलाईये क्या फल मिला इसलिये तीर्थ यात्रा करने पर देह से काम क्रोध, लोभ, मोह, तृष्णा, द्वेष, राग, मद, निन्दा, ईर्षा,अक्षमा और अशान्ति ये न गये तो केवल काम ही काम हुआ फिर फल कहां। जैसाकि देवीभागवत स्कन्द ३ अध्याय ८ में कहा है।

इसी हेतु नरसिंह उपपुराण अध्याय ६७ में मनु महाराजने भारद्वाज ऋषिको उपदेश किया है कि मनका निर्मल रखना रागादिकों में व्याकुल न होना, सत्यबोलना, सबके ऊपर दया करना

इन्द्रियोंको जीतना गुरु माता पिताकी सेवा करना यह मानुषी तीर्थ विशेष फलदायक हैं।

वामन-पुराण अध्याय ४३ में लिखा है जिनका अनन्तभाव वाला चित्त आत्मामें लगा हुआ है उनको सब तीर्थों और आश्रमोंसे क्या प्रयोजन।

किं तेषां सकलैस्तीर्थैराश्रमैर्वा प्रयोजनम्।
येषां चानंतकं चित्तमात्मन्येव व्यवस्थितम् ॥२४॥

अर्थात् बिना मनके शुद्धि किये किसी नदी आदिमें स्नान कियेसे पापोंकी निवृत्ति नहीं होती इसी हेतु गरुडपुराण अध्याय १७ श्लोक ५७ में लिखा है कि जिसके सत्संग और विवेक यह दो निर्मल नेत्र नहीं है वह अन्धा और कुमार्गमें जाने वाला है जैसा कि—

सत्सङ्गश्च विवेकश्च निर्मलनयनद्वयम्।

श्रीमहाराज—इसी प्रकार पुराणोंमें अनेकाम वचन मिलते हैं इस पर भी इसके विपरीत उन्हीं पुराणोंमें तीर्थोंके दर्शन और स्नानादिकी महान् महिमा लिखदी है जिनको सुन २ कर संसारी जन भेड़ियाधसानकी भांति बिना इन बातोंको विचारे यम, नियमसे रहित टीड़ी दलके सामान एक विशेष तिथि पर काशी, मथुरा, प्रयाग, बदरीनाथ, केदारनाथ द्वारिका, जगन्नाथ रामेश्वर, पंचवटी, चित्रकूट गोकुल, अयोध्या, नैमिषारण्य, हरिद्वार गंगोत्री जमुनोत्री, नगरकोट, कुरुक्षेत्र, पुष्कर इत्यादि स्थानोंके दर्शनकर गंगा यमुना, गंडकी और नर्वदा इत्यादिमें डुबकी लगा अपने मनोरथकी सिद्धि समझते हैं जैसा कि लिखा है आप भी संक्षेपसे सुन लीजिये।

श्रीमान् पंडितजी—ने कहा कि आज यहां ही विश्राम दीजिये।

सेठजी—बहुत अच्छा— जो आज्ञा में यहां ही समाप्त करता हूं ओ३म् शम् ।

सर्वसज्जनोंने चलनेकी तय्यारीकी ।

सेठजी—ने सर्व महाशयोंको नमस्तेकी ।

पंडितजी—ने आयुष्यमान कहा और चलदिये ।

अन्य महाशयोंने यथा योग्यकी ।

सेठजी—अपने गृहमें गये ।

इति द्वादश परिच्छेदः

त्रयोदश परिच्छेदः

सेठजी—ने समय पर अनेक सज्जनों सहित श्रीमान् पण्डित जीको आते देख उठकर दोनों हाथजोड़ नमस्ते कह कर कहा कि आईये पधारिये बिराजमान हूजिये ।

पंडितजी व अन्य सभ्य गणोंने यथा योग्य कहा और सब अपने२ स्थानों पर जा बैठे ।

सेठजी—ने कहा कि देखिये श्रीमान् ।

मत्स्य पुराण अध्याय १०७ में लिखा है कि जो पुरुष अज्ञानसे तीर्थ यात्रा करता है वह सब कामनाओं से सम्पन्न होके स्वर्गलोक में प्राप्त होता है और क्षीण पुन्य होके धन धान्य से युक्त हुए स्थानको प्राप्त होता है ॥

अज्ञानेन तुयस्येह तीर्थ यात्रादिकं भवेत् ।
सर्वकाम समृद्धंतु स्वर्ग लोके महीयते ॥
स्थानश्चल भते नित्यंधन धान्य समाकुलम्॥ १६ ॥

वामनपुराण अध्याय ३४ में लिखा है कि तीर्थों का स्पर्श मनुष्योंको पवित्र कर देता है और तीर्थों का दर्शन पापोंका नाश

करता है तीर्थ के स्नान से पापी की भी मुक्ति होती है जैसाकि

तीर्थानां स्मरणं पुण्यं दर्शनं पाप नाशनम् ।
स्नानं पुण्य करं प्रोक्तमपि दुष्कृत कर्मणः ॥

हरिद्वार ।

पद्मपुराण षष्ठी उत्तरखण्ड अध्याय २१ में महादेवजीने कहा कि एक समय मैं भगवान् के स्थान हरिद्वार को गया तो उस तीर्थ के प्रभाव से मैं विष्णुके रूपके तुल्य होगया । २१ ।

एकदा केशव स्थाने हरिद्वारे ह्यहंगतः ।
तस्मात्तीर्थ प्रभावाच्च जातोहं विष्णुरूपवान् ॥११॥

और भी मनुष्योंमें श्रेष्ठ जो जाते हैं वे निरोग रहते हैं वे मनुष्य नर नारी सब चारभुजा वाले भगवानके दर्शन ही से सब वैकुण्ठ को जाते हैं हमको भी यह सुन्दर हरिद्वार तीर्थ सब से अधिक है ॥ २२ ॥ २३ ॥

येगच्छन्ति नर श्रेष्ठास्तेवैयां तिष्ठनामयम् ।
चतुर्भुजास्तुते लोकाः नरानार्यश्च सर्वशः ॥ २२ ॥
वैकुंठ यांतिते सर्वे हरे दर्शन मात्रतः ।
ममाऽप्यधिक तीर्थतु हरिद्वार सुशोभनम् ॥२३॥

जो धर्म अर्थ काम मोक्ष का देने वाला है गऊ ब्राह्मण और पिताका मारने वाला है इस प्रकारके बहुत से पाप भगवानके दर्शन ही मात्र से नाशको प्राप्त हो जाते हैं । २६ । २७ । २८ ॥

गोहंताब्रह्महांचैव येचान्ये पितृघातकाः ।
एवं विधानि पापानि बहून्यापि च वैद्विज ।
विलयं यान्ति सर्वाणि हरेर्दर्शन मात्रतः ॥

प्रयाग माहात्म्य ।

सप्तमक्रिया योगसार अध्याय ४ में कहा है कि कोटि ब्रह्माण्डके मध्यमें जितने तीर्थ हैं वे सब प्रयागके बराबर नहीं ।

कोटि ब्रह्माण्डमध्येषु यानि तीर्थानि वैमुने ।
प्रयान्ति तानि सर्वाणि प्रयाग प्रतिमान्तुश्रिम् ॥

जो जन मकरके सूर्य्य माघमासमें यहां स्नान करते हैं तिनका आगमन फिर विष्णुलोकसे नहीं होता ॥६॥

हज़ार करोड़ गौओंका दान अश्वमेध इत्यादि यज्ञ सुमेरु पर्वतके समान सोनेका दान तथा और भी दान कुरुक्षेत्र पुष्कर प्रभास और गयाजीमें हवन कर ब्राह्मणोंको देनेसे जो फल पण्डितोंको मिलता है तिससे करोड़गुणा फल माघमें प्रयागमें स्नान करनेसे मिलता है तिससे सब तीर्थोंमें प्रयाग श्रेष्ठ है ।

गवांकोटि सहस्राणि वाजिमेध मुखाध्वराः ।
मेरुतुल्य सवर्णानिदानान्यन्या निचद्विज ॥७॥

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय २४ में लिखा है कि इसप्रकार का तीर्थ तीनों लोकोंमें न हुआ है न होगा ग्रहोंमें जैसे सूर्य्य और नक्षत्रोंमें जैसे चन्द्रमा श्रेष्ठ है । उसी भांति तीर्थोंमें उत्तम प्रयागजी हैं प्रातःकालमें जो प्रयागजीमें स्नान करता है वह महापापसे छूट परमपदको प्राप्त होता है दारिद्रके अभावकी इच्छा करनेवालेको वहां यथाशक्ति कुछ देना भी चाहिये ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥

अध्याय ९१ में लिखा है कि अन्य स्थानोंमें जो दश वर्षमें तपस्या का फल मिलता है वह यहां एक दिनमें प्राप्त होता है और अध्याय १२९ में लोमश मुनिने कहा है कि इस प्रयागमें विना ज्ञानके सब प्राणी मुक्तिको प्राप्त होगये हैं यहां ही प्रजापतिने महायज्ञको कर प्रजा रचनेकी शक्तिको प्राप्तकर सृष्टिको रचा था और जो की कामना

करनेवाले नारायणजीने स्नानके प्रभावसे अमृत मथनकर लक्ष्मीजीको प्राप्त किया था और इसीस्थानपर छः मास स्नानकर महादेवजीने तीन बाणसे त्रिपुरासुरको मारडाला था।

मत्स्यपुराण अध्याय १०६ में लिखा है कि विश्वासघात करके मारडालने वाला पुरुष तीन काल स्नान और भिक्षा कर भोजन करनेसे तीन मासमें निस्सन्देह पापोंसे छूट जाता है।

विश्रम्भ घातकानान्तु प्रयागे शृणुमत् फलम्।
त्रिकालमेव स्नायीत आहारं भैक्ष्य माचरेत्॥
त्रिभिर्मासैः समुच्येत् प्रयागेतु न संशयः॥

वाराहपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय १३८ में लिखा है कि त्रिवेणी क्षेत्र पृथिवी मण्डलमें सब तीर्थोंसे उत्तम है जिसमें पृथिवी मण्डलके सब देवता और तीर्थोंका समाज होता है वहां स्नान करनेसे मरके मुक्ति होती है इसका तीर्थराज नाम है॥ ८९॥

यत्राप्लुतादिवंयान्ति मृतामुक्तिं प्रयान्तिच।
तीर्थराज इतिख्यातं तत्तीर्थंकेशवप्रियम्॥ ८९॥

पद्मपुराण सप्तम क्रिया योगसार।

अध्याय ४

इतिहास

प्राचीन समयमें मणिधिनाम एक वैश्य धनवान और देवताओं अतिथियोंकी सेवा करने वाले थे उनकी पद्मावती नाम पतिव्रता स्त्री जो शीलादि गुणोंसे युक्त थी। वह कालान्तरमें व्यौपारको गये इधर स्त्री सखियों सहित स्नानको गई वहां धनुध्वज नाम एक पापीने उस स्त्रीको देख उससे कहा कि तुमको हमारे साथ आनन्द करना चाहिये तब सखियोंने कहा कि यह पतिव्रता है इसकी इच्छा

करना मूर्खता है परन्तु उसने न माना फिर सखियोंसे कहा कि जिस प्रकार यह मिल सके वह उपाय बतलाओ मैं तुम्हारी शरण हूं तब सखियोंने उत्तर दिया कि यदि तू इस स्त्रीकी इच्छा करता है तो शीघ्र गङ्गा जमुनाके संगम पर देहका घार इतना कह वह सब घरको गई इधर हज़ार हत्या करने वाला चाण्डाल मोहके कारण गङ्गा जमुनाके जलमें उसका पूजन कर प्राण छोड़ता हुआ जिससे वह उसी दिन उस स्त्रीके पतिके समान हो गया और वह चांडाल ब्राह्मण उस स्त्रीके घरको आया उधर वह प्रणधि नाम वैश्य व्यौपारसे वापिस आकर गृहको गया पतिव्रताने दोनोंको एक समान देख चिन्ताकी कि मैं किसकी स्त्रीहूं और मेरा कौन स्वामी है इसकेलिये भगवान्‌की प्रार्थनाकी तब भगवानने कहा कि हे सुन्दर स्त्री जिसप्रकार अनन्त रूप वाली लक्ष्मी मेरे साथ क्रीड़ा करती है उसीभांति तुम भी दोनोंके संग सदैव सुख भोगो ।

अनन्तरूपिणी लक्ष्मीर्यथाक्रीडे मयासहा ।
तथात्वमपिसुश्रोणिभुंक्ष्वताभ्यां सुखसदा ॥

यह सुन पद्मावतीने कहा कि मनुष्य समाजमें जिस स्त्री के दो पति होते हैं उसकी प्रशंसा नहीं होती इसलिये लज्जारूपी समुद्रके कल्लोलमें डूबती हुई का आप उद्धार कीजिये ।

तब भगवान्‌ने कहा कि यदि तुम अपयशसे डरती हो तो इन दोनों समेत मेरेपुरको प्राप्त हो । हे पवित्र अंगवाली स्त्री तुम भ्रमको छोड़ दो यह दोनों तुम्हारे पति हैं । इसलिये सदैव एकभावसे सेवा करो ।

भ्रमं जहीहि चार्वंगिद्वावेतौहि पतीतव ।
एक भावेन सुश्रोणि कुरुसेवां तयोः सदा ॥

तुम्हारा स्वामी प्रणिधि मेरा भक्त था वही अपने सुखके लिये दोप्रकार का हुआ है ।

तदन्तर भगवान्‌की आज्ञासे विमान आया जिसपर पद्मावती दोनों पतियोंको साथ लेकर बैकुण्ठको गई। मार्गमें उधर विष्णु दूत एक मनुष्यको स्त्री समेत विमानमें बिठलाकर लिये जाते थे तब पद्मावतीने पूछा कि आप कौन हैं किस पुण्यके फलसे इसको आप लिये जाते हो उसके व्रतको सुनाइये तब दूतोंने कहा कि यह वृहद्-ध्वज नाम राक्षस वनका रहनेवाला बड़ा पराक्रमी पराई स्त्री, पराई द्रव्यका हरनेवाला गायोंके मांसका खानेवाला निष्ठुर वचन कहनेवाला देवोंकी निन्दामें मस्त अर्थात् शुभकर्म इसने स्वप्नमें भी नहीं किये पराई स्त्रियोंके हरणकेलिये आकाशमें घूमा करता था एक समय भासकेश राजाकी कौशिनी नामी स्त्रीको देख उससे कहा कि मैं तेरे आलिङ्गनको आया हूं इतना सुन स्त्रीने उससे आलिंगन किया फिर प्रसन्न चित्त पति पत्नीभावको प्राप्त हो बड़े वेगवाले रथमें बैठ आकाश मार्गमें चले थोड़ी देरके पश्चात राक्षसने कहा तुम्हारे स्वामीके राज्यसे गंगासागरमें आगये। जिसको देख स्त्रीके प्राण निकल गये फिर राक्षसने रो २ कर प्राणोंको छोड़दिया। अब भगवान्‌की आज्ञासे दोनोंके पाप नाश होगये इसलिये दोनोंको बैकुण्ठ लिये जाते हैं क्योंकि जल, स्थल, आकाशमें गंगासागरके संगममें देह छोड़कर पापी भी परमगतिको पाते हैं इतना कह वह दूत उन दोनोंको विष्णुलोक लेगये। इधर पद्मावती दोनों पतियों समेत विष्णुजीकी सारूप्यताको प्राप्त हुई।

मत्स्यपुराण अध्याय १८० में पार्वतीजी के पूछनेपर शिवजी ने कहा है कि हे प्रिये जिन तीर्थोंमें मेरी स्थिति सुनी जाती है वह सब तीर्थ इस अविमुक्त तीर्थके चरणोंमें नित्यही स्थिति रहते हैं यह परम प्रसिद्ध परम गति का देने वाला है इसमें सब दान अक्षय कारी होते हैं हजारों जन्मों का संचय किया पाप सब नष्ट होजाता है जैसे अग्नि में रुई भस्म हो जाती है ब्राह्मण आदि वर्णसंकर पात की जीव कीट पतंग मृग पक्षी भी इस तीर्थमें मरे वह शिव लोकमें जाता है। ब्राह्मणकी हत्या करने-वाला भी पुरुष इस तीर्थ पर जाता है उसकी भी ब्रह्म हत्या दूर होजाती है॥ १६॥ १७॥

अध्याय ८३ में लिखा है कि जो गति दान, तप, यज्ञ और ब्रह्म विद्या आदि से भी नहीं मिलती वह इस तीर्थसे प्राप्त होते है अनेक जाति वा चांडाल पापी तथा महा हत्या वाले इन सब पुरुषोंकी परम औषधी यही है कि अविमुक्ति तीर्थ को प्राप्त होजावे और जो वहां शिवकी भक्तिकरके मरते हैं फिर वह जन्म नहीं लेते। ५५। ५७

अध्याय १८१ में लिखा है।

हे पारवती जैसे न मेरे समान कोई पुरुष है न तेरे समान कोई स्त्री है इसीप्रकार अविमुक्ति तीर्थके समान कोई तीर्थ भी न है न होगा। ३५।

अविमुक्त तीर्थ पर परमयोग परम गति और परम मोक्ष है इसी से इसके समान कोई क्षेत्र नहीं है। ३६।

यही स्थान मेरी ब्रह्म हत्याका दूर करने वाला है। पापी पुरुष को यहांकी धूल परम पवित्र करदेती है कहांतक इसकी महिमा वर्णन करूं व्याभिचारणी स्त्री भी यहांपर शरीर त्याग ने से परम गतिको प्राप्त होजाती है ॥ २५ ॥

जो जन इसतीर्थ का सेवन नहीं करते वह तपोगुणसे युक्त हैं।

शिवपुराण—ज्ञानसंहिता अध्याय ५० में कहा है कि मेरे बहुत रहनेसे क्या है इस तीर्थके दर्शनकी विष्णु और ब्रह्मा भी अपने पवित्र होनेकी कामना करते हैं ॥ १५ ॥

तद्दर्शनंह्यहं विष्णुर्ब्रह्माचापि तथा पुनः।
कामयन्ति च तीर्थानि पावना यात्मनस्तदा १५॥

पण्डित, श्रोत्रिय, चाण्डाल, पतित, संन्यासी कोई भी हो यहां शरीर त्यागनेसे मुक्ति होजाती है।

पण्डितः श्रोत्रियोवापि चण्डालः पतितोऽथवा।
संन्यासी वामृतः स्याद्वै सर्वेमोक्षम वाप्नुयुः॥

पुरुषोत्तम तीर्थ ।

पद्मपुराण सप्तम क्रिया योग अध्याय १८ में लिखा है कि यहां चाण्डालका छुआ अन्न ब्राह्मणोंके ग्रहण योग्य होता है तिससे वहां पर साक्षात् विष्णु ही है ॥ १ ॥

वहां स्वयं लक्ष्मी भोजन बनाती हैं यहांका भात देवताओंको भी दुर्लभ है भगवान्के भोजनसे बचा हुआ अन्न जो भोजन करता है उसको मुक्ति दुर्लभ नहीं है ।

हरिभुक्ता वशिष्टं यत्पवित्रं भुविदुर्ल्लभम् ।
अन्नयेभुञ्जते लोकास्तेषां मुक्तिर्न दुर्ल्लभा ॥

जो चैत्रके महीनेमें वारुणीपर्वमें जगन्नाथके दर्शन करता है वह मरकर उनकी देहमें प्रवेश करता है ॥ ३४ ॥

चैत्रके मासि वारुण्यां यो जगन्नाथ मीक्षते ।
समृतः प्रविशेद्देहं जगन्नाथस्य जैमिने ॥३४॥

इसीभांति जो दुर्भागा, सुभद्राजीके दर्शन करती है वह सुभागा होती है काक वन्ध्या निश्चय पुत्रको पाती है ॥ ४३ ॥

दुर्भगा काक वन्ध्या।वा सुभद्रायां प्रपश्यति ॥
सा स्वामि सुभगा नारी बह्वपत्या भवेत्खलु ॥४३॥

कहां तक कहैं रोगी रोगसे, पुत्र हीन पुत्र, विद्यार्थी विद्या, धनकी इच्छा वाला स्त्रीकी इच्छावाला धन स्त्रियों और मोक्षकी इच्छा वाला मोक्षको पाता है ॥ ४७ ॥

इसीभांति राज्य अर्थात् सब कुछ मिलता है यह पुरुषोत्तमतीर्थ सब तीर्थोंमें श्रेष्ठ है ।

मथुरा ।

वाराहपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय १४६ में वाराह भगवानने कहा है कि हम उस तीर्थका महात्म वर्णन करते हैं जिसके तुल्य स्वर्ग मृत्यु

और पाताल तीनों लोकोंमें दूसरा तीर्थ नहीं जिसको मथुरापुरी कहते हैं जहां हमारा निवास स्थान है और क्षेत्र तो हमारे निवास करनेसे पवित्र हुए और मथुरा जन्म लेनेसे अति पवित्र है जो २ जीव मथुरामें वास करते हैं वे सब शरीर त्याग करनेपर मुक्ति पाते हैं माघकी अमावास्याका जो फल श्री त्रिवेणीके स्नानसे होता है वह फल मथुरामें नित्य २ होता है एक हज़ार वर्ष काशीवाससे जो फल मिलता है वह मथुरा स्नानमात्रसे ही होजाता है कार्त्तिक पूर्णमासीको पुष्कर स्नानसे जो फल मिलता है वह मथुराजीके स्नानसे मिलता है हम कहां तक कहें यह संसार हमारी मायासे मोहित भया भ्रमता है और मथुरा मण्डलमें नहीं जाता जिसमें सब पापोंसे मुक्ति हो उत्तम गतिको पाता है स्नान करना तो वहां उत्तम ही है जो कहीं किसी भूमिमें कोई मथुरा इस तीन अक्षरके शब्दको उच्चारण करते हैं वह पापोंसे मुक्ति हो जाते हैं॥

वाराह पुराण उत्तरार्द्ध अध्याय १५४ में लिखा है मथुरा मण्डलकी परिक्रमा करनेसे ब्राह्मणका वध करने वाला, मद्यपान करने वाला, चोर, व्रतका खण्डन करने वाला, अगम्य स्त्री के साथ संगम करने वाला क्षेत्र स्त्री हरने वाला सब पापोंसे मुक्ति हो उत्तम गतिको पाता है।

शूकर क्षेत्र।

वाराह पुराण उत्तरार्द्ध अध्याय १३१ में शूकरक्षेत्रके विषयमें लिखा है त्रेताके अन्त और द्वापरके आदिमें कपिलनगरमें ब्रह्मदत्त नाम राजाके सोमदत्त नाम सुशील और धर्मात्मा पुत्र था जो पिताकी आज्ञा पाकर पितृकर्मके अर्थ आखेटके लिये वनको गया जहां अनेक जन्तु होनेपर कोई हाथ न आया तब वह इधर उधर घूमने लगा इतनेमें एक शृंगाली आई उसे देख उसने बाण चलाया जिसके लगते ही वह दुःखी हो भागी गङ्गाजीमें जाकर जल पिया और प्राण छूटगया और सोमदत्त क्षुधा, तृषा करके पीड़ित उसी वनमें एक वृक्षके निकट प-

हुआ क्या देखता कि एक वटकी शाखापर एक गृद्ध सुखपूर्वक निवास कररहा है उसको देख बाण मारा वह मरगया यह क्षेत्रके प्रभावसे कालिञ्जरके राजाका पुत्र और शृंगाली अतिरूपवान कान्तिसेन नाम राजाकी कन्या हुई—दोनोंका विवाह होगया और बड़े प्रेमसे रहने लगे। राजा वृद्ध अवस्था देख राज्य पुत्रको दे वन चला गया वह प्रजापालन करने लगा जिसके पांच पुत्र हुए। एक दिन रानीने राजासे कहा कि आप हमको यह वर दीजिये कि मैं मध्याह्नके समय एकान्तमें जाकर सोया करूं और वहां कोई न आने पावे राजाने स्वीकार करलिया। रानी एकान्तमें मध्याह्नके समय शयन करने लगी इसप्रकार ११ वर्ष व्यतीत होगये १८वें वर्षमें राजाने एक दिन विचारा कि देखें यह मध्याह्नके समय यह क्या क्रिया करती है, क्योंकि शास्त्रों और आचार्योंका यह मत नहीं है कि मध्याह्नके समय स्त्री एकान्तमें शयन करे इसलिये छिपकर देखना चाहिये राजा मध्याह्नके समय उसके पलंगके नीचे छिप रहा तब रानी पलंगपर कह रही थी कि हे परमेश्वर मैं ने पूर्वजन्ममें कौनसा पाप किया जिसका फल मैं भोग रही हूं देखो मेरा पति भी मेरी दशा नहीं जानता, मेरा शिर फटा जाता है इससे तो मरना ही अच्छा अब मैं किस उपायसे शूकर क्षेत्रको जाऊं तो यह क्लेश निवृत्त हो। राजाने सुन पलंगके नीचेसे निकलकर कहा कि तुमने हमसे नहीं कहा अब सब जाता रहेगा तब रानीने कहा कि राज्यको पुत्रको देकर शूकरक्षेत्रको चलो राजाने ऐसा ही किया। रानी समेत राजा शूकरक्षेत्रमें पहुंचे और कहा कि अब तो सब वृत्तान्त कह दो रानीने कहा कि तीन दिन व्रत कर लो जब व्रत होगया तो रानीने कहा कि मैं पूर्वजन्मकी शृंगाली थी यहां ब्रह्मदत्तका पुत्र सोमदत्त आया जिसने एक मस्तकमें तीर मारा जिसका घाव इससमय आप देखलें महाराज इस तीर्थके प्रभावसे मैं राजकुमारी हो आपकी पत्नी हुई इसी क्षेत्रमें प्राणत्यागनेके कारण हमको पूर्व स्मरण भी नहीं भूला यह सुन राजाको भी स्मरण होगया और कहने लगा कि मैं गृद्ध था इसी पेड़पर रहता था उसी सोमदत्तने

साथ मारा प्राण निकल गया जिससे इसी तीर्थके प्रभावसे राज पुत्र और तुम्हारा पति हुआ। अब मैं तुम्हारे साथ प्राणत्याग करता हूं। हमारे दूत विमान लेकर पहुंच गये दोनों हमारा नाम स्मरण करते २ प्राणत्याग विमानमें बैठ श्वेतद्वीप पहुंचे राजाके साथ जो और जन आये थे इस आश्चर्यको देख प्रेम श्रद्धायुक्त दान पुण्यकर अपने शरीरको त्याग विमानों द्वारा श्वेतद्वीपमें पहुंचे।

पद्मपुराण षष्ठी उत्तरखण्ड अध्याय १११ में लिखा है पांच योजन के विस्तार युक्त भगवान मन्दिर शूकरक्षेत्र में जो गदहा भी जीव बसता है वह चार भुजा वाले भगवान के समान है। ६।

पंचयोजन विस्तीर्णे शूकर हरि मन्दिरे।
यस्मिन्वसति यो जीवो गर्दभोऽपिचतुर्भुजः ॥ ६ ॥

जो मनुष्य और जगह साठ हजार वर्ष तपस्या करता है वह फल शूकर क्षेत्रमें आधे पहरमें मिलता है ॥ ८ ॥

षष्टि वर्ष सहस्राणियोऽन्यत्र कुरुते तपः।
तत्फलंलभतेदेवि प्रहरार्द्धे न शूकरे ॥ ८ ॥

काशीमें दश गुण, वेणीमें सौगुणा गङ्गा सागर के सङ्गम में हजार गुणा और हर मन्दिर शूकर क्षेत्रमें अनन्त गुणा फल होता है ॥१०॥

काश्यां दशगुणं प्रोक्तं वेण्यां शतगुणं भवेत्।
सहस्र गुणितं प्रोक्तं गंगासागरसंगमे ॥१०॥

श्रीमान् इनके उपरांत अनेकान तीर्थोंके महात्म पुराणोंमें लिखे हैं जिनका वर्णन करनेके लिये बहुत समय चाहिये परन्तु पंडितजी महाभारत वनपर्व अध्याय ८५ में पुलस्त ऋषिका वचन है कि सतयुग में सब तीर्थोंमें स्नान करने से पुन्य होता था त्रेतामें पुष्कर द्वापरमें कुरुक्षेत्र और कलियुग में तो गंगा ही प्रसिद्ध है जैसाकि—

सर्वं कृतयुगे पुण्यं त्रेतायां पुष्करं स्मृतम् ॥
द्वापरेऽपि कुरुक्षेत्रं गङ्गा कलियुगे स्मृता ॥

इसलिये अब मैं अन्य तीर्थों के महात्मको छोड़ गंगा महात्म और उत्पत्तिको कल वर्णन करूंगा क्योंकि आज मुझको एक आवश्यक कार्य्यके लिये अपने बड़े साहिब के यहां जाना है आशा है आप आज्ञा देंगे।

श्रीमान् पण्डितजी और अन्य महाशयों ने प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार कर कहा कि बहुत अच्छा आज यहां ही समाप्तकर दीजिये।

सेठजी ने बहुत अच्छा ओम् शम।

सर्व सज्जन महाशयों ने चलने की तैय्यारी की।

सेठजी ने सब सज्जनों को हाथ जोड़ यथा योग कहा॥

पंडितजीने आशीर्वाद दिया और अन्य महाशय यथा योग्य कह कर चलदिये॥

सेठजी भोजनोंको चले गये

इति त्रयोदश परिच्छेदः।

अथ चतुर्दश परिच्छेदः।

आर्य्यसेठ—श्रीमान् पण्डितजी नमस्ते आइये विराजमान हूजिये।

श्रीपंडितजी—आयुष्मान् कह विराजमान हुए इतनेमें अन्य महाशयगण आते गये और यथायोग्य कहकर विराजते गये।

सेठजी—अब मैं प्रथम गंगामाहात्म्य सुनाता हूं सुनिये।

गंगामाहात्म्य।

ब्रह्मवैवर्त्तपुराण प्रकृतिखण्ड अध्याय १० में कहा है

मनुष्य गंगा २ सैकड़ों योजनसे भी कहते हैं वह सब पापोंसे छूटकर विष्णुलोकको जाते हैं।

गंगागंगेति योब्रूयात् योजनानां शतैरपि ।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं सगच्छति ॥७०॥

पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय ८१ में लिखा है। तपस्या, ब्रह्मचर्य्य, यज्ञ और दानसे उस गतिको नहीं प्राप्त होता जिसको गंगाके सेवन कर प्राप्त होता है ॥२५॥

तपस्या ब्रह्मचर्येण यज्ञैस्त्यागेन वापुनः ।
गतितानं लभेज्जंतुर्गंगासेव्ययां लभेत् ॥२५॥

जैसे उदयके समयमें सूर्य्यनारायण तीव्र अंधकारको दूरकर शोभित होते हैं तैसे ही गंगाजीके जलमें स्नान करने वाला पापोंको दूरकर शोभित होता है ॥ २७ ॥

ब्राह्मण और गुरुका मारनेवाला, मदिरा पीनेहारा, बालकोंका मारनेवाला सब पापोंसे छूट शीघ्र स्वर्गको जाता है ॥ ३७ ॥

ब्रह्महाचैव गोघ्नोवा सुरापीवाल घातकः ।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो दिवंयाति चसत्वरम् ॥३७॥

मत्स्यपुराण अध्याय १०३ में लिखा है कि हज़ार योजनसे श्रीगंगाजीके स्मरण करनेसे पाप क्षय होजाते हैं और उनके नामोच्चारणसे दुष्कृत कर्म करनेवाले भी परमगतिको प्राप्त होते हैं ॥ १३ ॥

योजनानां सहस्रेषु गङ्गायाः स्मरणान्नरः ।
अपिदुष्कृत कर्मातु लभते परमाङ्गतिम् ॥

कीर्त्तनसे पाप नष्ट होते हैं दर्शन करनेसे शुभ मंगलोंको देखता है स्नान और जलपानसे अपने समेत सात पीढ़ियोंको पवित्र करदेता है ॥ १४ ॥

कीर्त्तनान्मुच्यते पापाद्दृष्ट्वा भद्राणि पश्यति ।
अवगाह्य चपीत्वातु पुनात्या सप्तमं कुलम् ॥

अध्याय १०४ में लिखा है।

यह श्रीगंगाजी इस पृथ्वीपर तो मनुष्योंका उद्धार करती हैं पाताललोकमें नागोंका और स्वर्गमें देवताओंका उद्धार करती है यह त्रिपथगामिनी गंगाजी कहाती हैं ॥ ५१ ॥

क्षितौतारयते मर्त्यान्नागांस्तारयतेऽप्यधः ।
दिवितारयतेदेवांस्तेन त्रिपथगास्मृता ॥५१॥

प्राणियोंकी जितनी हड्डियां गंगाजीमें पहुंच जाती हैं उतने ही हज़ार वर्षोंतक प्राणी स्वर्गमें वास करते हैं ॥ ५२ ॥

यावदस्थीनि गंगायां तिष्ठन्ति शरीरिणः ।
तावद्वर्ष सहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ॥

यह गंगा सब तीर्थोंमें उत्तम तीर्थ है नदियोंमें उत्तम नदी महापातकवाले सम्पूर्ण प्राणियोंको मोक्ष देनेवाली है ॥ ५३ ॥

तीर्थानान्तु परंतीर्थं नदीनांतु महानदी ।
मोक्षदा सर्व भूतानां महापातकिनामपि ॥५३॥

विष्णुपुराण अं० ४ अध्याय ४ में लिखा है यह गंगाजलमें ही शक्ति है जो केवल स्नान, पान और मार्जन करनेवाले ही पुरुषोंको तारें किन्तु सैकड़ों हज़ारों वर्षोंके सड़े, गले, बार, नोह, हाड़, राख इत्यादि पर जल परनेसे उस प्राणीको भी तारदें ॥ १५ ॥

पद्मपुराण सप्तम क्रिया योगसार अध्याय ८में लिखा है कि देहधारियोंके जितने समयतक गंगाजीमें हाड़ स्थित रहते हैं उतने ही हज़ार कल्प वह विष्णुलोकमें प्राप्त होता है ॥ २५ ॥

तिष्ठंत्यस्थीनि गङ्गायां यावत्कालं शरीरिणः ।
तावत्कल्प सहस्राणि विष्णुलोके महीयते ॥२५॥

और कि जिसकी राख, हाड़, नौ और बाल गंगामें डूबते हैं वह बुद्धिमान् विष्णुजीके लोकमें वास करता है ॥ २६ ॥

यस्यमज्जन्ति गंगायां भस्मास्थीनि नखानिच ।
शिरोरुहाण्यपि प्राज्ञः सविष्णोर्भुवनं वसेत् ॥२६॥

गरुड़पुराण अध्याय १० श्लोक ८ में लिखा है जो मनुष्य प्रथम अवस्था में पापकर के मर गये हैं और उनकी हड्डियां गङ्गा में पड़ी हैं वह स्वर्ग को जाते हैं ॥

यावदस्थि मनुष्यस्य गंगातोयेषु तिष्ठति ।
तावद्वर्ष सहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ॥८०॥

पद्मपुराण सप्तम क्रिया योगसार ।

अध्याय ३ से

॥ इतिहास ॥

इस पृथ्वीपर सोमवंशमें सनोभद्र नाम सब धर्मोंका जानने वाला एक राजा हुआ जिसकी प्रिया हेमप्रभा नाम पतिव्रता स्त्री थी। एक दिन राजाने मन्त्रियोंको सभा में बुलाकर कहा कि मैं पृथिवी की रक्षा करता हूं पुत्र आदि भी हैं शत्रुओं को भी नाश किया है अपने गोत्र और दानसे ब्राह्मणों की रक्षा भी की है। सज्जन और पुत्र बलवाहन समेत सब देवता भी प्रसन्न किये हैं परन्तु तो भी वृद्धावस्था में मेरा बल हर लिया गया है इस कारण मैं कर्म नहीं करता सामर्थ्य हीन पुरुष की लक्ष्मी शोभित नहीं होती और न आभूषण सहित स्त्री अच्छी लगती इसकारण अबमैं इस राज्यको पुत्रोंको देना चाहता हूं इसमें आप सबकी सम्मति क्या है इस पर सबने कहा कि यह आपका विचार ठीक है राजाने वीरभद्र यशोभद्र को बुलाकर अपना राज्य दे दिया इसी समय एक गृध्र स्त्री सहित सभामें आकर बैठा तब राजाने पूछाकि आपका आगमन किस हेतु

हुआ है तब गृध्र बोला कि इन दोनों के वैभव को देखने आया हूं पूर्व जन्ममें इन दोनों को देखाथा । तब राजाने कहा कि आपने इनके पूर्व जन्मका वृत्तान्त कैसे जाना गृध्रने कहा कि द्वापर युगमें यह सत्यघोष नाम शूद्रके गद और सगर यह दो पुत्र थे यह दोनों एक साथ मरगये । यमदूत बांधकर धर्मराजके सन्मुख लेगये धर्मराज ने चित्रगुप्त से पूछा कि इन के सब कर्मोंका वर्णन कीजिये चित्रगुप्तने कहाकि यह दोनों सत्य पुन्यकारी व्रतमें बड़े अन्तःकरण वाले हैं कुछ बुरे कर्म किये हैं जो सब कर्मके नाश करने वाले हो गये हैं उसी के कारण यह दोनों नरक जायंगे अर्थात् इन्होंने ब्राह्मणों को दान नहीं दिया धर्मराजकी आज्ञानुसार वह नरकको गये उसी दिन स्त्री समेत मुझको भी यम दूत लेगये । अब मेरे कर्मोंका वृत्तान्त सुनिये मैं पूर्व समय में सौराष्ठ देशका महा कुलीन वेदादि का जानने वाला सर्वग नाम ब्राह्मण हूं और यह शखिनी नाम पतिव्रता स्त्री है विद्या धन और अवस्था के मदसे मतावाला हो युवावस्थामें माता पिताकी मनसे सेवा नहीं की और निरादर किया हे राजन इसी अपराध से स्त्री समेत उपरोक्त पापियों में छोड़ दिया गया और उन के साथ हज़ार करोड़ युग और सौ करोड़ युग नरक में महान दुःखों को सहा फिर अन्तको स्त्री समेत मैं मरे हुओं के मांसखाने वाला गृध्र पक्षी के कुलमें उत्पन्न हुआ और यह टीड़ियों में । एक समय बड़ी आंधी आई जिससे यह दोनों उड़कर निर्मल गङ्गा जलमें गिर पड़े और गिरते ही मरगये और सब पाप जाते रहे तदन्तर उनके लेने को विमान लेकर दूत आये जिसमें बैठ वह विष्णुपुरको गये यह सुन राजा पुत्र और स्त्री समेत गङ्गाजी की सेवा में तत्पर होगये ।

अध्याय ७ में लिखा है कि जिसने गङ्गा में स्नान नहीं किया उसका मुख देखकर शीघ्र सूर्य्यके दर्शन करने चाहिये और ऐसे मनुष्यों का अन्नभी ग्रहण न करना चाहिये गङ्गाजीमें स्नान करने वालों को पाप उनकी देही को छोड़ कर गंगा न स्नान करके वालों की देहमें चले जाते हैं और जो कुएके जलमें भी गंगा यह नाम कह स्नान

करता है वह गंगास्नानके फलको पाता है जो गंगा की सरसों बराबर बालुको मृत्यु समयमें पाता है वह परमपद पाता है।

अध्याय ७ से।

॥ इतिहास ॥

त्रेतायुगमें धर्मस्व नाम ब्राह्मण जो धर्मात्मा शांतिशील आदि गुणोंसे परिपूर्ण थे गंगास्नान कर घर चलने की तय्यारी की। उस समय रत्नाकर बनियां सैकड़ों सेवकों सहित आया जिस में कालकल्प नाम ब्राह्मण भी था। उसने एक बैलको जो मार्ग के परिश्रमसे थक गया था अतिनिर्दई होकर मारा उसने क्रोधमें आकर कालकल्प को सींगों से मार डाला इसको देख धर्मस्वजी वहां गये और उसको गंगाजलकी बूंदोंसे सींचा परन्तु वह प्राणरहित होगया था इस कारण चैतन्य नहीं हुआ इतने में यमदूत वहां आये दोनोंमें वार्तालाप होने लगा।

यमदूत ने कहा कि यह दुराचारी पापी, हज़ार हत्या करने वाला कृतघ्नी, गऊ और मित्रोंका मारने बुरे आशय वाला है इसने सुमेर पर्वत के समान सोना चुराया है हज़ारों वरन् करोड़ों हत्या और स्त्रीहत्या की हैं इसने मातासे गमन किया है और प्रतिदिन गऊमांस खाया है और अन्योंके घरों को जलाया है सभामें पराई निंदा की है विधवाओं के गर्भोंको गिराया है, अतिथियोंको तलवारोंसे मरा है इसलिये इस महापापीको यमराजके पास जाने दो।

अ ां पापी दुराचारो ब्रह्महत्यासहस्रकृत्।
कृतघ्नश्चैव गोघ्नश्च मित्रघ्नश्च दुराशयः ॥५७॥
मेरुप्रमाणहेमानि हृतानि सुवहूनि च।
परदाराहृता नित्य मनेनातिदुरात्मना ॥५८॥

कोटिकोटि सहस्राणि जंतुनां विष्णुकिंकराः ।
कृताश्च बहुधा हत्याः स्त्रीहत्या च तथैव च ॥५९॥
अयं न्यासापहरणं स्वमातगमनं तथा ।
गोमांसभक्षणं चैव चकार प्रतिवासरम् ॥६०॥
गृहमायांतमतिथिं धनलोभेन सत्तम ।
अहनन्निशितैः खंगैर्निशाया यवनोपमः ॥६२॥

तब विष्णु दूतने कहा—

विष्णुदूत—यह तो आपने सत्य कहा परन्तु गंगाजलके सीं-चनसे यह पापोंसे छूटगया क्योंकि देहधारियोंके पाप जबतक ही र-हते हैं जब तक गांगजलकी बालू स्पर्श नहीं होती ।

अन्तको विष्णुदूत विष्णुलोकको लेगये अर्थात् गंगाजीके जलके सींचनेके प्रभावसे अत्यन्त पापी कालकल्पभीहरिके मन्दिरमें सालोक्य प्राप्त होता हुआ ॥ ६६ ॥ ६८ ॥ ९४ ॥

यह देख धर्मस्व ब्राह्मण गंगा तटपर गया और स्तुतिकी जिसको गंगाने वरदिया बहुतकालके पीछे मरनेपर उत्तम पदको पाया ।

श्रीमान् गंगाकी महिमा कहांतक आपको सुनाऊं जब विष्णु, शिव और ब्रह्माजी भी उनका सेवन करते हैं । तो फिर कौन ऐसा है जो उनका सेवन न करे जैसा कि—शिवपुराण ज्ञानसंहिता अ-ध्याय ४४ में लिखा है-।

गंगां च सेवते विष्णुर्गंगां च सेवते हरः ।
गंगां च सेवते ब्रह्मा को वा गंगा न सेवते ॥

इसके अतिरिक्त गंगाके समान कुछ कम यमुनाजीके गुण गाये हैं वेत्रमती के विषयमें पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय १३४ में लिखा है कि कलियुगमें दूसरी गंगा जिसके समान पृथ्वीमें कोई

तीर्थ नहीं है क्योंकि विष्णु आदि सब देवता उसमें स्थित रहते हैं जो एक वा दो वा तीन वार स्नान करताहै उसके पाप छूट जाते हैं।

वाराहपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय १३८में लिखा है कि नर्वदा शिवजीकी साक्षात् मूर्त्ति है इनके तप करनेपर शिवजीने कहा है कि हम लिङ्गरूप होकर सर्वदा तुम्हारे गर्भमें गणेश सहित निवास करेंगे। और इसी अध्यायमें गण्डकीके विषयमें लिखा है कि जब गण्डकीने अत्यन्त घोर तप किया तब विष्णु भगवान्ने कहा कि हम तुम्हारे तपसे प्रसन्न हैं तुम वर मांगो तब गण्डकीने भगवान्की स्तुतिकी और कहा कि आप मेरे गर्भमें निवासकर पुत्र हों तब विष्णु महाराजने विचार कर देखा तो जाना कि यह नदी हमारे संगके लोभसे वरकी याचना करती है तब भगवान्ने कहा कि हम निज भक्तोंके अनुग्रहके कारण शालिग्राम शिलारूप हो पुत्र तुल्य सर्वदा तुम्हारे उदरमें निवास करेंगे इसलिये तुम सब नदियोंमें श्रेष्ठ होगी और जो जीव तुम्हारे जलस्नान वा दर्शन पान आदि करेंगे वे निष्पाप हो उत्तमलोकको प्राप्त होंगे।

पंडितजी—ने कहा कि सेठजी अब आप अन्य नदियोंके माहात्म्यको छोड़कर गंगा उत्पत्तिका वर्णन कीजिये।

सेठजी—जो आज्ञा।

विष्णुपुराण अंश २ अ० ८ में लिखा है कि विष्णुके परमपदसे देवताओंकी स्त्रियोंके अनुलेपचन्दनादि बहानेवाली श्रीगङ्गाजी उत्पन्न हुई जो कि श्रीविष्णुजीके बायें चरणके अंगूठासे निकलीं और ध्रुवजीने अपने मस्तकपर धारण किया तिसके पीछे सप्तर्षियोंके लोकमें आई व उन लोगोंने प्राणायाम कर अपनी जटा धोई तिसके पीछे चन्द्रमण्डलको सींचती हुई सुमेरु पर्वतपर आई वहांसे जगत्के पवित्र करनेके लिये ४ दिशाओंको सीता अलकनन्दा चक्षुवभद्रा नामोंसे प्रसिद्ध हो चलीं उनमें अलकनन्दामें भी सात भेद हैं उनमें से जो गङ्गा नामसे प्रसिद्ध है उसे शिवजीने अपनी जटामें धारण करलिया

ब १०० वर्षतक न छोड़ा शिवजीकी जटासे भागीरथ राजाकी तपस्या से आई व सगरके पुत्रोंकी राखपर बहकर उनको तारती हुई ।

गंगाजीकी उत्पत्ति ।

श्रीमद्भागवत स्कंद ८ अध्याय २१ श्लोक ४ में लिखा है कि—

धातुः कमण्डलुं जलतदुरुक्रमस्य,
पादावने जनपवित्रतया नरेन्द्र ।
स्वर्ध्वन्यभून्नभसि सा पततीनिमार्ष्टि,
लोकत्रयं भगवतो विशदेवकीर्तिः ॥

हे राजन् इस वामनके चरण धोनेसे ब्रह्माजीके कमण्डलुका जल लोगोंको पवित्र करनेके लिये गंगाजी बना और विष्णु भगवान्की उज्वल कीर्त्ति आकाशमें गिरती हुई वह धारा तीनों लोकोंको पवित्र करती हैं ।

शिवपुराण धर्मसंहिता अध्याय ३३ में लिखा है कि गंगा विष्णुके चरणोंसे प्रादुर्भूत हो स्वर्गसे गिरती है ।

विष्णुपादाविनिष्क्रांता गंगा पतति वै दिवः ॥२८॥

वृहन्नारदीय पुराण अ० १५ श्लोक ९९ से १०६ तक महादेवजी भागीरथकी तपस्या से प्रसन्न होकर बोले कि हे राजन् वर मांगो । तब भागीरथने हाथ जोड़ कहा कि हे महेश्वरजी जो आप मुझको वर दिया चाहतेहैं तो गङ्गाजी देकर मेरे बड़ोंका उद्धार कीजिये १०३ तब शिवजी बोले कि हे राजन् हमने गङ्गा दी और तिनको परम गति अरु मोक्ष भी दी ऐसे कह शिवजी अन्तर्धान भये १०४—अरु शिवजी के मुकुटसे निकली लोकपावनी गङ्गाजी सब जगत्को पवित्र करती भागीरथके पीछे २ चली । १०५ तभीसे वह निर्मल सबके मल

हरने वाली गङ्गाजी सब लोकोंमें (भागीरथी) ऐसे विख्यात भई॥१०६

पद्मपुराण षष्ठ उत्तर खण्ड अ० २१ में लिखा है ।

पूर्वजानां हितार्थाय गतो सौ हैमके गिरौ ।
तत्र गत्वा तपस्तप्तं वर्षाणामयुतं तदा ॥ १० ॥
आदिदेवः प्रसन्नो भू यो सौ देवनिरंजनः ।
तेन दत्ता इयं गङ्गा आकाशात्समुपस्थिता ॥ ११ ॥
तत्र विश्वेश्वरो देवो यत्र तिष्ठति नित्यशः ।
गंगा दृष्ट्वाऽऽगतां तेन गृहीता जाह्नवी तदा ॥१२॥
जटाजूटं च संध्यार्य वर्षाणामयुतं स्थितम् ।
ननिःसृतातदा गंगा ईशस्यैव प्रभावतः ॥ १३ ॥
विचारितं तदा तेन क्वगता मम मातृका ।
स ध्यानेन विचार्यैवं गृहीता चेश्वरेण तु ॥१४॥
ततः कैलासमगमत्सतु भगीरथो नृपः ।
तत्र गत्वा मुनिःश्रेष्ठ ह्यकरोदुल्वणं तपः ॥१५॥

महादेवजी बोले कि भागीरथने अपने पुरुषाओंके हितके लिये हिमांचल पर जाकर दसहज़ार वर्ष तपस्याकी । १० । तब पारहित आदि देव प्रसन्न हुये । उन्होंने आकाशसे इन गङ्गाजीको दिया ।११। वहीं पर विश्वेश्वर देव सदा स्थित रहते हैं जब भागीरथने गङ्गाको आते न देखा जो महादेवजीकी जटाओंमें दस हज़ार वर्ष स्थितरही और उन्हीं के प्रभावसे न निकलीं ॥ १२ । १३ तब भागीरथने विचार किया कि हमारी माता कहां गई और ध्यानसे जाना कि महादेव जीने ग्रहण करली । १४ । तब भागीरथ महाराज कैलास पर गये और वहां जाकर घोर तपस्या की । १५ । महादेव प्रसन्न होकर बोले कि मैं गङ्गाजी को दूंगा उसी समय एक बाल गङ्गाजीको दिया ।।१६॥

भागीरथ गंगाको लेकर पाताल में जहां उनके पुरुखे भस्म हुए लेगये गङ्गाजीका पहिला नाम अलकनन्दा था ।

आराधितस्तदा तेन दत्तवानहमापगाम् ।
एकं केश परित्यज्य दत्ता त्रिपथगा तदा ॥ १६ ॥
स गृहीत्वा गतो गंगा पाताले यत्र पूर्वजाः ।
अलकनंदा तदा नाम गंगायाः प्रथमं स्मृतम् ॥१७॥

शिवपुराण सनत्कुमार संहिता अ० १२ में लिखा है कि शिवके दक्षिण नेत्रसे श्वेत कान्तिवाला जल निकला वही भूर्भूवादि सब लोकोंमें व्याप्त होगया और वही यहां स्थित होकर पृथ्वीमें आनेसे गंगा कहाती है हे ब्राह्मणो वह गंगा प्रथम नेत्रोंसे उत्पन्न हुई है ॥९॥

दक्षिणान्नयनान्मुक्तो जलविन्दुः सितप्रभा ।
सा सर्वेषु लोकेषु गता वै भूर्भुवादिकम् ॥
उपस्थार्थे मांगां प्राप्ता तस्मादङ्गेति चोच्यते ।
नेत्राभ्यां प्रथमाज्जात गङ्गेति द्विजसत्तम ॥

बाल्मीकि रामायण सर्ग ३९ श्लोक १२ से १५ तक ।

चोदितो रामवाक्येन विश्वामित्रो महामुनिः ।
वृद्धिं जन्म च गङ्गाया वक्तुमेवोपचक्रमे ॥
शैलेन्द्रो हि भवान् राम धातूनामाकरो महान् ।
तस्य कन्या द्वयं राम रूपेण प्रतिमं भुवि ॥
या मेरुदुहिता राम तयोर्माता सुमध्यमा ।
नाम्ना मेना मनोज्ञा वै पत्नी हिमवतः प्रिया॥
तस्या गङ्गेयमभवज्ज्येष्ठा हिमवतः प्रिया ।
तस्यां नाम द्वितीयाभूत्कन्या तस्यैव राघव ॥

रामचन्द्रजीने विश्वामित्र ऋषिसे गङ्गाका वृत्तान्त पूछा तो उन्होंने उत्तरमें कहा कि पर्वतोंका राजा हिमवान् जो धातुओंकी खानि तथा बड़ा है उसके यहां दो कन्या ऐसी उत्पन्न हुईं जिनके समान रूपमें पृथ्वीपर कोई नहीं था, हे राम ! सुन्दर कमर वाली मेरुकी बेटी मैनारूप्य हिमवान्की प्यारी स्त्री इन दोनोंकी माता थी अय राघव ! इस मैनासे हिमवान्की बड़ी बेटी गङ्गा और छोटी उमा उत्पन्न हुई। देखिये देवीभागवत स्कन्द ९ अध्याय ६।

लक्ष्मीसरस्वतीगङ्गा तिस्रोभार्या हरेरपि ।
प्रेम्णा समास्ता तिष्ठन्ति सततं हरिसंनिधौ ॥१७॥

अर्थात् लक्ष्मी, सरस्वती और गङ्गा तीनों विष्णुजीकी स्त्रियां हैं, वे तीनों समान प्रीतिके साथ विष्णुजीके पास सदा रहती हैं। 'गङ्गा' ने एकवार विष्णुका मुख कामातुर हुए कटाक्षके साथ मुसकराकर वारंवार देखना आरम्भ किया, विष्णुजी उस समय गङ्गाके मुखको देख कर हँस दिये, इस बातको देखकर लक्ष्मीने तो क्षमाकी परन्तु सरस्वतीने ऐसा न किया और क्रोधित होकर विष्णुसे बोली कि धर्मात्मा और श्रेष्ठ भर्त्ताको अपनी स्त्रियोंको समदृष्टिसे देखना चाहिये दुष्ट पतिका स्वभाव इसके विरुद्ध होता है, गंगाधर ! मैंने जान लिया कि तेरा सौभाग्य गंगापर अधिक है और लक्ष्मीपर उसके बराबर। अय प्रभु ! मुझपर कुछ नहीं अब मुझ अभागिनका यहां जीना व्यर्थ है तुमको सब मनुष्य तत्वरूप कहते हैं वे सब मूर्ख हैं वेदको नहीं जानते और न तेरी मतिको जानते हैं, इस बातको सुन सरस्वतीको क्रोधमें चूर देख विष्णुजी सभासे बाहर चलदिये। इसके पश्चात् श्लोक २८ से ४२ तक यह लिखा है कि उनके चलेजानेपर सरस्वती गंगाको नानाप्रकारकी गालियां देने लगीं और चौंटा पकड़नेको दौड़ी परन्तु लक्ष्मीजीने बीचबिचाव करदिया इसपर सरस्वतीने लक्ष्मीको शाप दिया कि उस विपरीतभावको देखकर यहीं तो नदी और वृक्षके समान बैठी रही सो बन जा अर्थात् नदी और वृक्ष होजा। गंगाने सर-

स्वतीकी यह दशा देखकर लक्ष्मीने कहा कि इस दुःशीला वकवासनी मरीको छोड़, देखें यह बुरे मुंह वाली, सदा कलह रखनेवाली मेरा क्या करलेवेगी लोग मेरे प्रभावको देखलें मैं भी शाप देती हूं कि यह भी कलियुगमें लोगोंके पाप ग्रहण करेगी सरस्वतीने इसपर गंगाको उलट कर कहा कि तू भी नदी बनकर लोगोंके पापको प्राप्त होगी।

इसके पश्चात् इसी अध्यायके ४३ श्लोकसे ९७ तक लिखा है कि चतुर्भुज विष्णुजी चारभुज वाले चार पारषदोंको साथ लेकर आये और सरस्वतीको पकड़ लिया और लक्ष्मीसे बोले कि तू एक कलासे धर्मध्वजके घर जन्म लेकर शङ्खचूड़की स्त्री बनेगी फिर भाग्यवश वृक्ष बन जावेगी पीछेसे फिर मेरी पत्नी बनेगी और एक कलासे शीघ्रपद्मावती नाम नदी बन जा और अय गंगा तू भी एक अंशसे नदी बन और भागीरथके तपसे महीतलमें जाकर समुद्रकी स्त्री हो जा एक कलासे राजा शान्तनुकी स्त्री बन और अय सरस्वती तू भी सौतोंके साथ लड़ाई करनेका फल भोग एक कलासे नदी बन ब्रह्माके भवनमें जाकर ब्रह्माकी स्त्री बनजा गंगा शिवजीके घर जावे मेरे यहां केवल लक्ष्मी ही रहे। क्योंकि वह मेरी सुशीला, क्रोधरहित स्त्री है मेरी भक्त तथा सतीरूप है बहुत स्त्रियोंको रखनेवाला सदा दुःखी रहता है और एक स्त्री वाला सदा सुखी। यह बात सुनकर तीनों देवी परस्पर लपटकर रोने लगीं और भी भयभीत होकर शापमोचनकी प्रार्थना करने लगीं। परन्तु गंगा बोली हे जगत्पति किस अपराधसे तुमने मुझे छोड़ दिया मैं शरीर त्याग करूंगी और तुझको निर्दोषका दोष लगेगा। जो पुरुष पृथ्वीमें निर्दोषस्त्रीका त्याग करता है वह चाहें सर्वेश्वर भी क्यों न हो नरकको प्राप्त होता है। फिर पीछे लक्ष्मीने बहुत कुछ सरस्वतीके बारेमें कहा विष्णुजी बोले कि अच्छा सरस्वती एक कलासे नदी बने और आधी ब्रह्माके घर जाय और आप मेरे घरमें रहें कलियुगके पांचहज़ार वर्ष गुज़रनेपरतुम्हारी तीनोंकी मोक्ष होगी और मेरे घर आओगी।

श्रीमान् पंडितजी अब हमारी आपसे यह प्रार्थना है जो गंगाजी इसलमय भारतखण्डमें बहरही हैं वह श्रीमद्भागवत के लेखानुसार वामन महाराजके चरणोंका धोवन या शिवपुराण धर्मसंहिता और विष्णुपुराणके कथनानुसार गंगा विष्णु महाराजके चरणसे उत्पन्न हुई है वा शिवपुराण सनत्कुमार संहिता लिखित शिवजीके दक्षिण नेत्रका श्वेत जल है वा वाल्मीकि रामायण के कहनेके अनुसार गंगा हिमवान्की बड़ी बेटी है अथवा वृहन्नारदीय उपपुराण के अनुसार शिवजीके मुकुटसे निकली हुई है याकि देवी भागवत स्कन्द ९ के अनुसार विष्णु महाराजकी तीनों स्त्रियों के लड़ने झगड़ने और कोसने पीटनेके कारण नदियां होगई हैं और साहिबान अंग्रेज़ बहादुरने तहक़ीक़ात कर यह तो प्रत्यक्ष प्रकार कर ही दिया है कि गंगा हिमालय पहाड़की गंगोत्री नाम चोटीसे निकल बंगालेकी खाड़ीमें जाकर हिन्दके समुद्रमें मिलती है।

आप किसको ठीक मानते हैं।

इसके उपरान्त पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अध्याय ३४ को पढ़िये तो मालूम हो जायगा कि श्रीगंगाजीने श्रीकृष्ण महाराजसे कहा है कि कलियुगके करोड़ों ब्रह्महत्यादिक पापोंसे युक्त पुरुष मेरे जलमें स्नान करते हैं जिसके कारण मेरा शरीर पापमय है बतलाइये मैं क्योंकर उस पापसे बचूं तब श्रीकृष्ण महाराजने कहा कि तुम प्राची सरस्वतीमें स्नान करो इसपर गंगेने कहा कि प्रतिदिन आ नहीं सक्ती तब श्रीमहाराजने कहा कि तुम त्रिस्पृशा व्रतको करो सब पापोंसे छूट जाओगी तब गंगेने व्रत करनेका प्रश्न किया और उसकी विधि पूंछी और व्रत किया और ब्रह्मवैवर्त्तपुराणके प्रकृति खण्ड अध्याय १० में लिखा है कि हे गंगे सहस्रों पापियोंके स्नानसे जो पाप तुमको होगा वह मेरे भक्तके दर्शनमात्रसे नाश होजायगा।

सहस्रपापिनां स्नानाद्यत्पापं वै भविष्यति।
मद्भक्तैकदर्शनेन तदेव हि विनश्यति ॥७१॥

श्रीमान् पण्डितजी—यदि आपका विश्वास वर्त्तमान धर्मसभाके माननीय पुराणोंपर है तो आप गंगाको क्यों पापी बनाते हैं जिसके लिये उसको त्रिस्पृशा व्रत अथवा विष्णुभक्तके दर्शन करनेकी आवश्यकता होती है इससे तो गंगा स्नान करनेवाले स्वयं त्रिस्पृशा व्रत अथवा विष्णुभक्तके दर्शनकर पापोंको दूर करलिया करें तो बहुत अच्छा हो इसके उपरान्त क्योंकि गंगाको क्लेश पहुंचाना अच्छा नहीं।

पंडितजी—श्रीमान् सेठजी अब इस विषयमें आपको कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं क्योंकि मेरी समझमें तो आगया कि उत्तम पुरुषोंका नाम तीर्थ है और उनके सत्संगसे अपने आचरणोंको सुधारना ही सच्चा स्नान है। क्योंकि जलसे शरीरशुद्धि होती है आत्मा की नहीं जैसा कि प्रथम आपने हमको सुनाया।

सेठजी—बहुत अच्छा मैं अब इस विषयको शीघ्र समाप्त करता हूं देखिये श्रीमहाराज उपरोक्त बातोंके उपरान्त श्रीमद्भागवत स्कन्द १२ अध्याय २ में कैसा स्पष्ट कहा है कि कलियुगमें लोग दूर जल को ही तीर्थ मानेंगे जैसा कि—

दूरे वार्ययनं तीर्थं ॥६॥

इस लेखसे ही तो स्पष्ट प्रकट होरहा है कि सतयुग, द्वापर और त्रेतामें जलको तीर्थ नहीं मानते थे फिर आप कलियुगमें दूर जलको क्यों तीर्थ मानते हैं।

इसके अतिरिक्त श्रीमद्भागवत माहात्म्य अध्याय १ में नारद मुनिने कहा है कि बड़े भयंकर, कुत्सित कर्म करने वाले नास्तिक पापी मनुष्य तीर्थों में वास करने लगे हैं इस लिये तीर्थोंका सार अर्थात् फल जाता रहा जैसाकि।

अत्युग्रभूरिकर्माणो नास्तिका रौरवा जनाः।
तेऽपि तिष्ठन्ति तीर्थेषु तीर्थसारस्ततो गतः ॥७१॥

श्रीमान् पण्डितजी वा नारदजी महाराजके कथनसे स्पष्ट, दुराचारी, वेदविरोधी, स्वार्थी आदि अवगुणयुक्त मनुष्य निवास करते हैं वहां जाने से कुछ लाभ नहीं होता इस लिये जो मनुष्य उत्तम पुरुषोंके सत्संगसे ज्ञान रूपी कुण्डके सत्यरूपी जलमें स्नानकर राग द्वेष रूपी मलको दूर करनेके अर्थके हेतु मानसतीर्थमें स्नान करते हैं वह मोक्षको प्राप्त होते हैं जैसा गरुड़पुराण श्लोक १११ में.

ज्ञानह्रदे सत्यजले रागद्वेषमलापहे ।
यः स्नाति मानसे तीर्थे स वै मोक्षमवाप्नुयात् ॥

अध्याय १ में कहा है कि जो मनुष्य ज्ञानी हैं वे परमगति अर्थात् मोक्षको प्राप्त करते हैं और दुःख सहित यमकी यातनाको प्राप्त होते हैं ।

येन सज्ज्ञानं शीलश्च ते यान्ति परमां गतिम् ।
पापशीला नरा यांति दुःखे नय यातनाम् ॥

और अध्याय १६ में कहा है कि तत्वके जानने वाले मोक्षको और धर्म करने वाले स्वर्ग पाते हैं और पापी दुर्गति को और पक्षी आदि केयहां उत्पन्न होकर मरते हैं ।

मोक्षं गच्छन्ति तत्वज्ञा धार्मिकाः स्वर्गतिं नराः ।
पापिनो दुर्गतिं यान्ति संसरन्ति खगादयः ॥ १६ ॥

श्रीमान् पंडितजी ने कहा कि सेठजी अब इस विषय को समाप्त कीजिये क्योंकि हमने पुराणोंके लेखसे ही तीर्थविषय के तत्वको जान लिया सच तो यह है कि पुराणलीला अपार है ।

सेठजी ने कहा कि जो आज्ञा श्रीमान् की है मैं उसीका पालन करूंगा परन्तु मुझको अभी इस विषयमें यह दिखलाना शेष रह गया है कि वेदानुकूल पुराणोंमें स्त्रियोंके लिये पतिसेवा पति

पूजा पतिकी आज्ञा पालन करनाही सर्वोपरि तीर्थ बतलाया है और उनको स्वतंत्रता पूर्वक किसी कार्य्यके करने की आज्ञा नहीं दी परन्तु फिर उन्हीं पुराणोंमें उपरोक्त लेखके विरुद्ध स्नान और दर्शन करने से नाना फलोंकी प्राप्ति उनको बतलाई है।

श्रीमान् पंडित जी सेठजी इस विषय में हमारी भी यही सम्मति है जो आपकी है अर्थात् स्त्रियोंको पतिसेवा के अतिरिक्त बिना उनकी आज्ञा के स्वतन्त्रता पूर्वक कोई काम न करना चाहिये इस लिये हम इस विषय को सुनना नहीं चाहते।

अन्य सज्जनोंने कहा कि हमको भी इस विषय में कुछ सुनना नहीं है क्योंकि हमने अन्य पुस्तकोंमें पढ़ा है और सुना है।

सेठजी—बहुत अच्छा जो आप सब महाशयोंकी आज्ञा है वही मेरा कर्त्तव्य है इसलिये अब मैं इस विषयको समाप्त करता हूं ओ३म् शम्।

इसी समय लाला रामसहायजीने बनारससे आकर श्रीमान् पंडितजीको पालागनकर उनके बड़े भाई साहिबका पत्र दिया जिसको पढ़ श्रीमान्ने कहा कि सेठजी मुझको मेरे बड़े भाई साहिबने बहुत शीघ्र एक मुक़द्दमेकी पैरवीके लिये बुलाया है। इसकारण मैं कल जानेका प्रबन्ध करूंगा और न जाने मुझको कितना समय इस कार्य्यके करनेमें लगे इसलिये अब आप पुराणके कथनको समाप्त कर दीजिये।

सेठजीने—यह सुन निवेदन किया कि अभी तो मुझको बहुत कुछ पुराणोंके विषयमें सुनाना है और विशेषकर दो तीन विषय तो ज़रूर ही कहना हैं और यह कार्य्य भी परमआवश्यक हैं इसकारण जब आप अपने भाई साहिबके कार्य्यसे आनन्दपूर्वक लौटकर आजावेंगे तब मैं फिर निवेदन करूंगा।

श्रीमान् पण्डितजी—बहुत अच्छा अन्य सब महाशयोंने कहा कि हमारी भी यही सम्मति है।

पण्डितजी—सेठजी आपने इस समय तक जो २ विषय सुनाये उनसे हमको अनेकान बातोंका पता लगा और अच्छे प्रकार यह प्रकट होगया कि जिस सूरतमें यह पुराण इस समय उपस्थित हैं वह कदापि महर्षि व्यासप्रणीत नहीं हैं। क्योंकि इनमें हमारे बड़ोंकी निन्दा भरी पड़ी है जिसको सुन २ कर मेरा हृदय फटा जाता है हां इनमें जो उत्तम २ बातें हैं वह व्यास महाराजकी कही हुई हों। सच तो यह है कि महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वतीजीने वेदोक्त धर्मको सर्वोपरि सिद्धकर ऋषियों और मुनियोंके महत्त्वको चिरायुकर भारतके सिरका मुकुट रख लिया और सत्यसनातनधर्मके ओ३म् रूपी झण्डेको भूमण्डलमें फहरा दिया।

हम तो आज मनसे उन महात्माके चरणोंको सिर नवाते हैं तदनन्तर आपको आशीर्वाद देते हैं कि परमेश्वर आपको सर्वप्रकारके आनन्द दे फिर अपने कटुवाक्योंके कहनेकी क्षमा चाहते हैं सेठजी आपकी सहनशीलताने आज मुझको पुराणोंके लेखोंपर अविश्वास करदिया ईश्वर आपको इससे भी अधिक सहनशक्ति प्रदानकरे जिससे आप नानाप्रकारके कटुवाक्योंको सहन करते हुए देशके उपकारमें तन, मन, धनसे लगे रहें।

अब अन्तको आपसे हमारी यही आशा है कि आप इस विषयको शीघ्र मुद्रित करा दीजिये जैसा कि हम आपसे प्रथम कहचुके हैं जिससे समस्त भारतवासियोंको पुराणोंके लेखोंपर विचार करनेका मौका मिले।

अन्य महाशय गणोंकी ओर से लाला केदारनाथजीने कहा।

कि हम आज श्रीमान् पण्डितजी और सेठजीको धन्यवाद देते हैं जिनकी परम कृपासे हम सबको यह अवसर मिला कि जिनके कारण पुराणोंकी अपूर्व और अद्भुत बातें कर्णगोचर हुई आगे और

सुननेकी आशा है इसके उपरांत श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वतीजी और उनके गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वतीजीका कोटानिकोट धन्यवाद देते हैं जिन्होंने भारतके धर्मकी डूबती हुई नय्याको अपनी विद्याके बलसे बचा लिया।

सेठजी—ने कहा कि प्रथममें उस परमेश्वर जगदीश्वर सर्वशक्तिमान्‌को कोटिशः धन्यवाद देता हूं जिनकी परम कृपा और दया अनुग्रहसे मेरी इच्छा पूर्ण हुई और आगेको मनोकामना सिद्ध होनेकी आशा है।

इसके पश्चात् श्रीमान् पण्डित रामप्रसादजी और आप साहिबानको धन्यवाद देता हूं जिन्होंने अपना अमूल्यसमय देकर मेरी मनोकामना सफल की। श्रीमान् पण्डितजी व अन्य महाशयोंने जो कुछ मेरे लिये कहा है मैं उसके लिये कृतज्ञ हूं और आशा है सदा मुझ सेवक पर ऐसी ही दया बनाये रहेंगे और धर्मके विषयमें निष्पक्षताकी कसौटीको अपने हाथसे न जाने देंगे इसके उपरांत ब्रिटिश गवर्मेण्टका धन्यवाद देता हूं जिनके राज्यमें आनन्द पूर्वक सभ्यता युक्त प्रत्येक पुरुष अपने विचारोंको प्रकट कर सक्ता है परमेश्वर हमारे शिरपर ऐसी न्यायशीला गवर्मेंटको सदा बनाये जिनके राज्यमें शेर, बकरी निर्वैर होकर एक घाट पानी पीते हैं।

इसके पश्चात् महाशय छुट्टमीलालने कवि नाथूराम शङ्कर शर्माका कहा हुआ निम्न लिखित भजन उत्तम प्रकारसे गायन किया।

दोहा—जिसकी माताने प्रजा, पाली प्रेम पसार।
उस प्रभुकी प्रभुता बनी लोकजीवनाधार॥

भजन।

टेक—सप्तम एडवर्ड महाराज, रक्षा हम सबकी करते हैं।

श्री, बल, बोध अखण्ड प्रताप, साहस धर्म सुकर्म कलाप । ऐसे सद्गुणधारी आप, मनमें भूल नहीं भरते हैं ॥ स० ए० म० र० ह० करते हैं ॥ १ ॥

अपनी माताके अनुसार, पूरा करें प्रजापर प्यार । किसके ऊपर परमउदार, हितका हाथ नहीं धरते हैं ॥ स० ए० म० र० ह० करते हैं ॥ २ ॥

भिक्षुक भीरु वीर भूपाल, पण्डित मूढ़ धनी कङ्गाल । हिलमिल काटें सुखसे काल, पीपी मारखाय मरते हैं ॥ स० ए० म० र० ह० करते हैं ॥ ३ ॥

चारों राजनीतिके अङ्ग, चलते रहें न्यायके सङ्ग । "शंकर" शासनके रस रङ्ग, डाकू देख २ डरते हैं ॥ स० ए० म० र० ह० करते हैं ॥ ४ ॥

जिसको सुनकर सब महाशयोंने करतलध्वनिसे प्रसन्नता प्रकटकर सप्तमएडवर्ड महाराजको धन्यवाद दिया इसके पश्चात् सेठजीने निम्नलिखित मन्त्रको पढ़ शान्ति की ।

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳशान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि ॥

श्री पण्डितजीने चलनेकी तैयारी की ।

सेठजीने—खड़े होकर हाथ जोड़ बड़ी नम्रतासे श्रीमान्‌की नमस्ते व अन्य महाशयोंको यथायोग्य कहा ।

श्री पण्डितजीने—प्रसन्नतापूर्वक आयुष्मान् कहा और चल दिये ।

अन्य सज्जनोंने यथायोग्य कहा ।

सेठजी—अपने कार्य्यमें लग गये ।

इति चतुर्दश परिच्छेदः

पुराणतत्त्वप्रकाशका द्वितीयभाग

समाप्तम् ।



विज्ञापन ।

निम्नलिखित पुस्तकों की प्रशंसा सर्वत्र हो रही है कि मैं क्या कहूं आप देख लीजिये यदि मन प्रसन्न हो इनका प्रचार कीजिये वा जो इनके दोषों को पब्लिक में प्रकाश कर उनके धनको बचाइये, जो आपका धर्म है ।

गृहस्थाश्रम अर्थात् नारायणी शिक्षाका सप्तम एडीशन छपकर तैय्यार होगया इसमें गृहस्थोंके हितकारक सम्पूर्ण विषय लिखे गये हैं पृष्ठ ६७० मूल्य १।) उत्तम छापा ।

२—स्वामी दयानंद सरस्वतीजी महाराजका जीवन चरित्र चारसौ पृष्ठ मूल्य १=) इसके पाठ करनेसे उत्तमता प्रकट होगी अधिक क्या कहैं ।

३—गर्भाधान विधि=) ४ वीर्यरक्षा=) ५पत्रप्रकाश≋) ६ सत्यनारायणकी प्राचीन कथा।—)॥ ७ विज्ञानंद —)॥८ धर्मबलिदान=)९नीतिशिरोमणि।—)१०हमशीघ्रक्यों मरते हैं ≡)११ यथार्थ शान्तिनिरूपण≡) ११ शान्तिशतक —)॥ (१२) सत्तोपदेश ॥) (१३) ऋषिप्रसाद महात्मा शौनकजीका उपदेश है)॥ (१४) रत्न जोड़ी इसमें लुकमान हकीमकी शिक्षा हैं)॥ (१५) रत्नप्रकाश महर्षियोंकी शिक्षा)॥ (१६) राधास्वामी मत परीक्षा —) (१७) नीतोक्त स्त्रीधर्म =) (१८) स्मृतिसे स्त्री धर्म —॥ इन दोनों पुस्तकोंको स्त्रियोंको पढ़ाना चाहिये (१९) स्त्री विलाप)॥ (२०) संध्या दर्पण —)। (२१) नित्य संध्या विधि)। (२२) नित्य हवन विधि)॥ (२३) चित्रशाला पुत्रियोंको पढ़ाइये)। (२४) संसार फल)॥ (२५) शिष्टाचार)॥

उत्तम भजनोंकी पुस्तकें

भजन सारसंग्रह —) स्त्रीज्ञानगजरा)॥ स्त्रीज्ञानगजरा तृतीय भाग =) अनाथपुकार)॥ भजनपचासा —)

नीचे लिखे चित्र बड़ी उत्तमतासे बनवाये गये हैं और मूल्य भी कम रक्खा है ।

(१) श्री १०८ स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी -) श्री पं० लेखराम जी -) महात्मा मुंशीरामजी -) पण्डित गुरुदत्तजी -) एक चित्र जिसमें उपरोक्त सब चित्र हैं -) स्वामी विरजानन्द सरस्वती -),

पुराणतत्त्व प्रकाश दोनों भाग ।

छपवाकर तय्यार होगये ५०० पृष्ठ मूल्य १॥) प्यारे भाइयो यह अठारह पुराणों की ख़ैरबीन है इस से आपको आधुनिक सनातन धर्मकी महिमा मालूम होगी आप अवश्य देखिये ।

निवेदन ।

(१) हमारी किताबोंको कोई साहिब बिना आज्ञाके न छापे (२) लेते समय हमारी मुहर देखलें । (३) पता साफ़ मय डाकख़ाने के लिखें । (४) लिखते समय अच्छे प्रकार मूल्य मय खर्च डाक आदि पर विचार करलें ताकि वी०पी०को वापिस करनेका मौक़ा न मिले ।

आपका—

चिम्मनलाल भद्रगुप्त वैश्य

तिलहर जि० शाहजहांपुर

पुराणसंग्रह ग्रंथमाला नं० ३।

* पुराणतत्त्वार्थं मयं प्रकाशयन् *

ओ३म्

पुराण-तत्त्व-प्रकाश

तृतीयभाग

जिसमें

श्रीमद्भागवत, देवीभागवत, पद्म, विष्णु, शिव, लिङ्ग, अग्नि, कूर्म, वाराह, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त्त, वामनादि पुराणोंसे बुद्धिसे विपरीत सृष्टिक्रमके विरुद्ध बातें गणेशोत्पत्ति तथा श्राद्धविषय का वर्णन किया गया है।

जिसको

चिम्मनलाल वैश्य कासगञ्ज निवासीने

लिखकर

'आर्यभास्करयन्त्रालय आगरा' में

मुद्रित कराया।

रजिस्टर्ड एक्ट २५ सन् १८६७ ई०।

प्रथमावृत्ति ११००] १९११ [मूल्य ।-) आना

प्रिंटर पं० बाबूराम शर्मा मुज़फ़्फ़रख़ां का बाग़ आगरा और पब्लिशर

मुं० चिम्मनलाल जी वैश्य तिलहर ज़िला शाहजहांपुर।

* ओ३म् *

समर्पण

प्रिय पाठकवृन्द !

मेरे परमपूज्य स्वर्गवासी पिता श्री० लाला टीकारामजी को सत्य-प्रिय भाषण करनेकी बड़ी रुचि थी, इस कारण उनका प्रेम भी ऐसे ही महापुरुषोंके साथ रहता था। मैं अपने पिताका एकलौता पुत्र हूं। मेरे पास ऐसा धनका भण्डार नहीं, जिससे पाठशाला, धर्मशाला, अनाथालय इत्यादि बनवाकर संसारमें उनके नाम स्मरणार्थ छोड़सकूं-हां मैंने बड़े परिश्रमके साथ इस ग्रन्थको तैयार किया है, जिसमें सत्य-प्रिय कथन है जिससे देशके उपकार होनेकी भी सम्भावना है उसीको आज मैं:—

अपने माननीय पिताके नाम पर समर्पण करता हूं।

हे शक्तिमान् प्रभो !

आप दयाके भण्डार हो। आपकी कृपासे यह पुस्तक लोक-प्रिय हो जिससे मेरे पिताका नाम चिरस्थायी रहे। ओं शम्।

आवश्यक सूचना।

इस पुस्तकका उर्दू अनुवाद उर्दू जानने वालोंके हितार्थ शीघ्र छपकर तय्यार हो जायगा अतएव कोई महाशय इस पुस्तक और इसके किसी परिच्छेदको उर्दू अनुवाद करनेका कष्ट न उठावें।

आपका शुभचिन्तक

चिम्मनलाल वैश्य

तिलहर, यू० पी०
ज़ि० शाहजहांपुर

स्थान आर्य्यमन्दिर
१५ फ़र्वरी सन् १९१२

* ओ३म् *

पुराण-तत्त्व-प्रकाश ।

तृतीय भाग

एक मास व्यतीत होने पर श्रीमान् पण्डित राम-प्रसादजी बनारस से लौट अपने गृह पर विश्राम करनेके पश्चात् एक दिन कई एक महाशयों के साथ सेठजी के यहां पधारे ।

प्रवेश ।

आर्य्य सेठ--श्रीमान् पण्डितजी और अन्य भद्रपुरुषोंको अपनी कोठीमें आते देख प्रसन्नचित्त हो उठकर दोनों हाथ जोड़ सब महाशयोंको नमस्ते कर कहा कि आइये, पधारिये, सुशोभित हूजिये-

श्रीमान् पण्डितजीने प्रेमपूर्वक आयुष्मान् कहा और विराजमान हुए ।

अन्य सब महाशय--यथायोग्य कह कर उचितस्थानों पर सुशोभित हुए ।

आर्य्यसेठ और सुयोग्य पण्डितजीके बीच प्रेमपूर्वक कुशल प्रश्न होने के पश्चात् श्रीमान् पण्डितजीने कहा कि सेठजी मेरा मन तो यह चाहता है कि मैं बहुत दिनों तक पुराणोंके विषयोंको सुनता रहूं परन्तु संसारीकार्य्य घलने लगगये हैं कि जिसके कारण अवकाश नहीं परन्तु फिर भी सुननेकी इच्छा है इसलिये आप संक्षेपके साथ सबसे वेद,

बुद्धि और सृष्टिक्रमके विपरीत और गणेश महाराज की उत्पत्ति, मृतकश्राद्ध सुनाकर पुराणलीलाको इस समय समाप्त कर दीजिये । और फिर समय मिलने पर देखा जायगा ।

आर्य्यसेठ--श्रीमान्‌की जो आज्ञा

अन्य महाशयोंने--सेठजी से कहा कि हमारी भी यही सम्मति है इसलिये आप अपने सेवकोंद्वारा पूर्वोक्त श्रोताओंको सूचना दे दीजिये कि कलसे सायङ्कालके ६ बजेके पश्चात् पुराणोंके विषय पर कथन होगा क्योंकि श्रीमान् पण्डितजी बनारससे आगये हैं और उनकी यही सम्मति है ।

आर्य्यसेठ--ने बहुत अच्छा कह सेवकोंको बुलाकर अच्छे प्रकार समझा दिया ।

सेवकों--ने सेठजीकी आज्ञानुसार सर्व महाशयोंको सूचना दी जिसके अनुकूल द्वितीय दिवस नियत समय पर महाशयगण पधारे ।

आर्य्यसेठ--श्रीमान् पण्डितजीको आते देख उठकर बड़े प्रेमसे नमस्ते कर कहा कि श्रीमान् आइये !

पण्डितजी--आयुष्मान् कह विराजमान हुए-और अन्य श्रोतागणोंमें से बहुधासज्जन आकर यथायोग्यके पश्चात् विराजते गये तब श्रीमान् पण्डितजीने कहा कि सेठजी अब आप प्रारम्भ कीजिये ।

—०—

पञ्चदश परिच्छेदः ।

आर्य्यसेठ--ने बहुत अच्छा कह निम्नलिखित मंत्रसे परमात्मा की प्रार्थना की —

ओ३म्-भद्रं कर्णेभिः शृणुयामदेवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥ य० २५ । २१ ॥

हे देवेश ! देव विद्वानो ! हम लोग कानोंसे सदैव भद्र कल्याण को ही सुनें अकल्याणकी बात भी हम कभी न सुनें । हे यज्ञनीयेश्वर ! हे यज्ञकर्त्तारो ! हम आंखोंसे कल्याण (मङ्गलसुख) को ही सदा देखें । हे जनों ! हे जगदीश्वर ! हमारे सब अङ्ग उपाङ्ग (श्रोत्रादि इन्द्रिय तथा सेनादि उपाङ्ग) स्थिर (दृढ़) सदा रहें जिनसे हम लोग स्थिरतासे आपकी स्तुति और आपकी आज्ञाका अनुष्ठान सदा करें तथा हम लोग आत्मा, शरीर इन्द्रिय और विद्वानोंके हितकारक आयुको विविध सुखपूर्वक प्राप्त हों अर्थात् सदा सुखमें ही रहें ।

पुनः सेठजी ने कहा कि देखिये ।



विष्णुपुराण ।

अंश १ अध्याय १३ से

राजा वेनके मरने पर देवताओंका उसकी भुजाओं को मथ निषाद और पृथुका उत्पन्न करना ।

राजा अंगकी सुनीथा नाम पत्नी से वेन नाम पुत्र हुए जो पिताके परलोकगमन होने पर गद्दी पर बैठे जिन्होंने राज्यसिंहासन को सुशोभित करते ही राज्य भरमें ढोंढ़ी पिटवादी कि हमारे राज्य में कोई मनुष्य यज्ञ, दान, होम न करे क्योंकि योग भोगका करने वाला हमारे सिवाय कोई दूसरा नहीं । हम ही यज्ञोंके स्वामी हैं। इस पर ऋषियोंने राजाको बहुत समझाया परन्तु जब उन्होंने उनकी बातको न माना तब सब मुनियोंने कोपकर आपसमें सम्मति कर कहा कि इस पापी राजाको मारडालना चाहिये क्योंकि यह सबके स्वामी विष्णु महाराजकी निन्दा करता है यह कहकर मंत्र पढ़ कुश को जल में डुबो उसके ऊपर जल छिड़क दिया राजा तो भगवान्‌की निन्दा करने से प्रथम ही मर चुका था परन्तु उस पर जलके पड़नेसे अच्छी भांति मृतक होगया ।

इत्युक्त्वा मन्त्रपूतैस्ते कुशैर्मुनिगणानृपम् ।
निजघ्नुर्निहतं पूर्वं भगवन्निन्दनादिना ॥२९॥

राजाके मरनेके थोड़े दिनोंके पीछे चारों तरफसे धूल उड़ती देख ऋषियों ने लोगों से पूछा कि यह धूल कहां से आती है तब सबने उत्तर दिया कि श्रीमहाराज राज्य विना राजा के हो गया है इससे चोर लोग सबका धन लूटते और धूल उड़ाते हैं तब सब मुनियों ने पुत्र होनेके अर्थ मन्त्र पढ़कर राजाकी जांघ मथी

उसमें से एक अतिकुरूप बहुत ही छोटे डोलका काला मनुष्य निकला और ऋषियों से पूछा कि मैं क्या करूं तब उन्होंने उत्तर में कहा कि " बैठ " इससे उसका नाम निषाद हुआ और उसके वंश वाले तब ही से विन्ध्याचल पर्वत पर बसने लगे और बहुधा इन लोगोंकी चोरी ही जीविका थी। उस पापरूपी निषाद के होने से राजाका शरीर निष्पाप होगया।

तेन द्वारेण तत्पापं निष्क्रान्तं तस्य भूपतेः।
निषादास्ते तथा जाता वेनकल्मषसम्भवाः॥३७॥

फिर मुनियोंने राजाके शरीरका दाहिना हाथ मथा उससे महाप्रतापी सब शुभगुण सहित पृथु जी उत्पन्न हुए जिनका शरीर अपने तेज से ऐसा प्रकाशित था मानो दूसरी अग्निकी मूर्त्ति थी।

दीप्यमानःस्ववपुषा साक्षादग्निखिज्वलन्॥

ऐसे राजाके होते ही आकाशसे महादेवके कवचादि सब आये और सब लोग प्रसन्न हुए इनके होने से वेन जैसे पापी राजा भी स्वर्गको चले गये क्योंकि पुं नाम नर्क से जो रक्षा करे उसीका नाम पुत्र है।

तत्पुत्रेण च जातेन वेनोऽपि त्रिदिवं ययौ।
पुंनाम्नो नरकात् जातः स तेन सुमहात्मना॥४१॥

राजा पृथुने गद्दी पर बैठकर प्रजाको सब प्रकार से आनन्दित किया और जब कभी राजा कहींको जाते तो नदियां थाही होजातीं समुद्रका जल थम जाता पृथ्वी में अन्न विना जोते केवल चिन्तना करने से ही उत्पन्न होजाता गायें इच्छानुसार दूध देती थीं परन्तु जिस समय कोई राजा न था उस समय अन्नादिका होना बन्द होगया था इससे प्रजा बड़ी दुःखी थी जब यह राजा हुये तब प्रजा जो भूखोंमर रही थी इनकी शरण में आई और निवेदन किया कि विना राजाके होने से पृथ्वी ने अन्नादि चुरा लिया इस हेतु सब प्रजा दुःखी है अब

आप अन्नादि देकर रक्षा कीजिये—यह सुन राजा धनुषबाण लेकर क्रोध से धरणीके मारनेके लिये दौड़े वह गायका वेष धर भागी ब्रह्म आदि लोकोंको गई परन्तु जब घूमकर देखा तब२ राजाको धनुष बाण लिये पीछे खड़ा पाया इससे अपना बचाव न जानकर मारे भय के कांपती हुई राजा से बोली कि हे नाथ! क्या हमारे मारने से स्त्री-हत्याका आप को कुछ दोष न होगा। हे नृप! यदि आप प्रजाके उपकार के अर्थ हमको मारा चाहते हो तो मेरे न होने पर प्रजा कहां रहेगी यह सुन राजा ने कहा कि तुम हमारी आज्ञाके प्रतिकूल चलती हो इसलिये मैं तुमको बाणोंसे उड़ादूंगा और मैं अपने योगबल से प्रजाको रक्खूंगा यह सुन धरणी फिर कांपने लगी और राजासे प्रार्थना कर कहा कि सब कार्य्य उपाय से सिद्ध होते हैं इसलिये हे नरनाथ! जो मैं आपको उपाय बतलाती हूं आप वही कार्य्य करें अन्नादि सब ओषधियां हम में पचगई हैं सो आप दूधरूप दुहलीजिये आप बहुत प्रकार बछड़े बनाइये जिससे हम पल्हाकर सब पदार्थ चुआदेंगी परन्तु हमको बराबर भी अवश्य करदीजिये जिससे दूधरूपी ओषधियां अपने २ स्थान पर जमें यह सुनकर महाराज पृथुजीने जो सर्वत्र पृथ्वी पर पहाड़ ही पहाड़ थे धनुषकी नोक से तोड़ फोड़ कर दूर २ स्थापित करदिये।

तत उत्सारयामासशैलान्शतसहस्रशः।
धनुषकोट्या तदा वैन्यस्तेनशैलाविवर्धिताः॥८२॥

प्रथम की सृष्टि में ग्राम पुर नगरादि तथा खेतीपाती कुछ नहीं होती थी महाराज पृथुने पृथ्वी को बराबर कर ग्राम पुरादि बसा दिये और लोग खेती पाती भी करने लगे चूंकि राजाने पृथ्वीके प्राण छोड़दिये इसलिये वह उसके पिता ठहरे इसीसे इसका नाम पृथ्वी हुआ।

यही कथा मत्स्यपुराण अध्याय १० में लिखी है

कण्ड मुनिसे प्रम्लोचा अप्सरा में गर्भ रहना फिर मुनिके श्रापके भयसे अप्सरा को मूर्च्छाका आना और गर्भका पसीना की राह निकलना जिस को उसने वृक्षों से पोंछा फिर वायुने इकट्ठा किया और चन्द्रमा ने पोषण किया उससे मरीषाका जन्म होना ।

अंश १ अध्याय १५ ॥

जब प्रचेतसा तपस्या कर रहे थे उस समय कोई राजा नहीं रहा था क्योंकि प्राचीन बर्हिषको नारदजीने ऐसा उपदेश किया था कि वे सब छोड़ वनको तप करने चले गये थे इसलिये पृथिवी पर सब वृक्ष ही वृक्ष होगये कहीं जोतने बोनेको धरती नहीं रही इसलिये बहुतसी प्रजा नष्ट गई क्योंकि वृक्षोंके कारण पवन भी नहीं चलती थी जब प्रचेतसों तपस्या करके निकले तब वृक्षोंको देख बड़ाही कोप किया और मुख से पवन व अग्नि छोड़ी सब वृक्ष जलने लगे पहिले वायु के ओर से वृक्ष उखड़ पड़ते फिर अग्नि से जलते फिर पवन उड़ा ले जाती जब इस भांति बहुत वृक्ष जल गये थोड़े ही रह गये तब वृक्षोंके राजा चन्द्रमाजी ने प्रचेतसों से कहा राजकुमारो ! कोप शान्त करो इन वृक्षोंसे भी आप लोगों का कुछ काम निकलेगा अर्थात् इनके एक कन्या है लेजाओ आधा तुम्हारी तपस्याके तेज से आधा हमारे तेज से इसमें महाप्रतापी दक्ष प्रजापति नाम पुत्र होगा उससे बड़ी सृष्टि चलेगी यह कन्या वृक्षोंको इस भांति मिली कि एक कण्डु नाम मुनि थे वे गमतीके नदीके किनारे तपस्या करते थे उनके चलायमान होनेके लिये इन्द्र ने प्रम्लोचा नाम अप्सरा भेजी उस ने मुनि को अपने वशमें करलिया मुनि १०१ वर्ष तक मन्दराचल पर जाय उसके संग बिहार करते रहे एक दिन उसने

कहा कि मैं इन्द्र लोकको जाया चाहती हूं आज्ञा दीजिये मुनि उसमें आसक्त तो थे ही कहा कुछ दिन और रह जाओ आपके भयसे वह रह गई इतने में १०१ वर्ष व्यतीत होगये उसने मुनि से कहा फिर मुनिने उसको खिलमाया इसी भांति कई बार कहा सुनी हुई एक दिन मुनि उठे और घबराते हुए नदीकी ओर चले, अप्सराने कहा कि जाइयेगा मुनिने कहा बोलो मत संध्या करनेका समय है काल बीत जावेगा उसने हँसकर कहा सैकड़ों वर्ष होगये आपको सन्ध्या करते नहीं देखा मुनिने कहा सत्य २ कहती है या हंसी करती है। हमको तो तू प्रातः सन्ध्याके पीछे मिलीथी यह सायं सन्ध्या का समय है सत्य २ बताओ कितना समय हुआ हास्य न कर। अप्सरा बोली हास्य नहीं करती आपको मेरे संग विहार करते हुए ९२७ वर्ष ६ मास ३ दिन बीते ऋषि बोले सत्य ही कहती है हम तो यही मानते हैं तुम्हारे संग विहार करते एक ही दिन बीता अप्सरा ने कहा कि आपके सामने मैं झूंठ क्यों कहती फिर पूंछने पर तो ऐसे महात्मा के सामने कोई भी झूंठ न कहेगा यह सुन मुनिने बड़ा पश्चात्ताप किया हाय मैंने अपनी सब तपस्या नष्ट करदी नाना प्रकार से विलाप कर उससे कहा कि हे दुष्टे! तू अभी इन्द्रलोकको जा नहीं तो मैं तुझे भस्म करदूंगा इतने में उसको भी मूर्च्छा आगई सर्वाङ्ग से पसीना बहा मुनिने बड़ा कोप करके फिर कहा कि चली जा यह सुन मुनिके आश्रम से प्रम्लोचा आकाशमार्ग हो भागी और वृक्षोंके पल्लवों से अपना पसीना पोंछने लगी इस कारण जो ऋषिके बीज से उसके गर्भ था वह रोमोंकी राह निकल वृक्षों में हो रहा पवन ने उसको उड़ा इकट्ठा कर दिया और चन्द्रमाजी कहते हैं कि हमने अपने किरणों से पोषण कर बढ़ाया उसी से मारिषा नामक कन्या होगई वही मारिषा नामनी कन्या वृक्ष आप को देते है।

नोट—पण्डितजी अब तो आप समझगये होंगे कि जिस ऋषिने ९०७ वर्ष इन्द्रकी भेजी अप्सराके साथ रमण किया परन्तु ऋषिको संध्या ही मलीन हुई ऐसी बेहोशी तो मदोन्मत्तको भी नहीं हो सकती इस पर तुर्रा यह ९०७ वर्ष रमण करने में केवल एक ही बार गर्भ रहा और वह भी पसीनेके मार्गसे निकल गया— हमने तो अभी तक वैद्यकग्रन्थों एवं डाक्टरी से भी यही देखा सुना है कि पसीना एक प्रकारका नालुषविष है। फिर इस पर वह गर्भ पसीना होकर निकलगया जो पेड़की पत्तियोंमें लगगया जिसको वायुने उड़ाकर इकट्ठा किया और चन्द्रमाने किरणोंसे पोषण किया कहिये श्रीमान् यह किस नियमसे उत्पत्ति है।

अंश ४ अध्याय १० से

बलदेवजी महाराजका विवाह और रेवतीजीके छोटे करने की सहज रीति।

रैवत नाम राजाकी रेवती नाम एक कन्या थी राजा उसके विवाह विषयमें सम्मति लेनेके लिये ब्रह्माजीके पास गये वहां हा हा हूं हूं नाम गन्धर्व गीत गारहे थे जब गाना बन्द हुआ तब राजाने अपनी कन्याके विषयमें पूछा कि किस राजाके साथ विवाह करें तब ब्रह्माजी ने कहा कि आप किस २ राजाके साथ विवाह करने की इच्छा रखते हैं यह सुन राजाने कह सुनाया जिसको ब्रह्माजीने कहा कि जिन २ के यहां आपको विवाह करना अभीष्ट है अब उनके पुत्र पौत्र प्रपौत्र तो क्या सन्ताननें भी कोई नहीं रहा इस गानके सुननेमें बहुतसी चतुर्युगियां बीतगईं इस समय अट्ठाईसवीं चतुर्युगीके द्वापर का अन्त हो रहा है इससे अन्य किसीको यह कन्या दीजिये आपके भी बन्धुवर्ग मित्रादि सब नष्ट होगये हैं तब राजा ने फिर पूछा कि यदि वह लोग नहीं रहे तो जो विद्यमान हैं उनमें से बतलाइये किसको कन्या देवें तब ब्रह्माजी ने अनेकप्रकार के गुणगाकर कहा कि परमात्मा परब्रह्म ने अपने अंश से आजकल पृथ्वी के द्वारिकानामपुरी से अवतार लिया है जो बलदेवजीके नाम से

प्रसिद्ध है वही उत्तमवर है यह सुन राजा पृथ्वीतल पर आये और देखा तो सब मनुष्य छोटे २ और बलहीन होगये थे। राजाने द्वारिकामें जाकर ब्रह्माजी की आज्ञानुसार बलदेवजीके साथ विवाह करदिया— परन्तु जब बलदेवजीने देखा कि यह स्त्री तो बहुत ही लम्बी है इसलिये अपने हल से दबादिया जिससे उस समयकी जैसी सब स्त्रियां थीं वैसी रैवती भी होगई।

नोट—कहिये श्रीमान् इस बातका भी कुछ ठीक है कि गान सुनते २ बहुतसी चतुर्युगियां व्यतीत होगईं—बलदेव महाराजको पौराणिक पुरुषोंने परमेश्वरका अवतार बताया है फिर उन्होंने मदिरापानके समाचार और सूतका मारना लिखा है क्या श्रीमान् अवतारियोंके यही कार्य्य हैं अब यह भी सुन लीजिये कि स्त्रियोंके छोटा करनेका सहज उपाय बलदेवजी महाराज का हल था।

अंश ४ अध्याय ५ ॥

राजा निमिका मरना फिर देवताओंके मथने पर एक पुत्रका उत्पन्न होना।

एक समय राजा निमिने यज्ञ करनेका विचार कर अपने पुरोहित वसिष्ठजीसे कहा कि आप हमको यज्ञ कराइये यह सुन वसिष्ठ महाराजने कहा कि राजन्! आपसे ५०० वर्ष आगे इन्द्रने यज्ञ कराने का न्योता दिया है इस हेतु मैं प्रथम उनका यज्ञ कराकर तुम्हारा यज्ञ कराऊंगा ऐसा न हो कि तुम किसी औरको बुलालो राजाने इस का कुछ उत्तर न दिया वह इन्द्रके यहां यज्ञ करानेको चले गये इधर निमिने गौतमादिको बुला यज्ञ करानेका आरम्भ कर दिया उधर वसिष्ठजी यज्ञ समाप्त कराकर इधर आये देखा कि आधा यज्ञ होगया क्रोधित हो सोते हुए राजाको शाप दिया कि जाओ तुम्हारी यह देह न रहे राजाने उठने पर शापका वृत्तान्त जान यह कहा कि इस दुष्ट गुरुकी भी देह न रहे शरीर छोड़दिया राजाके शापसे जब वसिष्ठजीका देवलोक हुआ तो उनका तेज मित्रावरुण मुनिकी देहमें

समागया और उर्वशी अप्सराको देख—च्युत हो एक कलशमें गिरा जिससे वसिष्ठ अगस्त दो पुत्र उत्पन्न हुए उधर यज्ञ समाप्त होने पर जब देवता अपना २ भाग लेनेको वहां आये तब गौतमादि ऋषियोंने कहा कि राजा निमिका मृतक शरीर तैलमें यथावत् रक्खा हुआ है आप सब आशीर्वाद देकर जिलाइये देवोंने निमिको बुलाया तब उन्होंने कहा कि देवगण आप सब लोग संसारके ऊपर कृपा करते हैं पर यह नहीं जानते कि उत्पन्न होनेसे मरनेमें कितने २ कष्ट होते हैं इसलिये अब हम जीना नहीं चाहते वरन् प्रत्येक प्राणीकी पलक पर बैठना चाहते हैं जिससे सबको स्मरण रहे। यह सुन देवोंने कहा कि अच्छा। उसी समयसे प्राणी पलक मारने लगे और राजाके पुत्र न होने के कारण राजाहीन राज्य रहनेसे चोरोंने बड़ा उपद्रव मचाया तब ऋषियोंने आकर राजाके शरीरको मथा जिससे एक पुत्र हुआ उसका नाम जनकविदेह होनेसे विदेह मथे जानेसे मिथिये नाम उस बालक के हुए।

नोट—पण्डितजी न्यायशास्त्रमें विद्याका लक्षण इस प्रकार लिखा है कि:—

अनित्याऽशुचि दुःखानात्मसुनित्यशुचि सुखात्मख्यातिरविद्या—

तब क्या वसिष्ठ जैसे ऋषिको इतना भी ज्ञान न था कि यह शरीर तो वैसेही अनित्य है फिर इस प्रकारका शाप देना कि तेरी यह देह न रहे उनकी विद्वत्ताका परिचय करा रहा है अब लीजिये पाठकगण! विष्णुपुराणके निर्माताकी बुद्धिसे भी परिचय प्राप्त कीजिये जब वसिष्ठ मरने लगे तो उनका तेज तो मित्रवरुणकी देहमें समागया और उर्वशी अप्सराको देख———जो कलशमें गिरा उससे दो पुत्र होगये एक वसिष्ठ दूसरे अगस्त कहिये श्रीमान्! यह कहां तक विद्या और बुद्धिके अनुकूल है।

राजाके मरने पर भी यज्ञ होता रहा परन्तु अब तो सूतकको मान सन्ध्यादि कर्मोंको छोड़देते हैं पूर्णाहुतीके समय देवता आये तो उन्होंने उसे जीवित कर दिया परन्तु वसिष्ठ ऋषिकी किसीने कुछ

भी सुध नहीं ली। क्या यहां भी धनही के गीत गाये गये तिस पर भी जब ब्राह्मणोंने निमिको पुनर्जीवित कर दिया तो राजाने कहा कि मैं अब जीना नहीं चाहता क्योंकि इसमें बड़े क्लेश हैं। प्रत्येक प्राणीके ऊपर उठना, नीचे गिरना, सकोड़ना, फैलाना और चलना यह पांच कर्म हैं। एवं पंचप्राण पंचउपप्राण और ग्यारहवां जीवात्मा जिनकी रुद्रसंज्ञा है उनमें उपप्राणोंमें जो कूर्म हैं उसका कार्य्य पलक खोलना, मूंदना फिर भला यह कैसे माना जाय कि निमि जबसे पलकों पर आये तब से यह क्रिया हुई अब राजाके मृतक शरीरके मथनेसे पुत्रकी उत्पत्ति होना भी बाज़ीगरीका खेल है यदि यह सत्य है तो पुत्रहीन पुरुषों को इस औषधिसे अपना कार्य्य सिद्ध कर सुख प्राप्त करना चाहिये।

अंश ५ अध्याय २५॥

श्रीमान् बलदेवजी महाराज का मदिरापान कर यमुना को खैंचना

मानुषरूपधारी धरणीधर शेषावतार बलदेवजी गौओंके साथ वृन्दावनमें विहार करते थे जिन्होंने पृथ्वीका अतुलना भार उतार डाला था कारण पाय पृथ्वीमें विचरते थे उनके भोगके लिये वरुणजी वारुणीसे बोले कि हे मदिरे! जिससे तू बलदेवजीको सदां प्यारी है तेरे पानकी उनको इच्छा बनी रहती है इसलिये अब तू उन्हींके भोगके लिये उनके निकट जा यह सुन वह वृन्दावनमें कदम्बके खोढ़ले में आय बसी श्रीमान् बलदेवजी महाराज भी विचरते २ वहीं आन पहुंचे क्योंकि उसकी महक उनको दूरसे ही आरही थी। निकट पहुंच मदिरा की धारा देख बलदेवजी परम आनन्दित हुए और गोप गोपियोंके साथ यथेष्ठ पान किया जब अच्छे प्रकार मतवाले होगये तब यमुना से कहा कि हे यमुने! हमको गर्मी अधिक जान पड़ती है तुम यहां चली आओ हम स्नान करेंगे। यमुनाने मतवाले समझ उन की बात पर कुछ ध्यान नहीं दिया तब क्रोधित हो हलको किनारे लगाय खींचा और कहा कि हे पापे! न आई न आई अब जहां चाहे तहां चली तो जा जब ऐसा हुआ तब यमुना उस स्थानको छोड़ जहां

बलदेवजी महाराज थे वहां जाकर बहने लगी फिर शरीर धारण कर प्रणाम कर बोली कि राम! हम पर कृपा कीजिये हमको छोड़दीजिये तब बलदेवजीने कहा कि तू हमको और हमारे बलको नहीं जानती हम खींच कर तेरे सहस्त्रधारा कर देंगे जिससे जहां चाहे वहां लांघ कर चले जावें यह सुन यमुनाने बड़ी स्तुति की तो अपना हल छुवका दिया फिर वह वहां बहने लगी जिसमें बलदेवजीने अच्छे प्रकार स्नान किया।

नोट—श्रीपण्डितजी इस कथासे बलदेवजी महाराजका मदिरापान करना प्रकट होता है परन्तु यह बात देवताओंके विपरीत है तिस पर बलदेवजी महाराज विष्णुमहाराजके भाई एवं अवतारी थे। फिर न मालूम व्यासजीने इस कथाको क्यों लिखा फिर अन्य बातों का क्या कहना।

श्रीमहाराज पण्डितजी—ने कहा कि सेठजी आज यहां ही विश्राम दीजिये।

आर्य्यसेठ—बहुत अच्छा।

इतनेमें सब महाशय चलदिये तब सेठजी ने हाथ जोड़ सब महाशयोंको नमस्ते की।

पण्डितजी ने आयुष्मान् और अन्य सब यथायोग्य कह चलदिये। सेठजी अपने कार्यमें लगगये।

इति पञ्चदशपरिच्छेद।

अथ षोडश परिच्छेद ॥

आर्य्यसेठ—श्रीमान् प० जीको आते देख प्रेमपूर्वक नमस्ते कर कहा कि आइये—विराजिये ।

पण्डितजी—आयुष्मान् कह कर बैठ गये इतनेमें अन्य महाशय भी आये और यथायोग्यके पश्चात् विराजमान हुये । तदनन्तर

श्रा० पं० जी ने कहा कि सेठजी हम विष्णुपुराणसे तो वेद और बुद्धि तथा सृष्टिक्रमके विपरीत बातोंको सुन तृप्त होगये अब आप पद्म, ब्रह्माण्ड, वामन, पुराणसे सुनाइये ।

सेठजीने—बहुत अच्छा कह यथाक्रम कहना प्रारम्भ किया ।

पद्मषष्ठ उत्तरखण्ड

अध्याय ६

बलके शरीरसे धातुओंकी उत्पत्ति ।

जब विष्णु और जालंधरका घोरयुद्ध होरहा था उस समय बलसे इन्द्र लड़नेके लिये सम्मुख आये तब उन्होंने भयङ्कर शब्द किया जिसको सुन बल हंसे तो उनके मुखसे मोती निकलने लगे ॥१६॥

ननादेन्द्रस्ततोभीमं तच्छ्रुत्वा सबलोहसत् ।
हस्तस्तस्वनिश्चेरुर्मुखतो मौक्तिकानि च ॥

प० षष्ठोत्तरखण्ड अ० ६ श्लो० १६ ॥

तब इन्द्रने अंगकी अभिलाषाके कारण उससे संग्राम न कर उसकी अत्यन्त बलकी प्रशंसा करी तब बलने कहा बरदान मांगो । इसको सुन इन्द्रने कहा कि यदि आप मुझसे प्रसन्न हैं तो आप अपना शरीर दीजिये बलने कहा कि शस्त्रोंसे काट कर हमारा शरीर लीजिये क्योंकि सज्जनोंका परमकार्य्य यही है कि परोपकार करें तब इन्द्रने मुद्गरसे शरीर काटनेका आरम्भ किया परन्तु जब उसका शरीर मुद्गर से न कटा तब सारथीके कहनेसे वज्रसे काटना आरम्भ किया तो अंगका एक भाग तो कनकाचलमें, दूसरा हिमाचलमें, तीसरा गोनगमें, चौथा गंगाजीमें, पांचवां मन्दराचलमें और विजयके अंगसे उत्पन्न छठा भाग रत्नाकारमें गिरा ॥ २३ ॥

वज्राकरे पपातांशः षष्ठश्चविजयाङ्गजः ।

शुद्ध कर्म और उसके जातिमें शुद्ध होनेके कारणसे उसकी देहके अङ्ग रत्नोंके बीजके भावको प्राप्त हुये ॥ २४ ॥

तस्य जातिविशुद्धस्य परिशुद्धेन कर्मणा ।

कायस्यावयवाः सर्वे रत्नबीजत्वमागताः ॥

वज्रसे हाड़ोंके जो कण गिरे वह छः कोणकी मणि होगये नेत्रों से इन्द्र नीलमणि हुई कानों से माणिक्य हुये ।

वज्रादस्थिकणाःकीर्णाः षट्कोणामणयो भवन् ।

घावसे पद्मराग मणि हुई मेद से मरकतमणि जीभ से मूंगे दांतों से मोती ।

मज्जोद्भवं मरकतं गारुत्मतं भूजसा ।

कांस्यंपुरीषं रजतं वीर्यं ताम्रञ्च मूत्रजम् ॥

अ० ६ । २७ ।

मज्जा से मरकतमणि नस से गारुत्मनमणि विष्टा से कांसा वीर्य्य से चांदी मूत्र से तांबा ।

अङ्गस्योद्वर्त्तनाज्जातं पित्तलं ब्रह्मवीतिकाः ।

अङ्गके उद्वर्त्तन से पीतल शब्द से वैडूर्यमणि और श्रेष्ठ रत्न ।

नादाद्वैर्यमुत्पन्नं रत्नं चारुतरं तथा ॥ २८ ॥

नखों से सोना रक्तसे रस मेद से स्फटिकमणि मांस से मूंगा ।

ये सब रत्न पृथ्वी में बलकी देह से उत्पन्न हुए ।

नोट—पदार्थ एवं भूगर्भविद्याके ज्ञाता विचारपूर्वक देखें तो सही कि बलकी देहसे क्या २ उत्पन्न होगया ।

(१) मलमूत्रों से चांदी, कांसा, तांबा इत्यादि का होना ।

(२) ये सब रत्न पृथ्वी में बलकी देह से उत्पन्न हुए क्या इससे पहले रत्नादि पृथ्वी पर न थे (जिसको कि रत्नभूमि कहते हैं) मूर्त्तिपूजक भाइयोंको २७ वें श्लोक पर अवश्य ध्यान देना चाहिये ।

पाकर घोरशब्द करने लगे परन्तु बहुत काल खोदने पर भी कहीं घोड़ा नहीं मिला अन्तको सगरके पुत्रोंने बड़ा क्रोध किया तब उत्तर पातालके कोने में खोदना आरम्भ किया और पाताल तक खोदते चले गये वहां देखा कि पृथिवी में घोड़ा घूम रहा है उसके निकट कपिल महात्माजी भी विराजमान हैं ॥

चरन्तमश्वं पाताले ददृशुर्नृपनन्दनाः ।
ददृशुश्चमहात्मानं कपिलंदीप्ततेजसम् ।
संप्रहृष्टास्ततः सर्वे समेत्य च समंततः ॥

अ० ५३-१७

घोड़ेको देख सब प्रसन्न हुये और महात्माका निरादर करने के लिये कालके वशीभूत हो क्रोध सहित घोड़ा पकड़नेको दौड़े राजपुत्रोंका यह व्यवहार देख महात्माको बड़ा क्रोध आया फिर नेत्र खोल कर सगरके पुत्रों पर अपना तेज डाला जिसके लगते ही सगर के पुत्र भस्म होगये उस समय नारदमुनि वहां आये और उन्होंने सब वृत्तान्त पुत्रोंके नष्ट होजाने का राजा से कहा जिसको सुन राजा को बड़ा शोक हुआ ।

पंडितजी—राजा सगरके साठ हज़ार पुत्रोंकी उत्पत्ति को सुनकर भी आपके चित्त में क्या यह भ्रम नहीं हुआ कि यह पुराण व्यास महाराजके कहे हुये नहीं हैं । देखिये स्त्रीके तोरई होना फिर उनके बीजोंको घी के मटकोंमें रखने से पुत्र उत्पन्न होगये परन्तु तूम्बीकी लम्बाई भी नहीं लिखी न जाने कितनी बड़ी होगी जिसमें ६० हज़ार बीज थे ।

देवताओं से वृक्षों की उत्पत्ति ।

वामनपुराण अध्याय १७ में लिखा है कि आश्विन मास में जब ईश्वरकी नाभिसे कमल उत्पन्न हुआ तब देवताओंमेंसे कामदेव के कदम्ब और कुबेरके वट महादेवके हृदयमें धतूरा ब्रह्माकी देहके मध्यभागसे ख़ैर विश्वकर्माके शरीरसे कण्टकि और पार्वतीके हाथके तलवेमें कुन्द गणेशजीके मस्तकमें संभालू ।

कंदर्पस्यकराग्रे तु कदंबश्चारुदर्शनः।
तेन तस्य पराप्रीतिः कदंबेनविवर्द्धते ॥२॥
यक्षाणामधिपस्यापि मणिभद्रस्य नारद।
वटवृक्षः समभवत्तस्मिंस्तस्यरतिः सदा ॥३॥
महेश्वरस्य हृदये धत्तूरविटपःशुभः।
संजातः स च शर्वस्य रतिकृत्तस्य नित्यशः ॥४॥
ब्रह्मणो मध्यतो देहाज्जातो मरकतप्रभः।
खादिरः कंटकी श्रेयानभवद्विश्वकर्मणः ॥५॥
गिरिजायाः करतले कुंदगुल्मस्तथाजायत।
गणाधिपस्य कुंभस्थो राजते सिंधुवारकः ॥६॥
यमस्य दक्षिणे पार्श्वे पालाशो दक्षिणोत्तरे।
कृष्णोदुम्बर कोरौद्रो जातः क्षोभकरोऽव्ययः।
स्कन्दस्य बंधुजीवश्चरवेरश्वत्थ एव च ॥
कात्यायन्याः शमीजाता बिल्वोलक्ष्म्याः करेऽभवत्
नागानां मुखतो ब्रह्मञ्छरस्तंबोऽव्यजायत।
वासुकेर्विस्तृते पुच्छे पृष्ठे दूर्वासितासिता ॥९॥
साध्यानां हृदये जातो वृक्षोहरितचंदनः।
एवं जातेषु सर्वेषु तेन तत्र रतिर्भवेत् ॥१०॥

धर्मराजके दाहिने पांशूमें पलाश बायें पांशूमें कालागूलर स्वामिकार्त्तिकके शरीरसे जीयापोता सूर्य्यके शरीरसे पीपल कात्यायनीके शरीरसे जांटी लक्ष्मीके हाथमें बैल सर्पोंसे शरस्तंब और वासुकी सर्पकी फैली हुई पूंछके पृष्ठभागमें सफेद और काली दूंब उपजी और साध्यदेवताओंके हृदयमें हरिचन्दन वृक्ष उपजा ऐसे जो २ जिसके शरीरसे उत्पन्न हुए तिस २ में उनकी प्रीति हुई।

नोट—इस उत्पत्तिको पढ़कर आपही विचार करें कि यह ही व्यास महाराज लिखितपुराण हैं।

श्रीपंडितजी—सेठजी अब समय बहुत होगया इसलिये अब बस कीजिये।

सेठजी—ने कहा कि बहुत अच्छा।

सब महाशय चलदिये।

सेठजीने—श्री० पं० जी को नमस्ते की। श्री० पं० जी आयुष्मान् कह तथा अन्य यथायोग्यके पश्चात् चलेगये। सेठजी अपने कार्य्यमें लगगये।"

इति षोडश परिच्छेद।

—०—

अथ सप्तदश परिच्छेद।

सेठजी--ने श्रीमान् पं० जी आदिको आते देख नम्रतापूर्वक नमस्ते कर कहा कि आइये!

पं० जी--आयुष्मान् तथा अन्य महाशयोंने यथायोग्य कहा और विराजमान हुए।

सेठजी--ने पं० जीकी तबियतका हाल पूंछा कहा कि श्री महाराज आज मैं और शेष पुराणोंसे वेद, बुद्धि तथा सृष्टिक्रमके विपरीत कथाएँ सुनाता हूं। देखियेः—

विश्वामित्र के शापसे सरस्वती में रक्त की धाराका होना फिर अन्य ऋषियोंके वरदानसे शुद्ध होना।

वामनपुराण--अध्याय ४० में लिखा है कि विश्वामित्र वशिष्ठ मुनिके बीच तपरूपी ईर्षाके कारण बड़ा वैर होगया था एक समय विश्वामित्रने सरस्वती नदीको बुला कर कहा कि वशिष्ठमुनि

को अपने वेगसे यहां बहाला तब मैं उनको मारूंगा उसने दुःखित हो वसिष्ठजीके समीप जा सब वृत्तान्त कहा और उसको बहाकर ले चली तब वसिष्ठ महाराजने सरस्वतीकी स्तुतिकी इधर सरस्वतीने वसिष्ठको विश्वामित्रके समर्पण किया त्योंही उन्होंने उनके मारनेके लिये प्रहार किया। तब सरस्वती ब्रह्महत्याके भयसे वसिष्ठको उलटा बहाने लगी उस समय विश्वामित्रजीने क्रोधित हो कहा कि लोहूयुक्त राक्षसोंसे सेवित रहेगी। वह उसी प्रकार बहने लगी जिसको देख देवता दुःखित हुए बहुत काल पीछे बहुधा मुनि तीर्थयात्राके अर्थ सरस्वती पर गये फिर उसको बुला कारणको जान प्रसन्न हो अरुणा-नदीको उसमें मिलाते हुए तदनन्तर राक्षसोंकी मुक्तिके अर्थ संगमतीर्थ को कल्पित करते हुए जो कोई इस संगम पर तीन दिन वास कर स्नान करता है वह पापोंसे छूट जाता है घोरकलियुगमें भी स्नान करनेसे मुक्ति होती है इसके पीछे सब राक्षस संगममें स्नान कर स्वर्ग को चलेगये।

नोट--क्या सरस्वती भी कोई शरीरधारी स्त्री थी और जब सरस्वती संगममें स्नान करनेसे पापोंकी निवृत्ति होकर मुक्ति हो जाती है तो फिर सत्यादि यमनियमके पालन करनेकी क्या आवश्यकता रही और जब इस संगमका ऐसा प्रताप है तो फिर अपने पतित भाइयोंको स्नान कराकर क्यों नहीं शुद्ध करलेते।

ब्रह्माके कानोंसे दिशाओंकी उत्पत्ति।

बाराहपुराण—अध्याय २९में लिखा है कि जब ब्रह्माको चिन्ता हुई तब ब्रह्मा के कानों से दश दिशा उत्पन्न हुईं।

प्रादुर्बभूवश्श्रोत्रेभ्यो दशकन्या महाप्रभाः॥
पूर्वाच दक्षिणाचैव प्रतीचिचोत्तरा तथा॥३॥
इत्यादि

राजा विशप्रिचतसे नरकियोंको एक अनोखा लाभ।

मारकण्डेय पुराण अ० १४ जि० १

तब राजा विपश्चित मरकर नरकको गया तब उसने यमदूतसे कहा कि मैं नाना प्रकारके धर्मकार्य्य करता रहा फिर मैं क्यों नरकको आया तब यमदूतने कहा कि तुमने थोड़ासा पाप पिछले जन्ममें किया है उसको मैं तुम्हें बताता हूं देखो विदर्भदेशकी राजकन्या पीवरी नाम स्त्री ऋतुसे शुद्ध हुई तब तुमने उसके साथ गमन नहीं किया इस हेतु जो ऐसा करते हैं वह पितृके आगे पापदोषी होकर नरकमें गिराये जाते हैं यही तुम्हारा पाप है इसीसे नरकभोग कराया गया अब तुम स्वर्गको चलो तब राजाने कहा जहां तुम ले चलोग मैं वहां ही चलूंगा अब यह बतलाओ कि यह लोग जो अतिदुःखी हैं कोई कुछ कोई कुछ दुःख उठारहा है यह क्यों उठा रहा है अनेक जन्ममें जो पाप या पुण्य ज्ञान या अनज्ञानसे उत्पन्न होता है वह सब कर्मोंका फल है, आत्माके साथ रहता है देहसे या मनसे या वचनसे जिस प्रकार जो मनुष्य करता है उसी भांति वह मनुष्य पाता है दूसरा कदाचित् नहीं।

अकुर्वन् पापकं कर्म्म पुण्यस्वाप्ययमस्तिष्ठते ।
यद्यत्प्राप्नोति पुरुषो दुःखं सुखमथापि वा ॥३३॥

अर्थात् विना पाप और विना पुण्यके किये हुए कोई सुख या दुःख नहीं भोगता ॥ ३३ ॥

प्रभूत मथवा स्वल्पं विक्रिया कारिचेतसः ।
तावतातस्य पुण्यं वा पापं वाप्यथ चेतदत् ॥३४॥

जिस प्रकार ये पापी लोग इस घोरनरकमें रहकर दुःख भोग रहे हैं उसी भांति पुण्यवान लोग स्वर्गमें ऐ राजन्! देवताओंके साथ ॥३४॥

क्षपयांति नराघोरं नरकान्तर्निवर्त्तिनः ।
तथैव राजन् पुण्यानि स्वर्गलोकेऽमदैःसह ॥

गंधर्व और सिद्ध और अप्सरा इन सबोंके साथ रह कर गीत और नृत्यादिसे अपने पुण्यका फल भोग करके फिर देवता या मनुष्य

या तिर्य्यक्योनिमें जाते हैं। सविस्तर वर्णन करनेके पीछे यमदूतने कहा कि अब मैं सब आपको सुना चुका और सब नरक दिखा चुका अब आप दूसरे स्थानको चलिये तब राजा यमदूतको आगे कर चलने को उपस्थित हुए तब नारकी लोग जो कष्टमें पड़े थे बोले कि हे राजन्! आप हम सबों पर कृपा करके एक घड़ी और यहां ठहर जाइये क्योंकि जो हवा आपके शरीरसे टंकर खाकर आती है उससे हम लोगोंको बड़ा आराम मिलता है।

प्रसादं कुरुभूयेति तिष्ठतावन्मुहूर्त्तकं।
त्वदङ्ग सङ्गी पवनोनमोह्लादवतोहिनः॥

जि० २ अध्याय १५ श्लोक ४८॥

जितने परिताप और दुःख जो हम लोगोंके शरीर में हैं वह सब हम हवाके लगनेसे छूट जाते हैं इस वास्ते ऐ नरव्याघ्र हम सबों पर दया कीजिये॥ ४९॥

परितापं च गात्रेभ्यः पीडाबाधाश्च कृत्स्नशः।
अपहन्ति नरव्याघ्रदयांकुरु महीपते॥

राजा नारकियोंके इन वचनको सुन यमदूतसे पूंछने लगे यह लोग मेरे रहनेसे क्यों प्रसन्न होते हैं?।

मैंने मृत्युलोकमें कौनसा पुण्य किया जो इन लोगोंके लिये आनन्ददायक होरहा है सो तुम मुझे बतलाओ। यमदूत ने कहा कि ऐ राजन्! जो आपने देवता और पितर और अभ्यागत इत्यादि को पहले समर्पण करके शेष अन्न खाकर अपना शरीर पाला था और जो कि आपका मन हर घड़ी इन्हीं बातों में रहता था इस सबब से तुम्हारे अंगकी स्पर्श हुई हवा आनन्दको देने वाली है जिसके स्पर्श से इन सब पापकर्मी लोगोंको दंडका कष्ट नहीं जान पड़ता।

पितृदेवातिथि प्रेष्य शिष्टेनान्नेन ते तनुः।
पुष्टिमभ्यागतायस्मात्तङ्गतञ्च मनोयतः॥५२॥

तब राजाने कहा हे यमदूत मेरी समझमें ब्रह्मलोक आदि स्वर्ग में वह सुख नहीं है जो सुख दुखीलोगोंकी रक्षा करने से मनुष्यों को

प्राप्त होता है यदि मेरे रहने से इन नरकियोंको सजा का कष्ट नहीं जान पड़ता तो मैं इन दुःखी लोगोंके लिये यहां ही रहूंगा तब यमदूतने कहा कि यह धर्म और इन्द्र आपके लेनेके लिये आये हैं जहां आपका जाना आवश्यक है सो चलिये। धर्मने कहा कि ऐ राजन्! तुम ने मेरी सब प्रकारसे उपासना की है इसलिये मैं तुमको स्वर्ग को ले चलूंगा इस पर इन्द्रने कहा कि यह पापीलोग अपने पापकर्मोंकी सजा भोग रहे हैं और आपने पुण्यकर्म किया है इसीलिये आपको स्वर्ग जाना होगा फिर राजाने कहा आप दोनों यह बतावें कि मेरे पुण्य का प्रमाण कितना है तब धर्म ने कहा जिस प्रकार आकाश में तारे, समुद्रके जल में कण और गंगाके किनारे की बालू और महावृष्टि के विंदुः —

अविन्दवोयथाम्भोधौ यथावद्दिवितारकाः।
यथा वा वर्षतोधारा गंगायां सिकता यथा ॥७१॥

अनगणित हैं उसी प्रकार ऐ राजन् ! तुम्हारे पुण्यका भी हिसाब नहीं है ॥७१ ॥

असंख्येया महाराज यथा विन्द्वादयोह्ययां ।
तथा तवापि पुण्यस्य संख्या नैवोपपद्यते ॥७२॥

जब से तुम इन नरकियों पर कृपा कररहे हो तब से अब तक तुम्हारा समय सौ हजार वर्ष तक व्यतीत हुआ ॥७२॥

अनुकम्पामिमामद्यनारकेष्विह कुर्वतः ।
तदेव शतसाहस्रं संख्यामुपगतं तव ॥

इसलिये अब आप स्वर्ग को चलें वहांका सुख भोगो पापीलोग अपने कर्मोंका फल नरक में भोग करेंगे। तब राजाने कहा कि यदि हम से इन लोगोंकी भलाई नहीं हुई तो फिर कोई किस प्रकार से भलाई की आशा करेगा इसलिये हे देवराज! जो कुछ हमारा सुकृत है यानी पुण्य होतो यह लोग उसके बदले में नरक के कष्ट से छूटजावें।

कथं स्पृहां करिष्यन्तिमत्सम्यर्कैषु मानवाः ।
यदि मत्सन्निधावेषामुत्कर्षोमोपजायते ॥ ७५ ॥
तस्मात् यत्सुकृतं किञ्चिन्ममास्तित्रिदशाधिप ।
तेन मुच्युन्तु नरकात् पापिनोयांतनांगताः ॥ ७६ ॥

तब चन्द्रने राजासे कहा कि आपको वैकुंठ हुआ देखो यह नरकी लोग भी नरकके कष्टसे छूटगये और उस समय राजाके ऊपर फूल बरसने लगे और विष्णु भगवान् राजाका हाथ पकड़ कर विमान में बिठाकर वैकुंठमें लेगये ।

ततोऽपतत्पुष्पवृष्टिस्तस्योपरि महीपतेः ।
विमानं चाधिरोप्यैनं स्वलोकमनयद्धरिः ॥

नोट--इस कथा में पूर्वापर विरोध है कारण कि पूर्व तो यह कहा कि अपने कर्म अपने ही लिये सुख या दुखदायक होते हैं और बिना कर्मका फल भोगे कोई सुख वा दुःख नहीं पाता और अन्त में यह उक्ति कि राजाने अपने पुण्यका फल नरकियोंको देदिया जिस से कि नरकी नरकसे छूटगये ।

एक राजाके साथ हरिणीका वार्त्तालाप ।

मारकंडेय--पुराण जि० २ अध्याय ६६ में लिखा है कि स्वरोचि अपने तीनों पुत्रोंको पृथक् २ राज्य देकर ... ... आप अपनी स्त्रियोंसे बिहार करने लगे, एक समय शिकारको गये और सुअरके पीछे दौड़े तब एक हरिणीने आकर कहा कि आप इस वाण से मुझको मारिये सुअर मारनेसे क्या लाभ यदि मुझको मारोगे तो मैं अपने दुःखसे छूट जाऊंगी तब राजाने कहा तुझको क्लेश क्या है हरिणीने कहा कि मैं जिस पुरुषको चाहती हूं वह अन्य स्त्री पर आसक्त है तब राजाने कहा कि कौनसा तेरा पति है जो तुझको नहीं चाहता वह कौन पुरुष है जिसको तू चाहती है तब हरिणीने कहा कि मैं तुम्हींको चाहती हूं तुम्हींने मेरा मन हर लिया है तुमको औरोंसे प्रीति है इसलिये मैं अपने जीवनको वृथा समझती हूं तब राजाने

कहा कि तू हरिणी है मैं मनुष्य हूं मेरा तेरा संयोग किस प्रकारसे हो सकता है, हरिणीने कहा जो आप प्रसन्न हो मुझसे भोग करेंगे तो फिर जो कुछ आप चाहेंगे वह सब आपको प्राप्त होगा जब राजाने उसके साथ भोग किया तो उसी समय वह सुन्दर स्त्री होगई ॥ २१ ॥

आलिलिङ्ग ततस्तांस स्वरोची हरिणाङ्गनां ।
तेन चालिङ्गितासद्यः साभूद्दिव्यवपुर्धरा ॥
जिल्द २ अ० ६६ ॥ २१ ॥

तब स्वरोचिने पूछा तू कौन है तब उसने कहा कि मैं वनकी देवता हूं देवता लोगोंने मुझसे विनय कर कहा कि तुम मनुको पैदा करो इस सबबसे मैंने आपसे कहा, यह सुन स्वरोचिने हरिणीसे भोग कर एक अपने समान तेजवान पुत्र उत्पन्न किया तब देवताओं ने फूलोंकी वर्षा की और द्युतिमान उसका नाम रक्खा ।

तस्यतेजः समालोक्यनाम्नचक्रे पिता स्वयम् ।
द्युतिमानिति येनास्य तेजसा भासितादिशः॥२८॥

नोट--राजाका हरिणीसे भोग करना और उसका स्त्री होना आपके विचारने योग्य है ।

राजा प्रियव्रत के रथ के पहिये से सात समुद्रोंका होना ।

श्रीमद्भागवत पंचमस्कंदके प्रथम अध्यायमें लिखा है कि राजा प्रियव्रतने यह विचार कर कि सूर्य्य सुमेरू पर्वतकी प्रदक्षिणा करता है इस कारण आधे जगत्में रात्रि रहती है उसको मैं दिन करूंगा ऐसा विचार कर अपने प्रकाशमय रथ पर बैठके सूर्य्यके समान घूमने लगा ।

येवा उहत्द्रथ चरणनेमिकृतपरिखातास्ते सप्तसिन्धव आसन्यत एवकृताः सप्तभुवो द्वीपाः ॥३१॥

महाराज प्रियव्रतके रथके पहियेसे जो खाई बनी वही सात समुद्र होगये और जो भूमि उनके बीचमें रह गई वह जम्बू प्लक्ष और शालमली आदि सातद्वीपके नामसे प्रसिद्ध होगई ।

नोट—कहिये श्रीमान् क्या पहले समुद्र न थे ।

मनुकी पुत्री इलाका का पुत्र होजाना ।

श्रीमद्भागवतके नवम स्कंद अध्याय १ में लिखा है कि सूर्य्यवंशके आदि पुरुष महात्मा मनुके दश पुत्र थे उनकी उत्पत्तिसे प्रथम मनुने महर्षि वशिष्ठसे पुत्रेष्टि यज्ञ कराया जिसके प्रतापसे मनुकी स्त्रीके गर्भसे इला नामकी कन्या उत्पन्न हुई जिसको देख मनुको बड़ा असन्तोष उत्पन्न हुआ उन्होंने वशिष्ठसे कहा कि यह उलटा कार्य्य क्यों हुआ मैंने जो पुत्रकी प्राप्तिके लिये यज्ञ किया था उससे पुत्री उत्पन्न क्यों हुई वशिष्ठजीने उत्तर दिया कि होता (आहुति देने वाले) के उलटे संकल्प से यह उलटा फल हुआ परन्तु मैं अपने तेजसे तुमको सपुत्र बनाऊंगा ऐसा कहके वशिष्ठने विष्णुकी स्तुतिकी उससे प्रसन्न होके जो विष्णुने वर दिया उसी वरके प्रतापसे मनुकी पुत्री इला पुरुष होगई और उस का नाम सुद्युम्न रक्खागया ॥ २१ । २२ ॥

एवं व्यवसितो राजन् भगवान्स महायशाः ।
अस्तौषीदादिपुरुषमिलायाः पुंस्त्वकाम्यया ॥२१॥
तस्मैकामवरं तुष्टो भगवान् हरिरीश्वरः ।
ददाविलाऽभवत्तेन सुद्युम्नः पुरुषर्षभः ॥२२॥

नोट——न जाने हमारे पौराणिक भाई इस विचित्र रीतिसे अब क्यों नहीं कार्य्य लेते। देखिये लड़कीसे पुत्र कर देनेका क्या सहल नुसखा है ।

व्यासजी, के पुत्र की इच्छा से भगवती महादेवका तप करना और महादेवसे वर पाना फिर घृताचीको देख कामातुर हो-वीर्य्यपात हो अरणी में गिरना और शुकका उत्पन्न होना ।

देवीभागवत स्कंद १ अ० १०, १४ ॥

मेरु पर्वत पर व्यासजी ने एकाक्षरी मंत्र जप भगवती और शिवका ध्यान निराहार सौ वर्ष तक किया कि जिसमें हमारे अग्नि, वायु अंतरिक्षके तुल्य पुत्र उत्पन्न हो इसको देख इन्द्र बड़ा व्याकुल हुआ और वह महादेवके पास गया तब महादेवजीने कहा तुम संशय

मत करो क्योंकि वह शक्ति सहित हमारा पुत्रके हेतु तप करते हैं इन्द्रासनके लिये नहीं तुम कुछ चिन्ता न करो हम जाते हैं यह कह व्यासजीके पास पहुंचे और कहा सब गुण सम्पन्न तुम्हारे पुत्र होगा वह तपस्या करते रहे एक दिन अरणी सहित गुप्त अग्निको अग्निकी इच्छा करके मथने लगे उसी समयमें पुत्र होनेकी इच्छा हुई जैसे मंथान और अरणीके संयोग और मंथन से अग्नि उत्पन्न होती है वैसे ही हमारे क्योंकर पुत्र उत्पन्न हो सकता है क्योंकि स्त्री तो हमारे है ही नहीं और स्त्री करना बंधनका हेतु है देखो शिवजी ऐसे महात्मा तो भी नित्य कामिनीकी फांसमें फंसे रहते हैं इस चिन्ता में लग रहे थे कि इतनेमें घृताची नाम अप्सरा दिव्य रूप धारण किये हुये आकाशमें दीख पड़ी मुनि जी घृतव्रत थे कामातुर हो चिन्ता करने लगे कि अब मैं क्या करूं यह मुझे छलनेके लिये आई है सम्पूर्ण महात्मा और तपस्वी मुझे हंसेंगे देखो १०० वर्ष तपस्या करके भी कामके वशीभूत होगये इसके उपरांत यह गृहस्थाश्रमके सुख जो पुत्र उत्पन्न होनेके समय होते हैं वह भी इस से न होगा क्योंकि यह तो भोग भुगाकर आकाशको चली जायगी इसलिये उन्होंने कहा कि यह हमारे योग्य नहीं है अप्सरा आपके भयसे शुकीका रूप धारण करके निकल गई व्यासजी बड़े विस्मित हुये कामातुर तो हो ही गये थे बहुत मन खींचने पर भी न खिंचा मुनिका वीर्य्य अरणी (दाब की लकड़ी) में पतित होगया वह अधिक अरणीको मथने लगे उसमें व्यासजीके आकारका पुत्र उत्पन्न हुआ चूंकि शुकीको देखकर काम पतित हुआ इसलिये शुक ऐसा नाम रक्खा। सब देवताओंने आकाश से वर्षाकी और प्रसन्न हो सब उनके स्थान पर आये वह बढ़ने लगे वेदविधिसे मुनिने यज्ञोपवीत कराया और बृहस्पतिको गुरु करके चारों वेद षट्शास्त्र पढ़े और गुरुदक्षिणा देकर पिताके पास आये।

नोट—इन कथाओंके देखने से ज्ञात हुआ कि इन्द्र एक गुप्त कोटिका राजा और तपस्वियोंका बहुतायत से विरोधी था जैसा उस के आचरणोंसे विदित होता है।

(२) क्या व्यासर्षि ऐसे अज्ञ थे कि विना स्त्रीके पुत्र की कामना की।

(३) अरणी अर्थात् ढाकको लकड़ी पर..................पात होनेसे पुत्र उत्पन्न होगया ।

(४) "शुचिर् पूती भावे" धातुसे शुक्र शब्द बनता है यदि शुकी को देखकर शुक नाम रखलिया तो रेफकी अनुवृत्ति कहां से आई जो कि शुक्र कहा जाता है व्याकरणाभिमानी पौराणिकी इसे सिद्ध करें ।

देवी भागवत ।

स्कन्द २ अ० १

एक उपरिचर नाम चेदिदेशके राजा हुये जोकि अतिधार्मिक सत्यसागर और द्विजपूजक थे जिनकी तपस्या से संतुष्ट होकर इन्द्र जीने जिन्हें स्फटिकमणिका एक विमान दिया कि जिस पर चढ़ कर वे अंतरिक्ष में फिरा करते थे । जिनकी स्त्रीका गिरिका नाम था जिस में उन्होंने ५ पुत्र उत्पन्न करके अन्य २ देशोंके राजा कर दिये थे फिर एक दिन गिरिका ऋतुस्नाता थी उसी दिन राजाके पिताने कहा कि श्राद्ध करनेके लिये मृग मारलाओ यह बड़ा धर्मसंकट हुआ ।

चौपाई ।

सुन ऋतुमती नारि नहि जाई । गर्भघात पातक त्यहि भाई ।
पिता वचन माने नहि जोई । पापपुंज ताहू कहँ होई ॥

पर वे पिताके वचन मान शिकार ही करने चले गये वहां वन में जाकर जिससे कि ऋतुस्नाता स्त्रीका स्मरण था इससे वीर्य्यच्युत हुआ उससे यह विचारके कि स्त्रीके निकट भेजेंगे राजाने बरगदके पत्तों के मध्यमें स्थापित कर दिया कि हम सब अमोघ वीर्य्यवान हैं जो यहां से वीर्य्य प्रेरित करेंगे तो पुत्र ही होगा । एक बाज जो राजा करके पालित संग ही था उस से कहा कि इसे हमारी स्त्री के निकट पहुंचावो । यह सुन वह चोंचसे कन्दर्पयुक्त वटपत्रको लेके आकाश-मार्ग हो उड़ा कि अन्य कोई बाज मांस जानके छीनने लगा इस पर बड़ा युद्ध हुआ और वह वट पत्रका दोना यमुनाजीमें गिर पड़ा बाज जहांके तहां चले गये । उसी समय एक अद्रिका नाम अप्सरा (जो कि यमुनामें स्नान कर रही थी) ने एक ब्राह्मण (जो कि संध्या करनेमें

उद्यत थे) के चरण कामातुर होकर आ पकड़े ब्राह्मणने शाप दिया कि तू मछली हो वह यमुनाजीमें मछली हो पतित (गिर पड़ी) हुई और उसी समय उन दोनोंका वीर्य्य खागई उसके दश मासके पश्चात किसी मत्स्यघातीने उसे पकड़ उदरविदारण किया तो दो मनुष्याकार जीव निकले कि जिनमें एक पुत्र एक कन्या थी। उन्हें देख विस्मित होकर उन्हीं राजा उपरिचरके पास लेगया क्योंकि वह राजा ही के आकारके से थे। इससे पुत्रको अपने सदृश समझके राजाने ग्रहणकिया बालक तो अति धार्मिक सत्यसागर, महातेजस्वी और निजपिताके तुल्य पराक्रमी मत्स्य नाम राजा हुआ और जो कन्या थी वह उसी मत्स्यजीवीको देदी कि जिसके काली मत्स्योदरी-मत्स्यगंधा-वासवीय नाम हुए।

एक दिन तीर्थयात्रा करते हुए पाराशर मुनि आये और खेवटसे कहा हमें यमुना पार करो वह भोजन कर रहा था उसने मत्स्यगंधासे कहा तू पार पहुंचा दे मुनि उसे देख कामातुर हो हाथ पकड़ अपना मनोरथ कहा तब वह बोली आप अतिकुलीन वशिष्ठजीके पुत्र वेद-पाठी होकर मछलीकीगंधके समान स्त्रीको देखकामातुर होकर ग्रहण करते हो यह महाअनर्थ है तब लज्जित होकर हाथ छोड़ दिये फिर पार पहुंच पकड़ने लगे फिर उसने प्रार्थना की कि आप मुझ दुर्गंधामें कैसी रुचि करते हो। तब मुनिने अपने तपोबलसे उसके अंगमें ऐसी सुगन्ध कर दी जो चार कोस तक कस्तूरीके समान फैल गई तब उसने कहा कि उस पारसे मेरा पिता देख रहा है और दिनमें रति करना भी निषेध है इससे रात होने दीजिये यह सुन मुनिने अपने तपोबलसे कुहरा उत्पन्न कर दिया और प्रसंग करना चाहा तब उसने कहा मेरा अभी व्याह नहीं हुआ है आप वीर्य्यवान हैं रतिके पीछे मैं गर्भवती हो जाऊंगी तो मैं कहां जाऊंगी और पितासे क्या कहूंगी मुनिने कहा कि तुम कन्या ही बनी रहोगी यह सुन उसने कहा कि नहीं महाराज मैं यह चाहती हूं कि मेरे पिताको विदित न हो और आपके समान पुत्र उत्पन्न हो और यह अंगका गंध और नई अवस्था बनी रहे तब मुनिने कहा तुम्हारे विष्णुके अंशसे सब पुराणोंका कहने

द्वारा पुत्र उत्पन्न होगा जो त्रिलोकीमें प्रसिद्ध होगा यह कह उससे सम्भोग कर यमुनामें स्नान करने चले गये सत्यवती गर्भवती हुई समय पर यमुनाके द्वीपमें पुत्र उत्पन्न किया जो जन्मतेही मातासे बोले हम तपस्या करने जाते हैं तुम भी सुखपूर्वक जाओ जब कभी हमको स्मरण करोगी तभी हम आकर तुम्हारी मनोकामना सिद्ध करेंगे यह कह कर चले गये तब इनका नाम द्वैपायन हुआ इन्होंने वेदशाखा निर्मितकी तो व्यास नाम हुआ। सर्व पुराण महाभारतादिकी रचना की तथा इन्होंने ही वेदोंके विभाग कर अपने शिष्योंको पढ़ाये।

—०—

नोट १--एक ओर मनुका यह वचन कि "अहिंसापरमो धर्मः" दूसरी ओर पौराणिकी यह शिक्षा कि "श्राद्धार्थ मृगमार कर लाओ" हमारे वैष्णवी भाई किसको ग्रहण करेंगे।

२—इन घृणित बातोंको बच्चे भी तो कहते और करते लज्जित होंगे क्या यह कोई ऐसी वस्तु है जो भेजी जावे परन्तु इस घृणित और असम्भव बात पर वाद करना ही वृथा है बुद्धिमान् केवल संकेतसे ही इसका निर्णय करलेंगे।

३ ब्राह्मणके शापसे स्त्री मछली होगई और पत्तेमें रक्खे हुए ……… को खाकर मछली गर्भवती होगई प्यारे पौराणिकी भाइयो यह व्यास महात्माकी उत्पत्ति और महर्षि पाराशरकी करतूत है क्या यह सब बातें ऋषिनिन्दक नहीं हैं इसलिये इन पुराणोंको व्यास-कृत न कहिये।

राजा शान्तनुका सन्तान उत्पन्न करना।

देवीभागवत स्कन्द २ अ० ५॥

शान्तनु नाम राजा एक दिन शिकार खेलते हुए यमुनाके तीर पर गये वहां कस्तूरी मालतीके समान सुगंध आई राजा जिसको सूंघ चौकन्ने हो नदी की ओर गये तो वहां जाकर देखा कि नदीके तट पर एक स्त्री शृंगार रहित मलीन वस्त्र धारण किये बैठी है और उसीके शरीर से गंध आरही है राजाने इसका रूप योवन देख कामवश हो गंगा

का स्मरण कर उससे पूछा कि तुम किसकी कन्या हो, विवाह होगया है या अभी नहीं, तुमको देख हमारा चित्त चाहता है कि तुम हमको अपना पति बनाओ क्योंकि हमारी स्त्री हमको छोड़कर चली गई है दूसरी अभी नहीं की है मैं तुम्हारा दास हूं तब वह स्त्री बोली कि मैं दासकी कन्या हूं मेरा पिता घर गया है मैं नौका चलाती हूं यदि आपकी ऐसी इच्छा हो तो मेरे पितासे कहिये। वे आपको दे देंगे तो मैं आनन्द से आपकी दासी होनेको उद्यत हूं राजा ने पिताके समीप जाकर कहा कि हे निषाद ! तुम हमको अपनी पुत्री दे दो मैं पटरानी बनाऊंगा तब निषादने कहा कि मैं पुत्री आपको इस प्रण पर देनेको उद्यत हूं कि आपके पीछे मेरी पुत्रीका पुत्र ही राजा हो। राजा इसको सुन गृह पर आ उदास रहने लगे। जिसका वृत्तान्त जब भीष्म महाराजको (जो गंगाके पुत्र थे) ज्ञात हुआ तब उन्होंने पिता की इच्छापूर्ण करनेके अर्थ आजन्म जितेन्द्रिय रहनेका व्रत धारणकर दाससे जाकर निवेदन किया उसने पुत्री राजा शांतनुको दे दी।

नोट—इसकी बेटीसे तो पाराशर मुनिने भोग किया ही जिससे व्यास उत्पन्न हुए और फिर उसको राजा शांतनुने ग्रहण कर विवाह किया इस वर्णव्यवस्था पर हमारे पौराणिकी भाई विशेषरूपसे ध्यान दें कि खेवट जातिकी कन्याको प्रथम तो पाराशरने भोग किया फिर उसीसे शांतनुने विवाह किया पक्षपातको छोड़ सत्यपूर्वक विचारो तो केवल वर्णसे जातिके मानने वाले पौराणिकी भाई वशिष्ठ मुनिकी उत्पत्ति पर ध्यान दें और उनके जारपिता पाराशरकी करतूतको विचारें।

श्री० पं० जी ने कहा कि सेठजी समय बहुत होगया इसलिये बस कीजिये।

आर्य्य सेठ--बहुत अच्छा सब महाशयोंने चलनेकी तैयारी की।

सेठजी--ने पण्डितजी तथा सब महाशयोंको नमस्ते की।

पं० जी--ने आयुष्मान् कहा और अन्य सबोंने यथायोग्य की और प्रस्थान किया। सेठजी विश्राम करने लगे।

इति सप्तदश परिच्छेद।

अथ अष्टादश परिच्छेद ।

सेठजी—ने श्रीमान् पं० जी को आते देख नम्रतापूर्वक नमस्ते कर कहा कि आइये पधारिये ।

पं० जी—ने आयुष्मान् कहा और विराजमान हुये । थोड़ी देरके बाद सब महाशय भी आगये और यथायोग्य कहा और विराजमान हुये ।

सेठजी—पं० जी महाराज आज मैं और दिनों से रोचक ही नहीं किन्तु अनोखी कथाएँ सुनाता हूं । देखियेः—

—०—

वनितासे अरुण और गरुड़का उत्पन्न होना

महाभारत आदिपर्व अध्याय ३१ ।

जब प्रजापति कश्यपजी ने पुत्रकी इच्छा से यज्ञ किया तब देवता, ऋषियों गन्धर्वों ने सहायता की तब कश्यपजी ने यज्ञकी लकड़ी लाने के लिये इन्द्र और बालखिल्यामुनि और अन्य देवोंको भेजा इन्द्र देवता अपनी शक्तिके अनुसार पर्वतके समान लकड़ीका बोझा लेकर बिना कष्ट आने लगे परन्तु सब ऋषि लोग मिलकर भी एक छोटी सी लकड़ी को अतिकष्ट से ले जाने लगे इन्द्रजी उन ऋषियोंको देख अचरज मानके उनकी हंसी करते हुए लांघकर वेग से चलेगये जिससे बड़े २ ऋषियों ने अतिदुखी और क्रोधयुक्त होकर इन्द्रके भयदायी एक महान्‌कार्य्यका अनुष्ठान किया अर्थात् वे व्रतशील ऋषिगण अपने तपोबल से इन्द्रसे सैकड़ों गुण शूरता और वीरता में एक इन्द्र और उत्पन्न करनेके लिये बड़े २ मन्त्रों से अग्निकी आहुति चढ़ानेलगे जिसको सुन इन्द्रने बहुत दुःखी हो फिर कश्यपजी की शरण ली ।

कश्यपजी बालखिल्या आदि मुनियोंके समीप गये और पूछा कि क्या आप लोगों का कार्य्य सिद्ध होगया उन्होंने कहा कि हां हुआ है तब कश्यपजी ने कहा कि ब्रह्माजीकी आज्ञासे इन्होंने इन्द्र

का पद पाया है आप लोग दूसरे इन्द्रकी चेष्टा कर रहे हैं इसलिये आपको ब्रह्माकी बात झूंठी न करनी चाहिये और मैं आपके संकल्प को भी मिथ्या नहीं बनाना चाहता आप जिसको इन्द्र बनाना चाहते हैं वह महाबली वीर्य्यशाली पुरुष पक्षियोंका इन्द्र होवे देवराज इन्द्र आप से प्रार्थना कर रहे हैं आप उन पर प्रसन्न हांवें तब उन मुनियोंने कश्यपजी से कहा कि हम सबोंने इन्द्रकी उत्पत्तिके निमित्त और आपकी सन्तानके उपजानेके हेतु इस यज्ञका आरम्भ किया है सो हमारे कर्मफलको लेकर जो कुछ अच्छा जान पड़े वही कीजिये इसी काल में यशस्विनी दक्षपुत्री वनिता ऋतुस्नानपूर्वक व्रत करके शुचि होकर पुत्रकी कामना से पतिके पास गई कश्यपजी उससे बोले देवि तुम जो चाहती हो वह पूरा होगा मेरे संकल्प और बालखिल्यमुनिके तपोबल से तुम्हारे गर्भ से बड़े भाग्यवान तीनों भुवन में प्रधान दो पुत्र उत्पन्न होंगे त्रिलोक में पूजे जावेंगे भगवान् कश्यपजी फिर वनिता से बोले प्यारी तुम अप्रमत्त होकर अपने शुमहानुगर्भको धारण किये रहना क्योंकि यह लोकोंमें माननीय महावीर कामरूपी दोनों पक्षी सम्पूर्ण पक्षियों पर अधिकार फैलायें रहेंगे अनन्तर कश्यप प्रजापति प्रसन्न हृदय से देवराजसे बोले कि हे पुरन्दर ! तुम्हारी सहायता करने वाले दो पुत्र उपजेंगे तुम सदा इन्द्र बने रहोगे तुम कभी ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मणोंका अपमान न करना यह सुन इन्द्र स्वर्गको चले गये समय आने पर वनिताने अरुण और गरुड़ यह दो सन्तानें प्रसव कीं जिनमें अरुण विकलांग होकर सूर्य्यके सारथी बने गरुड़ पक्षियों के इन्द्र पद पर बैठे ।

नोट—श्रीमान् पण्डितजी देखिये यहां वनिता नामकी स्त्री के गर्भसे दो पक्षी उत्पन्न होगये । इस सिद्धांत ने मिस्टर डारविन साहिबको भी जो यह लिखते हैं कि पशुपक्षियों से क्रमशः मनुष्योत्पत्ति होगई मातकर दिया क्योंकि यहां तो डाइरेक्ट स्त्री के गर्भसे पक्षी उत्पन्न कर दिये इसीसे तो हम कहते हैं कि आप इन प्रमाणों पर विचार करें ।

बृहस्पतिजीके पुत्र कचका शुक्राचार्य्यके निकट जा संजीवनी विद्या पढ़ना फिर उसका राक्षसों को टुकड़े २ कर कुत्ते स्यारोंको खिलाना और शुक्र महाराजका जीवित निकालना ।

महाभारत आदिपर्व अ० ७६ ॥

जब देवताओं और राक्षसों में संग्राम हुआ तब देवोंने अंगिरा के पुत्र बृहस्पति और असुरोंने शुक्रको पुरोहित किया ये देवता युद्ध में जितने दानवोंको मारते शुक्र संजीवनी विद्यासे उनको जिला दिया करते थे परन्तु बृहस्पतिको यह विद्या नहीं आती थी इससे देवगण अत्यन्त दुखी होते थे तब देवोंने बृहस्पतिके बड़े पुत्र कचके निकट जा कर कहा कि हम आपकी शरण हैं अब बचाओ, सहायता करो अर्थात् तेजस्वी शुक्रमें जो विद्या है उसको जाकर सीखआओ हमको यज्ञांश देंगे तुम्हीं उनकी पुत्री देवयानीकी उपासना कर सकोगे और वह भी तुम्हारे आचार विचारसे संतुष्ट हुये तो तुम संजीवनी विद्या को अवश्य ही प्राप्त होगे यह सुन कचने शुक्रजीके पास जाकर कहा कि मैं अंगिराका पौत्र और बृहस्पतिका पुत्र हूं और मेरा नाम कच है आप मुझको शिष्य बनाइये मैं सहस्रों वर्ष तक ब्रह्मचर्य्य धारण करूंगा आप आज्ञा कीजिये शुक्र बोले तुम्हारा कल्याण होवे तुम्हारी बात मानली वह वहां रह कर कार्य्य करने लगे इस बीचमें देवयानी कचसे और कच देवयानीसे भी प्रसन्न रहते तब व्रतानुष्ठान करते पांच सौ वर्ष व्यतीत होगये तब एक दिन कच निर्जन वनमें गौकी रखवाली कर रहे थे दैत्योंने यह जान कर कि यह कच है और संजीवनी विद्या के अर्थ आये हैं क्रोध कर मार डाला और उनको टुकड़े २ कर स्यार और कुत्तोंको दे दिया ।

हत्वा शालावृकेभ्यंश्च प्रायच्छल्लवशः कृतम् ॥

आ० प० ७६ । २९ ॥

इतने में गौयें घर पर आईं और कच नहीं आये तब थोड़ी

देर देख कर देवयानीने अपने पिता शुक्रसे कहा कि सूर्य्य छिपा चाहते हैं गौ घर आगईं परन्तु कच नहीं आये पिताजी मुझको निश्चय जान पड़ता है कि कच मारे गये सत्य कहती हूं विना कचके नहीं जी सकती शुक्र बोले कच चले आओ तुम मरे हो मैं तुमको जिलाता हूं यह कह कर मृतक संजीवनी विद्या पढ़ कर कचको बुलाया कच बुलाये जाते ही स्यार कुत्तोंके शरीरको फाड़ और निकल कर आपहुंचे और संजीवनीविद्याका प्रभाव देख कर प्रसन्न हुए देवयानीने उनसे पूंछा कि इतनी देर क्यों हुई उसने कहा मेरी गौ एक वृक्षकी छांह में थी असुरोंने देख मुझसे पूंछा कि तुम कौन हो मैंने कहा कि मैं कच हूं दानवोंने मार कर मेरे टुकड़े २ कर स्यार कुत्तोंको खिलादिये।

अनन्तर देवयानीकी आज्ञानुसार कच फूल बटोरनेके लिये किसी वनको गया दानवोंने फिर भी उसको देख।

वनं ययौ कचोविप्रो ददृशुर्दानवाश्चते ।
पुनस्तं पेषयित्वा तु समुद्राम्भस्यमिश्रयन् ॥ ७६।४०

पीसकर समुद्रके जलमें घोल दिया अनन्तर देवयानीने उनको देर तक न आते देख कर पिताको वह समाचार सुनाया इससे फिर शुक्र विद्याके बलसे बुलाये गये उन्होंने वह सब हाल कह सुनाया इस के पीछे तीसरी वार उनको वैसे ही देख कर जला कर चूर २ कर मदिरासे मिला कर उन शुक्र ही को दे दिया आगे देवयानीने फिर पितासे कहा कि मैंने कचको फूल बटोरनेके लिये भेजा था अब भी आते नहीं दीखते मुझको निश्चय जान पड़ता है कि वह मरे या मारे गये मैं निश्चय कहती हूं उस कचके विना मैं न जीऊंगी। शुक्र बोले बेटी बृहस्पतिका पुत्र कच मारा गया विद्याके बलसे जिलाता हूं तिस पर भी असुर लोग मार डालते हैं देवयानी तुम शोक न करना उसको जीवित रखना मेरा असाध्य होगया है तब देवयानीने कहा कि मैं विना भोजनोंके रहूंगी क्योंकि उनका स्वरूप मुझे बड़ा प्रिय था तब शुक्र दैत्यों पर अप्रसन्न हुए फिर संजीवनी विद्यासे कचको बुलाया कचने गुरुके पेटमें रह कर गुरुहत्याके भयसे भयभीत होकर धीरे २ उत्तर दिया तब शुक्रने कहा तुम कौन पथसे मेरे पेटमें जा घुसे हो

कच बोले कि हे गुरु आपकी कृपा से मेरी स्मरणशक्ति लुप्त नहीं हुई जो जिस प्रकार से हुआ वह सब स्मरण है इसलिये कि कहीं हमको गुरुके पेट फाड़नेके लिये पापकी कीचड़ में डूबना न पड़े इसलिये पेट में बसनेका अपारकष्ट सहरहा हूं असुरने मुझको मार जलाय और चूर २ कर मदिरा में घोलकर आपको दे दिया था पर हे विप्र आपके रहते आसुरिकमाया क्योंकर ब्राह्मणिकमायासे बढ़ सकेगी तब शुक्र ने देवयानीसे कहा बेटी देवयानि! इस समय तुम्हारा प्रियानुष्ठान करूं मेरे नाश होनेसे कच जी सकता है क्योंकि कच मेरे पेटके भीतर है मेरे विना पेट फाड़े नहीं निकल सकेगा देवयानी बोली कचका नाश और आपकी मृत्यु यह अग्निवत् दोनों शोक ही मुझको जलाने लगे हैं कचके नाश होने से मेरा जीवन न रहेगा आपको कोई हानि पहुंचनेसे भी जी नहीं सकती तब शुक्रने कचसे कहा कि हे बृहस्पतिपुत्र कच! देवयानीके प्रेमी हो देवयानी भी तुमको भज रही है ऐसी दशामें यदि तुम कचस्वरूप इन्द्र न हो तो आज सञ्जीवनी विद्या तुमको देता हूं तुम उसे ले केवल ब्राह्मणके विना दूसरा जन मेरे पेटमें घुसके फिर जीवन पाकर नहीं निकल सकता सो तुम यह विद्या लो मैं तुमको जीवन देता हूं बेटा मेरी देहसे निकलकर पुत्ररूपी होकर मुझको जिलाओ। गुरुसे विद्या-लाभ करके विद्यावान होकर धर्मपथ पर दृष्टि रखना अकृतज्ञ न होना कचने गुरुसे संजीवनी विद्या लाभ कर जिस प्रकार पूर्णमासीके दिन सूर्य्यके अस्त होने पर पूर्ण चन्द्रमा प्रकट होता है उसी भांति शुक्रकी कांखको फाड़कर उसी क्षण साक्षात् निकल आये।

गुरोः सकाशात् समवाप्य विद्याम्।
भित्वा कुक्षिं निर्विचक्रामविप्रः॥ ७६। ५९।

अनन्तर ब्रह्मपुंज शुक्रको मरे और गिरे हुए देखकर संजीवनी विद्यासे उसको जिलाय और उठा करके उस सिद्ध संजीवनी विद्याको प्राप्त कर गुरुको भक्तिसे प्रणाम कर अपने घरको आये।

यही कथा मत्स्यपुराण अ० २५ में भी लिखी है।

नोट—उपरोक्त कथा पर आप विचार करें क्या आपकी सम्मति में यह होना सम्भव है इसके अतिरिक्त शुक्राचार्य्य राक्षसोंके पुरोहित थे तो क्या वह नर मांसके खाने वाले भी थे क्योंकि जब राक्षसों ने कचको चूर्ण कर और तीसरी बार उसके शरीरको जला मदिरा में मिला गुरु शुक्राचार्य्यको पिला दिया, उस समय उनको मनुष्य शक्तिकी गंध भी नहीं आई इसके उपरान्त पेट खोलना कोख फाड़कर निकलना इन असम्भवबातोंका क्या ठीक अब यदि मान भी लिया जावे कि ऐसी संजीवनीविद्या शुक्राचार्य्यके पास थी तो महाभारतमें मृतक देवासुरोंको क्यों नहीं जीवित कर लिया एवं अपने आप स्वयं उन विद्याके होते भी मरगये।

हमारी सम्मतिमें वर्त्तमान सनातनधर्मी इस मृत संजीवनी-विद्याकी खोज कर मृतपितरोंको जीवित करलें तो बड़ा ही उपकार हो।

—०—

राजा ययातिका अपने पुत्र पुरुको बुढ़ापा देकर युवापनको लेना फिर एक सहस्र वर्ष आनन्द करने के पीछे फिर पुत्रसे बुढ़ापा लेना तरुणाई देना।

महाभारत आदिपर्व अ० ८४ व ८५।

राजा नहुषके पुत्र ययाति सम्राट् हुए जिन्होंने पृथिवीका पालन कर अनेक यज्ञ किये जिनके देवयानीके गर्भसे यदु, तुर्वसा, शर्मिष्ठाके गर्भसे द्रुह्यं, अनु और पुरु उत्पन्न हुए राजा बहुत काल तक राज्य करते रहे अन्तको कठोर जरासे पकड़े गये तब राजाने यदु, पुरु, तुर्वस, द्रुह्य और अनु इन पांचों पुत्रोंको बुलाकर कहा कि मैं युवापन प्राप्त कर मनमाना भोग करना चाहता हूं, तुम मेरा बुढ़ापा ले लो तो मैं तुम्हारे यौवनसे बहुत काल तक सुख भोगूं मैं दीर्घयज्ञमें दीक्षित था उस कालमें मुनि शुक्राचार्य्यके शापसे जराग्रस्त हुआ हूं इसलिये मैं संतापित हो रहा हूं परन्तु किसीने भी स्वीकार न किया तब छोटे

पुत्र सत्यविक्रमी पुरुने कहा कि आप मेरे यौवनको ले नये शरीर में विराजिये मैं आपकी आज्ञासे जरा लेकर राज्यशासन करता हूं यह सुन राजाने तप और वीर्य्यके बलसे उस महात्मा पुत्रमें बुढ़ापा प्रविष्ट कराया राजा अपने पुत्र पुरुका यौवन पाकर युवा बने, पुरु ययातिकी वृद्धावस्था लेकर राज्यशासन करने लगे ।

एवमुक्तोययातिस्तुस्मृत्वा काव्यंमहातपाः ।
संक्रामयामासजरांतदापूरौ महात्मनि ॥३४॥

तब राजाको इस नये शरीरमें दो पत्नियोंसे आनन्द करते हुए सहस्र वर्ष व्यतीत होगये और भोगोंसे तृप्त न हुए तब बुद्धिमें यह विचार कर कि आगमें घृत छोड़नेसे जिस प्रकार अग्नि बढ़ता है उसी प्रकार कामोत्पादक वस्तुओंके देखनेसे काम बढ़ता ही है इसी तरह अनेक प्रकारसे मनको समझाकर अपने पुत्रको यौवन दे बुढ़ापा ले लिया ।

नोट—कहिये पंडितजी आपकी बुद्धिमें यह आता है कि पिताने बुढ़ापा दे पुत्रका यौवन ले लिया हो यदि ऐसा उस समय सम्भव था तो फिर क्या कर्मोंका फल निष्फल हो जाता था । पं०जी पुराणोंके लेखोंको कभी आपने विचारा भी नहीं। इनका परस्पर मिलान महर्षि स्वामी दयानन्दजीनेही किया तिस पर भी आप सब अप्रसन्न होते हैं ।

—०—

धृतराष्ट्र महाराजके सौ पुत्रोंकी अद्भुत उत्पत्ति ।

महाभारत आदिपर्व अ० ११५ ।

एक समय भगवान् द्वैपायन भूख और थकावटसे कातर होकर गांधारीके पास आये गांधारीने उनको सन्तुष्ट किया उससे व्यासने गांधारीकी प्रार्थनाके अनुसार यह वर दिया कि तुम्हारे पतिके समान

वीर्य्यवान सौ पुत्र उत्पन्न होंगे अनन्तर गांधारी योग्यकालमें धृतराष्ट्र से गर्भवती हुई गर्भ होनेके पीछे दो वर्ष बीते पर तब भी सन्तान नहीं हुई इससे वह बड़ी दुखी होने लगी। आगे यह सुनकर कुन्तीके बाल सूर्य्यके समान पुत्र भये हैं अपने गर्भको स्थिर देखकर चिन्तायुक्त होकर अति मानसिकपीड़ा से व्याकुल होकर धृतराष्ट्रसे छिपकर यत्न पूर्वक अपने पेटमें आघात किया उससे दो वर्षका वह गर्भ कटी हुई लोहेकी गेंदके समान मांस पेशीस्वरूपमें भूमि पर गिरा त्योंही व्यास जी यह जान वहां पहुंचे और उसको देखकर कहा कि तुमने यह क्या किया है गांधारीने कहा कि कुन्तीके सूर्य्यके समान पुत्र उत्पन्न हुए सुनकर अति दुःख से मैंने पेटमें चोट मारी आपने पहिले मुझको वर दिया था कि सौ पुत्र उत्पन्न होंगे अब सौ पुत्रोंके बदले मांस पेशी पैदा हुई है तब व्यासजी ने कहा कि जो कहा सो ही होगा अब घृत से सौ घड़े भरकर निराले में यत्न से रक्खो और ठण्डे जलसे इस मांसपेशीको छिड़काओ अनन्तर इसके छिड़काते २ मांसपेशी बहुत हिस्सों में बटगई और प्रत्येक भाग अंगूठे के पोरेके समान हुआ अनन्तर वह सब मांसपेशी घृत भरे घड़ोंमें रक्षित होकर अच्छे गुप्तस्थानमें भलीभांति रक्खी जाने लगीं।

स्वनुगुप्तेषुदेशेषु रक्षां वैव्यदधात्ततः ॥ २१ ॥

व्यासजीने कहा कि दो वर्षके पीछे यह सब घड़े खोलना यह कह तपके लिये चले गये फिर योग्य कालमें उन टुकड़ोंसे पहले राजा दुर्योधनका जन्म हुआ।

फिर एक महीनेके अन्तर धृतराष्ट्रके सौ पुत्र और कन्याने जन्म लिया।

नोट—इस पर आप स्वयं विचार करें।

—०—

गौतममुनि का वीर्य्य एक सरकण्ड पर गिरना—उससे पुत्र और पुत्रीका उत्पन्न होना जिनका राजा शान्तनुका कृपापूर्वक पालन कर कृश और कृपी नाम रखना।

आदिपर्व अ० १३० ।

एक समय गौतममुनि तपस्या में दृढ़ता से लग रहे थे तब देवराजने जानपदीनाम्नी देवबालाको भेजा वह उनके आश्रम पर पहुंच उनको लुभाने लगी गौतमने उस परमसुन्दरीको देखा तो उनके नेत्रों में प्रफुल्लता आगई उनके हाथोंसे धनुषबाण धरती पर गिर पड़ा देह कांपने लगी तो भी उत्तम ज्ञान और तपस्या में दृढ़ प्रतिज्ञा रहने से वह उत्तम धीरज धरे रहे परन्तु उसके देखने मात्रके विकार ही से उनका वीर्य्य गिर गया था पर वह उस बातको नहीं जान सके अनन्तर वह धनुष बाण कृष्णसार मृगकाचर्म और उस आश्रम और अप्सराको तजकर अन्य स्थान में चलेगये उनका वीर्य्य—

जगामरेतस्तत्तस्य शरस्तम्बे पपात च ॥

सरकण्डेकी लकड़ी पर गिरा था इसलिये वह दो भाग होगया उसमें एक कन्या और एक पुत्रका जन्म हुआ ।

शरस्तम्बे च पतितं द्विधातद्भवन्नृप ! ।
तस्याथ मिथुनं जज्ञे गौतमस्यशरद्वतः ॥

अनन्तर मृगयाके लिये मन माने घूमने वाले महाराज शान्तनु के एक सैनिकने वनमें उस पुत्र और कन्याको देखा वह धनुर्वाण और मृगकाचर्म देख कर समझा कि यह दोनों धनुर्वेदमें दक्ष किसी ब्राह्मण की सन्तान हैं तब उस सैनिक ने धनुर्वाण और दोनों बच्चोंको लेजाकर नरनाथको दिखलाया उन्होंने यह कह कर कि यह मेरी सन्तान हैं ले लिया और उनके सब संस्कार किये चूंकि राजाने कृपापूर्वक उनको पाला था इसलिये उनका कृपा और कृपी नाम रक्खा ।

नोट—यह कथा उससे भी अद्भुत है वहां तो रसौलीको घड़ेमें रखनेसे पुत्रोत्पत्ति हुई परन्तु यहां सरकण्डेके ऊपर.... गिरने से

पुत्र और कन्याकी उत्पत्ति होगई प्यारे सनातनी भाइयो कुछ तो विचार करते न कि केवल "हरे नमः" महाराज ही कहते चले जाओगे मूर्खसे मूर्ख किसान भी इस बातको जान सकता है कि अंकुरोत्पत्ति जबही होती है जब कि पृथ्वी और बीज रीत्यनुसार मिलते हैं न कि विपरीत रीतिसे ॥

एक हरिणीके गर्भसे ऋष्यशृंगीका जन्म होना ।

वनपर्व अ० ११० ।

कश्यपमुनि एक तड़ागके निकट तपस्या करते थे बहुत काल बीतने पर एक दिन जलमें स्नान करते समय उर्वशी अप्सराको देखते ही उनका वीर्य्य स्खलित होगया उस वीर्य्यको एक हरिणी पीगई वह बहुत प्यासी थी इसलिये गर्भिणी होगई वह पहिले जन्मकी देव-कन्या थी जो ब्रह्माके शापसे हरिणी बनी थी और ब्रह्माने उससे यह भी कह दिया था कि जब तेरे गर्भसे मुनिका जन्म होगा तब ही तू इस योनिसे छूटेगी ब्रह्माका ऐसा वचन अमोघ होनेके कारण उस हरिणीके गर्भसे महामुनि शृंगीऋषिका जन्म हुआ ।

तस्यां मृग्यां समभवत्तस्यपुत्रो महानृषिः ।
ऋष्यशृंगस्तपोनित्यो वनएवाभ्यवर्त्तत ॥

जो तप करनेके कारण सदा वन ही में रहने लगे ।

तस्यर्षेः शृङ्गंशिरसिराजन्नासीन्महात्मनः ॥ ३६ ॥

हे राजन् ! महात्मा शृंगीऋषिके सिर पर दो सींग थे इसलिये उनका यह नाम हुआ ।

पण्डितजी—और लीजिये हरिणीसे मनुष्यकी उत्पत्ति होने लगी अब क्या अब तो जिससे चाहे मनुष्य उत्पन्न कर लीजिये ।

—०—

राजा युवनाश्व की कोख से पुत्र का उत्पन्न होना।

म० भा० अनपर्व अ० १२६।

इक्ष्वाकुवंश में युवनाश्व नाम एक राजा हुए जिन्होंने अनेक यज्ञ किये थे परन्तु कोई पुत्र न था राज अपना राज्यमंत्रियों को दे आप योगाभ्यास को चले गये और एक दिन भूख प्यास से व्याकुल हो भृगु आश्रम में पहुंचे उसीरात्रि में भृगने सौद्युम्न राजा के वास्ते पुत्रेष्टियज्ञ कराया था राजायुवनाश्व सौद्युम्न से पहिले उस आश्रम में पहुंचा जहां मंत्र से पवित्र किये हुए कलश में जल भरा रक्खा था ऋषि लोग थक कर सब सोगये थ राजा ने जाकर उसी समय ऋषियों से जाकर जल मांगा परन्तु सूखे कण्ठ का कोमल शब्द ऋषियों ने न सुना तब राजाने कलश के पास जाकर जल पीलिया और बहुत शान्त हुआ जब ऋषि उठे तो उन्होंने कलश को जलसे खाली देखा और सब लोगों से पूछा कि यह किस का निन्दितकर्म है राजा युवनाश्व ने कहा कि यह मेरा कर्म है तब भृगु ने कहा कि यह कर्म तुम ने अच्छा नहीं किया यह जल पुत्र के वास्ते मंत्रों से शुद्ध किया गया था मैंने तप करके पुत्र के वास्ते यह जल रक्खा था। इसलिये तुम्हारे अतुल पराक्रमी पुत्र होगा जो अपने बलसे इन्द्र को भी परास्त करेगा और गर्भाधान का दुःख भी तुम को प्राप्त न होगा तब सौ वर्ष पूरे होनेके पश्चात् महात्मा राजा युवनाश्व की बांईं कोख फटी और सूर्य्य के समान एक पुत्र उत्पन्न हुआ परन्तु राजा युवनाश्व मरे नहीं यह एक अद्भुत कर्म हुआ।

वामपार्श्वं विनिर्भिद्य सुतः सूर्य इवस्थितः।
निश्चक्राम महातेजा न च तं मृत्युराविशत्॥२७॥

तब महातेजस्वी इन्द्र उस पुत्रको देखनेके वास्ते आये इन्द्रसे देवताओंने कहा कि इसे कौन पालेगा उसने अपनी छनअंगुली उस बालक के मुखमें दे दी और कहा कि मैं इसको पालूंगा तब ही इन्द्रादि देवताओं ने उस बालकका नाम मानधाता रक्खा इन्द्रकी छनअंगुलीको पीकर वह बालक बढ़ने लगा।

पंडितजी—अभी तक गणने अथवा मनुष्य वीर्य्यसे अद्भुत २ उत्पत्ति आपको सुनाई अब आपने मंत्रोंसे पढ़े जलके पीनेसे राजाकी कोखसे पुत्र उत्पत्ति सुनी अब और क्या सुनावें। राजाके दूधके स्थान नहीं जसे उसके लिये इन्द्रकी अंगुलीने काम दिया सामान्यरीतिसे सन्तान १० व ११ व १२ महीनेमें उत्पन्न होती है परन्तु राजाके पेट में १०० वर्ष गर्भ रहा देखिये श्रीमान् यह पुराणोंके चमत्कार हैं।

—०—

राजा सोमकका पुत्रोंके अर्थ जन्तु नामक पुत्रकी चर्बीसे हवन करना उसकी गंधसे रानियों के पुत्र उत्पन्न होना।

वनपर्व अ० १२८।

सोमक नाम राजा था उसके १ स्वरूपवती स्त्री थी जिसने पुत्र उत्पन्न करनेके लिये बड़े यत्न किये पर कोई पुत्र न हुआ जब राजा बड़ा हुआ तब जन्तु नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ माताओंने उसको लेकर पिछवाड़े फेंकदिया जब उस जन्तुको चींटियोंने काटा तो उसने भयानकशब्द किया तब सब माताओंने बहुत दुखी होकर जन्तुको रोनेसे रोका परन्तु वह न रुका और उसके रोनेके शब्दको राजा सुन मंत्रियों समेत उठकर पिछवाड़े गया वहांसे पुत्रको लेकर रणवासमें आया और कहा कि एक पुत्र वालेको सदा सन्देह रहता है इसलिये उसको धिक्कार है एक पुत्रका होना अच्छा नहीं मैंने पुत्रकी इच्छा से सौ स्त्रियां कीं उसमें से किसी एक के केवल यही जन्तु नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ है सो भी उत्तम नहीं इससे अधिक और मुझको क्या दुःख होगा इसके उपरान्त मेरी और मेरी स्त्रियोंकी अवस्था व्यतीत होगई इसलिये हम सबके प्राण इसीमें धरे रहते हैं यदि कोई ऐसा उपाय कठिन भी हो जिससे सौ पुत्र उत्पन्न होजावें तो भी मैं करूंगा।

ऋत्विक्ने कहा ऐसा कर्म्म है परन्तु आप जब कर सकें तब राजाने कहा चाहे मेरे करने योग्य हो चाहे अयोग्य तो भी मैं सौ पुत्रों की चाहनाके लिये करनेको उद्यत हूं ऋत्विक्ने कहा कि आप जन्तुसे

यज्ञ कीजिये तो आपके सौ पुत्र होंगे जब चर्बीका होम किया जायगा तब उसके धुएंको सूंघके तुम्हारी सब स्त्रियोंके पुत्र हो उत्पन्न होंगे उस यज्ञमें मरनेसे उसी स्त्रीके जिसका यह अब पुत्र है उसीके फिर उत्पन्न होगा और उसीकी कोख में सोनेका एक चिह्न रहेगा। पुनः-

तस्यामेव तु तेजस्तुभविता पुनरात्मजः।
उत्तरे चास्य सौवर्णं लक्ष्मपार्श्वे भविष्यति ॥२१॥

वनपर्व अ० ॥२७॥

राजाने पुत्रकी इच्छासे सैमिकयज्ञ आरम्भ कर जन्तुको मारना चाहा तब उसकी माताने हाहाकार मचाया तो भी ऋत्विक्ने बलसे उसको छीन उसकी चर्बीसे हवन किया स्त्रियोंने उसकी गन्ध सूंघकर महा हाहाकार मचाया यज्ञके प्रतापसे सब स्त्रियोंके गर्भ रहा। ६।

सर्वाश्च गर्भानलभंस्ततस्ताः परमाङ्गनाः।

दशवें महीने में राजा सोमकके एकसौ पुत्र उत्पन्न हुए उनमें जन्तु सबसे बड़ा हुआ सब माताओंको जैसा जन्तु प्यारा था वैसा कोई पुत्र नहीं। उसकी कोखमें सुवर्णका चिह्न भी था और वही सबमें अधिक गुणवान था।

नोट—ऋषि सन्तानो! कहां तो वेदोंकी यह आज्ञा कि "मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्०" अन्यत्र इसीके अनुयायी महर्षिगणोंका यह उपदेश है कि "अहिंसा परमोधर्मः" और कहां यज्ञ जैसे पवित्र कर्म्ममें यह घोरहत्या और बालककी चर्बीका हवन?

सज्जनो! विचारो तो सही कि वास्तविक आपके पुरुषा ऐसे ही निर्दयी एवं अपवित्र कर्म्मोंके कर्त्ता थे यदि नहीं तो इस दुराग्रहको आप क्यों नहीं छोड़कर एक मुख हो कह देते हो कि यह वाममार्गियों की कपोल कल्पना है न कि ऋषि मुनियोंकी पदार्थविज्ञानी एवं भिषग्वर इस बात पर विचार करें कि चर्बीके जलानेसे क्या गर्भस्थिति हो सकती है ऐसी ही बातों ने तो सनातनधर्म्मका गौरव इतर देशनिवासियोंकी दृष्टिमें घटा दिया परन्तु शोक है कि फिर भी सनातनी भाई एक स्वर होकर यह नहीं कहते कि यह पुराण व्यास ऋषिकृत नहीं हैं।

अष्टावक्रका गर्भके भीतर बोलना और पिताके शापसे आठ जगह टेढ़ा होना।

वनपर्व अ० १३।

उद्दालक नाम ऋषिके कहोड़ नामी एक शिष्य थे वह गुरुकी बहुत सेवा करते थे और उनके ही घरमें रहते थे इस कारण बहुत दिन पढ़ते रहे जब उद्दालकने कहोड़को अपना भक्त जाना तो अपनी पुत्रीका विवाह कहोड़के साथ कर दिया तदनन्तर कहोड़की स्त्रीको गर्भ रहा एक दिन उस बालकने गर्भ ही में से अपने पितासे कहा कि हे पिता तुम समस्त रात्रि पढ़ते ही रहते हो सो यह कर्म उचित नहीं।

सर्वाङ्ग रात्रि मध्ययनं करोषि नेदं—
पितः सम्यगिवोपवर्त्तते ॥९॥

शिष्योंके मध्यमें महर्षि कहोड़ने अपनी निन्दा सुन क्रोध हो कर कहा कि जो तू गर्भके भीतर ही से बोलता है इसलिये तू आठ जगहसे टेढ़ा होगा जिसके कारण ही उनका नाम अष्टावक्र हुआ।

नोट—पंडितजी साहिब श्रीकृष्ण महाराजने गीतामें कहा है कि "अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्"। अर्थात् प्राणियोंको अपने किये हुए कर्मोंके अनुसार फल मिलता है जैसा कि बाबा तुलसीदासजीने भी कहा है कि:—

कर्म प्रधान विश्व कर राखा।
जो जस कीन तैस फल चाखा॥

तो बताओ बच्चेने कर्म ही क्या किया यदि कहो कि उसने पेटमें से कहा कि सम्पूर्ण रात पढ़ना ठीक नहीं, प्रथम तो गर्भमें बोलना ही ठीक नहीं और यदि बोला और उपरोक्त बात कही तो क्या पाप किया जिस पर पिताने ऐसा शाप दिया कि तू आठ जगहसे टेढ़ा होगा ऐसा ही हुआ देखिये महाराज विना अपराधके ऐसा कठोर दण्ड क्या यही महात्मापनका कार्य है।

एक मत्स्यका बढ़ना और प्रलयके समय नावका रोकना

वनपर्व अ० १८१।

सूर्य्य के पुत्र महाप्रतापवान और प्रजापतिके समान तेजस्वी मनु हुए जिन्होंने बदरिका आश्रममें जाकर ऊर्द्धबाहु होकर एक चरण खड़े होकर दश सहस्र वर्ष जिह्वा शिर और नेत्रोंको स्थिर करके घोर-तप किया एक दिन भीगे वस्त्र जटाधारी मनुके पास जाकर एक मत्स्य बोला कि भगवान् मैं बहुत छोटा हूं इससे मुझको बड़े मत्स्योंसे बड़ा डर लगता है आप उनसे हमारी रक्षा करो मैं भी आपको इस प्रकार बदला दूंगा यह सुन दयासे उसको पकड़ लिया फिर उसको एक पात्र में छोड़ दिया और पुत्रके समान उसका पालन करने लगे जब वह बहुत बड़ा होगया तो वह बोला कि भगवान् मेरे लिये कोई दूसरा स्थान बतलाइये तब उन्होंने उस बरतनसे निकालकर बावड़ीमें डाल दिया बहुत वर्ष बीतने पर जब वह उसमें भी न समाया तो आठ कोस लम्बी चौड़ी गंगामें डाल दिया जब वह उसमें भी बढ़ने लगा तब मुनिसे कहा कि मैं चल फिर नहीं सक्ता इसलिये आप प्रसन्न होकर समुद्रमें डाल दीजिये पुनः वह हंसकर बोला कि आपने मेरी बड़ी रक्षाकी है इसलिये मैं कहता हूं कि थोड़े ही कालमें इस सब चर और अचर जगत्की प्रलय होगी यह समय सब लोगोंके नष्ट होनेका आया है इसलिये हम आपको हितकी बात सुनाते हैं कि आप एक नाव बनाइये और उसमें दृढ़ रस्सी बांधिये जब प्रलयका समय आवेगा तब आप सप्त ऋषियोंके सहित उसी नावमें चढ़ियेगा और उसी नावमें सब जगत्के वस्तुओंके बीजोंको रक्षापूर्वक क्रमसे रख लीजियेगा हे मुनिजन आप उस नावमें बैठ हमारा मार्ग देखना तब हम आवेंगे आप हमारे सिर पर सींग देखकर हमको पहचान लेना अब हम जाते हैं आप बिना मेरी सहायताके उस घोर जलको तैर नहीं सकते आप मेरे वचनमें शंका मत कीजिये मत्स्यके वचन सुन मनुने कहा कि हम ऐसा ही करेंगे अनन्तर वे दोनों परस्पर आज्ञा लेकर इच्छानुसार चले गये उसके पश्चात् महाराज मनुने उसके कथनानुसार सब जगत्की वस्तुओं को इकट्ठा किया फिर एक सुन्दर नावमें बैठ कर घोर तरङ्गवाले हिमालयके शिखरसे बांध दिया फिर उस मत्स्यने कहा कि हे ऋषियो

मुनिलोग इनको ही प्रजापति कहते हैं हमारा नाम ब्रह्मा है हमने मत्स्यरूप धारण कर इस आपत्तिसे आपको छुड़ाया है।

नोट—श्रीमान् इस कथाकी ओर कानोंको छोड़ कर प्रलय की ओर आप ध्यान दीजिये कि जब स्थावर जंगमकी प्रलय हुई तो रस्सी नौका जड़वस्तु और रुप्त ऋषि मछली शरीरधारी यह किस प्रकार शेष रह सकते हैं यदि रहे तो प्रलय कैसी ?।

——————×÷∻:०:∗÷×——————

विश्वामित्रने चुराकर आपत्तिकालके समय कुत्तेका मांस पकाया फिर उसको इन्द्र बाज बन लेगया।

अनुशासनपर्व अ० ३।

वीर्य्यशाली विश्वामित्रने तपस्याके प्रभावसे महात्मा वशिष्ठके एकसौ पुत्रोंका नाश किया था उनके शरीर में क्रोध उत्पन्न होने पर उन्होंने बहुतेरे महातेजस्वी यातुधान राक्षसोंको उत्पन्न किया एक सौ ब्रह्मऋषियोंसे युक्त विद्वान् अत्यन्त महान् कुशिकवंश इस मनुष्य लोकमें ब्राह्मणोंके द्वारा स्तुतियुक्त होकर स्थापित हुआ। ऋचीकके पुत्र महातपस्वी शुनःशेफ पशुत्वको प्राप्त होकर महायज्ञसे विमोक्षित हुए हरिश्चन्द्रने निजके तेजके सहारे यज्ञमें देवताओंको संतुष्ट कर बुद्धिमान् विश्वामित्र पुत्रत्व लाभ किया देवताओंने विश्वामित्र को देवरात नामक जो पुत्र प्रदान किया उसके ज्येष्ठ तथा राजा होन पर भी उनके अन्य पुत्रोंने उसे प्रणाम नहीं किया इसीसे उन्होंने उन पचास पुत्रोंको शाप दिया वे सब चांडाल होगये। इक्ष्वाकुका पुत्र त्रिशंकु वशिष्ठके शापसे चांडाल होगया इसीसे उसके बांधवोंने उसे परित्याग किया अनन्तर उसके दक्षिण दिशाको अवलम्बन करके अवाकाशिरा होने पर विश्वामित्रने स्वर्ग भेजा।

विश्वामित्रकी कौशिकी नामकी देवर्षियोंसे सेवित एक बहुत बड़ी नदी थी उस कल्याणी पुण्य सलिलवाली श्रेष्ठ नदीकी देवता और ब्रह्मर्षि लोग सदा सेवा करते थे। पञ्चबलवती उत्तम वशिष्ठरम्भा नामकी अप्सरा उसकी तपस्यामें विघ्न करनेसे शापवशसे शिला हो गई थी।

इसी ऋषिके शापके भयसे पहिले समयमें वशिष्ठमुनि पत्थर-खंडके सहित जलमें डूबे थे और विशाप होकर जल से उठे थे तभी से पुण्य सलिलवाली महानदी महात्मा वशिष्ठके उस ही कर्मसे विपाशा नामसे विख्यात हुई।

विश्वामित्र त्रिशंकुके यज्ञ करने में प्रवृत्त हुये तब वशिष्ठमुनि के पुत्रोंने उन्हें यह कहके शाप दिया कि जब तुम चांडालके पुरोहित हुये हो तो स्वयं चांडाल हो जाओगे इस ही शापके सत्य होने के निमित्त किसी आपत्तिकालमें विश्वामित्रने चौर्य्यवृत्तिसे कुत्तेका निकृष्ट मांस चुराकर उसे पकाना आरम्भ किया इतने ही समयमें इन्द्रने बाजपक्षीका रूप धारणकर उस मांसको हरण किया। इस समय विश्वामित्र ने वचनसे भगवानृइन्द्रकी स्तुतिकी इंद्रने प्रसन्न होकर उन्हें शापसे मुक्त कर दिया।

नोट—प्यारे सनातनी भाइयो! क्या वास्तव में अब भी ऐसी कथा पढ़कर कि विश्वामित्र ने चुराकर खाने के लिये कुत्तेका मांस पकाया यही कहते रहोगे कि यह व्यास प्रणीत है? कारण कि जगली जातको छोड़ जिनको कि आप म्लेच्छ कहते हैं वह भी तो चाहे कैसी आपत्ति क्यों न हो कुत्तेका मांस खाना स्वीकार न करेंगे नकि आप के ऋषि विश्वामित्र ऐसे घृणितकार्य्य करनेके लिये बद्धपरिकर हुये शोक!!! (१) यह बात इसको स्पष्टतया प्रकट करती है कि कर्म से ही जाति होती है न कि केवल जन्म से क्योंकि त्रिशंकु चांडाल के पुरोहित बननेके लिये विश्वामित्र भी चांडाल होगये और फिर उसी जन्ममें इंद्र ने उन्हें फिर शुद्ध कर दिया अब यदि आर्य्यसमाज अपने वियोगी भाइयोंको प्रायश्चित्त कर शुद्ध करता है तो क्या हमारे सनातनीभाइयों का यह धर्म है कि उससे द्रोह व उसके कार्य्य में विघ्न डालें किन्तु ऐसे उदाहरणोंको देख उनको चाहिये कि इस शुद्धि कार्य्यमें सहायक बन वेदोक्तधर्मके अनुयायी बनें।

—०—

राजा भगाश्वन का एक जलाशय में स्नान करके स्त्री होना फिर तपस्या करके उसके सौ पुत्रोंका होना ।

अनुशासन पर्व अ० १२।

प्राचीन कालमें भगास्वन नाम एक धार्मिक राजा था उससे और इन्द्र से शत्रुता होगई एक समय राजा मृगया को गया तब इंद्रने वही समय उत्तम समझकर उसे मोहित करना आरम्भ किया राजा इंद्रके द्वारा मोहित होकर अकेला ही घोड़े पर सवार हो भ्रमण को जाते हुये वहां भूख प्याससे पीड़ित होकर दिशा भूल गया तब इधर उधर फिरकर घोड़ा एक वृक्ष से बांध दिया और फिर जलमें स्वयम् स्नान करने लगा स्नान करते ही राजा स्त्री होगया ।

अथ पीतोदकं सोऽश्वं वृक्षे बद्धा नृपोत्तमः ।
अवगाह्य ततःस्नानं तत्र स्त्रीत्वमुपगतः ॥

राजा अपने स्त्रीरूपको देखकर बहुत व्याकुल हुआ कि क्योंकर नगरको जाऊं और अपने एक सौ और सपुत्रोंका सुख कैसे भोगूंगा न जाने मैं क्योंकर स्त्रीत्व को प्राप्त हुआ इस भांति नाना प्रकार के सोच विचार कर अंतको घोड़े पर चढ़ नगर में आया अपने स्त्रीत्व का सब वृत्तान्त कह सुनाया फिर कहा कि तुम सब प्रेमसे राज्य करो मैं वनको जाता हूं ऐसा कह वनको चला गया वहां पर एक तपस्वी के आश्रमके समीप तपस्या करने लगा जिसके गर्भद्वारा एक सौ पुत्र उत्पन्न हुये ।

तापसेनास्यपुत्राणामाश्रमेष्वभवच्छतम् ।
अथ सादायतान् सर्वान् पूर्वं पुत्रानभाषयत् ॥२३॥
पुरुषत्वेसुताय्यूयं स्त्रीत्वे चेमे शतंसुताः ॥

अनतको सौ पुत्रोंको लेकर अपने राज्यमें गया और प्रथमके पुत्रों से कहा तुम मेरे पुरुष अवस्थाके पुत्र हो और यह मेरे स्त्रीत्व प्राप्त होनेके सौ पुत्र हैं इसलिये तुम प्रेमसे रहकर राज्य भोग करो ।

लीजिये पंडितजी—इस कथासे तो स्पष्ट प्रकट होगया कि ईश्वरीय नियम कुछ नहीं क्योंकि पुरुष अपने शरीर से स्त्रीशरीर-धारी होगया। फिर उसी स्त्रीसे सौ पुत्रोंकी उत्पत्ति होगई।

आ० पं० जी—सेठजी बस कीजिये मैं इस विषयको सुन तृप्त होगया। अब कल से किसी और विषयको सुनाइये।

सेठ जी—श्री महाराज मुझे तो अभी और सुनाना था पर आपकी ऐसी इच्छा है तो इस समय समाप्त करता हूं। फिर देखा जायगा ओ३म्।

पं० जी—व अन्य महाशयोंने चलनेकी तय्यारी की।

सेठ जी—पं० जी नमस्ते वा अन्योंको यथायोग्य कह अपने कार्य्य में लगगये।

इति अष्टादश परिच्छेद।

—०—

अथ एकोनविंशति परिच्छेद।

सेठजी—ने श्री० पंडितजीको व अन्य महाशयोंको आते देख नम्रतापूर्वक नमस्ते कर कहा कि आइये विराजिये।

पं० जी—आयुष्मान् तथा अन्य महाशय यथायोग्य कह विराजमान हुए।

सेठजी—ने कहा कि श्रीमहाराज आज मैं आपको आपकी आज्ञानुसार पुराणोंसे गणेशजीकी उत्पत्ति सुनाता हूं, देखिये:—

—०—

गणेशउत्पत्ति

शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय ३२ और ३३ से

शिवजी महाराज पार्वतीजीके साथ विवाह करनेके पीछे कैलाश पर्वत पर निवास करने लगे। कुछ कालके पश्चात् जया और विजया सखी पार्वतीके साथ विचार करने लगीं कि शिवजीके पास असंख्यगण हैं जो उनकी आज्ञा पाकर द्वार पर रहते हैं। हमारे कोई भी गण नहीं यद्यपि महादेवके गण हमारे ही गण हैं तो भी हमारा मन उनसे

नहीं मिलता। सखियोंकी यह बात सुन पार्वतीजी विचार करने लगीं। एक समय पार्वतीजी स्नान कर रही थीं नन्दी द्वार पर स्थित थे। शिवजी उसके निषेध करने पर भी भीतर चले गये तब पार्वती लज्जित हो स्नानसे उठ बैठीं फिर सखीकी बात विचार हाथमें जल लेकर अपने शरीरसे मैल उतार सब अवयवों सहित सुन्दरपुत्रको निर्माण कर द्वार पर बिठलादिया और कहदिया कि कोई भीतर न आने पावे।

प्रतिष्ठाप्य तदाद्वारिनिवार्योय इहागमेत् ॥१९॥

फिर दूसरी बार पार्वतीजी सखियों सहित स्नान करनेको बैठीं उसी समय महादेवजीगणों सहित पधारे और भीतर जाने लगे उस समय गणेशजीने मना किया कि माताजी स्नान करती हैं और लकड़ी उठाई तब शिवजीने कहा कि मैं गिरिजापति हूं—और भीतर चलने लगे गणेशजीने लकड़ी उठाकर ताड़न किया उस समय शिवजीने क्रोधित होकर गणोंको आज्ञा दी और आपसमें संग्राम होने लगा और बड़ा युद्ध हुआ इतनेमें ब्रह्माजी गये तब गणेशजीने उनकी डाढ़ी मूंछ उखाड़ लीं तब शिवजीको क्रोध आया और उनकी आज्ञासे अनेकों भूत प्रेत पिशाचादि आगये इधर पार्वतीने अपने गणोंके निमित्त दो शक्ति उत्पन्न कीं जिनके साथ बड़ा संग्राम हुआ अन्तको शिवजीने गणेशका शिर त्रिशूलसे अलग कर दिया।

एतदंतरमासाद्यशूलपाणिस्तथोत्तरे।
आगत्य च त्रिशूलेन शिरस्तस्यन्यपातयत् ॥

अध्याय ३३ ॥ ६९ ॥

जिसको सुन पार्वतीने हजारों शक्तियां उत्पन्न कर दीं जो संहार करने लगीं तब नारद आदि सब देवता महादेवजी सहित पार्वतीजीके मन्दिर में गये और अनेक प्रकारसे विनय की तब उन्होंने कहा कि यदि मेरा पुत्र जी जावे और पूजनीय हो जावे तो सबको आराम हो सकता है वरन् नहीं तब शिवजीने शिरको तलाश कराया परन्तु जब वह नहीं मिला तब शिवजीने कहा कि देवताओ उत्तरकी ओर जाओ उधरसे जो प्रथम आता हुआ मिले उसीका शिर लाकर

इसके शरीरमें दो। वह चले गये प्रथम उनको एक दांतका हाथी मिला वे उसका शरीर छेदन करके लाये और उनके गले पर अर्थात् शरीर पर लगाया तो शिव, विष्णु और ब्रह्माजीने कहा कि जिस महात्मा के तेजसे हम सम्पूर्ण उत्पन्न हुए हैं वही तेज आनकर प्राप्त हो।

इतना कहते ही वह सुन्दर अंगयुक्त बालक उठ बैठा।

इत्येवमभिमंत्रेणमंत्रितं च यदापुनः। ३९।
तदोत्तस्थौ पुनश्चायंशुभांगः सुन्दरस्तदा॥

तब इन गजाननका सब देवताओंने अभिषेक किया।

अभिषिक्तैस्तदादेवैर्गणाध्यक्षैर्गजाननः॥ ४०॥

—०—

वामन पुराण से गणेशजी की उत्पत्ति।

अध्याय ५४ में लिखा है कि पर्वत पर महादेवजी पार्वतीके साथ आनन्दपूर्वक रहने लगे एक दिन पार्वतीसे महादेवजीने काली कहा यह सुन वह हिमालय पर्वत पर तप करने चली गई और सौ वर्ष व्यतीत होने पर ब्रह्माजी वहां गये और कहा कि तेरे तपसे मैं प्रसन्न हूं तेरे सब पाप कट गये अब इच्छापूर्वक तुम वर मांगो तब पार्वतीने कहा कि मेरा शरीर सुवर्णके समान हो जावे ब्रह्माजी यही वर देकर चले गये और पार्वती मन्दराचल पर्वत पर आकर महादेव जीके साथ रहने लगी महादेवजी भी हज़ार वर्ष तक महामोहमें उनके साथ लिप्त होगये तब सबदेवताओं इन्द्र और अग्निको साथ लेकर वहां गये तब अग्नि हंसकारूप धर वहां पहुंचे जहां महादेव आनन्द कर रहे थे यह तुरन्त पार्वतीको त्याग बाहर आये सब देवताओंने प्रणाम किया फिर महादेवजीने कहा कि कहो तब सबने कहा कि यदि आप देवताओंसे प्रसन्न हैं और वर देना चाहते हो तो प्रथम आप इस महा·····को त्याग दीजे तब महादेवजीने कहा कि मैं आपकी बात माननेके लिये तय्यार हूं पर मेरे तेजको कौन देवता धारण करेगा उस समय अग्निने कहा कि मैं। तब उन्होंने वीर्य्यको छोड़ा उसको अग्निने पान कर लिया फिर महादेवजी मंदिरमें गये और पार्वतीजीसे कहा

कि देवतादिक् तेरे पुत्रको नहीं चाहते इस पर पार्वतीने सबको शाप दिया। फिर शौचशालामें स्नानकी इच्छा करने पर मालिनी सुगंधित द्रव्यको ले उनके सुवर्ण शरीर पर लगाने लगी उससे जो मैल उतरा उससे मालनीके चले जाने पर पार्वती उस मैलसे हस्तीके मुखके समान मुख वाला, चार भुजाओं, पुष्टछाती और सुन्दर लक्षणोंसे युक्त पुरुषको रचती हुई।

तस्यांगतायां शैलेमीमलाचक्रे गजाननम् ॥५९॥
चतुर्भुजंपीनवक्षः पुरुषं लक्षणाचितम् ॥६०॥

फिर उस बालकको बना पृथ्वी पर छोड़ आप सुन्दर आसन पर स्थित हुईं और मालनी आकर पार्वतीके शिरको धोने लगी और हंसी जिसको पार्वतीजीने देखकर कहा कि तू क्यों हंसती है। इस पर मालनीने कहा कि निश्चय तुम्हारे पुत्र होगा इसलिये हंसी आती है यह सुन पार्वतीजी विधानसे स्नान करने लगीं फिर स्नान कर महादेवजीकी पूजाकर गृहको गईं फिर महादेवजी भी स्नान करने लगे उस समय आसनके नीचे पार्वतीजीका रचा हुआ मल पुरुष वहीं स्थित रहा और महादेवजीके शरीरका पसीना और विभूति सहित पानी जो पड़ा तिसके मेलसे प्रथम सूंडके द्वारा फूतकार पुरुष उपस्थित हुआ।

तत्संपर्कात् समुत्तस्थौ फूतक्कृत्यकरमुत्तमम्।
अपत्यहिविदित्वा च प्रीतिमान्भुवनेश्वरः ॥६७॥

जिसको अपनी सन्तान जानकर प्रसन्नतापूर्वक ग्रहणकर पार्वती के समीप जाकर कहने लगे कि हे प्रिये! प्रियगुणोंसे युक्त अपने पुत्र को देख। यह सुन पार्वती वहां प्राप्त हो अद्भुतरूप वाले पुत्रको देख अर्थात् जो पार्वतीजीने अपने मलका गजमुख पुरुष बनाया था वही देखा और प्रसन्न होकर पुत्रसे मिलीं तदनन्तर पुत्रके मस्तकको सूंघ महादेव पार्वतीसे कहने लगे कि हे देवि? यह पुत्र नायकके विना उत्पन्न हुआ है इस वास्ते इसका नाम विनायक होगा।

नायकेन विना देविमयाभूतोपि पुत्रकः ॥७२॥
यस्माज्जातस्ततो नाम्ना भविष्यति विनायकः ॥७३॥

लिङ्गपुराण से गणेशजीकी उत्पत्ति।

अध्याय १०४ में लिखा है कि एक बार देवतालोग यह विचार कर कि दैत्यलोग महादेवजी व ब्रह्माजीको प्रसन्न कर मन माना वर ले लेते हैं और सदा हमारा पराजय करते हैं इस कारण शिवजीसे प्रार्थना करें कि दैत्योंके कर्मों में विघ्न और हमारे कर्मोंमें अविघ्न करनेके अर्थ तथा नारियोंको पुत्र देनेके लिये और मनुष्योंके सब कामको सिद्ध होनेके अर्थ गणपतिको उत्पन्न करें यह मनमें ठाने सब देवता शिवजीके निकट जा स्तुति करने लगे, उस स्तुतिको सुन शिवजीने देवताओंको दर्शन दिये जिनसे सब देवता प्रसन्न हुये और बार २ प्रणाम करने लगे तब शिवजीने कहा कि अभीष्ट वर मांगो—हम प्रसन्न हैं उस समय सब देवताओंकी ओरसे बृहस्पतीजीने कहा कि सब देवताओंके शत्रु दैत्य निर्विघ्न आपका आराधन करते हैं और आप भी शीघ्र उन पर प्रसन्न हो जाते हैं अब सब देवताओंकी यह प्रार्थना है कि उनके कर्मोंमें विघ्न हुआ करें यह वर मिले इस प्रार्थनाको सुन शिवजीने पार्वतीके गर्भसे पुत्र उत्पन्न किया जिनका मुख हाथीका सा था हाथोंमें त्रिशूल पाश धारण किये थे उनके जन्म होते ही पुष्पवृष्टि हुई।

ततस्तदा निशम्यवै पिनाकधृक् सुरेश्वरः।
गणेश्वरं सुरेश्वरं बपुर्दधारसः शिवः॥ ७॥

और गण गणेशजीके चरणोंमें प्रणाम करने लगे गजानन भी अपने माता पिताके आगे अनन्दसे नृत्य करने लगे जिसके संस्कार शिवजीने किये और गोदमें ले मस्तक सूंघा और कहा कि हे पुत्र! दैत्योंके नाशके लिये देवताऋषि और ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मणोंके उपकारके लिये तुम्हारा अवतार हुआ है भूमि पर जो दक्षिणाहीन यज्ञ करें उसके धर्ममें तुम विघ्न करो जो अन्यायसे अध्ययन अध्यापन आदि कर्म करे उसके प्राण हरो तुम्हारा पूजन बिना श्रौतस्मार्त्त जो कार्य्य करेंगे उनको भी अमंगल ही होगा तुम्हारी पूजा बिना किये देवताओंके भी कार्य्य सिद्ध न होंगे हम विष्णु और इन्द्र भी जो कार्य्य आरम्भ में तुम्हारा पूजन न करें तो विघ्न करो।

गणेशउपपुराणसे गणेशोत्पत्ति ।

अध्याय ७८ से ८१ तक ।

सिन्धूनाम एक दैत्य राजा हुआ उसने अनेकान राजाओं को मारा जिससे बहुधा उसके ध्वंस होगये वेदोक्त कर्मोंके बन्द हो जाने से हाहाकार मचगया । सब देवता और मुनि सम्मति कर विनायक जीकी स्तुति करने लगे स्तुति करते हुये उन ऋषियोंके आगे तेजसमूह आया जिसको देख सब देवादि विस्मित हुये पुनः वह तेज समूह सौम्य गणेशकी मूर्त्तिवाला होगया तब सबने नमस्कार किया । देव जीने ऋषि आदिकोंसे कहा कि उस दैत्यके मारनेके लिये हमारा गिरिजाके घर अवतार होगा और हम तुम्हारा वाञ्छित मनोरथ शीघ्र पूरा करेंगे यह कह विनायक जी अन्तर्ध्यान होगये । एकदिन महादेव जीको तप करते हुये देख पार्वतीने कहा कि हे देव! आपसे बढ़कर और कौन है जिसका आप ध्यान करते हैं उन्होंने कहा कि विनायक जीका— तब पार्वती ने कहा कि मुझको उनकी कैसे प्राप्ति हो । महादेव जीने एकाक्षरमंत्र जपनेको कहा पार्वतीजीने इसको स्वीकार कर जपनेका प्रारम्भ कर दिया और बारह वर्ष तक निरन्तर जपा जिस से प्रसन्न हो मुकुटकुण्डल धारे दशभुज त्रिशूलधारी गणेशजी उनके आगे आये और कहा हम तुमसे प्रसन्न हैं वर मांगो पार्वती ने कहा कि तुम मेरे पुत्र होंगे और तुम्हारा वाञ्छित मनोरथ पूरा करेंगे अन्तर्ध्यान हो गये । तदनन्तर गणेशजीकी प्राप्तिके लिये प्रतिकार रूप सामिग्री द्वारा गजाननकी मूर्त्तिबना गौरीजीने उसको बहुत प्रकारसे पूजा की तब तो वह मूर्त्ति चैतन्य होगई जिसके तेजसे गौराजी मूर्छित होगईं थोड़ी देरके पश्चात् सावधान हो पार्वती ने कहा कि मुझसे पूजा में क्या बिगाड़ होगया तब वह तेज सौम्यमूर्त्ति वाला होगया पार्वती के पूछने पर उस सौम्यमूर्त्तिने कहा कि जिसका तुमने रात्रिदिन ध्यान किया वह हम गणेशजी तुम्हारी पुत्रताको प्राप्त हुये हैं तब पार्वती ने कहा कि आप बालकरूप हो जाइये जिससे हम लाड़ प्यार से खिलावें पार्वतीजीके वचन सुन वह अतिसुन्दर बालक होगये तब गौरीने उनको हाथोंमें उठा लिया और बहुत प्रसन्न हुईं महादेव जी भी उसको देख बहुत प्रसन्न हुये ।

नोट—शिव, वामन, लिंगपुराण और गणेश उपपुराण से गणेश महाराजकी उत्पत्ति पढ़कर स्वयं विचार कीजिये कि किस किस प्रकारसे श्रीमान्‌का जन्म हुआ हम और कुछ कहना नहीं चाहते।

श्री० पं० जी—बस सेठजी अब इतना ही रहने दीजिये और विषय सुनाइये।

श्री० पं०जगन्नाथजी—सेठजी आज हमें तनिक काम है अगर, आपकी राय और पं० जी की आज्ञा हो तो आज यहां ही विश्राम दीजिये— और विषय कल।

पंडितजी—अच्छा सेठजी रहने ही दीजिये क्योंकि नित्य-प्रतिके श्रोताओंका बीचमें न सुनना हानिकारक होगा।

सेठजी—जैसी श्रीमान्‌की आज्ञा ओ३म्।

सब यथायोग्यके पश्चात् चले गये।

सेठजी—अपने कार्य्योंमें लगगये।

इति एकोनविंशति परिच्छेद।

—०—

अथ विंशति परिच्छेद।

आर्य्य सेठ—श्रीमान् पण्डितजी अन्य सभ्यों सहित पधारे उनको नमस्ते की और कहा कि आइये, पधारिये।

पंडितजी—ने आयुष्मान् कहा और अन्य सज्जनोंसे यथा-योग्य की।

आर्य्य सेठ—आज मैं आपको मृतकश्राद्धके विषयमें सुनाता हूं, आप कृपा कर सुनिये। श्रीमान् इस विषयमें पुराणोंमें अनेकानेक प्रमाण हैं परन्तु वेदमें कोई प्रमाण नहीं मिलता वरन् वहां तो निम्नलिखित प्रमाण स्पष्ट कह रहा है कि मृतक शरीरके भस्म होनेके पश्चात् कोई कर्म्म नहीं जैसा कि:—

भस्मान्तꣳ शरीरम्।

इसके उपरान्त धर्म्मसभाके सभ्यगण एकस्वर होकर आवागमनको भी मानते हैं जिसके अर्थ आने और जाने अर्थात् मरने और उत्पन्न होवेके हैं फिर भला आप ही बतलाइये कि मर गये वह उत्पन्न होगये तो फिर आप श्राद्ध किनका करते हैं? पण्डितजी जीव अनादि है जो अपने अपने कर्म्मानुसार जन्म मरणको धारण करता है और जिस भांति मनुष्य पुराने वस्त्रोंको उतार नये वस्त्र धारण कर लेता है उसी प्रकार जीव एक शरीरको छोड़ दूसरे शरीरमें प्रवेश करता है जैसा कि श्रीमद्भागवत स्कंद १० पूर्वार्द्ध अध्याय १ में लिखा है।

देहे पंचत्वमापन्ने देही कर्मानुगोऽवशः।
देहांतरमनुप्राप्य प्राक्तनंत्यजते वपुः ॥ ३९ ॥

जब देहीका अन्त आता है उस समय जीवात्मा कर्म्मानुकूल परवश हो दूसरे देहको प्राप्त हो अपने पूर्वदेहको त्याग करता है इसके अतिरिक्त जिस प्रकार मनुष्य चलते समय अलग पैरको उठा फिर पिछले पैरको उठाता है जैसे जोक। उसी भांति शरीरस्थ जीवात्मा कर्म्मानुकूल अपने शरीरको छोड़ दूसरे शरीरको ग्रहण करता है। जैसा कि—

व्रजंस्तिष्ठन्पदैकेन यथैवैकेन गच्छति।
तथा तृण जलूकैवं देहीकर्म गतिंगतः ॥४०॥

इसके पश्चात् पुराणोंमें अनेक लेख उपस्थित हैं गीता, महाभारत भी पुकार २ कर कह रहे हैं फिर आप मृतकश्राद्धको क्योंकर मानते हैं जब कि प्रत्येक पुरुष अपने कर्म्मोंका फल पाता है न कि पुत्रादिके कर्म्मोंका। यदि ऐसा ही ठीक है तो जिस पर धन है वह उसको व्यय कर अपने पितादिको स्वर्ग पहुंचा सकता है तो फिर उस प्राणीके पाप, पुण्यका कोई ठीक नहीं यथार्थमें वहां भी घूंस काम देती है। पण्डितजी यह सब लड़कोंके खेल हैं। जिन्होंने भारतवासियोंको चक्करमें डाल अपना खूब प्रयोजन निकाला है। श्रीमान्? यदि आप उन वेदमन्त्रोंके अर्थोंको विचार करें जो पण्डितगण श्राद्ध समय पढ़ते हैं तो प्रत्यक्ष प्रकट हो जावेगा कि उनके वह अर्थ नहीं जैसा कि पौराणिकजन सुनाते हैं प्रथम आप सत्यअर्थोंको श्रवण कर लीजिये।

पितृ शब्द निघण्टु ४ । १ में पिता पद आया है । पिताका बहुवचन ही पितरः है । निरुक्त ४ । २१ में पितापदके व्याख्यान में नीचे लिखा मन्त्र ऋग्वेद १ । १६४ । ३३ का प्रमाण दिया है कि:—

द्यौर्मे पिता जनिता नाभिरत्र । इत्यादि ।

फिर निरुक्तकार इसके अर्थ करते हुवे पितापदका अर्थ इस प्रकार करते हैं कि: —

पिता पाता वा पालयिता वा ॥

अर्थात् पिता पालने वा रक्षा करनेसे कहा जाता है । (द्यौर्मे पिता) मन्त्रमें पिता शब्द सूर्य्यका वाचक है । ऐसा ही स्वामीजी ऋग्वेदभाष्यमें लिखते हैं और ऐसा ही निरुक्तकार मानते हैं। तात्पर्य्य यह है कि रक्षा वा पालने वाले जनकादि मनुष्यवर्ग राजा, सूर्य्य, चन्द्र, किरणें, वायुभेद जिनका राजा यम कहाता है, इत्यादि रक्षकों और पालन करने वालोंका नाम पितर है वेदोंमें बहुत स्थानोंमें यम पितरों का राजा लिखा है । जैसे मनुष्योंका राजा मनुष्य, मृगोंका राजा मृगराज सिंह, ओषधियोंका राजा सोम नामक ओषधि, ऋतुओंका राजा ऋतुराज वसन्त है इसी प्रकार वायुभेद जो हमारे रक्षक और पालक हैं उनका भी राजा यम वायु ही है । जैसा कि:—

माध्यमिको यम इत्याहुर्नैरुक्ताः तस्मात्पितॄन्माध्यमिकान्मन्यन्ते स हि तेषां राजेति ॥

पितरःपद निघण्टु ५ । ५ में और उसकी व्याख्या निरुक्त ११ । १९ में है ॥

अर्थात् यम मध्यस्थान देवता है यह नैरुक्तोंका मत है, इस लिये पितरोंको भी मध्यस्थान देवता मानते हैं क्योंकि वह (यम) उन पितरोंका राजा है । फिर निरुक्त ७ । ५

वायुर्वेन्द्रोवान्तरिक्षस्थानः ॥

वायु अन्तरिक्षस्थान अर्थात् मध्यस्थान देवता है । ऐसा ही आशय ऋग्वेद १० । १४ । १३ में:—

यमं हि यज्ञो गच्छत्यग्निदूतः ।

अग्नि जिसका दूत लेजाने वाला है वह यज्ञ वायुको प्राप्त है । यहां भी यमका अर्थ वायुविशेष है । और यजुः ८ । ५७

यमःसूयमानो विष्णुः संभ्रियमाणो वायुः पूयमानः ।

यहां भी यम नाम वायुविशेषका है ।

स्तुहीन्द्रं व्यश्ववदनूर्मिं वाजिनं यमम् ऋ० ८ । २४ । २२

यहां भी यम नाम वायुविशेषका है क्योंकि इस मन्त्रका देवता इन्द्र है और इन्द्र ऊपर लिखे निरुक्त ७ । ५

वायुर्वा इन्द्रो वा अन्तरिक्षस्थानः ।

के अनुसार वायुका भी नाम है ।

इसके अतिरिक्त यह भी वेदकी शिक्षा है कि प्रत्येक लिङ्गशरीरी जीवात्मा स्थूल शरीर छोड़ कर आकाशमें १२ दिन तक १२ आकाशी पदार्थोंसे आप्यायित (लिप्त) होता है तब उसे किसी लोकमें कर्मानुसार जन्म मिलता है । हां, जिनका लिंगशरीर भी छूट जाता है उन मुक्तपुरुषोंकी यह अवस्था नहीं है ।

सविता प्रथमेहन्नग्निर्द्वितीये वायुस्तृतीय आदित्यश्चतुर्थे चन्द्रमाः पञ्चम ऋतुः षष्ठे मरुतः सप्तमे बृहस्पतिरष्टमे मित्रो नवमे वरुणो दशम इन्द्र एकादशे विश्वेदेवा द्वादशे॥

(यजुः ३९ । ६) श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीभाष्यम्—

हे मनुष्यो ! इस जीवको (प्रथमे) पहले (अहन्) दिन (सविता) सूर्य्य (द्वितीये) दूसरे दिन (अग्निः) अग्नि, तीसरे वायु, चौथे महीना, पांचवें चन्द्रमा छठे वसन्तादि ऋतु, सातवें मरुत्, आठवें सूत्रात्मा, नवें प्राण, दशवें उदान, ग्यारहवें बिजुली, और बारहवें दिन सब दिव्यगुण प्राप्त होते हैं ३९ । ६ ।

बस इससे यह भी जाना जाता है कि सूर्य्य, अग्नि, वायु, चन्द्र, प्राण, उदान, बिजुली और आकाशगत अन्य सब दिव्य पदार्थों का (जो देवता कहाते हैं) हवन करनेसे सुधार होता है इसीको तृप्ति

और अनुकूलता भी कह सकते हैं। इससे अग्निमें होमद्वारा पृथ्वी अन्तरिक्ष और द्युलोक इन तीनोंकी शुद्धि, वृद्धि और तृप्ति होनेसे आकाशगत पितरों=वायु विशेषोंका भी उपकार सम्भव है। परन्तु मरण प्राप्त प्राणी किसी प्रकार परमात्माकी व्यवस्थानुकूल १२ दिनमें भिन्न भिन्न नियत पदार्थोंको छोड़ अन्यत्र कहीं नहीं जा सकते और इसके अनन्तर स्थूल शरीर पाप जन्म लेकर भी एक लोकसे दूसरे लोक में नहीं जा आ सकते। इसलिये वर्त्तमान प्रचलित श्राद्धदानादि कार्यों के पदार्थोंकी प्राप्ति ब्राह्मणों द्वारा पितरोंको सर्वथा नहीं हो सकती हां, अग्निहोत्रसे तीनों लोकका उपकार होता है।

और इन्हीं आकाशगत पदार्थोंका तात्पर्य्य संस्का विधिस्थ अन्त्येष्टि प्रकरणगत समस्त मन्त्रोंमें भी लग जायगा।

ये समानाः समनसः पितरो यमराज्ये तेषाँल्लोकःस्वधा-नमोयज्ञो देवेषु कल्पताम् ॥ अ० १९ मं० ४५

(ये) जो (समानाः) सदृश (समनसः) तुल्य विज्ञानयुक्त (पितरः) प्रजाके रक्षक लोग (यमराज्ये) न्यायकारी राजाके राज्यमें हैं (तेषाम्) उनका (लोकः) स्थान (स्वधा) अन्न (नमः) सत्कार और (यज्ञः) प्राप्त होने योग्य न्याय (देवेषु) विद्वानों में (कल्पताम्) समर्थ हो ॥ ४५ ॥

ये समानाः समनसो जीवा जीवेषु मामकाः।
तेषाᳬ श्रीर्मयि कल्पतामस्मिँल्लोके शतᳬ समाः ॥४६॥

(ये) जो (अस्मिन्) इस (लोके) लोकमें (जीवेषु) जीवते हुओंमें (समानाः) समान गुण कर्म स्वभाव वाले (समनसः) समान धर्म में मन रखने वाले (मामकाः) मेरे (जीवाः) जीते पितर हैं (तेषाम्) उनकी (श्रीः) लक्ष्मी (मयि) मेरे समीप (शतम्) सौ (समाः) वर्ष तक (कल्पताम्) समर्थ होवे ॥ ४६ ॥

उदीरतामवर उत्परास उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः।
असुं यईयुरवृका ऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु ॥
ऋ० १० । १५ । १ ।

(ये) जो (पितरः) पिता आदि रक्षक जन (परासः) बड़े (अवरे) छोटे (मध्यमाः) मध्यावस्था वाले हैं (ते) वे (पितरः) पालक रक्षक लोग (नः) हमको (उत्-ईरताम्) उन्नत करें। (सोम्यासः) वे सौम्यलोग (असुम्) जीवनको (उत् ईयुः) उच्च (अधिक) प्राप्त हों। (अवृकाः) जो किसीसे शत्रुता नहीं करते और (ऋतज्ञाः) सत्यज्ञानी हैं वे (हवेषु) जब २ हम पुकारें तब २ (उत्अवन्तु) उच्चभावसे रक्षा करें॥ इसमें मृतश्राद्धका लेशमात्र भी वर्णन नहीं।

ये नः पूर्वे पितरः सोम्यासोऽनूहिरे सोमपीथं वसिष्ठाः। तेभिर्यमः सꣳरराणोहवीꣳष्युशन्नुशद्भिः प्रतिकाममत्तु॥

यजु० अ० १९ मं० ५१।

(ये) जो (नः) हमारे (सोम्यासः) शान्त्यादि गुणोंके योगसे योग्य (वसिष्ठाः) अत्यन्तधनी (पूर्वे) पूर्वज (पितरः) पालन करने हारे ज्ञानी पिता आदि (सोमपीथम्) सोमपानको (अनूहिरे] प्राप्त होते और कराते हैं [तेभिः] उन [उशद्भिः] हमारे पालनकी कामना करने हारे पितरोंके साथ [हवींषि] लेने देने योग्य पदार्थोंकी [उशन्] कामना करने हारा [संरराणः] अच्छे प्रकार सुखोंका दाता [यमः] न्याय और योगयुक्त सन्तान [प्रतिकामम्] प्रत्येक कामको [अत्तु) भोगे।

भावार्थ— पिता आदि पुत्रोंके साथ और पुत्र पिता आदिके साथ सब सुख दुःखोंके भोग करें और सदा सुखकी वृद्धि और दुःखका नाश किया करें॥ ५१॥

त्वया हि नः पितरः सोम पूर्वे कर्म्माणि चक्रुः पवमान धीराः। वन्वन्नवातःपरिधीꣳरपोर्णु वीरेभिरश्वैर्म्मघवा भवा नः॥ ५३॥

हे (पवमान) पवित्रस्वरूप, पवित्रकर्मकर्त्ता और पवित्र करनेहारे (सोम) ऐश्वर्ययुक्त सन्तान! (त्वया) तेरे साथ (नः) हमारे (पूर्वे) पूर्वज (धीराः) बुद्धिमान् (पितरः) पितादि ज्ञानी

लोग जिन धर्मयुक्त (कर्माणि) कर्मोंको (चक्रुः) करने वाले हुए (हि) उन्हींका सेवन हम लोग भी करें (अवानः) हिंसाकर्मरहित (वन्वन्) धर्मका सेवन करते हुए सन्तान! तू (वीरेभिः) वीर पुरुष और (अश्वैः) घोड़े आदिके साथ (नः) हमारे शत्रुओंकी (परिधीन्) परिधि अर्थात् जिन में चारों ओर से पदार्थोंका धारण किया जाय उन मार्गोंको (अपोर्णुहि) आच्छादन कर और हमारे मध्य में (मघवा) धनवान् (भव) हो ॥

भावार्थ—मनुष्य लोग अपने धार्मिक पिता आदिका अनुकरण कर और शत्रुओंका निवारण करके अपनी सेनाके अङ्गोंकी प्रशंसा से युक्त हुए सुखी होवें ॥ ५३ ॥

बर्हिषदः पितर ऊत्यर्वागिमा वो हव्या चकृमा जुषध्वम् । तऽआगताऽवसा शन्तमेनाथानः शंयोर-पोदधात ॥ ५५ ॥

हे (बर्हिषदः) उत्तम सभा में बैठनेहारे (पितरः) न्याय से पालना करने वाले पितर लोगो! हम (अर्वाक्) पश्चात् जिन (वः) तुम्हारे लिये (ऊती) रक्षणादि क्रियासे (इमा) इन (हव्या) भोजनके योग्य पदार्थोंका (चकृम) संस्कार करते हैं उनका आप लोग (जुषध्वम्) सेवन करें और (शन्तमेन) अत्यन्त कल्याणकारक (अवसा) रक्षणादि कर्मके साथ (आ, गत) आयें (अथ) इसके अनन्तर (नः) हमारे लिये (शंयोः) सुख तथा (अरपः) सत्याचरणको (दधात) धारण करें और दुःखको सदा हमसे पृथक् रक्खें ॥५५॥

आयन्तु नः पितरस्सोम्यासोग्निष्वात्ताः पथि-भिर्देवयानैः । अस्मिन्यज्ञे स्वधया मदन्तोधिब्रुवन्तु तेवन्त्वस्मान् ॥५८॥

जो (सोम्यासः) चन्द्रमाके तुल्य शान्त शमनादि गुणयुक्त (अग्निष्वात्ताः) अग्न्यादि पदार्थविद्यामें निपुण (नः) हमारे (पितरः) अन्न और विद्याके दानसे रक्षक, जनक, अध्यापक और उपदेशक लोग हैं (ते) वे (देवयानैः) आप्त लोगोंके जाने आने योग्य (पथिभिः) धर्म-

युक्त मार्गोंसे (आ. यन्तु) आवें (अस्मिन्) इस (यज्ञे) पढ़ाने उपदेश करने रूप व्यवहारमें वर्त्तमान होके (स्वधया) अन्नादिसे (मदन्त) आनन्दको प्राप्त हुए (अस्मान्) हमको (अधि, ब्रुवन्तु) अधिष्ठाता होकर उपदेश करें और पढ़ावें और हमारी (अवन्तु) रक्षा करें ॥५८॥

ये अग्निष्वात्ता ये अनग्निष्वात्ता मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते। तेभ्यः स्वराडसुनीतिमेतां यथावशन्तन्वङ्कल्पयाति ॥६०॥

(ये) जो (अग्निष्वात्ताः) अच्छे प्रकार अग्निविद्याके ग्रहण करने तथा (ये) जो (अनग्निष्वात्ताः) अग्निसे भिन्न अन्य पदार्थविद्याके जानने हारे वा ज्ञानी पितृलोग (दिवः) विज्ञानादि प्रकाशके (मध्ये) बीच (स्वधया) अपने पदार्थके धारण करने रूप क्रिया वा सुन्दर भोजनसे (मादयन्ते) आनन्दको प्राप्त होते हैं (तेभ्यः) उन पितरोंके लिये (स्वराड्) स्वयं प्रकाशमान परमात्मा (एताम्) इस (असुनीतिम्) प्राणोंको प्राप्त होने वाले (तन्वम्) शरीरको (यथावशम्) कामनाके अनुकूल (कल्पयाति) समर्थन करें ॥ ६० ॥

भावार्थः—मनुष्योंको परमेश्वरसे ऐसी प्रार्थना करनी चाहिये कि हे परमेश्वर! जो अग्नि आदि पदार्थविद्याको यथार्थ जानके प्रवृत्त करते और जो ज्ञानमें तत्पर विद्वान् अपने ही पदार्थके भोगसे सन्तुष्ट रहते हैं उनके शरीरोंको दीर्घायु कीजिये ॥ ६० ॥

और यदि " अग्निमें डाले गये " अर्थको भी मान लें तो भी यह अर्थ होगा कि— " जो अग्निमें डाले गये और जो न डाले गये और आकाशके मध्य वर्त्तमान हैं, उन्हें स्वराट् परमात्मा शरीर दे देता है और वे अपने अन्नादिसे (जहां जन्म होता है) आनन्दित होते हैं।

आच्या जानु दक्षिणतोनिषद्येमं यज्ञमभिगृणीत विश्वे। मा हिंसिष्ट पितरः केनचिन्नोयद्व आगः पुरुषता कराम ॥६२॥

हे (विश्वे) सब (पितरः) पितृ लोगो! तुम (केनचित्) किसी हेतुसे (नः) हमारी जो (पुरुषता) पुरुषार्थता है उसको (मा

हिंसिष्ट) मत नष्ट करो जिससे हम लोग सुखको (कराम) प्राप्त करें [यत्] जो [वः] तुम्हारा [आगः] अपराध हमने किया है उसको हम छोड़ें तुम लोग [इमम्] इस [यज्ञम्] सत्काररूप व्यवहारको [अभि, गृणीत] हमारे सम्मुख प्रशंसित करो हम [जानु] जानु अवयवको [आच्य] नीचे टकके [दक्षिणतः] तुम्हारे दक्षिण पार्श्ववर्ती [निषद्य] बैठके तुम्हारा निरन्तर सत्कार करें ॥६२॥

जिनके पितृ लोग जब समीप आवें अथवा सन्तान लोग इनके समीप जावें तब भूमिमें घुटने टिका नमस्कार कर इनको प्रसन्न करें, पितर लोग भी आशीर्वाद विद्या और अच्छी शिक्षाके उपदेशसे अपनी सन्तानोंको प्रसन्न करके सदा रक्षा किया करें ॥६२॥

आसीनासोअरुणीनामुपस्थे रयिन्धत्त दाशुषे मर्त्याय। पुत्रेभ्यः पितरस्तस्य वस्वः प्रयच्छत तइहोर्जन्दधात ॥६३॥

हे [पितरः] पितृलोगो ! तुम [इह] इस गृहाश्रममें [अरुणीनाम्] गौरवर्णयुक्त स्त्रियोंके [उपस्थे] समीप में [आसीनासः] बैठे हुवे [पुत्रेभ्यः] पुत्रोंके लिये और [दाशुषे] दाता [मर्त्याय] मनुष्य के लिये [रयिम्] धनको [धत्त] धरो [तस्य] उस [वस्वः] धनके भागोंको [प्र, यच्छत] दिया करो जिससे [ते] वे स्त्री आदि सब लोग [ऊर्जम्] पराक्रमको [दधात] धारण करें ॥ ६३ ॥

ऐसे ही मंत्र दायभागका मूल हैं।

वे ही वृद्ध हैं जो अपनी स्त्री स्त्री के साथ प्रसन्न अपनी पत्नियों का सत्कार करने हारे सन्तानों के लिये यथायोग्य दायभाग और सत्पात्रों को सदा दान देते हैं और वे सन्तानों को सत्कार करने योग्य होते हैं १९॥ ६३ ॥

पुनन्तु मा पितरः सोम्यासः पुनन्तु मा पितामहः पुनन्तु प्रपितमहः पवित्रेण शतायुषा पुनन्तु मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः पवित्रेण शतायुषा विश्वमायुर्व्यश्नवै। अ० १९ मं० ३७॥

सोम के योग्य पितर पूर्णायु के दाता पवित्रता से मुझ को पवित्र करो प्रपितामह पूर्णायु के दाता पवित्र से मुझ को शुद्ध करो प्रपितामह शुद्ध करो पूर्णायु को प्राप्त करूं॥

आधत्त पितरो गर्भं कुमारम्पुष्करस्रजम्।
यथेह पुरुषोसत्॥ यजु० अ० २ मं० ३३ ॥

पूर्व मन्त्र में तो पिता पितामह और प्रपितामह से प्रार्थना है कि हमें पवित्रता का उपदेश और आचरण करावें। दूसरेका यह अर्थ है:– बड़ों को चाहिये कि (यथा) जिस प्रकार (इह) इस कुल में (पुरुषः) पुरुष (असत्) होवे उस प्रकार (पितरः) पिता लोग (गर्भम्) गर्भ का (आधत्त) आधान करें और (पुष्करस्रजम्) सुन्दर (कुमारम्) पुत्र को उत्पन्न करें ॥

ये च जीवा ये च मृता ये जाता ये च यज्ञियाः।
तेभ्यो घृतस्य कुल्यैतु मधुधारा व्युन्दती ॥ अथर्व० १८।४।५७

इस मन्त्र में यह कहा गया है कि मृतक को फूंकते समय जो घृत की धारावद्ध आहुती है, वह जीवते प्राणियों और मरे हुवे शवों (लाशों) की सुदशा करती है, अर्थात् जीवितों को रोगादि से बचाती और मरों को सड़ने आदि दुर्गं से रोकती है। पदार्थ-- (ये च जीवाः) जो जीते हैं (ये च मृताः) और जो मरे शरीर हैं [ये जाताः] जो बच्चे जन्मे हैं [ये च यज्ञियाः] और जो यज्ञके उपयोगी हैं [तेभ्यः] उन सबकी भलाईके लिये [घृतस्य] घृतकी [व्युन्दती] टपकती [मधुधारा] मधुरादि युक्त [कुल्या] धारा (एतु) प्राप्त होवे॥

प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्याणैर्येना ते पूर्वे पितरः परेताः।
उभा राजानौ स्वधया मदन्तौ यमं पश्यासि वरुणं च देवम् ॥
अथर्व० १८। १। ५४।

अर्थात् मृत शरीरको फूंकते हुये लोग इस मन्त्रको पढ़ते हैं कि– जहां इससे पूर्व मरे हुये शरीर पूर्वजोंके गये, वहां ही, और जिन मार्गों में शरीरके सूक्ष्म अवयव ही यान (सवारी) हैं उन मार्गोंसे यह भी

जाता है और * यम तथा * वरुण नामक आकाशमें विराजने वाले भौतिक देवताओंमें मिल जाता है। पदार्थ-(प्रेहि प्रेहि) जा जा (पूर्व्यैभिः पथिभिः) पुर=शरीर ही जहां यान=सवारी है उन मार्गों से जा। (येन) जिन मार्गों से (ते पूर्वे) तुझ से पहिले (पितरः) बापदादे (परेताः) मरे हुये गये और वहां आकाश में (यमं देवम्) वायु विशेष देवको (च) और (वरुणम्) जलके दिव्य स्वरूपको (उभा) इन दोनों (राजानौ) प्रकाशमान देवोंको जो कि (स्वधया) उत्तमान्नाहुति जो स्वधा है उससे (मदन्तौ) सुधरे हुये हैं उन्हें (पश्यासि) देखता=प्राप्त होता है तू॥

अर्थात् मृतशरीरकी दुर्गति नहीं होती, किन्तु स्वधा जो उत्तम द्रव्योंकी पितृयज्ञमें आहुति हैं उससे आकाश में के (यम) वायु वरुण) जल बिगड़ते नहीं, किन्तु (मदन्तौ) अच्छे प्रसन्न उत्तम रहते हैं और उन्हींमें मृतशरीर मिल जाता है अर्थात् शरीरका गीला अंश वरुणमें और शुष्कअंश यममें मिल जाता है।

ये निखाता ते परोप्ता ये दग्धा ये चोद्धिताः।
सर्वांस्तानग्न आवह पितॄन्हविषे अत्तवे॥

ये अग्निदग्धा ये अनग्निदग्धा मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते।
त्वं तान्वेत्थ यदि ते जातवेदः स्वधया यज्ञं स्वधितिं जुषन्ताम्॥

अथर्व १८। २। ३४-३५॥

इन दोनों मन्त्रोंमें यह कहा गया है कि जो जो शरीर किन्हीं कारणोंसे भूमिमें दब गये, जिनके देह ऊपर पड़े रह गये, जो बिना घृतादि फुंक गये, जो वायु में उड़ गये, अग्निमें नहीं फुंकने पाये अग्नि में किया हुआ होम उन सब आकाशगत मृतप्राणिशरीरावयवों को प्राप्त होकर उनकी सद्गति=अच्छी दशा करता है॥

पदार्थ-[ये निखाताः] जो दब गये (ये परोप्ताः) जो इधर उधर पड़े रह गये [ये दग्धाः] जो केवल फुंक गये [ये च) और जो [उद्धिताः] ऊपर उड़ गये (अग्ने) अग्नि [तान् सर्वान्] उन सब को (हविषे) होमके पदार्थ (अत्तवे) खानेके लिये (आवह) प्राप्त

* देखो निघण्टु ५।४ और निरुक्त १०। १९-२१ अन्तरिक्ष देवता प्रकरण॥

कराता है वा करावे ॥३५॥ (ये अग्निदग्धाः) जो केवल अग्निमें फुंके (अनग्निदग्धाः) और जो अग्नि में भी नहीं फुंके [दिवः मध्ये] आकाशके मध्यमें हैं [जातवेदः] आगे । (तान्) उनको [यदि] यदि (त्वम्) तू [वेत्थ] जानता=प्राप्त होता है तो वे [स्वधया] स्वधा कह कर दी हुई आहुतिसे [मादयन्ते] प्रसन्न होते अर्थात् सड़ने को छोड़कर अच्छी दशाको प्राप्त होते हैं, अतः वे [स्वधया] उसी आहुतिसे (स्वधितिम्) पैतृक [यज्ञम्] यज्ञका [जुषन्ताम्] सेवन करें ॥

ये नः पितुः पितरो ये पितामहा य आविविशुरुर्व१न्तारिक्षम् ।
य आक्षियन्ति पृथिवीमुतद्यां तेभ्यः पितृभ्यो नमसा विधेम ॥

अथर्व० १८ । २ । ४९ ॥

अर्थ–[ये] जो [नः] हमारे [पितुः पितरः] बापके बाप हैं, अतएव (ये) जो हमारे (पितामहाः) बाबा हैं (ये) जो कि [उरु अन्तरिक्षम्] इस बड़े आकाशको [आविविशुः] प्रवेश कर गये हैं (ये) जोकि [पृथिवीम्) पृथिवीको (उत) और (द्याम्) आकाशको (आक्षयन्ति) छाय रहे हैं [तेभ्यः] उन [पितृभ्यः] मृत शरीरोंके लिये [नमसा विधेम] हम आहुति करते हैं ॥

अर्थात् पुत्रादिका कर्तव्य है कि पिता वा पितामहादि पूर्वजों की अन्त्येष्टि श्रद्धापूर्वक करें, ऐसा करने से पृथिवी और अन्तरिक्ष लोकमें जो मृतपूर्वज लोगोंके शरीराऽवयव वायु आदिमें हैं वे बिगड़ते नहीं, किन्तु सुधरकर मनुष्यादि प्राणियोंको दुःख नहीं देते हैं। अन्यथा वायु जलको विकृत करके रोगादि उत्पन्न करते हैं।

अब बतलाइये कौनसे वेदमन्त्रकी आज्ञा से मृतकपितरोंको श्राद्ध मिलता है। इसके उपरान्त श्राद्ध अर्थात् श्रत् सत्यका नाम है।

श्रत्सत्यंदधाति या क्रिया श्रद्धा–
श्रद्धया यत् क्रियते तच्छ्राद्धम् ॥

जिस क्रियासे सत्यका ग्रहण किया जाय उसको श्रद्धा और जो श्रद्धासे किया जाय उसका नाम श्राद्ध है। और:–

तृप्यन्ति तर्पयन्ति येन पितॄन् तत्तर्पणम् ।

जिस कर्मसे तृप्त हो उसको तर्पण कहते हैं—यह तृप्ति जीवित माता पिता आदिके साथ श्रद्धासे सेवा करनेसे होती है न कि मरने पर—मरने पर तो जीवात्माका उनसे कोई सम्बन्ध नहीं रहता। फिर श्राद्ध और तर्पण कैसा ?।

पण्डितजी—अब हम आपको मृतक श्राद्ध विषयकी असली कार्य्यवाही सुनाते हैं जो पुराणोंमें लिखी हैं आप अच्छे प्रकार सुन् उन पर विचार कीजिये।

देखिये शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय ३० में लिखा है।

किसी समय फल्गुनी नदीके किनारे लक्ष्मण सहित रामचन्द्र जी आये। सीता सहित पिताकी आज्ञा स्मरण कर वहां स्थित हुए और श्राद्धका समय जान कहने लगे अब क्या करना चाहिये तब फललेके लिये लक्ष्मणको वन भेजा जब बहुत समय होगया तब स्वयं आप चले जानकीजी अकेली रह गईं और उसने विचारा कि श्राद्धका समय जाता है न मालूम अभी तक क्यों नहीं आये तब इंगुदीके पिण्ड बना कर स्वयम् जानकीजीने दिये तब दशरथादि पितरोंके हाथ निकले।

किंचिद्वस्तुगृहीत्वातुतेनैव पिण्डकास्तदा।
दत्तायदातयातत्रहस्ताश्चनिः सृतास्तदा ॥ ११ ॥

और तृप्त होकर कहने लगे। जनकात्मजे ! तुम धन्य हो जानकीजीने उनके अनेक प्रकार भूषणधारी हाथोंको देख कर कहा तुम कौन हो जानकीजीके यह वचन सुनकर उनके श्वसुर बोले कि हे पतिव्रते ! मैं तेरा श्वसुर हूं तुम्हारे पिण्डदानसे मैं तृप्त होगया हूं तुम्हारा श्राद्ध भी सफल होगया।

अहं दशरथोनामश्वशुरस्ते च सुव्रत।
तृप्ताः स्मतव पिण्डेनश्राद्धं ते सफलंकृतम् ॥ १४ ॥

ऐसा कहने पर जानकी बोली इस तुम्हारे हाथ निकालनेका विश्वास हमारे स्वामी न करेंगे। ऐसा कहने पर दशरथ बोले कि हे अन्धे ! इस विषयमें तुम साक्षी करलो यह सुनकर फल्गूनदी, गौ

अग्नि, तथा केतकीसे कहा कि तुम इस बातको अच्छे प्रकार सुनलो इस में वे सब साक्षी हुए। तब वे फल्गूनदी आदि से अन्तर्ध्यान हुए—इस अवसरमें रामचन्द्रजी आये और जानकीजीसे बोले कि हे साध्वि! तुम शीघ्र पवित्र हो जाओ क्योंकि श्राद्धका समय आगया तब जानकी विस्मृत हो कुछ न बोलीं तब रामने उनको आश्चर्य्ययुक्त देख जानकी जीसे पूंछा—तिस पर उन्होंने पूर्वका सब वृत्तांत कह सुनाया तब वह भ्रान्तयुक्त हो लक्ष्मण जी से बोले कि तुम ने जानकी जी का कहना सुना हम ने तो कभी ऐसा नहीं देखा जैसा यह कहती हैं।

अस्माभिर्विधिनानैव दृष्टश्चैवाधुनातया ॥२३॥

इससे विदित होता है कि यह काम करनेके लिये असत्यभाषण करती हैं तब जानकीजी लज्जित हो कहने लगीं मैंने फल्गुनी नदी, गाय अग्नि और केतुकी इन चारको साक्षी कर लिया है श्रीरामजीने कहा कि यदि यह चारों साक्षी दे देंगे तो हम तुम्हारे वचनोंको सत्य मान लेंगे इतना कह श्रीरामजीने उन चारों साक्षियोंसे पूंछा तो वह सब मोहित हो कहने लगे कि हम इस विषयको नहीं जानते ॥२६॥

ते सर्वेमोहमापन्ना न जानीमोवयंत्विदम् ॥२६॥

यह सुन दोनों भाई आपसमें हास्य कर कहने लगे कि अब श्राद्ध करना चाहिये दिन बहुत चढ़ आया और श्राद्ध बिना भोजनोंके करना चाहिये तब जानकी अत्यन्त दुःखसे दुखी होकर कहने लगी कि यह क्या हुआ और फिर पाक बनाने लगी इधर श्राद्ध समय श्रीरामजी ने पितरोंका आवाहन किया तब सूर्य्यके समीपसे वाणी निकली कि हे पुत्र? अब तुम क्यों हवन करते हो हमने तो हमको तृप्त कर दिया तब रामने कहा कि मैं ऐसे कभी न मानूंगा फिर सूर्य्यसे वाणी निकली कि पाप रहित किये हुए श्राद्धको फिर नहीं करना चाहिये फिर भी रामने उनके वाक्योंको नहीं माना तब सूर्य्य साक्षी होकर बोले कि अब तुम क्यों श्राद्ध करते हो तब राम "झंप" ऐसा शब्द करके राम लक्ष्मण से बोले हम धन्य हैं जब कि कुलवधु ऐसी श्रेष्ठ है फिर राम लक्ष्मण भोजन कर परस्पर कहने लगे कि इन साक्षियोंने साक्षी क्यों नहीं दी?

इस पर सीताजीने उन चारोंको शाप दिया कि हे नदी जो तूने सुना और देखा तथापि सत्य नहीं कहा इससे तू पातालमें जाकर बह। केतकी आजसे शिवके मस्तक पर चढ़ने योग्य न होगी। निकट खड़ी गायसे कहा कि जो तूने सत्य नहीं कहा इसलिये तू पूंछसे शुद्ध और मुंहसे अशुद्ध और अग्निसे कहा कि तू सर्वभक्षी होगी।

पंडितजी—प्रथम तो यह विचारिये कि श्रीरामको सनातनी भाई ईश्वरावतार मानते हैं परन्तु यहां इतनी भी सुध नहीं कि जानकीजी श्राद्ध कर चुकीं द्वितीय जब जानकीजीने दशरथजीके हाथ निकालनेकी बात कही तो श्रीरामजीने कहा कि हमने तो कभी ऐसा नहीं देखा। तिस पर सीताजीने साक्षियोंको पेश किया परन्तु किसीने साक्षी नहीं दी। फिर आप इस कथासे क्या प्रयोजन सिद्ध करते हैं? हमारी समझमें तो शिव पुराणके कर्त्ताने श्राद्धमहात्म्यको बढ़ानेके लिये श्रीरामके नामसे श्राद्धकी कथाको गढ़ लिया फिर भी विचारशीलोंकी दृष्टिमें कई दोष दृष्टि आ रहे हैं? अब आगे और श्रवण कीजिये।

पद्मपुराण सृष्टिखण्ड अध्याय

१० में लिखा है कि पूर्व समयमें कुरुक्षेत्रके बीच कौशिक नाम एक महात्मा हुए जिनके सात पुत्र थे जो गर्ग ऋषिके शिष्य हुए महात्मा कौशिकके मर जाने पर दैवयोगसे बड़ा कठिन दुर्भिक्ष पड़ा वह सब ऋषिके यहां गाय चराया करते थे एक दिन अन्नके न मिलने पर सब भाइयोंने यह कुविचार किया कि अब अन्न नहीं मिलता इसलिये इस कपिलाको ही भक्षण कर लें तब सब जनोंने इस बातका विचार किया तो उनमें से छोटा भाई बोला कि यदि इसके मारनेका ही विचार है तो श्राद्धकेरूप अर्थात् नामसे बध करो।

यद्यवश्यमियंवध्याश्राद्धरूपेणयोज्यताम् ॥ ५३ ॥

ऐसा करनेसे मारनेका दोष हमको न लगेगा हांलाकि पितृलोग भी इसको अभक्ष्य समझते हैं॥

श्राद्धेनिभोज्यमानायां पापं नश्यतिनोध्रुवम् ॥ ५४ ॥

तब सब ज्येष्ठ भाइयोंने आज्ञा दी अच्छा० श्राद्धके लिये ही

बंध करो ऐसा विचार कर सबसे छोटेने श्राद्ध करनेका उद्योग किया तब दो भाइयोंको देव और तीन भाइयोंको पितृब्राह्मण और एकको अतिथि बनाया अर्थात् सबसे छोटा श्राद्धकर्त्ता हुआ इस प्रकार उन सबने उस कपिलाको मन्त्रपूर्वक श्राद्ध विधानसे भक्षण कर लिया इस के उपरान्त सब हत्यारोंने गुरुसे कहा कि कपिलाको शेरने खा लिया बछड़ा आप लीजिये गुरु महाराजने कुछ विचार किया और माना कि ऐसा ही हुआ होगा मरनेके पीछे यह सबके सब दशार्ण देशमें बहे-लिये हुए चूंकि पितरोंके भावसे बध किया था इसलिये पूर्वजन्मकी जातिका स्मरण बना रहा और व्याध के रूपमें पाप न करनेसे और तीर्थयात्राके प्रभावसे मरने पर कालिंजरपर्वत पर सबके सब मृग हुए। वहां भी विज्ञान रहनेसे सुकर्म करने के कारण मानसरके किनारे पर सातों चक्रवाक हुये फिर इस योनिमें वैराग्य रहा जिससे मरने पर ब्राह्मण हुए उसमें भी योगाभ्यासी।

फिर वह कालान्तरमें परमपदको प्राप्त हुए इसलिये ऋषियों ने कहा है कि जब पितर श्राद्ध से सन्तुष्ट होते हैं तो वह विद्या स्वर्ग, मोक्ष, पुत्र, वा राज्य और सब कुछ सुख देते हैं।

पंडितजी—महाराज यदि इस कथाको सत्य माना जाय तो प्रथम यह कठिन मालूम होता है कि वह सातों ऋषिके बेटे और गर्ग ऋषिके शिष्य जिनको कभी भी किसी जीवकी हिंसाका काम नहीं पड़ा पिता और गुरु दोनों महात्मा थे फिर इन सातोंसे (गाय) हिंसाका होना आश्चर्य्यजनक है। हां भूखे थे शायद ऐसा होगया हो। परन्तु इस पर छोटेने कहा कि श्राद्धके नामसे मारिये पाप न होगा फिर उन सबने सम्मति दे दी और श्राद्ध किया जिसके फलसे उन सबको जाति-स्मरण बना रहा और वह कालान्तरमें तरगये। क्योंकि श्रीमान् सना-तनधर्मियोंकी सम्मतिसे जब पितर बड़े २ कार्य्योंको मृतकश्राद्ध करनेसे देते हैं। तो क्या उनको यह भी ख़बर नहीं कि यह गाय भूखके कारण मारा चाहते थे। पाप न लगनेके कारण श्राद्ध करनेके बहानेसे मार श्राद्ध किया। कहिये श्रीमान्? बिना मानसीसंकल्प होने पर भी पि-तरोंने उनको श्राद्धका फल दे ही दिया क्या यह आश्चर्य्य नहीं है।

पुनः यह अभक्ष्यभोजन था फिर पितरोंने उसको क्यों स्वीकार किया क्या पितर भी ऐसी हिंसाको स्वीकार करते हैं ? फिर इतना फल भी मिलगया। इससे तो प्रकट होता है कि पितरपुत्रों आदिकोंको भक्ष्यभोजन न मिलने पर अभक्ष्यको भी स्वीकार करलेते हैं।

क्या कहें श्रीमान् यह श्राद्धसिद्धिकी दूसरी मिसाल है—अब और सुन लीजिये श्राद्ध में मांससे श्राद्धकरनेकी आज्ञा है और उससे पितरोंकी तृप्ति विशेष होती है।

मत्स्यपुराण अध्याय १७ में लिखा है—दही, दूध, घृत, खांड इन्होंसे युक्त अन्नका भोजन करानेसे पितर एक महीने तृप्त रहते हैं ॥ ३० ॥

अन्नन्तुसदधिक्षीरंगोघृतंशर्करान्वितम् ।
मासम्प्रीणातिवैसर्वान् पितॄन्नित्याहकेशवः ॥ ३० ॥

मत्स्यमांससे दो माह तक, हरिणके मांससे तीन महीने तक और मेढ़ेके मांससे चार महीने तक, पक्षियोंके मांससे पांच महीने तक ॥ ३१ ॥

द्वौमासौमत्स्यमांसेन त्रीन्मासान्हारिणेन तु ।
औरभ्रेणाथचतुरः शाकुनेनाथपञ्च वै ॥ ३१ ॥

बकरेके मांससे छः महीने तक, बिन्दुओं वाले हिरणके मांससे सात महीने तक, एणसंज्ञक मृगके मांससे आठ महीने तक, शूकर, भैंसा इनके मांससे दश महीने तक, शशा कछुवा इनके मांससे ग्यारह महीने तक ३२ ॥ ३३ ॥

षण्मासंच्छागमांसेनतृप्यन्ति पितरस्तथा ।
सप्तपार्षतमांसेन तथाष्टावेणजेन तु ॥ ३२ ॥
दशमांसास्तु तृप्यन्तिवराहमहिषामिषैः ।
शशकूर्मजमांसेनमासानेकादशैवतु ॥ ३३ ॥

गौके दूध वा खीरके भोजनसे वर्ष दिन तक, रौरवसंज्ञक हरिण के मांससे १५ महीने ॥

संवत्सरन्तु गव्येनपयसापायसनेनच ।
रौरवेण च तृप्यान्ति मासान्यंच दशैव तु ॥ ३४ ॥

मेंढ़ा सिंह इनके मांससे १२ वर्ष तक कालशाक जीव और गेंडेके मांससे अनन्तवर्षों तक पितर तृप्त रहते हैं ।

व्याघ्र्यासिंहस्यमांसेनतृप्तिर्द्वादशवार्षिकी ।
कालशाकेनचानन्ता खड्गमांसेनचैवहि ॥ ३५ ॥

इसी भांति अन्य पुराणोंमें भी मांस खानेकी आज्ञायें पाई जाती हैं कहिये वेदकी वह आज्ञा कि (अहिंसापरमोधर्मः) कहां रही । सच तो यह है कि स्वार्थीपुरुष अपने स्वार्थसिद्धिके सन्मुख किसी दोषको नहीं देखता इसी प्रकार श्राद्धसिद्धिको समझिये परन्तु इस पर भी श्राद्धकीसिद्धि नहीं होती क्योंकि पौराणिकोंका यह ख़याल है कि हमारा किया श्राद्धान्तादि जन्मान्तरमें हमारे पितरोंको पहुंचता है वह भी पद्मपुराण पष्ठउत्तरखण्ड अध्याय ७७ के लेखसे मिथ्या प्रतीत होता है । अब मैं श्रीमान्‌को इसकी पुष्टिमें एक कथा सुनाता हूं ॥

यही कथा भविष्योत्तरपुराणान्तर्गत ऋषिपञ्चमी व्रतोद्यापन विधिमें आई है । जो मुरादाबादीय पं० व्रजरत्न (महर्षिकुमार) भट्टाचार्य्यके हिन्दीअनुवाद सहित बम्बई गणपति कृष्णाजी के. प्रेस में छपी है । हम मूल और उसीका हिन्दीअनुवाद नीचे लिखते हैं ।

अत्रार्थे यत्पुरावृत्तं प्रवक्ष्यामि कथानकम् । पुरा कृतयुगे राजा विदर्भायां बभूवह ॥ १६ ॥ श्येनजिन्नाम राजर्षिश्चातुर्वर्ण्यानुपालकः । तस्य देशेऽवसद्विप्रो वेदवेदाङ्गपारगः ॥ १७ ॥ सुमित्रो नाम राजेन्द्र सर्वभूतहितेरतः । कृषिवृत्त्या सदायुक्तः कुटुम्बपरिपालकः ॥१८॥ तस्य भार्या सुसाध्वी च पतिशुश्रूषणेरता । जयश्रीर्नाम विख्याता बहुभृत्यसुहृज्जना ॥१९॥ अति-

चिन्तान्विता सा च प्रावृट्काले सुमध्यमा। क्षेत्रादिषु-रता साध्वी व्याकुलीकृतमानसा ॥२०॥ एकदा सात्मनः प्राप्तमृतुकालं व्यलोकयत्। रजस्वलापि सा राजन्! गृहकर्म चकारह ॥ २१ ॥ भाण्डादीन्यस्पृशद्राजन्नृतौ प्राप्तेऽपि भामिनी। कालेन बहुना साध्वी पञ्चत्वम-गमत्तदा ॥२२॥ तस्या भर्त्तापि विप्रोसौ कालधर्ममुपे-यिवान्। एवं तौ दम्पती राजन्! स्वकर्मवशगौ तदा॥२३॥ भार्या तस्य जयश्रीः सा ऋतुसंपर्कदोषतः। शुनीयोनिमनुप्राप्ता सुमित्रोऽपि नरेश्वर! ॥२४॥ तस्याः सम्पर्कदोषेण बलीवर्दो बभूवह। एवं तौ दम्पती राजन् स्वकर्मवशगौ तदा॥ २५ ॥ ऋतुसम्पर्कदोषेण तिर्यग्योनिमुपागतौ। स्वधर्माचरणाज्जातावुभौ जाति-स्मरौ तथा॥ २६ ॥ सुमित्रस्य च पुत्रोभूद्गुरुशुश्रूषणे रतः ॥ २७ ॥ सुमतिर्नाम धर्मज्ञो देवतातिथिपूजकः। अथ क्षयाहे संप्राप्ते पितुस्तु सुमतिस्तदा ॥२८॥ भार्यां चन्द्रवतीं प्राह सुमतिः श्रद्धयान्वितः। अद्य सांवत्स-रदिनं पितुर्मे चारुहासिनि ॥ २९ ॥ भोजनीया द्विजा-भीरु! पाकसिद्धिर्विधीयताम् ॥३०॥ मुक्तं पायसभाण्डे वै सर्पेण गरलं ततः। दृष्ट्वा ब्रह्मवधाद्भीता शुनी भा-ण्डानि साऽस्पृशत् ॥३१॥ द्विजभार्या च तां दृष्ट्वा उ-ल्मुकेन जघानह। भाण्डादीनि च प्रक्षाल्य त्यक्त्वा पाकं सुमध्यमा ॥ ३२ ॥ पुनः पाकं च कृत्वा तु श्राद्धं कृत्वा विधानतः। ततो भुक्तेषु विप्रेषु नोच्छिष्टं च

ददौ बहिः ॥३३॥ भूमौ क्षिप्तं तया शुन्या उपवासस्त-
दाभवत् । ततो रात्र्यां प्रवृत्तायां सा शुनी क्षुधिता
भृशम् ॥३४॥ बलीवर्दमुपागत्य भर्त्तारमिदमब्रवीत् ।
बुभुक्षिताद्य हे भर्त्तर्नदत्तं भोजनादिकम् ॥ ३५ ॥
ग्रासादिकं च न प्राप्तं क्षुधा मां बाधते भृशम् ।
अन्यस्मिन्दिवसे पुत्रो मम लेह्यं ददात्यसौ ॥ ३६ ॥
अद्य मह्यं किमप्येष उच्छिष्टमपि नो ददौ। पायसान्ने
पपाताद्य गरलं सर्प सम्भवम् ॥३७॥ मया विचिन्त्य मनसा मरि-
ष्यन्ति द्विजोत्तमाः । संस्पृष्टं पायसं गत्वा बद्ध्वाहं ताडिता
भृशम् ॥३८॥ दुःखितं तेन मे गात्रं कटिर्भग्ना करोमि किम् । ततः
प्राह स चानड्वान् भद्रे ते पापसंग्रहात् ॥ ३९ ॥ किं करोमि ह्यश-
क्तोऽहं भारवाहत्वमागतः । अद्याहमात्मनः क्षेत्रे वाहितः सकलं
दिनम् ॥ ४० ॥ मारितश्चात्मजेनाहं सुखं बद्ध्वा बुभुक्षितः । वृथा
श्राद्धं कृतं तेन जाताद्य मम कष्टता ॥ ४१ ॥ कृष्ण उवाच-तयोः
संवदतोरेवं मातापित्रोश्च भारत ! । श्रुत्वा पुत्रस्तथा वाक्यं यदुक्तं च
तदोभयोः ॥ ४२ ॥ पितरौ तौ विदित्वा तु दत्तवान्सुमतिस्तदा ।
तस्यां रजन्यां तत्कालं ददौ तस्यै च भोजनम् ॥४३॥

भावार्थ—इसी बीचमें जो प्राचीनकथाका वृत्तान्त है सो मैं कहता हूं, पहिले सत्ययुग में विदर्भनगरीमें चारों वर्णोंको पालने वाले राजाओंमें ऋषिके समान एक राजा श्येनजित् हुवे थे, उनके देश में अङ्गों सहित वेदोंके अन्तका जानने वाला ॥१६॥१७॥ सम्पूर्ण प्राणियों के हितका करने वाला, खेतीके कर्मसे कुटुम्बका पालन करने वाला एक सुमित्र नामक ब्राह्मण रहता था ॥१८॥ बड़ी पतिव्रता, पतिकी सेवामें तत्पर, अनेक भृत्य (नौकर) और कुटुम्बियों से युक्त जयश्री नाम वाली उस ब्राह्मण की एक स्त्री थी । ॥१९॥ एक समय वर्षाकाल

में अत्यन्तचिन्ता से युक्त सुन्दर कमर वाली खेलके काममें लगी हुई उस पतिव्रताका चित्त अत्यन्त व्याकुल हुआ ॥२०॥ एक समय उस स्त्री ने अपने ऋतुकाल को आता देखा और हे राजन् ! वह रजस्वला होकर भी घरके कामको करती रही ॥२१॥ हे राजन् ! ऋतुकाल प्राप्त होने पर भी उसने भाण्डादिक सब छुवे और वह स्त्री थोड़े ही समयमें मृत्यु को प्राप्त हुई ॥ २२ ॥ और उसका पति भी समयानुसार मृत्युके वश हुआ । इस प्रकार वे दोनों स्त्रीपुरुष अपने कर्मोंके वश हुये ॥२३॥ उस की वह स्त्री जयश्री ऋतुकालकी सङ्गतिके दोषसे कुतियाकी योनि को प्राप्त हुई । और हे राजन् ! वह सुमित्र ब्राह्मण भी ॥२४। उस स्त्रीके संगके दोषसे उस समय बलीवर्द (बैल) हुआ । हे राजन् ! तब वे दोनों स्त्री पुरुष इस प्रकार अपने कर्मोंके वशीभूत हुवे ॥२५॥ ऋतुकाल की संगतिके दोष से वे दोनों पशुयोनिको प्राप्त होकर अपने धर्मके प्रताप से अपने पूर्वजन्मको याद करते हुये ॥ २६ ॥ हे राजन् ! उसी प्रकार अपने किये हुये पहिले पापको भी याद करते हुये पुत्रके ही घर उत्पन्न हुये । गुरुकी अत्यन्तशुश्रूषा करने वाला, धर्मका जानने वाला, देवता और अभ्यागतों की पूजा करने वाला सुमतिनाम सुमित्रका पुत्र था । फिर पिताके क्षयाहके प्राप्त होने पर उस समय वह सुमति ॥२७॥२८॥ श्रद्धासे युक्त होकर अपनी चन्द्रवती स्त्री से बोला कि हे मनोहर हास्य करने वाली ! आज मेरे पिताकी वर्षीका दिन है ॥२९॥ हे अधिक भय करने वाली ! आज ब्राह्मणोंको भोजन कराना उचित है, सो तू जाकर पाक (भोजन) तयार कर । अपने पति सुमतिकी आज्ञा से उस चन्द्रवतीने सब भोजन बनाये ॥३०॥ तदनन्तर खीरके पात्रमें सर्पने विष छोड़ दिया, उसको देखकर ब्राह्मणोंके मर जानेके भय से खीरके पात्र को उस कुतिया ने छू दिया ॥३१॥ उस पात्रको छूती हुई उस कुतिया को देखकर उस ब्राह्मणकी चन्द्रवती स्त्रीने उसे जलती लकड़ी से मारा और उस सुन्दरकमर वाली चन्द्रवती ने भाजनको छोड़ सब वर्त्तनों को धोकर ॥ ३२ ॥ फिर दूसरा पाक बनाकर बड़ी विधिसे श्राद्ध करके ब्राह्मणोंके जीम जाने पर उसने ज़मीन में पड़ी हुई ब्राह्मणोंकी जूठन बाहर नहीं दी, तब वह कुत्ती भूखी ही रही, फिर रात होने पर

अत्यन्त क्षुधा (भूख) लगी ॥३३॥३४॥ अपने पति उस बलीवर्दके पास आकर यह बोली कि हे नाथ ! आज मैं बहुत भूखी हूं। किसी ने मुझे भोजनादि कुछ भी नहीं दिया ॥३५॥ आज तो एक ग्रास तक भी मैंने नहीं पाया, इस कारण भूख मुझे अधिक बाधा करती है। अन्य दिन तो यह हमारा पुत्र मुझे भोजन देता था ॥३६ आज तो इसने मुझे ज़रा भूठन तक भी नहीं दी। आज खीरमें सर्पका विष गिर गया था ॥३७॥ सो यह बड़े २ श्रेष्ठ ब्राह्मण मर जायंगे। ऐसा मैंने विचार कर वाके खीरको छू दिया, इस कारण बांधकर मुझे बहुत मारा ॥३८॥ उस मारने से मेरा शरीर बहुत दुःखित हुआ और मेरी कमर भी टूट गई, सो मैं क्या करूं ? यह सुनकर वह बलीवर्द बोला कि हे सुभगे ! तेरे पापके संग्रहसे ॥३९॥ मैं भी अशक्त हूं सो क्या करूं ? बोझे के उठानेको माप्त हूं। आजके दिन मैं अपने पुत्रके खेतमें सारा दिन चलाया गया ॥४०॥ और इस मेरे पुत्रने भूखको प्राप्त हुए मेरे मुखको बांध कर, मुझे बहुत मारा, इसने यह आज श्राद्ध वृथा ही किया, क्योंकि मुझे तो आज बड़ा कष्ट हुआ ॥४१॥ इतनी कथा सुनाय श्रीकृष्णजी बोले—हे युधिष्ठिर ! उन दोनों माता पिताके इस प्रकार कथन करते समय जो कुछ उन दोनों ने कहा उसको उस उनके पुत्र सुमतिने सुनकर अपने माता और पिता जान कर उस रात्रिमें उसी समय उस अपनी माताको भोजन दिया ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

इसी प्रकार पद्मपुराण षष्ठ उत्तरखण्ड अ० ११ में लिखा है।

अब कहिये पुराणकी पुष्टि पुराण ही रद्द कर रहे हैं अब मैं इससे आगे आपको वह कथा श्रवण कराता हूं कि—गयाश्राद्ध से प्रेतभाव नहीं छूटता। देखिये पद्मपुराण षष्ठउत्तरखण्ड अध्याय १९६ में लिखा है कि—

तुङ्गभद्रा नाम नदीके तट पर वर्णं आचारसेयुक्त धनधान्य संयुक्त कोहल नाम ग्राममें आत्मदेव एक श्रेष्ठ ब्राह्मण वेदविद्याकी विधिमें निपुण रहता था। उसकी स्त्री धुंधुली नाम थी। जिसको पुत्र न होनेका बड़ा शोक रहा करता था। इसी दुखमें घरसे निकल बाहर को चल दिया। मार्गमें एक तालाबसे जल पी एक वृक्षकी छायामें बैठ गया वहां थोड़ी देरके पीछे एक संन्यासीजी भी आये। जो बड़े शान्त

चित्त थे। उनको बिठाकर उनसे प्रश्नोत्तर करने लगे; थोड़ी देर पीछे संन्यासीजीने कहा कि आत्मदेव तुमको क्या क्लेश है। उसने कहा कि विना पुत्रके मैं महादुखी हो रहा हूं यह सुन संन्यासीजी को बड़ी दया आई फिर योगी महाराजने आत्मदेवके माथेकी अक्षरमाला को देख कर कहा कि तुम्हारे सात जन्म तक पुत्रकी प्राप्ति नहीं है। तुम आग्रह न करो कर्मकी गति बड़ी बलवान् है इसलिये ज्ञानको प्राप्त होकर सुखी रहो तब आत्मदेवने सिद्धजी से कहा कि ज्ञानमें हमारे क्या होगा किसी प्रकार पुत्र दीजिये वरन् मैं आपके आगे प्राणोंको छोड़दूंगा तब योगीजीने कहा इस प्रकारके पुत्रसे तुमको सुख न होगा इतना कह एक फल देकर कहा कि इसको अपनी स्त्री को देना। तुम्हारे अवश्यमेव पुत्र होगा आत्मदेव वहां से घर आये और सब वृत्तान्त स्त्रीसे कह कर वह फल भी उसको दे दिया। उसने अपनी सखीको बुला सब वृत्तान्त कह कर कहा कि यदि मैंने इसको खाया तो मेरे गर्भ रह जावेगा। उसको मैं कैसे सह सकूंगी जो गर्भ तिरछा होगया तो मेरे प्राण निकल जांयगे पुत्र उत्पन्न होने पर बड़े दुःख होते हैं इसलिये मैं नहीं खाऊंगी तब सखीने भी कहा कि ऐसा ही करो। जब पतिने पूछा तो कह दिया कि खालिया। इस बीच में उसकी बहिन अपनी इच्छासे उसके घर आई उससे सब अपना वृत्तान्त कह कर कहा कि मुझको बड़ी चिन्ता होरही है क्या करूं तब बहिनने कहा कि मेरे गर्भ है उत्पन्न होने पर मैं तुमको दूंगी। तुम तब तक गर्भवतीके समान छिप कर घरमें रहो। और परीक्षाके लिये यह फल गौको दीजिये यह कह वह अपने घरको गई धुंधुलीने ऐसाही किया जैसा उसको बहिनने कहा था काल पाकर धुंधुलीकी बहिनके पुत्र उत्पन्न हुआ। जो वह धुंधुलीको चुपके से दे गई तब धुंधुलीने पतिसे कहा कि सुखपूर्वक पुत्र उत्पन्न होगया यह सुन वह बड़े प्रसन्न हुए। और ब्राह्मणोंको दान दिया और जातकर्म किया। घरमें गीत होने लगे। तब धुंधुलीने पतिसे कहा कि हमारे स्तनोंमें दूध नहीं है। इसलिये मेरी बहिनको बुला दीजिये जिसके एक महीना हुआ कि पुत्र होकर मर गया है। उसने ऐसाही किया और उसने उसका नाम धुंधकारी रक्खा वह नित्य पुष्ट होने लगा।

त्रिमासे निर्गतेचाथ सा धेनुः सुषुवेर्भकम् ॥१९६॥

तीन महीनेके पीछे गौके बालक उत्पन्न हुआ जो सब अंगोंसे सुन्दर दिव्य निर्मल दं प्रिमान था। बालकको देख आत्मदेवने आप ही उसके संस्कार किये बहुधा मनुष्य उसके देखनेको आये। गौके समान कान होनेके कारण गौकर्ण नाम पड़ा। दोनों जब जवान हुए तो गौकर्ण तो पण्डित और ज्ञानी हुए और धुंधकारी महादुष्ट जो खेलते हुए बालकोंको कुएंमें डाल दिया करता था। जिसने वेश्याप्रसंगसे पिताके सब द्रव्यका नाश कर दिया तब पिताने कहा कि इससे तो विना पुत्रके मैं अच्छा था योगीके वचन सत्य हुए अब मैं कहां जाऊं। क्या आगमें या कुएंमें गिर कर प्राण देदूं इतनेमें गौकर्ण आये और उसने उनको उपदेश दिया कि कौन पुत्र है। उससे कुछ नहीं तुम वनमें जाकर आनन्द करो।

पिता पुत्रके उत्तम वचनोंको सुन वनमें जा आनन्द करने लगे इधर धुंधकारीने मातासे कहा कि द्रव्य बतलाओ नहीं तो मैं तुझको मार डालूंगा वह दुखी हो कुएंमें गिर कर मर गई। जिसको निकाल गौकर्णने उसकी जातिके ब्राह्मणोंको बुला कर दाहकर्म कराया। और धुंधकारी वेश्याके साथ आनन्द करने लगा फिर उस वेश्याने आभूषण और वस्त्रोंकी इच्छा प्रकट कर कहा कि आप हमको दीजिये वरन् अन्य पुरुषके पास चली जाऊंगी वह रात्रिको चोरी कर लाया और उसको दिया फिर तो वेश्या अमूल्यभूषण वस्त्र देखकर विचार करने लगी कि यह चोरी करके लाता है किसी दिन राजासे मारा जायगा इसलिये हमको इसको मार द्रव्य लेकर पृथक् हो जाना चाहिये। यह सोच उसको गला फांस कर मारा जब वह इस प्रकार न मरा तो जलते हुए अंगार उसके मुख पर रख दिये वह मर गया वह महाप्रेत हुआ इधर गौकर्ण उसको मरा जान तीर्थयात्राको गया और गयामें उसका श्राद्ध कर घरको आगया। एक दिन गौकर्ण अपने मकानमें सो रहा था उस समय धुंधकारीने अपना भयंकररूप धारण कर उसको दिखलाया। तब गौकर्णने उससे पूछा। तब उसने पिछला सब वृत्तान्त कहा कि मैं धुंधकारी नामक तुम्हारा भाई हूं। अपने कर्मदोषसे प्रेत हुआ

हूं । माताको बहुत दुःख दिया । वह कुएमें गिरकर मर गई । फिर धनके लालचसे मुझको फांसी देकर मारा । और मुंह पर अंगारे रखकर जला दिया । इससे मैं प्रेतभावको प्राप्त हुआ । अब आप मुझको प्रेत-भाव से छुटाइये । और निस्संदेह कृतार्थ हूजिये ॥

तब गोकर्ण दुःखी होकर धुंधकारी से बोला कि मैंने तुमको मनुष्योंके मुख से मृतक हुआ सुनकर गयाजी में पिंड दिया था । तुम प्रेत कैसे हो गये । गयाजी में पिंडदेने से दुर्गतिवान को भी शुभगति निस्संदेह प्राप्त होती है । तुम कैसे स्वर्गको नहीं गये भाई गोकर्ण महात्मा के वचन सुन । ४१ । ४८ ॥ अध्याय १९७ ॥

तुभ्यं दत्तोमया पिंडो गयां त्वामहं मृतम् ।
श्रुत्वा लोक मुखाद्भ्रातस्तत्वं कथं प्रेततांगतः ॥
गया पिंड प्रदानेन दुर्गतोपि शुभांगतिम् ॥

दुःखितआत्मा धुंधकारी बोला कि सौ गयाके श्राद्ध से मेरी मुक्ति न होगी । हमारे उद्धारके लिये आपको दूसरा उपाय करना चाहिये जिसको गोकर्ण सुन विस्मय होकर बोला—

धुंधकारी दुःखितात्मा प्रोवाच पुरतः स्थितः ।
गया श्राद्ध शतेनापि न मे मुक्तिर्भविष्यति ॥ ५० ॥
उपायोन्यश्चिन्तनीयो ममोद्धाराय वैत्वया ।
इति तद्वाक्यमाकर्ण्य गोकर्णो विस्मयं गतः ॥५१॥

श्राद्धों से मुक्ति नहीं है तो तुम्हारी असाध्य गति है । हे प्रेत इस समय तुम निर्भय होकर अपने स्थानको जाओ । यह सुन धुंध-कारी अपने स्थानको गया । फिर गोकर्ण ने जात बिरादरी कुल बान्धवों धर्मशास्त्रके जानने वाले ब्राह्मणों से रात्रिका सब वृत्तान्त कहा परन्तु किसी ने उसका उपाय न बताया तब सब ब्राह्मणों ने सूर्य्यनारायणकी स्तुतिकी उस समय सूर्य्यजीने कहा कि धुंधकारीके महा-पापकी शान्तिके लिये गोकर्णको श्रीमद्भागवतका सप्ताह सुनाना चाहिये वह उसका उद्धार करेगा ।

श्रीभागवत सप्ताहस्तस्योद्धर्त्ता भविष्यति ॥७२॥

यह सुन सब ब्राह्मणोंने प्रसन्न हो गोकर्णसे सब वृत्तान्त कहा तब तुंगभद्रा नदीके किनारे पर ब्राह्मणोंकी समाजमें सब कौतुक देखने के लिये नगरकी प्रजा आती गई। तत्त्वअर्थके जानने वाले वक्ता गोकर्णजी सावधान होकर आसन पर बैठ ॥७६॥

गोकर्णो ज्ञाततत्त्वार्थो वक्ताध्यासनमास्थित: ॥७६॥

नारायण आदिक देवोंको नमस्कार कर सप्ताहका प्रारम्भ कर बोले कि श्रीहरिजीके वचनरूप शास्त्रचरणकमलसे उत्पन्न तीर्थ ॥७७।

नारायणादिकान्नत्वा सप्ताहं समवर्त्तयत् ।
श्रीहरेस्तु वच: शास्त्रं तीर्थं पादाब्ज संभवम् ॥७७॥

जो सत्य है। तो धुंधकारी गतिको प्राप्त हो जावे। इसी प्रकार मनसे श्रीमद्भागवत'नामका संकल्प कर ॥७८॥

यदि सत्यं तदाप्नोतु धुंधुली तनयोगतिम् ।
इति संकल्प्य मनसा श्रीमद्भागवताभिधम् ॥७८॥

"जन्माद्यस्ययत: " यहांसे लेकर धीमहिके अन्त तक अर्थात् पहिला श्लोक पूरा पढ़ चुके हैं। तिसी समय धुंधकारी प्रेत आकर इधर उधर जगह बैठनेको ढूंढ़ कर—

तत्र प्रेत: समागत्य स्थानं पश्यन्नितस्तत: ॥७९॥

सात गांठसे युक्त बांसमें पवनका रूप धारण कर प्रवेश कर गया और श्रेष्ठ वैष्णव ब्राह्मणोंके सुनते हुए प्रतिदिन उसी बांसकी गांठके छिद्रमें स्थित होकर सुनने लगा। जब पहिले दिन कथा समाप्त हुई। तब बांसकी एक गांठ फट गई। यह अत्यन्त अद्भुत कौतुक हुआ। दूसरे दिन दूसरी गांठ फटी। इस प्रकार एक २ गांठ फटती रही। सातवीं गांठके भिन्न होने पर धुंधकारी शीघ्र ही प्रेतभावको छोड़कर सुन्दर रूप धारण कर तुलसीदलसे सुशोभित हो। पीताम्बर धारण कर मेघोंके समान भूषणोंसे युक्त हो, प्रकाशित होगया। सम्पूर्ण तत्त्वदृष्टि होकर गोकर्ण भाईको नमस्कार कर बोला हे भाई! आपने दया कर प्रेतके कष्टसे इस

को छुड़ा दिया। भागवतकी वार्त्ता धन्य है ? वैसे ही विष्णुलोककी गति देने वाला सप्ताह भी धन्य है। जिसके प्रभावसे प्रेतभावसे अत्यन्त व्याकुल मैं विमुक्त होगया।

त्वयाहं मोचितो बंधो कृपया प्रेत कश्मलात् ।
धन्या भागवती वार्त्ता प्रेतत्वोन्मूलिनीश्रुता ॥
सप्ताहोपि तथा धन्यो विष्णुलोक गतिप्रदः ।
यत्प्रभावाद्विमुक्तोहं प्रेतभावाद्भृशातुरः ॥
आर्द्रं शुष्कं लघुस्थूलंवाङ्मनः कर्मभिः कृतम् ।
पातकं भस्मसात्कुर्यात्सप्ताहोग्निरिवेन्धनम् ॥

नोट—अब आप यह बतलाइये कि गोकर्णके गयाश्राद्धसे धुंधकारीका प्रेतत्व नहीं गया, फिर मुक्ति कैसी ! फिर अन्योंके आने का क्या प्रमाण, हां सूर्य्यनारायणकी सम्मतिसे जब श्रीमद्भागवतका सप्ताह सुनाया तो उनका प्रेतत्वगया। अब बतलाइये दोनोंमें कौन ठीक है इनके उपरान्त यह भी विचार कीजिये कि जब व्यासजीने १७ सत्तरह पुराणोंके पश्चात् भागवतको बनाया तो उससे पूर्व प्रेतोंकी मुक्ति किस प्रकार हुई।

श्रीमान् वास्तवमें न गयामें पिण्ड देनेसे प्रेतत्व छूटता है। न सप्ताह सुननेसे। यथार्थमें मनुष्य अपने २ कर्मोंका फल पाता है न कि अन्यके कर्मोंका फल। इसलिये आप स्वयं जान लीजिये कि मरोंका गया आदिमें श्राद्ध क्या लाभ देता है। सच तो यह है कि स्वार्थी पुरुषोंकी दस्तादी है अपने २ स्वार्थकी विचित्र कथायें लिखते रहे वह सब यह ऋषि व्यास महाराजके सिर पर चपेट दीं इस कथामें गौके पेटसे मनुष्यकी उत्पत्ति लिखी है उस पर भी आप विचार करें वह भी एक फलके खानेसे इसीलिये तो हम कहते हैं कि यह पुराण महात्मा व्यासजीके बनाये नहीं हैं और न वेदानुकूल हैं और न वेदकी आज्ञा मृतकश्राद्धकी है। इसलिये मृतकश्राद्ध सनातनसे नहीं है वरन् बीचसे इसका प्रचार हुआ है।

देखिये महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ९१ में लिखा है कि युधिष्ठिर महाराज पितामहसे पूछते हैं कि किस कालमें किस मुनिने श्राद्धको चलाया।

केन सङ्कल्पितं श्राद्धं तस्मिन्काले किमात्मकम्।
भृग्वङ्गिरसके काले मुनिनाकातरेणवा॥ १॥

इसको सुन भीष्मजीने कहा कि हे राजन्! अत्रिके गोत्रमें एक निमि नामके ऋषि हुए उनका पुत्र श्रीमान् हुआ जो कुछ कालके पीछे मर गया जिसके विरहमें वह रात दिन व्याकुल रहते थे जिससे उनकी बुद्धि विक्षिप्त होगई जिससे वह अपने पुत्र श्रीमान्के खान पान, बैठना उठना, चलना, फिरना आदि उसकी क्रियाओंका स्मरण करते रहते थे एक अमावस्याको कुछ ब्राह्मणोंको बुला दक्षिणाग्र कोणों पर बिठा स्वयं शुचि हो लवण वर्जित भोजन कराया और दक्षिणाग्र कोण पर श्रीमान्के नाम गोत्रका उच्चारण कर कुछ पिण्ड रख दिये और सब उन्होंने अपने मृतक पुत्रके नाम पर पिण्ड रक्खे तो उनको बड़ा शोक हुआ।

तत्कृत्वा समुनिश्रेष्ठो धर्मशङ्करमात्मनः।
पश्चातापेन महता तप्यमानोभ्यचिन्तयत्॥१६॥

इससे प्रथम इस कर्म को किसी मुनिने नहीं किया हाय यह मैंने क्या अनुचित कर्म किया ऐसा न हो कि ब्राह्मण मुझको भस्म करदें।

अकृतं मुनिभिः पूर्वं किं मयेदमनुष्ठितम्।
कथं नु शापेन न मां दहेयुर्ब्राह्मणा इति॥ १७॥

इस प्रकार चिन्ता करते हुये अपने कर्त्ता अत्रिका स्मरण किया वे आकर सब समझागये कि अब चिन्ता न करो ब्रह्माने इस कल्प को विचारा था अब तुमने उसका आरम्भ कर दिया। भीष्मजी कहते हैं कि इसी निमि से यह श्राद्ध चला।

निमेसंकल्पितस्तेयं पितृयज्ञस्तपोधन ॥ २० ॥

इसको विशेषता से जाननेके लिये हम वाराहपुराण से निमिकी कथा सुनाते हैं।

श्राद्ध विषय

निमि और महात्मा नारदका सम्वाद ।

वाराहपुराण अध्याय १८९ में लिखा है कि मनुके वंशमें आत्रेय नाम ब्राह्मण जिसका पुत्र निमि और उसका पुत्र श्रीमान् जो बड़ा तपस्वी था कालवश हो परलोक गमन करगया जिसके कारण महात्मा निमि रातदिन शोकातुर रहने लगे कुछ दिन व्यतीत होने पर माघ मास की द्वादशी को महात्माके मनमें यह विचार उत्पन्न हुआ कि पुत्र का श्राद्ध करना चाहिये यह विचार कर उसने बहुत प्रकारके मूल, फल, कंद और मांसादि अनेक प्रकार के भक्ष्यपदार्थों को इकट्ठा करके

यानि तस्यैव भोज्यानि न मूलानि फलानि च ।

यानिकानि च भक्ष्याणि नवश्चरस सम्भवः ॥ ३१ ॥

आमन्त्र्य ब्राह्मणं पूर्वं शुचिर्भूत्वा समाहितः ॥ ३२ ॥

वाराह० संस्कृत १८७ अध्याय ॥

ब्राह्मणों को निमन्त्रण दे पुत्रका स्मरण कर विधान और भक्ति से ब्राह्मणों को भोजन करा दक्षिणा दे विसर्जन कर दक्षिणदिशामें भूमि पर कुशों को बिछा उसके ऊपर नाम और गोत्रका उच्चारण कर पिण्ड दान किया फिर समाधि से परमात्मा का ध्यान कर बहुत रात्रि व्यतीत होने पर पुत्र शोक से व्याकुल होकर कहने लगा यह श्राद्ध आज तक किसीने नहीं किया मैंने मोहवश यह काम किया जो पिण्डदान पुत्रके निमित्त दिया ।

अकृतं मुनिभिः सर्वं किं मया तदनुष्ठितम् ॥ ३१ ॥

यदि यह मेरा कृत्य मुनियों को विदित हो तो शाप देकर उसी क्षण भस्म करदें ।

कथं ते मुनयः शाश्वतदर्हयुर्नमामिति ॥ ४२ ॥

यदि इस कर्मको देवता, असुर, गंधर्व, पिशाच, सूर्प और राक्षस जानलें तो हमको क्या कहें ?

सदेवासुर गन्धर्व पिशाचोरग राक्षसाः ।
किं वक्ष्यन्ति च मां सर्वे ये वै पितृपदे स्थिताः ॥४२॥

हाय हमने बिना बिचारे क्या किया । इस प्रकार रात्रि गई दिन आया फिर कहने लगा कि हाय लोकमें निन्दा हुई और पुत्रका माशा भी न मिला । हम बड़े मूर्ख हैं । हमारे पढ़ने, याग करने और ज्ञानको धिक्कार है इस भांति अनेक प्रकारसे रुदन कर रहे थे कि इतनेमें महात्मा नारदजी पधारे जिनका मुनिने सत्कार कर बिठाया और निमि उनके सन्मुख खड़े हुए जिनको देख नारद मुनिने कहा कि इस विषयमें महात्मागन कुछ विचार नहीं करते क्योंकि सबका जीवन आयुके अनुकूल होता है काल आने पर कोई एक स्वांस भी नहीं ले सक्ता ! तब मुनिने कहा कि मैंने स्नेहमें फंस कर पुत्रके निमित्त सात ब्राह्मणोंको भोजन कराया और दक्षिणा दे विसर्जन किया । भूमिमें कुश रख दक्षिण मुख हो जलके साथ पिण्डदान दे नाम उच्चारण किया । हे महात्मन् ! यह शोक मोहकेवश होनेसे जो अयोग्यकर्म हुआ सो आप हमको नष्टबुद्धि जानके क्षमा करें और ऐसा उपदेश करें जिसके करनेसे हमारा पाप दूर हो ।

देखिये जो यह कर्म हमने किया सो आगेके महात्मा, ऋषि, मुनि किसीने नहीं किया इस कारण मैं बारम्बार भयभीत हो रहा हूं ।

अनार्यं जुष्टमस्वर्ग्यमकीर्त्ति करणं द्विज ! ।
नष्ट बुद्धि स्मृति सत्त्वोह्यज्ञानेन विमोहितः ॥ ६४ ॥
न च श्रुतं मयापूर्वं न देवैर्ऋषिभिः कृतम् ।
भयं तीव्र प्रपश्यामि मुनिशापात्सुदारुणात् ॥ ६५ ॥

वाराह संस्कृत अ० १८७ । ६५

कृपा करके हमारे भयको दूर कीजिये तब नारदजीने कहा कि भय मत करो पितरोंकी शरणमें प्राप्त हो जो आपने किया है उसमें किसी भांतिका अधर्म्म नहीं है केवल धर्म ही है इसको सुन निमिने मन, वच, कर्मसे प्रार्थना की कि पितरो मैं आपकी शरण हूं इतना कहते ही निमिका पिता पितृलोकसे आया और निमिको पुत्र शोकसे दुःखी देख समझाने लगा कि तुमने पितृयज्ञका संकल्प किया है इस धर्मको ब्रह्माजीने पितरोंके लिये स्वयं आज्ञा दी है इसलिये यह यज्ञ करना योग्य है।

पितृयज्ञेति निर्दिष्टो धर्मोऽयं ब्रह्मणा स्वयम् ॥

इस पर नारदने ब्रह्माजीको प्रणाम कर पितृयज्ञका विधान सुनाया।

जिसने जन्म लिया है उसकी मृत्यु अवश्य होती है और मरने पर धर्मराजकी आज्ञा पालन करनी होती है और जन्म लेकर जितने जीव जाते हैं उनमें किसीका अमरत्व नहीं होता अर्थात् मृत्यु न हो। इसलिये हे निमि जिसने जन्म लिया है वह अवश्य मरेगा और मरा हुआ अवश्य जन्मलेगा इसलिये वह कर्म करना उचित है जिसके किये मनुष्यके सब पापोंका प्रायश्चित्त हो और मुक्ति प्राप्त हो। हे निमि विचार करो कि सात्विक, राजस, तामस इन तीन गुणोंके अनुसार मनुष्य कर्म्म करते हैं और उसी भांति उनकी गति होती है सात्विक कर्म्म करना कठिन है राजस और तामस कर्म्म करनेसे मनुष्य अल्पायु और अल्पबुद्धि होते हैं सात्विक कर्म्म करनेसे, अन्तमें मनुष्य प्राण त्याग करनेसे देवता होता है और राजससे मनुष्य। तामस कर्म करनेसे राक्षस होता है। हे निमि धर्म्मज्ञान वैराग्य और ऐश्वर्य्यादि कर्म को सात्विक कहते हैं। क्रूर मिथ्या बोलने वाला जीवहिंसा करने वाला लज्जाहीन और विषाद करने वाला तामस कहाता है। जिसको करनेसे मनुष्य प्रेतयोनिमें प्राप्त होता है और राजस गुण वे कहाते हैं कि जिनसे मनुष्योंमें मान अश्रद्धा और नाना भांतिके भोगोंकी इच्छा अपनी प्रशंसा और जिन्होंमें यह धर्म है सो सात्विक गिने जाते हैं शान्ति, दान, ज्ञान, श्रद्धा, तप, ध्यान आदि करने से स्वर्ग व मोक्ष दोनों का

अधिकारी होता है इसलिये निमि निज पुत्र के मरनेका शोक न करो शोक करने से बहुत हानि होती है शोक से बुद्धि, बल और देह इन तीनों की हानि होती है इन्हीं की हानि होने से लज्जा, धृति, धर्म, कीर्त्ति, लक्ष्मी, नीति, स्मृति और विवेक यह सब नष्ट होजाते हैं। इसलिये हे निमि! इन बातों को विचार कर आप शोकत्याग कीजिये।

लज्जाधृतिश्चधर्मश्च श्रीः कीर्त्तिश्च स्मृतिर्नयः।
त्यजन्ति सर्वधर्मांश्च शोकेनोपहतं नरम् ॥
एवं शोकं त्यजित्वातु निःशोको भव पुत्रक ! ॥ ८४ ॥

इसके पश्चात् फिर नारदजीने मरण समय का कृत्य और श्राद्ध की सब क्रिया संक्षेप से निमि को सुनाई जिसको सुन निमिने अपने को धन्यमाना इस पर नारदजीने कहा कि हे निमि! तुमने निज प्रेत पुत्रके निमित्त जो श्राद्ध किया है यह आज से चारों वर्णोंके सब मनुष्य करेंगे।

कर्त्तव्या एवं संस्कारः प्रेतभाव विशोधनः।
नेमि प्रभृतिभिः शौचं चातुर्वर्ण्यस्य सर्वतः।
भविष्यति न सन्देहो दृष्टपूर्वं स्वयम्भुवाः ॥७५ ॥
कृत्वातु धर्मसंकल्पं प्रेतकार्यं विशेषतः।
न भेतव्यं त्वयापुत्र प्रेतकार्ये कृते सति ॥ ७६ ॥
तस्मात्प्रभृति लोकेषु पितृयज्ञो भविष्यति।
एवं यास्यसिवत्सत्वं न शोकं कर्त्तुमर्हसि ॥

वाराहपुराण संस्कृत अ० १८८ श्लोक ७७ ॥

और तुमको इसके करने से अच्छा लोक प्राप्त होगा। तुम शिव-लोक, विष्णुलोक, ब्रह्मलोक आदि लोकों में जहां इच्छा करोगे इस कर्मके प्रताप से वहां ही प्राप्त होगे।

शिवलोकं ब्रह्मलोकं विष्णुलोकं न संशयः ॥

अब पण्डितजी—इस व्याख्यामें विचारना यह है कि निमिमहात्मा स्वयं आप वर्णन करते हैं कि मैंने मोहसे पुत्रके निमित्त पिण्डदान किया जिस पर भी पुत्र न मिला। हे नारद! ऐसा काम प्रथम किसीने भी नहीं किया यदि निमि और नारदके संवादको सत्य माना जावे तो यह भी सत्य मानना पड़ेगा कि निमिसे प्रथम इस कार्य्यको किसीने नहीं किया तो भला निमिके पुत्रसे प्रथम जितने पुरुषों का मरण हुआ उनको कौनसे स्त्रीने आनन्द दिया। इसके उपरान्त जब नारदजीने मिलाप हुआ तो निमिने अपनी भूलको फिर वर्णन किया तब नारदजीने पितृपक्षका जहां विधान है सुनाया। वह कौन है जो जन्मता है वह मरता है जो मरता है वह जन्मता है इसलिये मनुष्योंको ऐसे कर्म करने चाहियें जिनसे मुक्ति हो और मुक्ति सात्विक अर्थात् ज्ञान वैराग्य आदिके द्वारा प्राप्त होती है इसलिये हे निमि तुम मोहको त्याग कर कार्य्य करो क्योंकि मोहसे धृति, धर्म्म, कीर्त्ति, स्मृति और विवेक जाता रहता है।

फिर क्या ठीक इसके उपरान्त यदि मृतकश्राद्धसे कुकर्मी जीव नरक से बच जाते हैं तो फिर पितृश्राद्धमें नारद महाराजने यह क्यों कहा कि सात्विककर्म करनेसे मोक्ष होती है फिर भला जो मरता है वह जन्मता है और जहां जन्मता वहां कर्म करता है तो फिर भला श्राद्ध करके किसको नरकसे पार किया जाता है।

भला पण्डितजी जब कर्मको प्रधान माना तो सम्पूर्ण आयु के अच्छे कर्मोंका फल श्राद्ध न करनेसे कभी मिट सकता है इसी भांति सारी आयु बुरे कर्म करने वालेके पुत्रके श्राद्ध करनेसे पाप कट सकते हैं? कदापि नहीं? यदि ऐसा होता तो फिर क्या? नहीं नहीं प्रत्येक को अपने कर्मोंके फलोंको भोगना पड़ेगा।

श्रीमान्ने शिवपुराण, वाराहपुराण, भविष्यपुराणसे श्राद्धके विषय को सुना इनसे भी अनोखा श्राद्ध जीवित मनुष्योंके हितार्थ सुनाता हूं अर्थात् जब कोई माता, पिता, भाई इत्यादि परदेशमें हों या कारागार में हों तो वह अपने घरसे उन मनुष्योंकी तृप्ति अच्छे प्रकारसे कर सकते हैं।

न जाने हमारे सनातनीभाइयोंने इसको क्यों भुला दिया अतएव इसको सुनकर कार्य्यमें लाना चाहिये। देखिये विष्णुपुराण चतुर्थ अंश अध्याय १३ में लिखा है—एक समय श्रीकृष्णचन्द्र महाराजके एक सम्बन्धीकी मणि चोरी होगई और वह मणिकी चोरी श्रीकृष्ण महाराजको लगाई



गई परन्तु यह मणि ऋक्षराजके बिलमें पहुंच गई थी क्योंकि चोर और ही था उससे सिंहको मिली और सिंहसे ऋक्षको मिली थी फिर कृष्ण महाराज ऋक्षके साथ युद्ध करनेको उसकी गुफामें घुस गये थे और अपने साथियोंको द्वार पर खड़ा कर गये ।

गिरितटे च सकलमेव यदुसैन्यमवस्थाप्य ।

सात आठ दिनके भीतर श्रीकृष्ण महाराजको लौट कर न आते देख साथियोंने जाना कि श्रीकृष्णजी को ऋक्षने मारडाला अतएव वे सब द्वारिकापुरीको लौट आये और उनके भाइयोंसे सब हाल कहदिया तब सब भाइयोंने उनकी श्राद्धादि क्रियाकी जिससे श्रीकृष्णजीके प्राणों की रक्षा होती रही ।

श्रद्धादत्तविशिष्टपात्रोपयुक्तान्नतोया ।
दिनाःकृष्णस्यबलप्राणपुष्टिरभूत् ॥ २७ ॥

अन्तको कुछ कालमें ऋक्षको जीत श्रीकृष्णजी मणि ले घर आये ।

श्री पं०जी महाराज अब आप भले प्रकार समझगये होंगे कि यहां जीविताबस्थामें श्रीकृष्ण महाराजका श्राद्ध किया गया जिससे वह पुष्ट होते रहे ।

श्री पण्डितजी—ने कहा कि सेठजी अब इस विषय को समाप्त कीजिये ।

सेठजी—श्रीमान् की जैसी आज्ञा मैं वैसा ही करूंगा परन्तु अब आप विचार तो कीजिये कि वेदोंमें तो मृतकश्राद्ध का विधान है ही नहीं उन्हींके अनुसार पुराणभी पुकार २ कर कह रहे हैं कि श्राद्ध करनेसे कुछ लाभ नहीं होता जैसा कि आपने पद्मपुराण अ० १९६ के इतिहासको श्रवण किया कि धुंधकारी को श्राद्ध ही नहीं किन्तु गया में पिण्डदान देने से भी मुक्ति नहीं हुई श्री पं० जी जब पुराण ही बतला रहे हैं कि निमिने श्राद्धको चलाया फिर किस प्रकार श्राद्धविधि वेदोक्त हो सकती है ।

श्री पं० जी—सेठजी इतनी ही कथाओंसे मैंने भले प्रकार समझ लिया कि केवल स्वार्थियोंने अपना प्रयोजन सिद्ध करनेके लिये इन कथाओंको गढ़ लिया और महर्षिके नामको बदनाम किया लालाजी वेद, बुद्धि और सृष्टिक्रमके विपरीत बातों, गणेश महाराज

की उत्पत्ति और मृतकश्राद्धकी कथाओंको सुन मेरी आत्मा तृप्त हो गई अब मैं इस समय पुराणलीलाको नहीं सुनना चाहता हां मैं जिन पुराणों पर बड़ा ही विश्वास करता था उनकी लीलाओंको सुन आज मेरी पुराणोंसे बहुत ही अश्रद्धा होगई सेठजी अब आप इतने विषय को भी मुद्रित करा दीजिये। देखें हमारे भाई इनका क्या उत्तर दें मैं तो आज से ही अपने यजमानों को समझा बुझा इन मिथ्यारीतिओंको उनसे छुटा वेदोक्तविधिका पालन करना सिखाऊंगा। धन्य है स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराजको कि जिन्होंने वेदोक्तमार्ग बतलाकर हमको श्रेष्ठ विप्र बनाया मैं तन मन से महात्माजीके चरणोंको सिर नवाता हूं तदनन्तर आपको आशीर्वाद देता हूं कि परमपिता परमेश्वर आपको सब प्रकारके आनन्द मंगल दें फिर अपने कटुवाक्योंके कहनेकी क्षमा मांगता हुआ आपकी सहनशीलताका धन्यवाद देता हूं परमात्मा आपको अधिक सहनशक्ति दे जिससे आप नाना प्रकार के कटुवाक्योंको सहन करते हुये देशका तन, मन और धन से उपकार करें अन्य सज्जनों ने कहा कि सेठजी अब हम सब भी पुराणों की लीलाओंको सुन संतुष्ट हो गये अब आप बस करें पुनः—

अन्य महाशयोंकी ओरसे लाला शङ्करलालजीने खड़े होकर कहा कि मैं आज श्रीमान् पण्डितजीको तथा सेठजीको धन्यवाद देता हूं जिनकी परमकृपासे हम सबको पुराणोंकी अपूर्व और अद्भुत बातोंके सुननेका अवसर मिला पुनः हम श्री स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी और उनके गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वतीजी महाराजका कोटानुकोटि धन्यवाद देते हैं कि जिनकी कृपासे हमारे धर्मकी रक्षा हुई।

सेठजीने—कहा कि मैं प्रथम उस सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर को कोटिशः धन्यवाद देता हूं कि जिनकी महतीकृपासे मेरी इच्छा पूर्ण हुई पुनः श्रीमान् पण्डित रामप्रसादजी और आप सज्जनोंको धन्यवाद देता हूं कि जिन्होंने अमूल्यसमयको प्रदान कर मेरी मनोकामना सिद्धकी आशा है कि श्रीमान् तथा आप सब निष्पक्ष होकर सत्य ग्रहण करेंगे।

इसके पश्चात् मैं न्यायकारी ब्रिटिश गवर्नमेण्टका धन्यवाद देता हूं कि जिनके श्रेष्ठशासनमें प्रत्येक मनुष्य अपने विचारोंको प्रकट कर सकता है। हे जगदीश्वर! हमारे ऊपर ऐसी न्यायशील गवर्नमेंट का शासन सदा रहे जिनके राज्यमें शेर और बकरी निर्भय होकर एक घाट पानी पीते हैं।

इसके पश्चात् महाशय बदरीलालजी भजनोपदेशक ने श्री० पं० रविशङ्करजीशर्मा संरक्षक महाविद्यालय ज्वालापुर निर्मित भजन हारमोनियम पर गाया।

टेक-मेरी यह अर्ज जगदीश्वर, दयाकर आप सुनलीजे।
हमारे आर्य पद्मन को, चिरायुः हे प्रभो! कीजे॥
दयामय आप हैं स्वामिन्, अदल भी आपका कामिल।
हमारे राजराजेश्वर को, दोनों ही अदा कीजे॥१॥
दया से दुःख को मेटें, अदल से सुख फैलावें।
तेरी भक्ती में चित लावें, यह शक्ति दान दे दीजे॥२॥
करें सम प्यार पुत्रों पर, वह गोरा हो चाहे काला।
पिताके धर्म हैं जितने, वह सारे ही सिखा दीजे॥३॥
बताया राजका मारग, पिता तुमने जो वेदों में।
उसी मारगका अनुयायी, शहनशाहको बना दीजे॥४॥
विनय अन्तिम ये शर्मा की, पिताजी आप से हरदम।
हरिश्चन्द्र सा सत्यवादी, करण सा दानी कर दीजे॥५॥

जिस को सुन सब महाशयों ने करतालध्वनि से प्रसन्नता प्रकट कर श्री पद्मसशार्य महोदयको धन्यवाद दिया पुनः सेठजी ने निम्नलिखित मंत्र को पढ़ शान्ति की।

द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष७ं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्व७ं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि॥

श्री पण्डितजी—ने चलनेकी तय्यारी की।

सेठजी—ने खड़े होकर हाथ जोड़ अतीनम्रतासे श्रीमान् को नमस्ते व अन्य महाशयोंको यथायोग्य कहा।

श्री पण्डितजी नें—प्रसन्नतापूर्वक आयुष्मान् कहा और चल दिये।

अन्य सज्जनोंने यथायोग्य कहा **सेठजी** अपने कार्य्यमें लगगये॥

इति विंशति परिच्छेदः।

समाप्तोयं पुराणतत्वप्रकाशस्यतृतीयोभागः।



और विष्णुको महादेवका वर देना। विष्णुका नेत्र उखाड़ शिव पर चढ़ाना। रामचन्द्रजी का ब्रह्महत्या दूर करनेके लिये शिवकी उपासना करना। महादेवका अतिथिरूप में चमत्कार दिखाना। विष्णुजीकी निन्दा दूर करनेके लिये ब्रह्माजी का बन्दरीको उत्पन्न कर, उनके शिरका लवणसमुद्रमें गिराना और घोड़ेका शिर जोड़ना। **ब्रह्मा, विष्णु, शिव** का स्त्री होना। विष्णुके कानके मैलसे मधुकैटभ का उत्पन्न होना। **इन्द्र, चन्द्र, सूर्य्य, वशिष्ठ, विश्वामित्र, बृहस्पति, शुक्रकी** अपारलीला। **त्रिदेव** अर्थात् **ब्रह्मा, विष्णु, शिव** के अनोखे कर्त्तव्योंका फ़ोटो। कलिमाहात्म्य और उसके दूर करनेका सरल उपाय। तीर्थ, व्रतके मुख्य अभिप्राय बतानेका मन्त्र। गङ्गामहारानीकी विचित्र उत्पत्ति। गङ्गा महारानीका स्वशापमोचन करना॥ प्यारेमित्रो? मैं इसकी क्या व्याख्या करूं किताब हाथोंहाथ बिक रही हैं अनेकों प्रशंसापत्र चले आ रहे हैं। कृपा करके देखिये धर्मसभाओंके माननीय पण्डितोंसे इस-का विचार कीजिये। आर्य्यपुरुषोंको योग्य है कि आप देखकर अपनी गृहि-णियोंको अच्छे प्रकारसे सुनावें, और सनातनीभाइयोंके साथ प्रेमपूर्वक विचार कर वैदिकधर्मका प्रकाश करें।

इसके अतिरिक्त—नारायणीशिक्षा अर्थात् गृहस्थाश्रम १।) गर्भाधानविधि =) वीर्यरक्षा =) सत्यनारायणकी प्राचीनकथा -)॥ पूर्णभक्तकी कथा -)॥ पत्रप्रकाश ≡ सिच्चानन्द -)॥ धर्मबलिदान =) नीतिशिरोमणि।-) आयुर्विचार ≡) राधास्वामीमत परीक्षा ॥ यथार्थशान्ति ।) स्त्रीविलाप)॥ नीतिसे स्त्रीधर्म ≡) स्मृतिधर्म ≡) सन्ध्यादर्पण -)॥ पंडित गुरुदत्तका जीवन -)॥ संसारफल)॥ द्वैतप्रकाश)॥ ईश्वरसिद्धि ॥ चित्रशाला ।)॥ भरतोपदेश)॥ नित्यहवनविधि)। सन्ध्या)॥

प्रेमधारा—यह अभी छपकर आई है आप अपनी सन्तानों सहित पाठ कीजिये देखिये कैसी उपयोगी पुस्तक है।

सब पुस्तकोंके मिलनेका पता—

चिम्मनलाल भद्रगुप्त वैश्य

तिलहर, ज़िला-शाहजहांपुर




महर्षि-पाणिनि-प्रज्ञा-अनुसन्धान केन्द्र
तिथी
पु०सं० 1792
भारती पुस्तकालय

